सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५२

(नवम्बर १९३२ – जनवरी १९३३)

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५२

(नवम्बर १९३२ – जनवरी १९३३)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खंडमें १६ नवम्बर, १९३२ से १० जनवरी, १९३३ तककी सामग्रीका समावेश हुआ है और उसका अधिकांश — पत्र या वक्तव्य आदि — गांधीजी द्वारा अस्पृश्यताके खिलाफ चलाये गये अभियानसे प्रेरित और सीमित है। एक ओर तो वे मित्रोंको अपने उपवासोंकी आन्तरिकता समझा रहे थे और दूसरी ओर अपने सनातनी विरोधियोंके साथ अत्यन्त धैर्यपूर्वक शास्त्रोंके मूल आशय और हिन्दू-धर्मके मर्मके विषयमें वार्तालाप चला रहे थे। उनका निश्चय था कि यह महान सुधार हिन्दू-धर्मकी मूल शिक्षाके अनुसार और इस प्रकार किया जाना चाहिए कि उसमें हिंसाका लेश भी न हो। इस विषयमें एक साथी कार्यकर्त्ताको अपने एक पत्रमें उन्होंने लिखा था: "...हम इतना तो अवश्य करें कि यदि सम्भव हो तो पुरानपंथी लोगोंको अपने मतके अनुकूल बना लें। किसी भी हालतमें हम ऐसा कोई काम न करें जिससे किसीकी भावनाओंको ठेस पहुँचे" (पृष्ठ ३२३-२४)।

अस्पृश्यता-निवारणका कार्य करते हुए उन्होंने राजनीतिसे पूरी तरह अलग रहनेका निर्णय किया था, किन्तु उन्होंने स्पष्ट कर दिया था और सभी सम्बन्धित लोगोंको आगाह कर दिया था, कि उनका यह निर्णय सर्वथा स्वैच्छिक और अस्थायी है। अस्पृश्यतापर अपने एक वक्तव्यमें उन्होंने घोषित किया कि "....मैं राजनीतिक, सामाजिक और अन्य प्रश्नोंके बीच कोई अमिट विभाजन-रेखा नहीं खींचता हूँ। मेरा सदा यह विचार रहा है कि सब एक-दूसरेपर निर्भर हैं और एकका समाधान शेषके समाधानको निकट लाता है" (पृष्ठ ४)। पत्र-प्रतिनिधियोंके साथ एक भेंटवार्तामें उन्होंने कुछ शर्तोंपर रिहाईकी बात अस्वीकार करते हुए और इस कहानीका प्रतिवाद करते हुए कि वे श्री अरविन्दकी तरह राजनीतिसे हटकर अध्यात्मके क्षेत्रमें जा रहे हैं कहा कि "मैं ऐसा नहीं मानता कि मेरा जीवन इतने अलग-अलग हिस्सोंमें बाँटा जा सकता है। वह एक पूर्ण संगठित इकाई है..." (पृष्ठ ३९)। उनका कहना था कि वे न केवल राजनीतिक और सामाजिक धर्मके बीच माना गया भेद मिटाना चाहेंगे बल्कि आश्रमोंके बीच खड़ी की गई विभाजक दीवारें भी तोड़ देना चाहेंगे। जब एक पत्र-लेखकने यह तर्क पेश किया कि गीता द्वारा प्रतिपादित 'जीव-मात्रकी एकता और इसलिए समानता' का सिद्धान्त तो केवल उन संन्यासियोंके लिए है जिन्होंने कर्मका त्याग कर दिया है तो गांधीजी ने उत्तर दिया कि "मेरे निकट गीताका मुख्य विषय जीवनका एकत्व है। उसकी अनुभूति निष्काम कर्म द्वारा होती है। अस्पृश्यता

जिस तरह आज प्रचलित है उस रूपमें मुझे एकत्वके इस दैवी तथ्यके सर्वथा प्रतिकूल लगती है" (पृष्ठ ५३-५४)। एक अन्य पत्र-लेखकने यह आशंका प्रगट की थी कि अस्पृश्यता-निवारणका यह अभियान "स्वराजकी प्राप्तिको, जो कि हम सब लोगोंका लक्ष्य है, अनिश्चित कालके लिए आगे ढकेल देगा।" गांधीजी एक जगह मानो इसी आशंकाका उत्तर देते हुए कहते हैं कि वे "एकत्वकी प्राप्ति" को भी अनिश्चित कालके लिए नहीं टाल सकते और यह एकत्व भेदोंको, खासकर मनुष्य-कृत और अन्यान्य भेदोंको, मिटानेके अनवरत प्रयत्न द्वारा ही सिद्ध किया जा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि मुझे तो इस अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण सुधारका विरोध "हिन्दू-धर्मके पतनका एक दुःखद लक्षण" (पृष्ठ २२९) मालूम होता है।

आनन्दस्वरूपको लिखे एक विशिष्ट पत्रमें हम गांधीजी को शौचालयोंकी सफाई करने, उनमें धूप जा सके ऐसी व्यवस्था करने और मल-मूत्रको खादमें रूपान्तरित करनेके बारेमें विस्तृत सूचनाएँ देनेके साथ-साथ बहुत ध्यानपूर्वक रामनाम और ओंकारकी एकताका प्रतिपादन करते हुए और यह समझाते हुए भी पाते हैं कि "सत्यका अर्थ मन, वचन और कर्मकी एकरूपता है।" इस प्रकार सत्य उनके लिए पूर्ण सत्‌का, जिसे हम परमेश्वरकी संज्ञा देते हैं, ज्ञात अंश है। अन्यत्र वे कहते हैं कि ईश्वर जीवन-तत्वकी समष्टि है, "जैसे किरणोंका समूह सूर्य है।" (पृष्ठ २४६)।

समाजको छिन्न-भिन्न करने या उसके एक वर्गका उपयोग किसी दूसरे वर्गके खिलाफ करनेकी प्रवृत्ति गांधीजी को बिलकुल नापसन्द थी। उन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि किसी भी मन्दिरको खुलवानेमें जोर-जबरदस्तीका प्रयोग नहीं होना चाहिए। उनका सारा जोर इस बातपर था कि मन्दिर खुलवानेका सही उपाय यही है कि शिक्षात्मक प्रचारके द्वारा लोकमतको जगाया जाये और इसके लिए तैयार किया जाये। सनातनियोंकी तरह हरिजनोंसे भी वे स्वेच्छापर आधारित सहयोग ही चाहते थे। उनका मत था, "इसमें कोई सन्देह नहीं कि हरिजन स्वेच्छासे अपनेमें जो भी सुधार करेंगे वह इस कलंकको मिटानेकी प्रक्रियाको और तेज करेगा" (पृष्ठ १५७)।

इस बीच उनसे यह बार-बार कहा गया कि मन्दिर-प्रवेशकी हलचल चलाकर सनातनी हिन्दुओंका विरोध मोल लेना कार्य-सिद्धिकी दृष्टिसे ठीक नहीं होगा, उससे स्वतन्त्रताके लिए किया जा रहा संघर्ष कमजोर पड़ जायेगा और गांधीजी ने इस आपत्तिका बार-बार यही उत्तर दिया कि उनके राजनीतिक, धार्मिक या सामाजिक विचार एक ही वृक्षकी विविध शाखाएँ हैं और मूर्खता या भीरुताके कारण वे "धर्मरूपी हीरा बेचकर राजनीतिक कंकर" (पृष्ठ ६७) कदापि नहीं लेंगे। अपने उन मित्रोंको जो उन्हें उपवाससे विरत करनेके लिए यह दलील देते थे कि उनका शरीर राष्ट्रकी सम्पत्ति है और महज एक सामाजिक सुधारके लिए अनशन करके उन्हें उसे संकटमें

नहीं डालना चाहिए, उन्होंने ऐसा ही उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि उनका शरीर और राष्ट्र दोनों ही ईश्वरके हैं और इन कर्तव्योंका बोझ उसपर ईश्वरने ही डाला है।

सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखे एक पत्रमें अपनी भावी कार्य-योजनाके विषयमें किसी तरहका वचन दे सकनेमें अपनी असमर्थता प्रगट करते हुए उन्होंने लिखा: "सविनय अवज्ञा . . . मौजूदा परिस्थितियोंमें मेरे लिए आस्थाका वैसा ही प्रश्न है जैसा कि अस्पृश्यता-निवारण" (पृष्ठ १६८)। इस तरह हम देखते हैं कि उन्हें न केवल अपने जीवनको एक-दूसरेसे विच्छिन्न खण्डोंमें बाँटना या राजनीति और धर्ममें भेद करना स्वीकार्य नहीं था, बल्कि महत्वपूर्ण मामलोंमें मात्रागत भेद करना भी सह्य नहीं था: "महत्त्वके मामलोंमें मेरे मनमें तारतम्य नहीं है; और जितनी शक्ति मुझमें बड़े कामके लिए प्राण दे देनेकी है उतनी ही शक्ति साथीके जीवनके लिए भी प्राण दे देनेकी है" (पृष्ठ १२०)। अपने "कुन्दन-जैसे" साथी अप्पासाहब पटवर्धनके पक्षमें, जो रत्नगिरि जेलमें जेल-अधिकारियोंसे मैला-सफाईका काम माँग रहे थे और न दिये जानेपर उसके लिए सत्याग्रह कर रहे थे, गांधीजी ने मध्यस्थता करनेकी जो कोशिश की वह विचार और कर्मकी जीवन्त एकताका, गांधीजीके निकट उनके अभेदका ही एक उदाहरण था। जेल-अधीक्षक ई० ई० डॉयलकी समझमें यह बात भला कैसे आती? वह बेचारा तो उनके अविभक्त मनकी चिन्तनामें विरोध ही देख सकता था और यही सोच सकता था कि अब वे उपवाससे "कतरा रहे हैं और उससे बच निकलनेका बहाना ढूँढ़ रहे हैं" (पृष्ठ ४४२)।

किन्तु उपवाससे बच निकलनेका रास्ता ढूँढ़नेकी बात तो दूर रही, गांधीजी तो सत्यकी उपलब्धि और इस उपलब्ध सत्यको दूसरोंतक पहुँचानेके लिए उसे अपना चुना हुआ साधन मानते थे और किसी भी जटिल परिस्थितिमें अपने इस सुपरीक्षित साधनका प्रयोग करनेके लिए उत्सुक थे। वे उसे सर्वोच्च कोटिकी प्रार्थना तथा ईश्वरमें अपनी निष्ठाकी अभिव्यक्तिका प्रकार मानते थे—ऐसी अभिव्यक्ति जो सोती हुई आत्माको जगाती है और प्रेमी जनोंको कर्मके प्रति प्रेरित करती है। उनका उपवास "सनातनियोंके विरुद्ध नहीं था।" (पृष्ठ ७) वह उन लाखों-करोड़ों लोगोंको ध्यानमें रखकर किया गया था जो उनके साथ प्रेमकी डोरमें बँधे हुए थे। उसका उद्देश्य जनताकी धर्मवृत्तिको जगाना और हिन्दु समाजको अपना कर्त्तव्य करनेके लिए प्रेरित करना था। उपवासके विषयमें अपनी लाचारी की मानो कैफियत देते हुए उन्होंने अपने चचेरे भाई और भतीजेको लिखा था कि जो भी उपवास उन्होंने किये हैं अपनी इच्छासे नहीं किये; उन्हें तो हमेशा यही लगा है कि उन्हें भगवानसे प्राप्त हुए हैं। ". . . मेरा उपवास मेरा नहीं है; ईश्वर-प्रेरित है" (पृष्ठ ८६-८७)। खुर्शीद नौरोजीने अपने किसी पत्रमें कहा था कि उनका यह उपवास उनकी निराशासे फलित जान

पड़ता है। इस बातका खण्डन करते हुए गांधीजी ने कहा कि उपवास उनके लिए उनकी प्रार्थनाका ही एक अंग है, और वह उनके लिए उतना ही आवश्यक है जितना कि भोजन। उन्होंने कहा कि उससे उन्हें आन्तरिक आनन्द मिलता है; उनके लिए वह तपस्या और आत्मशुद्धिकी एक ऐसी प्रक्रिया है जो मानव समाज, ईश्वर और स्वयं अपनेमें उनकी निष्ठापर सुदृढ़ रूपसे आधारित है (पृ० २७८)।

२ जनवरी, १९३३ से केलप्पनके उपवासकी सहानुभूतिमें गांधीजी स्वयं जो उपवास करने जा रहे थे उसके खिलाफ आक्षेप यह किया गया था कि उनका यह उपवास जोर-जबरदस्तीसे भिन्न नहीं होगा। गांधीजी ने इसका जवाब देते हुए कहा कि मेरा यह उपवास इस मान्यतापर आधारित है कि मन्दिरोंमें जानेवाले सवर्ण हिन्दुओंकी बहुसंख्या हरिजनोंको मन्दिरोंमें जाने देनेके पक्षमें है। यह बात सही है या नहीं इसकी जाँचके लिए उन्होंने एक उपाय भी सुझाया। उन्होंने कहा कि मन्दिरके आसपास दस मीलके क्षेत्रमें मन्दिरमें दर्शनके लिए जानेवाले लोगोंके मतका इस प्रश्नपर संग्रह करा लिया जाये। पचपन प्रतिशत व्यक्तियोंने मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें मत दिया, नौ प्रतिशतने विपक्षमें, आठ प्रतिशत तटस्थ रहे और सत्ताईस प्रतिशतने मतदान नहीं किया। इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि गांधीजी का कहना सही था। किन्तु एक कानूनी कठिनाईके कारण उपवासको स्थगित करना पड़ा। कानूनी कठिनाई यह थी कि मन्दिरके न्यासी मन्दिरके विषयमें सुस्थापित परिपाटीके खिलाफ नहीं जा सकते थे। मद्रास विधान परिषद्में डॉ० सुब्बारायनने इस कठिनाई को दूर करनेके लिए एक विधेयक पेश किया था। किन्तु कार्य-सूचीमें उसके समावेशके लिए वाइसरायकी अनुमतिकी आवश्यकता थी और यह अनुमति १५ जनवरी, १९३३ के पहले घोषित नहीं की जा सकी।

अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनके खिलाफ सनातनी हिन्दुओंका विरोध इस दावे पर आधारित था कि शास्त्र वर्णाश्रम-धर्मके अंगके रूपमें अस्पृश्यताका पालन करनेका आदेश करते हैं। किन्तु गांधीजी को ऐसा कोई शास्त्र-वचन नहीं मिला जो अस्पृश्यताके प्रचलित रूपका समर्थन करता हो (पृ० ३६४)। गाँधीजी के इस मतका समर्थन अनेक विद्वानों और पण्डितोंने किया। उनमें से कुछने जिनमें बाबू भगवानदास और आचार्य आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव भी थे, एक सार्वजनिक वक्तव्य जारी किया जिसमें कहा गया था कि अस्पृश्यताका आज जिस रूपमें पालन किया जा रहा है उसके लिए शास्त्रोंमें कोई आधार नहीं है। इसके सिवा, समाजके जिस किसी वर्गको अभीतक अस्पृश्य माना जाता रहा हो वह "शुद्ध और स्वच्छ रहन-सहन" अपनाकर और "शैव अथवा वैष्णव सम्प्रदायमें शरीक होकर" सवर्ण हिन्दुओंके सारे अधिकारोंको प्राप्त कर सकता है (पृ० ३६०)।

किन्तु गांधीजी इस विवादको इसी प्रश्नतक सीमित रखना नहीं चाहते थे। उन्होंने इसके आगे बढ़कर हर प्रकारकी रूढ़िवादितापर, शास्त्रोंके अक्षरमूलक प्रामाण्यको माननेवाली अन्धश्रद्धापर प्रहार किया। उन्होंने कहा कि हिन्दू-धर्म सनातन इसलिए है कि वह गतिशील है। "नैतिकताके विश्वमान्य मूल सिद्धान्तोंसे जिसकी संगति नहीं बैठती, वह मेरे लिए शास्त्र-प्रमाण नहीं है। शास्त्र उन मूल सिद्धान्तोंके अतिलंघनके लिए नहीं बल्कि उनकी पुष्टिके लिए बने हैं" (पृ० ९)। शास्त्रोंमें इस बातका अन्त:साक्ष्य मौजूद है कि उनमें विकास होता रहा है और समय-समय पर जो नई परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं उनके अनुसार उनमें नये परिवर्तन भी हुए हैं। किन्तु जब हिन्दू-धर्ममें उसका पुराना जीवन-बल नहीं रह गया और उसका स्वाभाविक विकास अवरुद्ध हो गया तब हिन्दू धर्मकी मूल शिक्षाको भुला बैठा। "मुझे तो यही लगता है कि हिन्दू धर्मका जो प्रधान आदेश है कि जीवमात्रकी एकताका उत्तरोत्तर साक्षात्कार किया जाये — कोरी सैद्धान्तिक चर्चाके रूपमें नहीं, बल्कि जीवनके ठोस सत्यके रूपमें — उसका हिन्दू समाज अनुसरण नहीं कर रहा है" (पृ० ३१६)। गाँधीजी का कहना था कि मैं महसूस करता हूँ कि मैंने अपने धर्मको अपने जीवनमें उतारनेका दीर्घकाल तक सतत प्रयत्न किया है। इसलिए मैं मानता हूँ कि मैंने हिन्दू समाजका सुधार करनेके लिए प्रायश्चित्त करनेकी आन्तरिक पुकार सुनी है और उसके लिए आवश्यक योग्यता प्राप्त की है। उन्होंने सनातनियोंसे निवेदन किया कि वे उनके दु:खको समझें और इस बुराईको दूर करनेमें उनके साथ सहयोग करें। उन्होंने आश्वासन दिया कि "सनातन धर्म फिरसे प्राणवान हो, उसका उत्थान हो और करोड़ों लोग उसे अपने जीवनमें जीता-जागता बनायें, इसके सिवा और कोई उद्देश्य मुझे पूरा नहीं करना है" (पृ० ३७४)। अपने इस आश्वासनको एक निजी बातचीतमें दोहराते हुए उन्होंने कहा, 'कृष्ण-भक्ति मेरे जीवनका मन्त्र है। सनातन धर्म मेरा प्राण है" (पृ० ४२६)। एक आलोचकका कहना था कि हिन्दू-धर्मके पक्षमें किये जा रहे इस उपवासमें उसे साम्प्रदायिकता दिखती है। उसे जवाब देते हुए गांधीजीने कहा: "हिन्दू-धर्मपर या हिन्दूपर मुझे कोई लज्जा नहीं है। . . . मेरे लिए हिन्दू-धर्म उसी मूल तनेकी एक शाखा है। . . . यदि मैं हिन्दू शाखाकी, जिसपर मैं टिका हुआ हूँ और जो मेरा पोषण करती है, फिक्र करता हूँ तो मैं निश्चय ही उसकी अन्य शाखाओंकी भी फिक्र करता हूँ। . . . ईश्वर यदि मुझे अपनी इस धारणाके हिन्दू-धर्मके लिए मरनेका सौभाग्य प्रदान करता है तो मेरा यह मरना सबकी एकताके और स्वराज्यके लिए भी होगा" (पृ० ७५-६)।

कुछ आलोचकोंका विचार था कि मन्दिरोंमें हरिजनोंको प्रवेश दिया जाये, यह बात ऐसी नहीं है जिसके लिए लड़ा जाये। किन्तु गांधीजी की दृष्टिमें अस्पृश्यता-

निवारण आन्दोलनमें मन्दिर-प्रवेशका स्थान बहुत ही महत्त्वका था, क्योंकि शैव या वैष्णव पूजा-पद्धतियोंमें भाग लेनेका यही तो एक सर्वजन-सुलभ उपाय था। मन्दिरोंके महत्त्वकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा, "गाँवके मन्दिर ग्रामवासियोंके लिए आश्रय-स्थान थे और अब भी हैं। हिन्दू ग्रामवासियोंकी जीवन-व्यवस्था मन्दिरोंके बिना चले, ऐसी कल्पना करना मुश्किल है" (पृ० १६३)। मूर्ति-पूजाके विरुद्ध अहिन्दू जनोंकी सुपरिचित आपत्तिका जवाब देते हुए गांधीजी ने कहा कि मस्जिदों और गिरजाघरोंमें जाना मूर्ति-पूजाका ही एक प्रकार है और "ऐसी पूजाको अन्धविश्वास मानकर नीची निगाहसे देखना गुस्ताखी और अज्ञानता होगी" (पृ० १०२)।

एक प्रस्ताव यह था कि मन्दिरोंमें प्रवेश करनेके पहले हरिजनोंकी शुद्धि की जानी चाहिए। इसपर गांधीजी ने कहा कि शुद्धिकी आवश्यकता तो सवर्ण हिन्दुओंको है। क्योंकि उन्होंने अस्पृश्योंके प्रति निष्ठुर अन्याय किया है। गांधीजी विचार-बुद्धि और श्रद्धा इन दोनोंकी सीमाएँ बहुत अच्छी तरह जानते थे। उन्होंने एक मित्रसे कहा कि जो चीज बुद्धिसे जानी जा सकती है उसके विषयमें श्रद्धाका सहारा लेनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। वैसा करना मानसिक आलस्यका चिह्न होगा (पृ० २४६)। किन्तु एक दूसरे मित्रको, जो उपवासका औचित्य नहीं समझ पा रहा था, उन्होंने यह सलाह दी कि "असाधारण चीजोंके बारेमें ज्यादा विचार करना भी निषिद्ध है" (पृ० २३७)। मौनमें, जो कि एक प्रकारका मानसिक उपवास है, विचार का वर्जन होता है। क्योंकि विचारकी क्रिया अनुभूतिको शब्दोंमें बाँधती है, अहंकारको पुष्ट करती है और मनुष्यके विकासमें हिस्सा लेनेवाले कुछ अदृश्य तत्त्वोंको बहिष्कृत करती है। विचार-बुद्धिके परे हमारे हृदयमें प्राणियोंके प्रति बन्धुत्वभाव की जो अन्तः सलिला प्रवाहित हो रही है और वह सर्जनशील कर्म जिसे समझाया तो नहीं जा सकता किन्तु जिसके दुर्वार वेगके सामने कोई बाधा टिक ही नहीं पाती — ऐसे ही तत्त्व हैं।

गांधीजी ने डॉ० विधानचन्द्र रायको बंगालके अस्पृश्यता-विरोधी बोर्डकी अध्यक्षता से हट जानेकी सलाह दी, ताकि उस स्थानपर कोई ऐसा व्यक्ति आये जिसे इस सुधारमें सहयोग करनेके इच्छुक सभी समुदायोंके प्रतिनिधि चुनें। डॉक्टरने इस सलाह का पालन किया। किन्तु उन्हें इसका बुरा भी लगा। उनका उत्तर पानेपर गांधीजी ने उन्हें एक तार भेजा जिसमें उन्होंने अपनी सलाह लौटा लेनेका प्रस्ताव किया और अपनी भूलके लिए क्षमा-याचना की (पृ० २१०)। बंगालके इस बोर्डके अध्यक्ष-पदपर डॉ० रायकी नियुक्तिका सुझाव घ० दा० बिड़लाने दिया था, अतः उक्त घटनासे उन्हें भी दुःख पहुँचा था। गांधीजी ने उनसे भी क्षमा-याचना की और जब बिड़लाने उन्हें यथासमय उक्त सलाह देनेसे न रोकने में हुई अपनी त्रुटिका कारण

समझाते हुए यह लिखा कि "हम आपके देवोपम व्यक्तित्वसे इतने चकाचौंध हैं कि हमने अपना आत्मविश्वास खो दिया है" (पृ० ३०५) तो गांधीजीने उन्हें जवाब दिया कि यह "चकाचौंध तुम्हारे-जैसे मित्रोंकी अपेक्षा खुद मुझे अधिक परेशान करनेवाली है" और "मुझे यह बिलकुल अच्छा नहीं लगता कि मैं कोई बात कहूँ तो उसके लिए . . . किसी अन्य व्यक्तिकी अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया जाये" (पृ० ३०५)। दोनोंके बीच हुई यह दुःखद गलतफहमी शीघ्र ही दूर हो गई और गांधीजी ने डॉ० रायको लिखा, "मैं आपकी भूल-सुधारको प्यार करता हूँ और उसे स्वीकार करता हूँ और आपके साथ होकर कहता हूँ कि हम एक-दूसरेके नजदीक हैं" (पृष्ठ ३२२)। आश्रमके बालक-बालिकाओंको लिखे पत्रोंमें गांधीजी उन्हें समझाते हैं कि दस्तकारीकी तालीम भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितना अक्षर-ज्ञान। खादी-कार्य, बढ़ईका काम, खेती, चर्मालय और दुग्धालयका काम . . . भी एक शिक्षा है और उससे भी बुद्धिका और साथ ही दूसरी कितनी ही इन्द्रियोंका विकास होता है" (पृ० २३४)। एक अन्य पत्रमें वे उन्हें अपना उत्साह कायम रखनेकी प्रेरणा देते हुए आश्वासन देते हैं: "थोड़ा-सा खेतीका काम आ जानेपर जो आनन्द उससे मिलता है वैसा दूसरे किसी कामसे नहीं मिलता। और पेड़-पौधोंकी पहचान हो जानेपर वे अपने सम्बन्धियों-जैसे लगते हैं" (पृ० ३४७)। आश्रम-परिवारके अन्यान्य व्यक्तियोंके नाम लिखे ऐसे ही निजी पत्रोंमें उन्होंने मानवेतर सृष्टिमें मनुष्यके विभिन्न साथियोंको जिन स्नेहपूर्ण शब्दोंमें याद किया है, उनसे हमें उनके मनके इस विशिष्ट पहलूकी झाँकी मिलती है। ". . . पशु, पक्षी, पेड़-पौधे, पत्थर, सभी हमारे सखा-सखी हैं" (पृ० ९०)। "हमारे बिल्ली-परिवारमें तीन व्यक्ति हैं" पृ० २०२)। ". . . बिल्लियोंको जोड़ लें तो हमारी संख्या सात है।" (पृ० २०८)

गांधीजी की विपुल पत्रावलीका एक वर्ग बीमार स्वजनों और मित्रोंको लिखे पत्रोंका है। इन पत्रोंमें (पृ० ८०, ८३, ९२, १११-१२, ११३, २३५) हम उन्हें हर बार नये ढंगसे अपने मित्रोंको यह समझाते हुए पाते हैं कि वे बीमारीको भी भगवानके दाहिने हाथका दिया हुआ दान मानें, ऐसा अवसर मानें जिसका उपयोग उन्हें धैर्य, प्रसन्नता, अपने सहायकों और परिचारकोंके प्रति कृतज्ञता और प्रभुके प्रति प्रार्थना और समर्पणके भावका विकास करनेके लिए करना है। प्राणजीवन मेहताकी सम्पत्तिके बँटवारे आदिके विषयमें उनका विस्तृत पत्र (पृ० २६३) इस बातका उदाहरण है कि अपने मित्रके पारिवारिकोंके हित-साधनमें वे कितनी वैयक्तिक दिलचस्पी लेते थे।

प्रेमाबहन कंटक चाहती थीं कि उनके पत्र आश्रमके व्यवस्थापकको न दिखाये जायें। गांधीजी ने उनकी भूल दिखाते हुए लिखा: "हमें छिपे विचार करनेका अधि-

कार नहीं है"। "मनुष्य-मात्र ईश्वरका प्रतिनिधि है। ईश्वर तो हमारे सब विचार जानता ही है। . . . मनुष्यको प्रतिनिधिके रूपमें हम पहचानें तो हमारे विचार वह जाने इसमें हमें संकोच नहीं होना चाहिए" (पृ० २३९)। दूसरे एक पत्रमें उन्होंने प्रेमाबहनको समझाया, "मैं तेरे कान न पकड़ूँ तो और कौन पकड़ेगा? जहर है तब तो मुझे पीने ही देना।" (पृ० ४००) लेकिन मर्मस्पर्शिता और भविष्य-दर्शनकी क्षमताकी दृष्टिसे इस खंडमें संग्रहीत पत्रोंका मुकुट-मणि तो वर्ष-प्रतिपदाके दिन विनोबाको लिखा हुआ पत्र है: "तुम्हारी भक्ति और श्रद्धा आँखोंसे हर्षके आँसू लाती है। मैं इस सबके योग्य होऊँ या न होऊँ, परन्तु तुम्हें तो यह फलेगी ही। तुम बड़ी सेवाके निमित्त बनोगे" (पृ० ३४४)।

आभार

प्रस्तुत खण्डकी सामग्रीके लिए हम सावरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय; नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, नई दिल्ली; राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काईव्ज ऑफ इंडिया) नई दिल्ली; भारत कला भवन, वाराणसी; इंडिया आफिस लाइब्रेरी, लन्दन; मैसूर सरकार, मैसूर; स्वार्थमोर कॉलेज पीस कलेक्शन, स्वार्थमोर, फिलाडेल्फिया; श्री ए० एच० वेस्ट, वुडब्रुक कॉलेज, वर्मिघम २; और श्रीमती जेसी हाईलैण्ड फोवी, कर्नवाल; श्री भाऊ पानसे, वर्धा; श्री वनारसीलाल बजाज, वाराणसी; श्री घनश्यामदास विड़ला, कलकत्ता; श्री जी० एन० कानिटकर, पूना; श्री हमीद कुरैशी, अहमदावाद; श्री हरिभाऊ उपाध्याय, अजमेर; श्री क० मा० मुंशी, बम्बई; काकासाहव कालेलकर, दिल्ली; श्रीमती लक्ष्मीबहन खरे, अहमदावाद; मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया; श्री एम० एस० अग्रवाल, दिल्ली; मिस मेरी बार; श्री मंगलदास पक्वासा, वम्वई; श्री महेश पट्टणी, भावनगर; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्रीमती निर्मला श्रॉफ, वम्वई; श्रीमती प्रेमावहन कंटक, सासवड; श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली; श्री प्रभुदास गांधी, राजकोट; श्रीमती प्रेमलीला ठाकरर्सी, वम्वई; श्री रामनारायण पाठक, भावनगर; श्रीमती राधावहन चौधरी, नई दिल्ली; श्री आर० जे० सोमण, अहमदावाद; श्री एस० डी० सातवलेकर, औंध; श्री सुब्बाराव; श्रीमती शारदावहन शाह, सुरेन्द्रनगर; श्रीमती शारदावहन पटेल; श्री वालजी गो० देसाई, पूना; श्रीमती वनमाला देसाई, नई दिल्ली; तथा 'वापुना पत्रो–४ : मणिवहन पटेलने', 'वापुना प्रसादी', 'ए वंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'हमारा कलंक', 'इन दि शेडो ऑफ महात्मा', 'माई डियर चाइल्ड', 'नरसिंहरावनी रोजनिशि', 'पाँचवें पुत्रको वापूके आशीर्वाद', 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', 'वापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष', नामक पुस्तकोंके प्रकाशकों और निम्निलिखित समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओंके आभारी हैं: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'वॉम्वे क्रॉनिकल', 'हिन्दू', 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 'टाइम्स ऑफ इंडिया', और 'स्वराज'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्वन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान एवं सन्दर्भ विभाग तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली और कागजातकी फोटो-नकल तैयार करनेमें सहायताके लिए सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका फोटोविभाग, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरोंके द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय भाषाको यथासम्भव मूलके निकट रखनेका प्रयत्न किया गया है। जो अनुवाद हमें प्राप्त हो सके हैं, हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद किया है। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणके बारेमें संशय था, उनको वैसे ही लिखा गया है जैसा कि गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय हैं। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजीके नहीं हैं, कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमें ऊपर दी गई है। जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यकता होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशन की है। गांधीजीकी संपादकीय टिप्पणियाँ और लेख जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी निश्चित आधार पर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

इस पुस्तक-मालाके खण्ड १ के संदर्भ जनवरी, १९६१ संस्करणसे हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' गांधी स्मारक संग्रहालयकी मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिट द्वारा तैयार कराई गई रीलोंका, 'एस० जी०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध सेवाग्राम संग्रहकी फोटो-नकल, प्रतियोंका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर[1] – ७

पूना
१६ नवम्बर, १९३२

इस वक्तव्यमें मैं जिन प्रश्नोंका उत्तर देनेकी कोशिश करूँगा उनकी पिछले वक्तव्योंमें थोड़ी-बहुत चर्चा हो चुकी है। लेकिन चूँकि वे बराबर फिरसे उठते रहते हैं, इसलिए मैंने सोचा कि ऐसे यथासम्भव अधिक-से-अधिक प्रश्नोंको एकत्रित करना और उनपर एक ही वक्तव्यमें विचार करना अच्छा रहेगा। ऐसा ही एक प्रश्न है, "क्या आप लोगोंको उनकी इच्छाके विरुद्ध कार्य करनेको बाध्य नहीं कर रहे हैं?" कम-से-कम, इस तरहका मेरा इरादा नहीं है।

प्रस्तावित उपवासका[2] उद्देश्य दुर्बलोंको बल प्रदान करना, आलसियोंको सक्रिय करना और शंकालुओंमें विश्वास पैदा करना है।

इसपर थोड़ा-सा भी विचार करनेवालेको यह बात समझमें आ जानी चाहिए कि जो लोग सुधारके विरोधी हैं उनपर इस उपवासका न केवल कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, बल्कि यदि इसकी समाप्ति मेरी मृत्युमें हो तो वे सम्भवतः इसका स्वागत ही करेंगे, और उनका ऐसा करना, उनके अपने दृष्टिकोणसे, शायद उचित भी होगा। एक क्रुद्ध सज्जनने इस बातको स्पष्ट शब्दोंमें कहनेमें भी संकोच नहीं किया है। पर एक और सज्जन कहते हैं: "आपका यह कहना बहुत अच्छा है कि आपका इरादा अमुक-अमुक काम करनेका नहीं है। परन्तु बहुत-से पुरातनपंथी लोग, आपके बेहद जोशीले अनुयायियोंके हाथों व्यक्तिगत क्षतिके डरसे, भीड़का अनुकरण करेंगे।"

इस तरहका तर्क लगभग हर प्रकारकी परिस्थितिमें दिया जा सकता है। अपने जीवन-कालमें मैंने बहुत-से ऐसे आन्दोलनोंका नेतृत्व किया है जिनमें किसी उपवासकी जरूरत नहीं पड़ी। पर जिस आक्षेपका मैं अब उत्तर दे रहा हूँ वह, मुझे मेरे उद्देश्यकी राहसे हटानेके लिए, मुझपर अक्सर लगाया जाता रहा है।

प्रस्तावित उपवासके अभीष्ट परिणाम चाहे कुछ भी हों, पर वह सम्मानका प्रश्न होनेके अलावा, मौका पड़नेपर इस कारण भी किया जाना चाहिए कि वह मुझपर विश्वास रखनेवाले हजारों-लाखों लोगोंको निश्चय ही प्रशंसनीय प्रयासके लिए प्रेरित करता है। हर धार्मिक आन्दोलनमें इसी तरहकी स्थिति होनी चाहिए।

१. यरवदा जेल, पूनासे गांधीजी द्वारा जारी किया गया। इससे पहलेके छः वक्तव्य ४, ५, ७, ९, १४ और १५ नवम्बर, १९३२ को जारी किये गये थे; देखिए खण्ड ५१।

२. गुरुवायुरका मन्दिर हरिजनोंके लिए खुलवानेके हेतु श्री केलप्पन द्वारा किये जानेवाले उपवासके समर्थनमें; देखिए "वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – ९", – २६-११-१९३२; यह उपवास २ जनवरी, १९३३ से आरम्भ होना था पर बादमें स्थगित कर दिया गया।

दूसरा प्रश्न है:

क्या आप हिन्दुओंके एक वर्गको दूसरेके विरुद्ध खड़ा नहीं कर रहे हैं?

कदापि नहीं। हर सुधारका कुछ-न-कुछ विरोध अनिवार्य है। परन्तु विरोध और आन्दोलन, एक सीमातक, समाजमें स्वास्थ्यके लक्षण होते हैं। सनातनियों और सुधारकोंमें कोई स्थायी फूट पड़नेका मुझे जरा भी भय नहीं है। सनातनियोंके विरोधको तुच्छ समझना या उनकी भावनाकी उपेक्षा करना ऐसी चीज है जो मुझसे बहुत दूर है। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि उनमें से कुछ तीव्रतासे यह महसूस कर रहे हैं कि सनातन धर्म खतरेमें है। फिर भी आश्चर्यकी बात यह है कि सनातनी और सुधारकके बीच जो भेद है, वह, कम-से-कम सिद्धान्ततः, बहुत ही थोड़ा है।

सनातनियोंसे मिले प्रायः प्रत्येक पत्रमें ये आश्चर्यजनक स्वीकृतियाँ मिलती हैं:

> १. हम यह स्वीकार करते हैं कि हरिजनोंकी दशाको सुधारनेके लिए बहुत-कुछ करनेकी जरूरत है; २. हम यह स्वीकार करते हैं कि बहुत-से सवर्ण हिन्दू हरिजनोंके साथ दुर्व्यवहार कर रहे हैं; ३. हम यह स्वीकार करते हैं कि उनके बच्चोंको शिक्षा मिलनी चाहिए और उनके रहनेके लिए अच्छे घर होने चाहिए; ४. हम यह स्वीकार करते हैं कि उनके लिए नहाने और खुदके लिए पानी लेनेकी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए; ५. हम यह स्वीकार करते हैं कि उन्हें पूरे राजनैतिक अधिकार मिलने चाहिए; ६. हम यह स्वीकार करते हैं कि उन्हें पूजा-उपासनाकी पर्याप्त सुविधाएँ होनी चाहिए; और ७. हम यह स्वीकार करते हैं कि उन्हें वे सब नागरिक अधिकार मिलने चाहिए जो औरोंको प्राप्त हैं।

परन्तु, इन सनातनियोंका कहना है, "हमें उन्हें छूने या उनसे मिलने-जुलनेके लिए, खासकर जबतक कि वे अपनी वर्तमान स्थितिमें हैं, बाध्य नहीं किया जाना चाहिए।"

तो मैं उनसे कहता हूँ, जब आप उन्हें अपने ही स्तरपर लानेकी आवश्यकता स्वीकार करते हैं, तो आप इस बातको लेकर क्षुब्ध क्यों हैं कि अन्य सवर्ण हिन्दू एक कदम और आगे बढ़ जायेंगे — जिन शास्त्रोंपर आपकी आस्था है उन्हींके आधार पर, वे यह मानने लगेंगे कि उनका कर्त्तव्य हरिजनोंको अस्पृश्य समझना नहीं है, बल्कि यह है कि जो अधिकार और विशेषाधिकार आप उन्हें देना तो स्वीकार करते हैं, लेकिन यह चाहते हैं कि वे उनका उपभोग आपसे अलग करें, उन सबका उपभोग उन्हें अपने साथ करने दिया जाये। आप जब अपनी कार्य-स्वतन्त्रताकी रक्षा करना चाहते हैं और दबाव डालनेके विचार तकका विरोध करते हैं, जैसा कि उचित भी है, तो निश्चय ही आप यह भी नहीं चाहेंगे कि सुधारकी जिन योजनाओंको आप आवश्यक मानते हैं, सुधारकोंको उन्हें बिलकुल उसी ढंगसे जिससे कि आप चाहते हैं, कार्यान्वित करनेके लिए बाध्य किया जाये।

मैं इससे एक बेहतर तरीका सुझाता हूँ। चूंकि आप हरिजनोंकी दशामें सुधारकी आवश्यकताको स्वीकार करनेमें सुधारकोंसे सहमत हैं, और चूंकि आपने इस दिशामें

अभीतक कोई भी ठोस कार्य नहीं किया है, इसलिए सुधारक जो कोष इकट्ठा कर रहे हैं उसमें उदारतापूर्वक दान दीजिए, और समान योजनाकी पूर्तिके लिए उन्हें अपने एजेंटकी तरह इस्तेमाल कीजिए। जिस तरह आप यह चाहते हैं कि वे आपकी हिन्दूधर्मकी व्याख्याका सम्मान करें, उसी तरह आप भी उनकी हिन्दूधर्मकी व्याख्याका सम्मान कीजिए। आपने अभीतक, व्यवहारमें, सुधारककी हरिजनोंके साथ उठने-बैठनेकी कार्रवाईपर रोष प्रकट नहीं किया है। आपने उसे अपनी इच्छानुसार काम करने दिया है। आपने उसका बहिष्कार नहीं किया है। तो अब सिर्फ इसलिए कि यह आन्दोलन अधिक सक्रिय और अधिक व्यापक हो गया है, इसके विरोधका कोई अर्थ नहीं है।

एक कठिनाई अभी भी राहमें अड़ी है। इस समय जो सार्वजनिक मन्दिर और सार्वजनिक संस्थाएँ हैं और जिनमें हरिजनोंपर कहीं-कहीं कानूनन और ज्यादातर बिना कानूनके ही प्रतिबन्ध हैं, उनका उपयोग किसके हाथमें रहे। इस कठिनाईको दूर करनेका एक बहुत ही सीधा तरीका है। यदि हर पक्ष केवल क्रोध और एक-दूसरेका तिरस्कार करना छोड़ दे, तो हर गाँव या ग्राम-समूह और हर नगर या नगरके हर भागमें आसानीसे मतसंग्रह किया जा सकता है। जिस पक्षको अपने दृष्टि-कोणके पक्षमें बहुमत प्राप्त हो जाये, उसे ही सार्वजनिक संस्थाओंका, जिनमें मन्दिर भी शामिल होंगे, उपयोग अपने हाथमें लेना चाहिए। यदि बहुमत सनातनियोंके पक्षमें जाय, तो सुधारकों और हरिजनोंको समान सुविधाएँ प्रदान करनेपर जो खर्च आये उसमें सुधारकोंके साथ सनातनियोंको भी अपना हिस्सा चुकाना चाहिए।

सुधारकोंको मैं हरिजनोंके साथ इसलिए रख रहा हूँ कि यदि उनमें योग्यता है और वे अपने विश्वासके अनुसार कार्य करते हैं, तो कुछ समय बीतने पर उन्हें यह अपना कर्त्तव्य लगने लगेगा कि ऐसी किसी भी सुविधाको जिसका हरिजन सवर्ण हिन्दुओंके साथ बिलकुल बराबरीके आधारपर उपभोग न कर सकते हों, वे स्वयं भी स्वीकार न करें।

तर्ककी इस धाराका अनुसरण करनेसे सनातनी यह देखेंगे कि, न्यायके अनुसार, उन्हें समानान्तर सुविधाएँ स्थापित करनेका पूरा खर्च वहन करना चाहिए। क्योंकि, जैसा मैंने उनके पत्रोंसे समझा है और जैसा मैं ऊपर स्पष्ट कर चुका हूँ, सनातनी यह स्वीकार करते हैं कि जिन सुविधाओंका वे अबतक उपभोग करते आये हैं और जिनसे हरिजनोंको अबतक वंचित रखा गया है, उन सबका हरिजनोंको भी अधिकार है। सनातनियोंको, बिना पूरा विचार किये, अपने मनमें परिस्थितिकी वैसी कल्पना नहीं कर लेनी चाहिए जैसी कि वह वस्तुतः नहीं है।

उन्हें यह बात साफ समझ लेनी चाहिए कि यरवदा समझौते[1] के अनुसार और हालमें ही स्थापित अखिल भारतीय अस्पृश्यता-निवारक संघके अनुसार अस्पृश्यता-

१. विधानसभाओंमें दलितवर्गोंके प्रतिनिधित्व और उनके कल्याणसे सम्बन्धित कुछ अन्य विषयोंपर दलित वर्गों और शेष हिन्दू समाजके नेताओंके बीच हुआ समझौता। समझौतेके मजमूनके लिए देखिए खण्ड ५१, परिशिष्ट २।

निवारणका जो अर्थ है, उसमें जो-कुछ मैंने कहा है उससे अधिक और कुछ नहीं है। अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाह उसमें शामिल नहीं हैं। सनातनियोंको इस बातको लेकर परेशान नहीं होना चाहिए कि मुझ-समेत बहुत-से हिन्दू इससे बहुत आगे बढ़ जायेंगे। किसीके निजी निर्णय और निजी कार्यको दबाना तो वे नहीं चाहेंगे। और यदि उनको अपने विश्वासमें गहरी आस्था है, तो उन्हें आगे क्या होना है इसकी पूर्वकल्पनासे भयभीत नहीं होना चाहिए। यदि किसी विशेष सुधारमें स्वयं अपनी जीवनी शक्ति है और वह समयकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए आया है, तो पृथ्वीकी कोई भी शक्ति उसकी अनिवार्य प्रगतिको रोक नहीं सकती।

तीसरा प्रश्न है:

> **सामाजिक और धार्मिक प्रश्नोंपर आपके जो विचार हैं उनकी ओर जन-साधारणका ध्यान जबर्दस्ती आकर्षित करके और उन्हें मनवानेके लिए जनतामें एकाएक एक तूफानी आन्दोलन खड़ा करके, क्या आप राजनैतिक उद्धारपर आँखें नहीं लगाये हुए हैं?**

अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनके संचालनके लिए, एक कैदीकी हैसियतसे, जो मर्यादाएँ मैंने स्वीकार कर रखी हैं, उनका उल्लंघन किये बिना मैं इस प्रश्नका उत्तर विस्तारसे दे नहीं सकूँगा। पर मैं इतना कह सकता हूँ कि जो मुझे थोड़ा-सा भी जानते हैं उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि मैं राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और अन्य प्रश्नोंके बीच कोई बड़ी और अमिट विभाजन-रेखा नहीं खींचता हूँ। मेरा सदा यह विचार रहा है कि वे सब एक-दूसरेपर निर्भर हैं और एकका समाधान शेषके समाधानको निकट लाता है। पत्रोंसे जो प्रश्न मैंने एकत्रित किये हैं वे इतनेसे ही समाप्त नहीं हो जाते। यह पत्र-व्यवहार, उस बहुत ही सीमित सहायताको ध्यानमें रखते हुए जो मैं स्वाभाविक रूपसे प्राप्त कर सकता हूँ, मेरे लिए अपने सामर्थ्यसे अधिक सिद्ध होने लगा है। इसलिए शेष प्रश्नोंको अपनी योग्यतानुसार मैं अगले वक्तव्यमें[1] लूँगा।

पत्र-लेखकोंसे मैं यह अनुरोध करना चाहूँगा कि वे मुझपर दया करें। अबतक मैं लगभग सभी पत्रोंकी, जो मुझे मिले हैं, बहुत ही औपचारिकताके साथ प्राप्तिकी सूचना भेजता रहा हूँ। परन्तु अबसे पत्र-लेखक कृपया उन्हीं उत्तरोंसे सन्तुष्ट हो जायें जो मैं अपने इन वक्तव्यों द्वारा दे पाता हूँ। और यदि वे अपने पत्रोंको संक्षिप्त रखें और केवल तभी लिखें जब उन्हें कोई मौलिक बात कहनी हो या ऐसे प्रश्न रखने हों जिनका मुझसे उत्तर पाना इस आन्दोलनसे सम्बन्धित किसी समस्यापर अपना निर्णय लेनेके लिए आवश्यक हो, तो उससे उन्हें स्वयं और मुझे बड़ी सहायता मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-११-१९३२

१. देखिए पृ० ९-१२।

२. प्राक्कथन : "हमारा कलंक" का

१६ नवम्बर, १९३२

सस्ता साहित्य मण्डलका यह साहस स्तुत्य है। अस्पृश्यता-निवारणके लिए जब प्रचण्ड हलचल हो रही है तब उस बारेमें क्या और कैसे हो रहा है वह सबको जानना आवश्यक है। हम इस पापको ज्ञानपूर्वक मिटाना चाहते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि हिन्दू जनता अस्पृश्यता क्या चीज है और इस बारेमें हमारा क्या कर्त्तव्य है जान लेवें।

मोहनदास गाँधी

हमारा कलंक

३. तार : जमनालाल बजाजको

पूना
१६ नवम्बर, १९३२

सेठ जमनालाल बजाज
कैदी
जिला जेल
धूलिया

तार मिला। यदि जरूरी हो तो मुझे रोज तारसे सूचित[1] करते रहो।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ९८

१. स्वास्थ्यके बारेमें, देखिए पृष्ठ १९

४. पत्र : एस० एम० माइकेलको[1]

१६ नवम्बर, १९३२

मैं किसीको सन्तोष दे सकनेका दावा नहीं करता। मैं केवल कोशिश कर सकता हूँ। श्रीयुत केलप्पनका उपवास पूर्व सूचनाके वगैर था और इसलिए प्रारम्भिक दोषके साथ शुरू हुआ था। वह बात प्रस्तावित उपवासके साथ नहीं होगी। यदि मन्दिर हरिजनोंके लिए खुल जाता है तो वास्तवमें न्यासियोंके विरुद्ध किसी दवावके कारण वैसा नहीं होगा, बल्कि उन मन्दिर जानेवालोंकी अदम्य माँगसे होगा जो मन्दिरके सच्चे मालिक हैं। इसका उलटा ले लीजिए। यदि मन्दिर जानेवालोंके विचार नहीं बदले जाते तो क्या न्यासियोंपर कैसा भी कोई दवाव डालकर मन्दिरमें हरिजनोंका प्रवेश कराया जा सकता है?

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग २, पृ० २५१

५. पत्र : के० नटराजनको[2]

१६ नवम्बर, १९३२

आपके दोनों पत्र मिले हैं। मुझे खुशी है कि डाक्टरको दिल्लीमें उपयुक्त काम मिल गया है। तुम्हारा दूसरा पत्र मेरी विवेकबुद्धिको अपनी बात जँचानेके लिए है और ठीक भी है। किन्तु मेरे-जैसोंके मामलेमें विवेकबुद्धिको जँचानेमें दो कठिनाइयाँ हैं। पहले तो यह कि दलील चाहे बिलकुल ठोस हो, हो सकता है कि वह समान आधार-भूमिपर आधारित न हो और इसलिए उसे मैं स्वीकार न कर सकूँ। दूसरे, जैसा कि आपने खुद ही कहा है और ठीक कहा है कि मेरे-जैसोंका मामला तर्कसे परे का है। जो भी हो ऐसे मामलोंमें मैंने हमेशा एक-से विचारवाले मित्रोंके साथ विचार-विनिमयकी इच्छा रखी है, क्योंकि मेरा पूरा विश्वास है कि गलती करनेवाले मानवोंके लिए अन्तरात्माकी आवाज जैसे मामलोंमें भी कोई चीज पूर्णरूपेण निश्चित नहीं है। परमेश्वर अपनी आवाज सुनानेके लिए पवित्रतम साधन चाहता है, लेकिन बेचारा मरणशील मानव केवल पूर्ण बननेका प्रयास ही कर सकता है। और जब तक वह शरीर धारण किये हुए है, कभी पूर्णता नहीं पा सकता। इसलिए मैं जो

१. श्री माइकेलने लिखा था "यदि आप मुझे भरोसा दिलायें कि आपके प्रस्तावित उपवासमें कोई अनुचित दवाव नहीं है, तो मैं अपना उपवास आरम्भ नहीं करूँगा।"

२. **इंडियन सोशल रिफॉर्मरके** सम्पादक।

चाहता हूँ, वह इतना भर-ही कि जो कुछ भी मुझे प्रेरित करता रहा है उसपर इस आशासे आपके साथ पूरी तरह खुलकर बात करूँ कि या तो आप मेरा दृष्टि-कोण समझ जायें और मेरे कार्यका पूर्ण औचित्य समझ जायें या फिर आप कोई ऐसी बात या दलील पेश करें जिससे मैं वह दोष जान सकूँ जो अन्यथा मेरे ध्यानमें शायद न आ सका हो। जो भी हो, मैं स्वीकार करता हूँ कि प्रस्तावित उपवासकी नैतिकताके सम्बन्धमें मेरे मनमें कोई सन्देह नहीं है। इसलिए मैं किसी मानसिक संघर्षसे ग्रस्त नहीं हूँ और इसलिए मैं नहीं चाहता कि आप बम्बई वापस आनेकी जल्दी करें। आप उत्तर भारतमें अपने सभी निजी व सार्वजनिक कार्यक्रम जरूर पूरे करें और जब यथासमय बम्बई वापस आयें तो मैं चाहूँगा कि यदि आप कुछ घंटोंका समय निकाल सकें तो पूना आ जायें ताकि थोड़ा विचार-विनिमय हो जाये।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग २, पृष्ठ २४८-९

६. पत्र : चमन कविको

१६ नवम्बर, १९३२

जहाँ मस्जिद, मन्दिर और गिरजेका सैकड़ों पाखंडियोंने दुरुपयोग किया है, वहाँ करोड़ोंने उनका सदुपयोग भी किया है। इस कथनकी सचाईकी परीक्षा करनी हो, तो अपनी सुन्दर कल्पनाशक्तिका उपयोग करो और कल्पनामें यह चित्र खींचो: एक-एक गिरजे, एक-एक मन्दिर और एक-एक मस्जिदको कोई सुधारक एक दिनके भीतर जमींदोज कर दे, तो फिर विचार करो कि उन करोड़ों भोले-भाले मनुष्योंका, जिन्हें इस संसारमें रोज इन मन्दिरों और मस्जिदोंसे आत्मसन्तोष मिलता था, यह जानकर क्या हाल होगा कि वे एकदम खत्म हो गये हैं? मैं तो इस चीजका रोज अनुभव करता हूँ। नापाक-से-नापाक मन्दिरोंमें भी पाक दिलसे जानेवाले भक्तोंको ईश्वरके दर्शन जरूर होते हैं। यही उसकी अजीब कुदरत है या यों कहिए कि यही उसकी माया है। लेकिन कोई महाभक्त कह गये हैं:

माया सबकों मोहै, तौऊ हरिजन सौं वा हारी रे।[1]

और अगर तुम्हारी कल्पनाने इतना देख लिया हो कि अगर मन्दिर हैं ही तो उन्हें हरिजनोंके लिए भी खुला होना चाहिए, तो फिर अपनी बुद्धिकी शक्तिसे ही तुम उपवासकी उपयोगिता भी समझ जाओगे; क्योंकि यह उपवास सनातनियोंके विरुद्ध नहीं, परन्तु उन लाखों या करोड़ों लोगोंके विरुद्ध है, जिन्हें मुझसे प्रेम है। इस उपवाससे उनमें खलबली मच जाये तो हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके दरवाजे खुले बिना न रहें।

१. माया सौने मोह पमाडे, हरिजनथी रही हारी रे।

चरखेके बारेमें मुझमें असीम धैर्य है। तुम्हारी देहातकी जानकारी कच्छतक ही सीमित है। मगर कच्छके गाँवों और दूसरे लाखों गाँवोंके बीच बहुत कम साम्य है। फिर कच्छमें भी अपने ही खेतमें पैदा की हुई कपाससे कपड़ा खुद ही तैयार किया जाये, तो उससे सस्ता और कोई कपड़ा नहीं हो सकता। यदि हो सकता हो, तो उसे सर्दी और धूपसे बचानेवाला या ऐब छिपानेवाला वस्त्र नहीं मानना चाहिए; उसे तो लाशको ढँकनेवाला कफन समझो। पानीके बजाय पानी जैसा दीखनेवाला जहरीला द्रव कोई मुझे मुफ्त दे और जिस प्यालेमें दे वह भी मुझे भेंट करे, और असली पानी कोई मेरी अंजलीमें ही डाले और उसके चार पैसे भी माँगे, तो मुझे क्या पसन्द करना चाहिए? तुम अधीर हो, तुम्हारा मन बड़ा चंचल है, तुम्हारा विश्वास अस्थायी है, इसलिए जल्दी-जल्दी चिढ़ जाते हो। यह कोई तुम्हारा स्वभाव नहीं है। यह तुम्हारी बीमारी है। इस बीमारीको निकाल दो। तुम्हें अपना स्वभाव तो धीरज रखने और लोहेकी तरह मजबूत बननेका डालना है। किसी भी चीजपर एकदम विश्वास कर लेनेकी जरूरत नहीं है। मगर बारीकीसे जाँच करनेके बाद जिस चीजपर विश्वास जम जाये, उससे तो उसी तरह चिपटे रहना चाहिए जैसे चींटा गुड़के घड़ेसे चिपटा रहता है। "प्राण जाय बरु वचन न जाई।" अब तो बहुत हो गया।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग २, पृष्ठ २५०-१

७. पत्र : नरसिंहराव बी० दिवेटियाको[1]

१६ नवम्बर, १९३२

सुज्ञ भाईश्री,

कहीं आपको पत्र लिखकर मैंने परेशान तो नहीं किया है। भिक्षुक अपनी झोली छिपाकर चले तो उसके हाथ कुछ भी नहीं लगेगा। आपकी वृद्धावस्था है इसलिए आपकी शक्तिकी सीमा है यह मैं कैसे कहूँ? जिससे मैं भीख माँग सकूँ ऐसा कोई और व्यक्ति आपके ध्यानमें हो तो मुझे नाम लिख भेजनेकी कृपा करेंगे?

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
नरसिंहरावनी रोजनीशी, पृ० ५४८

१. (१८५९-१९३७); एक गुजराती कवि और विद्वान

८. एक पत्र

१६ नवम्बर, १९३२

आपका पत्र मिला। आपका दुःख देखकर मुझे दुःख हुआ है। आपका क्रोध मैं समझ सकता हूँ। आपने सहन करनेमें कोई कसर नहीं रखी। इतनेपर भी आपको और दूसरोंको मैंने जो सलाह दी, उसका मुझे पछतावा नहीं है। ज्ञानपूर्वक दुःख सहन करनेसे दुनियामें आजतक किसीका बुरा नहीं हुआ। दुःख पड़े तो उसे सहन किया जाये, इसमें बुराई नहीं है। मगर इस वक्त मैं आपको कुछ नहीं समझा सकता। ईश्वर आपको शान्ति दे, आपका कल्याण करे। क्रोधमें भी आप लिखते रहेंगे, तो मुझे अच्छा लगेगा। बलसाड़में क्या करते हैं?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग २, पृ० २४७

९. वक्तव्य: अस्पृश्यतापर – ८

पूना

१७ नवम्बर, १९३२

यहाँ एक और प्रश्न है जो बहुत-से पत्र-लेखकोंने पूछा है:

> **आप कहते हैं कि आपका शास्त्रोंमें विश्वास है। हमारी समझमें नहीं आता कि उनसे आपका आशय क्या है, क्योंकि आप शास्त्रों द्वारा अनुमोदित बहुत-सी बातोंको मनमाने ढंगसे अस्वीकार करते लगते हैं। 'गीता' तक, जिसकी आप बराबर प्रशंसा करते हैं, शास्त्रोंके अनुसार चलनेका आदेश देती है।**

एक पिछले वक्तव्यमें[1] मैं जो बात कह चुका हूँ वह मुझे फिर दोहरा देनी चाहिए। 'गीता'के मुख्य विषयसे जिसकी संगति नहीं बैठती, वह मेरे लिए शास्त्र नहीं है, चाहे वह कहीं भी छपा क्यों न मिलता हो। मेरे पुरातनपंथी मित्रोंको यदि आघात न पहुँचे तो मैं अपना आशय और स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। नैतिकताके विश्वमान्य मूल सिद्धान्तोंसे जिसकी संगति नहीं बैठती, वह मेरे लिए शास्त्र-प्रमाण नहीं है। शास्त्र उन मूल सिद्धान्तोंके अतिलंघनके लिए नहीं, बल्कि उनकी पुष्टिके लिए बने हैं। 'गीता' मेरे लिए पूर्ण-पर्याप्त है, क्योंकि वह न केवल उन मूल सिद्धान्तोंके अनुरूप है, बल्कि यह भी बताती है कि हर कीमतपर हमें उनपर किन

१. दिनांक ४ नवम्बर, १९३२ का; देखिए खण्ड ५१, पृ० ३६१-५।

कारणोंसे जमे रहना चाहिए। अभी बताये गये इस स्वर्णिम नियमके बिना, मेरे-जैसे साधारण जन परस्पर-विरोधी पाठोंके जंगलमें और सुन्दर ढंगसे छपे तथा उतनी ही सुन्दर जिल्दवाले उन संस्कृत ग्रन्थोंके अम्बारमें ही भटकते रहते जिनके बारेमें प्रतिस्पर्धी पण्डित अपौरुषेयत्वका दावा करते हैं।

उदाहरणके लिए, ऐसी अनेक 'स्मृतियाँ' हैं, जिनमें से कुछको तो, उन छोटे-छोटे क्षेत्रोंके बाहर जहाँ वे कुछ सौ व्यक्तियोंके लिए पूजनीय हैं, कोई जानतातक नहीं है। उनके मूल स्रोत या रचना-कालके बारेमें कोई कुछ नहीं जानता। दक्षिणमें मैंने एक इसी तरहकी पोथी देखी थी। अपने विद्वान पण्डित मित्रोंसे जब मैंने उस पोथीके बारेमें पूछा तो उन्होंने बताया कि उन्हें उसकी कोई जानकारी नहीं है।

नाना आगम हैं, जिनकी यदि जाँच की जाये तो वे एक-दूसरेका खण्डन करते हैं। और उन छोटे-छोटे क्षेत्रोंके बाहर जहाँ कि वे मान्य हैं, उनका पालन आवश्यक भी नहीं है।

यदि ये सब ग्रन्थ हिन्दुओंके लिए अवश्य पालनीय मान लिये जायें, तो शायद ही कोई अनैतिक कार्य ऐसा रहेगा जिसके लिए शास्त्र-प्रमाण मिलना कठिन हो। यहाँतक कि प्राचीन मनुस्मृति तकमें, यदि उसमें से ऐसे श्लोक न निकाले जायें जिनकी प्रामाणिकता संदिग्ध है तो, कई वचन ऐसे खोजे जा सकते हैं जो उस महान ग्रन्थमें सर्वत्र मिलनेवाली उच्चतम नीतियों और शिक्षाओंका खण्डन करते हैं। इसलिए मैंने 'शास्त्र' शब्दका अर्थ भगवद्गीतामें, जहाँ वह केवल एक ही सन्दर्भमें आता है, कोई ग्रन्थ या गीतासे बाहरकी कोई आचार-संहिता नहीं किया है, बल्कि उसका अर्थ है — एक सजीव अधिकारीमें मूर्त हुआ सदाचार।

मैं जानता हूँ कि आलोचकको इससे सन्तोष नहीं होगा और एक साधारण जनकी हैसियतसे मैं किसीका मार्गदर्शन नहीं कर सकता। परन्तु मैं अपने आलोचकोंको यह बताकर कि शास्त्रोंसे मेरा आशय वस्तुतः क्या है, उनकी जिज्ञासा शान्त कर सकता हूँ।

एक और प्रश्न जो उतने ही जोरसे रखा जाता है, यह है :

> **दिव्य मार्गदर्शन या भीतरी आवाजसे आपका आशय क्या है, और यदि हर कोई अपने लिए इस तरहके मार्गदर्शनका दावा करने लगे और हर-एक अपने पड़ोसियोंसे बिलकुल भिन्न ढंगसे काम करने लगे, तो उस हालतमें आप क्या करेंगे और दुनिया क्या करेगी?**

यह एक अच्छा प्रश्न है। दिव्यताने यदि आत्म-रक्षाकी कोई व्यवस्था न रखी होती तो हम एक अच्छे खासे संकटमें पड़ जाते। इसीलिए, जहाँ दावा सब कर सकते हैं, वहाँ उसे न्यायोचित केवल कुछ ही सिद्ध कर सकेंगे। जो व्यक्ति दिव्य प्रेरणा या भीतरी आवाजके आदेशपर काम करनेका झूठा दावा करता है, उसे, किसी लौकिक अधिपतिके आदेशपर काम करनेका झूठा दावा करनेवालेकी अपेक्षा, अधिक बुरी दशा भोगनी होगी, क्योंकि भंडा फूटनेपर जहाँ दूसरा शारीरिक क्षति उठा कर ही बच जायेगा, वहाँ पहला शरीर और आत्मा दोनोंसे नष्ट हो सकता है।

उदार आलोचक मुझपर जालसाजीका आरोप नहीं लगाते हैं, बल्कि यह कहते हैं कि बहुत सम्भव है कि मैं किसी व्यामोहके वशीभूत होकर काम कर रहा होऊँ। उस अवस्थामें भी, मेरे लिए परिणाम उससे बहुत भिन्न नहीं होगा जो मेरे झूठा दावा करनेपर होना है। विनम्र साधकको, जैसा कि मैं होनेका दावा करता हूँ, अत्यन्त सतर्क रहना होता है और मानसिक सन्तुलन रखना होता है। ईश्वर उसका मार्गदर्शन करे, इससे पहले उसे अपने-आपको उसके आगे शून्य कर देना होता है। मुझे अब इस विषयके और विस्तारमें नहीं जाना चाहिए।

मैंने जो दावा किया है वह न तो असाधारण है और न एकान्तिक ही है। जो भी अपने-आपको निस्संकोच ईश्वरके हाथमें सौंप देंगे, ईश्वर उन सबके जीवनको शासित करेगा। 'गीता' की भाषामें, ईश्वर यहाँ उनके द्वारा कार्य करता है जो पूर्णतया अनासक्त हैं, अर्थात् जिनके अहम्का नाश हो गया है।

व्यामोहका कोई प्रश्न ही नहीं है। मैंने एक सीधी-सादी वैज्ञानिक सचाई कही है, जिसकी वे सभी लोग परीक्षा कर सकते हैं जिनमें आवश्यक योग्यताएँ प्राप्त करनेका संकल्प और धैर्य है। और वे योग्यताएँ भी, यदि दृढ़ संकल्प हो तो, इतनी सीधी हैं कि समझमें आ सकती हैं और इतनी आसान हैं कि प्राप्त की जा सकती हैं।

आखिरी बात यह है कि मेरे दावेसे किसीको परेशान होनेकी जरूरत नहीं है। लोगोंसे मैं जो-कुछ करनेको कह रहा हूँ उसकी सचाई विवेकसे जाँची जा सकती है। मैं जब रंगमंचसे गायब हो जाऊँगा, अस्पृश्यताको तब भी मिटाना होगा। उपवास ईश्वर-प्रेरित है या नहीं, इस बातको लेकर मेरे निकटतम सहयोगियों तकको चिन्तित होनेकी जरूरत नहीं है। हो सकता है, मेरे प्रति प्रेमके कारण वे इस ध्येयमें दूने उत्साहसे काम करें। परन्तु यदि अन्तमें यह भी पता चले कि उपवास एक हठी मित्रका मूर्खता-भरा कार्य था, तो भी वह कोई विपत्ति नहीं होगी। और जिनका मुझमें न प्रेम है, न विश्वास, उनपर इसका कोई प्रभाव ही नहीं पड़ना है। इसलिए प्रस्तावित उपवास या उसके बारेमें मेरे दावेपर यह जो लगातार वितण्डा उठाया जा रहा है, इसका उद्देश्य जनमानसको उलझनमें डालना और राष्ट्रके आगे जो महान कार्य है उससे उसका ध्यान हटाना है।

इसलिए, मैं इस वक्तव्यको अब पाठकोंका ध्यान थोड़े-से उन चित्रोंकी ओर आकर्षित करके समाप्त कर दूंगा जो मुझे मिले पत्रोंके अम्बारमें से छाँटे गये हैं।

यह बम्बईके एक उपनगर विले पार्लेका चित्र है, जहाँ अन्य लोगोंके अलावा अच्छे खाते-पीते हिन्दू भी रहते हैं। इस उपनगरमें मोटे तौरपर १७०० विला या मकान हैं। नगरपालिकाको यहाँसे ७०,००० रुपयेकी आय है जिसमें से ३१,००० रुपये सफाईपर खर्च किये जाते हैं। भंगियोंको जहाँ रहनेको स्थान दिया गया है, वहाँ न सड़कें हैं, न पानीकी व्यवस्था है और न सफाईकी सुविधा है। जमीन नीची है और झोपड़ियाँ टूटे-फूटे टीनोंसे, जो कभी मैलेकी सफाईके काम आती थीं, बनाये गये महज खोखे हैं। रोशनीकी वहाँ कोई व्यवस्था नहीं है और पास ही वह जगह है जहाँ सभी उपनगरोंका कूड़ा-करकट डाला जाता है, जिससे हमेशा दुर्गन्ध उठती

रहती है। उसके बराबर ही मैला जमा करनेके लिए एक ढाँचा खड़ा है; उससे लगा पानीका एक नल है जिससे गन्दे टीन साफ किये जाते हैं। यदि ओवरसियर मेहरबान हो तो वह भंगियोंको उस नलसे पानी ले लेने देता है। दूसरी तरफ गाड़ियोंकी कतार है जिनमें अलग-अलग घरोंसे इकट्ठी की गई मैलेकी बाल्टियाँ डाली जाती हैं। भंगियोंको अपना जीवन इसी परिवेशमें बिताना पड़ता है। इस स्थानके चारों ओर जो मैदान हैं उनमें अक्सर पानी भरा रहता है, मच्छर पैदा होते हैं, बिच्छू, साँप और चूहे पलते हैं। इकत्तीस परिवार इस दशामें रह रहे हैं जिनमें ३५ पुरुष, २५ स्त्रियाँ, ३४ लड़के और १५ लड़कियाँ हैं।

१०९ इन्सानोंकी इस आबादीमें केवल ९ लड़के ऐसे हैं जो मुश्किलसे थोड़ा लिख-पढ़ सकते हैं। बाकी बिलकुल निरक्षर हैं। यह एक ऐसा उपनगर है जिसके निवासी, यदि उन्हें अपने बन्धु-मानवोंका थोड़ा-सा भी खयाल हो तो, इनके लिए अच्छे घरोंमें, जहाँ रोशनी, पानी और शहरी जीवनकी अन्य आवश्यक सुविधाएँ हों, अच्छी तरह रहनेकी व्यवस्था कर सकते हैं। यहाँ सनातनियों और सुधारकों दोनोंके लिए काम मौजूद है। यह कहना कि विले पार्ले नगरपालिकाकी आय केवल ७०,००० रुपये है जिसमें से ३१,००० रुपयेकी प्रचुर राशि वह सफाईपर खर्च करती है, मेरी शिकायतका उत्तर नहीं होगा। मैं यह जानता हूँ कि विले पार्लेके निवासी इतने सम्पन्न हैं कि समाजके इन उपयोगी सेवकोंके लिए अपने ऊपर विशेष टैक्स लगा सकते हैं। परन्तु मैं उसे धीमी प्रगति ही मानूँगा। हिन्दू निवासियोंका यह प्राथमिक कर्त्तव्य है कि वे रातोंरात अच्छा चन्दा इकट्ठा कर डालें और भंगियोंके लिए उपयुक्त घरों और अन्य सुविधाओंकी व्यवस्था करें। यदि उन्होंने ऐसा किया, तो वह उनका अपने बन्धु-मानवोंके प्रति सीधा-सादा कर्त्तव्य-पालन ही होगा। ऐसा करनेके बाद ही उनका नगरपालिकासे अतिरिक्त वार्षिक व्यय-भार उठानेके लिए कहना उचित होगा। भंगी अपेक्षाकृत आरामसे रह सकें, इसके लिए वह भार निस्सन्देह उसे उठाना ही होगा।

अखिल भारतीय अस्पृश्यता-निवारक संघके अथक परिश्रमी सचिव श्रीयुत ए० वी० ठक्करने भी संघकी ओरसे किये गये अपने दौरोंमें भंगियोंके जिन घरोंका निरीक्षण किया उनका बहुत-कुछ इसी तरहका चित्र खींचा है। बिहारमें दानापुर और पटनाके आसपासके अन्य स्थानोंपर इस तरहके घरोंकी दशाका उन्होंने बहुत ही हृदय-विदारक विवरण दिया है। मैं चाहता हूँ कि शास्त्रोंमें अस्पृश्यताके सम्बन्धमें क्या लिखा है और क्या नहीं लिखा है, इस निरर्थक विवादमें पड़नेकी बजाय, हममें से हर-एक तथाकथित अस्पृश्योंकी दशाके सुधारमें जुट जाये। काम इतना अधिक है कि वे सभी विद्वान पत्र-लेखक जिन्होंने, बिना किसी अपवादके, मुझे यह विश्वास दिलाया है कि उनकी भौतिक और नैतिक दशाको सुधारनेकी इच्छा उनमें किसीसे भी कम नहीं है, उसमें लग सकते हैं और फिर भी काम बच रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-११-१९३२

१०. पत्र : मीराबहनको

१७ नवम्बर, १९३२

चि० मीरा,[१]

मैं दायें हाथको काममें नहीं ले सकता सो बात नहीं है, परन्तु बायेंसे काम लेना बेहतर है। मैंने यह पत्र प्रातःकालकी प्रार्थनासे पहले सिर्फ इसलिए शुरू किया है कि छोटा-सा परिवार जमा हो उससे पहलेके थोड़े-से मिनटोंका उपयोग हो जाये। मेरे पत्र सदाकी अपेक्षा कुछ छोटे पाओ तो आश्चर्य न करना। हरिजन-कार्य इतना भारी हो गया है कि और किसी कामकी गुंजाइश ही नहीं रहती। भारी पत्र-व्यवहारको पढ़नेमें ही दो घंटेसे ज्यादा लग जाते हैं। (यह महादेव आ गये) (अब मैं प्रार्थनाके बाद फिर शुरू करता हूँ) मुलाकातोंमें दो-तीन घंटे चले जाते हैं। इसलिए मुझे दूसरा काम घटाना पड़ता है। चूँकि यहाँके डाक्टरोंकी पक्की राय है कि कोहनियोंमें सिवाय कताईसे आराम देनेकी आवश्यकताके और कोई खराबी नहीं है, इसलिए मैंने चरखा बिलकुल छोड़ दिया है और लगभग आध घंटेतक तकली ही चला लेता हूँ। तकलीमें दूसरे स्नायुओंको काममें लेनेकी जरूरत होती है। इस तरह लाजिमी समयकी बचत ऐसे वक्त हुई है जब उसकी जरूरत ही थी। (इस समय फिर विक्षेप हुआ, क्योंकि शर्बत पीना था और और फल तैयार करके खाने थे।)

तुम्हारे नमक छोड़ देनेकी मुझे चिन्ता नहीं है। जब छोड़नेका लाभ समाप्त हो जाये, तब फिर लेने लग जाना। मुझे पता नहीं कि ज्वार या बाजरेकी रोटी तुम्हें माफिक आयेगी या नहीं। क्या जेलका पिसा हुआ गेहूँका मोटा आटा है ही नहीं? खैर, ज्वार या बाजरेकी एक रोटीसे तुम्हें कुछ भी हानि नहीं होनी चाहिए। लेकिन सूखे मेवे और ताजे फल खूब लेनेसे तुम बिलकुल अच्छी रहोगी।

किसनको[२] अपनी आँखोंका ध्यान रखना चाहिए और अच्छी तरह तन्दुरुस्त बनना चाहिए।

मेरी और प्रगति हुई है। और १½ पौंड वजन बढ़ जानेसे कुल १०३½ पौंड हो गया है। जहाँतक मेरी कल्पना है, इसका कारण भोजन सम्बन्धी एक खोज है। यह उसी समय हुई जब अस्पृश्यताका काम शुरू हुआ। लेकिन इस कामसे वजनकी वृद्धिका कोई वास्ता नहीं है। मैं लगभग एक औंस ताजा सुखाया हुआ दूध लेता हूँ। इसे मराठी और गुजरातीमें मावा कहते हैं। दूधमेंसे पानी उड़ा दिया जाता है। वह भारी साबित होना चाहिए। परन्तु मालूम होता है कि मेरे लिए वह ईश्वरकी

१. मीराबहनको लिखे इस अंग्रेजी पत्रमें तथा अन्य पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरीमें है।

२. किसन घुमटकर, प्रेमाबहन कंटककी मित्र।

देन सिद्ध हुआ है। इसके कारगर होनेके बारेमें निर्णय देना अभी बहुत जल्दी होगा। हाँ, इसमें शक नहीं कि मौजूदा वृद्धि इसीके कारण हुई है।

अमीर अलीकी प्रस्तावनाके सम्बन्धमें तुमने जो कही वह बहुत सही है। जबतक वह केवल इस्लामकी बात करता है, तबतक वह परिचित भूमिपर चलता है।

बा अभी आश्रममें ही है। वहाँ हमेशाकी तरह बीमारीका दौर रहा है। कुसुम गांधी काफी बीमार है, उसे बुखार नहीं छोड़ता।

हम सब अच्छे हैं और तुम दोनोंके लिए गाड़ी-भर प्रेम भेजते हैं।

बापू

[पुनश्च :]

अब सुबहके ५-३० बज चुके हैं। अब मुझे 'पुस्तकालय' जाना है और फिर घूमने जाना है, क्योंकि बादमें ६½ बजेके लगभग बकरियाँ आ जाती हैं।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२५०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७१७ से भी।

११. पत्र: ई० ई० डॉयलको

यरवदा सेन्ट्रल जेल[1]
१७ नवम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

श्रीमती मणिबहन पटेलके सम्बन्धमें लिखे मेरे पत्र[2]के उत्तरमें आपके १५ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। चूँकि उस पत्रमें जो माँग की गई थी उसका सम्बन्ध एक अत्यन्त तात्कालिक मामलेसे था, इसलिए मैंने तुरन्त उत्तरकी आशा की थी ताकि वह कामका हो। सौभाग्यसे उसके भाईकी[3] हालत अभी खतरनाक स्थितितक नहीं पहुँची है, लेकिन इतनी गम्भीर है कि उन लोगोंके लिए जो मरीजमें गहरी दिलचस्पी रखते हैं, चिन्ताका कारण बन जाये। मणिबहन पटेल जैसे एक नजदीकी रिश्तेदारकी ओरसे यह माँग कि उन्हें अपने भाई की बीमारीका हाल रोज-ब-रोज बताया जाये, मैं नहीं समझता कि कोई रियायतकी माँग है। मैं निवेदन करना चाहूँगा कि यह हर व्यक्तिका एक मानवीय अधिकार है, चाहे वह कैदी ही हो। इसलिए मैं चाहूँगा कि सरकार इसी मानवीय दृष्टिकोणसे मेरी माँगपर विचार करे। मेरी कोई ऐसी इच्छा नहीं है कि किसी ऐसी रियायतकी माँग करूँ जिसके पानेकी आशा रियायत होनेके कारण ऐसी ही परिस्थितियोंमें हर अन्य कैदी न कर सके।

१. इसे यरवदा मन्दिर भी कहा जाता था। इसके बादके पत्रोंमें ऊपर स्थानका उल्लेख नहीं किया जा रहा है। ४ जनवरी, १९३२ से ८ मई, १९३३ तक गांधीजी यरवदा जेलमें रहे।

२. देखिए खण्ड ५१, "पत्र: ई० ई० डायलको", १५-११-१९३२।

३. डाह्याभाई पटेल।

और कहीं सरकार यह न समझ सके, जैसे कि आप समझ सकते हैं, कि उसके पिताके वजाय मैंने क्यों माँग की, अतः मैं कह दूँ कि ऐसा केवल इसलिए हुआ है कि मणिबहन आश्रमवासिनी रही है और उसके पिताने १९२४ से उसे मेरी देखरेखमें छोड़ा हुआ है। सरकारके सामने जो कामकी जानकारी होनी चाहिए उसे पूरा करनेके लिए मैं यह और बता दूँ कि मैंने आपको अपना पत्र सरदार वल्लभभाई पटेलकी सलाहसे और स्वीकृतिसे लिखा था। यदि इस पत्रके पहुँचनेतक आदेश मिल न चुके हों तो क्या आप कृपया यह पत्र सरकारके सामने रखेंगे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
वॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८००(४०)(४), भाग २, पृ० ६१

१२. पत्र : भाऊ पानसेको[1]

१७ नवम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

गो-सेवा सम्बन्धी तुम्हारा प्रश्न ठीक है। दूधको बिलकुल छोड़ देना तो निश्चय ही आदर्श स्थिति है। किन्तु फिलहाल इस हदतक पहुँचना सम्भव नहीं दिखता; इस-लिए अभी तो हमारा आदर्श यही है कि जितनी गायें रखना सम्भव हो उतनी गायें रखकर अधिक-से-अधिक दूध प्राप्त किया जाये। इसके लिए हम अभी स्थिर नहीं हो पाये हैं। जमकर बैठ पायें तो इस क्षेत्रमें वहुत काम करनेका विचार मनमें स्पष्ट है। भगवानकी इच्छा हुई तो यह होकर रहेगा। दुबली-पतली गायसे जितना दूध मिल जाये उतना ले लेनेमें मैं अवश्य ही दोष मानता हूँ। इस परिस्थितिसे जितना बचा जा सकता हो बचें। हिन्दुस्तानमें वहुत थोड़ी जगहोंमें हृष्ट-पुष्ट गायका दूध मिल पाता है। सच बात तो यह है कि हिन्दू धर्म बहुत अस्त-व्यस्त हो गया है। गो-सेवा हिन्दूधर्मका एक स्तम्भ है; और फिर भी यहाँ गायकी जितनी शोचनीय अवस्था है, उतनी दुनियामें और कहीं नहीं है। किन्तु इस विषयमें सोचकर परेशान होनेकी तुम्हारे लिए कोई बात नहीं है। इस समय तो तुम्हें जो स्वधर्म प्राप्त है उसका पालन करनेमें ही सब धर्मोंका पालन समाविष्ट है, यह समझ लेना है।

अभी कब्ज कम नहीं होता, इससे यही समझना चाहिए कि आँतें बहुत शिथिल हो गई हैं। वीमारीने गहरी जड़ जमा ली है। शौच न होनेपर सिरमें दर्द हो तो फल न मिलने पर केवल सब्जियोंसे निर्वाह करें, इससे ज्वर नहीं आता, सिर नहीं

१. विनोबाके शिष्य।

दुखता, कुछ आधार भी मिल जाता है और शौच हो जानेकी सम्भावना भी बन जाती है। वहाँ इन दिनों तो काफी सब्जियाँ मिल ही रही होंगी। वहाँ रहना अनुकूल नहीं पड़ रहा हो तो छगनलालसे सलाह करके राजकोटमें रह लेना चाहिए। वहाँका अनुभव काम आयेगा और शायद राजकोटका पानी माफिक भी आ जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७४३)से। सी० डब्ल्यू० ४४८६ से भी; सौजन्य: भाऊ पानसे।

१३. पत्र: एस० डी० सातवलेकरको

१७ नवम्बर, १९३२

भाई सातवलेकर,

आपने तो मुझको वड़ा प्रोत्साहन भेजा है।[1] लेकिन ऐसा तो आपने नहीं माना था कि मैं आपकी अस्पृश्यता-निवारणके बारेमें भूत प्रवृत्तिको नहीं जानता था? यों तो मैंने आपका निबंध भी पढ़ लिया था। मुझे तो इतना हि जानना था कि इस वख्त इस प्रचण्ड आंदोलनमें आपका हिस्सा क्या होनेवाला है। इसका पता मुझको अच्छी तरह मिल गया। श्रीमंत महाराज ओर राणी साहेबा दोनोंको बहुत-२ धन्यवाद दीजिए। आपने जो वहाँके कार्यका सुंदर विवरण दिया है उसका मैं यथासमय सदुपयोग करूँगा।[2]

आपका,
मोहनदास

श्री एस० डी० सातवलेकरजी
स्वाध्यायमण्डल
औंध[3]
(जिला सतारा)[4]

(सी० डब्ल्यू० ४७६९)से; सौजन्य: एस० डी० सातवलेकर।

१. पहले १२ नवम्बर, १९३२ के पत्रमें गांधीजीने सातवलेकरसे अस्पृश्यता-निवारण कार्यमें हिस्सा लेनेको कहा था। देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ ४३१।

२. विवरण गांधीजीकी टीका सहित **हरिजन** २५-३-१९३३ में "औंध राज्य और अस्पृश्यता" शीर्षकसे छपा था।

३. व ४. ये अंग्रेजीमें हैं।

१४. पत्र : डॉ० रघुवीरसिंह अग्रवालको

१७ नवम्बर, १९३२

भाई रघुवीरजी,

आपका पत्र मिला है। पुस्तक[1] भी मिला। इस वख्त मैं इतना हरिजन सेवाके कार्यमें गिरफ्तार हूं कि मेरे पास समय नहीं है। लेकिन मैं आपने बताया हुआ उपचार करनेकी कोशिश करूँगा। और यहाँ तो हम तीन ऐनक वाले पड़े हुए हैं। तो आशा है कि हम तीनों प्रयोग करेंगे। आपको यहां आनेकी तकलीफ नहीं दुंगा। और जो सूचना आपने वताइ है समजनेमें मुसीवत नहीं है।

मोहनदास गांधी

डॉ० आर० एस० अग्रवाल
आई० ऍंड इयर स्पेशलिस्ट
बुलन्दशहर, यू० पी०[2]

सी० डब्ल्यू० ९६६४ से; सौजन्य : एम० एस० अग्रवाल, दिल्ली।

१५. तार : जगन्नाथको[3]

[१८ नवम्बर, १९३२][4]

आपको तथा आपके परिवारको हमारी संवेदना; हालाँकि महान विधवाको जो सौभाग्य मिला उसपर हमें अपनी निजी खुशी दबानी नहीं चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २०-११-१९३२

१. **माइंड ऍंड विज़न**, लेखक डॉ० आर० एस० अग्रवाल।

२. पता अंग्रेजीमें है।

३. सर्वेन्ट्स ऑफ द पीपल सोसाइटीके सचिव।

४. "लाहौर, १८ नवम्बर, १९३२" की तारीखमें प्रकाशित इस तारके लिए कहा गया था कि महात्मा गांधी, सरदार वल्लभभाई पटेल और महादेव देसाईने यह श्रीमती लाजपतरायके निधनपर भेजा था। देखिए "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तिथिकी प्रविष्टि भी।

१६. तार : गोविन्द मालवीयको

१८ नवम्बर, १९३२

[गोविन्द मालवीय][1]
इलाहाबाद

ईश्वरका धन्यवाद। आशा है कि पिताजी[2] की तबीयत कामके बोझसे बिगड़ी नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(३), भाग-३, पृ० ३७३।

१७. तार : मधुसूदन दासको

[१८ नवम्बर, १९३२][3]

मधुसूदन दास चिरायु हों। मुझे कुछ ऐसा खयाल हो गया था कि आप नहीं रहे। यह मेरी बेवकूफीका साफ प्रमाण है लेकिन यह इस बातका भी प्रमाण हो कि ईश्वरको आपसे अभी आगे भी बहुत वर्षों तक सेवा लेनी है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-११-१९३२

१८. वक्तव्य : मधुसूदन दासपर

१८ नवम्बर, १९३२

उड़ीसामें रह रहे एक आश्रमवासीने मुझे यह बताते हुए तार दिया है कि मधुसूदन बाबू, जिनके चर्मकारोंके लिए किये गये अच्छे कामका उल्लेख मैंने अपने पाँचवें वक्तव्य[4] में किया था, मरे नहीं हैं। पता नहीं यह मान लेनेकी बेवकूफी मैंने कैसे की कि मधुसूदन बाबू नहीं रहे। तार पानेपर मैंने निम्नलिखित तार[5] मधुसूदन बाबूको भेजा :

१. "दैनन्दिनी, १९३२" में १८ नवम्बर, १९३२ की प्रविष्टिसे।
२. मदनमोहन मालवीय।
३. "दैनन्दिनी १९३२" में इस तिथिकी प्रविष्टिसे। देखिए अगला शीर्षक भी।
४. देखिए खण्ड ५१, "वक्तव्य : अस्पृश्यतापर–५," १४-११-१९३२।
५. देखिए पिछला शीर्षक।

मधुसूदन बाबू और उनके परिवारसे मैं इस भद्दी भूलके लिए नम्रतापूर्वक क्षमा याचना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-११-१९३२

१९. पत्र : ई० ई० डॉयलको

१८ नवम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

यह जानते हुए कि सेठ जमनालाल बजाजको कुछ दिनोंसे खाँसीकी तकलीफ है और यह भी कि उन्हें कानकी तकलीफ है जिसके बारेमें शक है कि तपेदिककी है, मैंने उन्हें यह सुझाव देते हुए तार[1] दिया था कि उन्हें अपने विशेष सलाहकार डा० मोदीको बुला भेजना चाहिए जो बम्बईके कान व गलेके विशेषज्ञ हैं। उत्तरमें उन्होंने ऐसा तार दिया है:

> मिला। सामान्य हालत वैसी ही। खाँसी और मवादका निकलना जारी। आज जेलोंके महानिरीक्षकको यह अनुरोध करते हुए तार दिया है कि बम्बई अथवा पूनामें, जहाँ-कहीं सरकारके लिए सुविधाजनक हो, एक्सरे द्वारा जाँचका प्रबन्ध करा दिया जाये।

यह तार १५ तारीखको मिला था। उसके बाद मुझे उनका नियमित रूपसे आनेवाला पत्र भी मिला है जिसमें उन्होंने अपनी बीमारी व खुराकके सम्बन्धमें और जानकारी दी है। मैं जानता हूँ कि डॉ० मोदी कानकी तकलीफको कितना गम्भीर मानते हैं। वे चाहते हैं कि जमनालालजी अच्छी खुराक लें। जमनालालजी स्वयं भी फलोंके आदी हैं। उनका वहाँ भर्ती होनेके बादसे लगभग ४० पौंड वजन घट गया है। इसलिए मेरा ऐसा खयाल है कि उन्हें किसी ऐसी जगह भेज दिया जाना चाहिए जहाँ उन्हें बेहतर जलवायु मिल सके और ज्योंही जरूरत हो त्योंही विशेषज्ञ डॉक्टरोंकी मदद मिल सके और उन्हें अपने विशेष डॉक्टरी सलाहकारोंसे जल्दी-जल्दी मिलनेकी सुविधा होना चाहिए तथा जबतक ऐसा न हो सके तबतक उनपर अपने खानेके चुनावमें कोई प्रतिबन्ध न हो और उसका सारा अतिरिक्त खर्च यदि सरकार चाहे तो जमनालालजी करें। मैं इस मामलेपर तत्काल ध्यान देनेका अनुरोध करता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स: होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (२), भाग-१, पृ० ३८३।

१. यह तार उपलब्ध नहीं है; लेकिन देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ ३४८।

२०. पत्र : पद्मजा नायडूको

१८ नवम्बर, १९३२

महात्मा होना सचमुच लाभकारी है। मुझे तुम्हारे जैसे सेवकोंसे जब उनका जन्मदिन[1] होता है तब तथा जब मेरा होता है तब भी फल और फूल मिलते हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – २, पृ० २५३

२१. तार : मणिबहन पटेलको

१९ नवम्बर, १९३२

मणिबहन

कैदी, बेलगाँव जेल

डाह्याभाईको ७ दिनसे बुखार आ रहा है। अब मालूम हुआ है कि मोतीझरा है। और कोई खराबी नहीं है। देखभालके लिए खास नर्सें हैं। चिन्ताका कोई कारण नहीं है। रोज समाचार भेजनेकी कोशिश करूँगा।

बापू

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृष्ठ ९०

२२. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१९ नवम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

'हिन्दू' के संवाददातासे मेरी भेंट[2] के सिलसिलेमें, जिसमें लॉर्ड सैंकीके पत्रका जिक्र हुआ था, सरकारका एक ज्ञापन आपने कृपया मुझे दिखलाया। उस ज्ञापनको मद्देनजर रखते हुए मैंने अपने उन पत्रोंपर, जिनमें मिलनेवालों और अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी पत्र-व्यवहारके बारेमें सुविधाओंकी माँग थी, सरकारके निर्णयको पढ़ा और फिर दुबारा पढ़ा। मैंने जो आश्वासन दिया था उसमें और भेंटमें लॉर्ड सैंकीके पत्रके

१. पद्मजा नायडूका जन्मदिन १८ नवम्बरको था।

२. १२ नवम्बर, १९३२ को; देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ "भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको", १२-११-१९३२।

उल्लेखमें मैं कतई कोई असंगति नहीं देखता। भेंटको ध्यानसे पढ़नेपर यही मिलेगा कि किसी सूरतसे या किसी भी तरीकेसे अपने आश्वासनसे हटनेके बजाय, मैंने अपने आश्वासनके कारण सरकारके जरिये आनेवाले पत्रोंके सिवाय अन्य किसी पत्रका उत्तर देनेमें असमर्थता व्यक्त की है।

अस्तु, मैं सरकारका कृतज्ञ हूँ कि उसने मेरा ध्यान उस बातकी ओर दिलाया जिसे वे मेरे आश्वासन और सम्बद्ध भेंटमें लॉर्ड सैंकीके पत्रके उल्लेखमें असंगति मानते हैं। मैं इतना और कहना चाहूँगा कि मैं अत्यन्त कठिन परिस्थितियोंमें आश्वासन निभा रहा हूँ। भेंटोंके दौरान ऐसे सवाल उठ खड़े होते हैं जिनका अस्पृश्यताके कामसे गहरा सम्बन्ध है, लेकिन जो सच कहा जाये तो अस्पृश्यतासे बाहरके होंगे। मैं कड़े मनसे, यह जोखिम उठाकर भी कि मैं गलत समझा जाऊँगा और हेतुको क्षति पहुँचेगी, उनका भी जवाब देनेसे सख्तीके साथ बचता हूँ। ऐसा तो है ही कि आम तौरपर आप या जेलर भेंटोंके दौरान मौजूद रहते हैं। मैं यह कहता हूँ कि अस्पृश्यताके अलावा किसी अन्य मामलेपर अपनी राय देनेसे मैं सावधानीसे इनकार करता आया हूँ, यहाँतक कि जब मुझे पता चला है कि मिलनेवालोंके पास, वे चाहे भारतीय रहे हों या यूरोपियन, अस्पृश्यतापर कोई खास बात करनेकी नहीं हो सकती या जब उन्होंने अस्पृश्यताके राजनैतिक पहलूपर बातचीत करनी चाही है, तो मैंने उनसे मिलने तकसे इनकार कर दिया है। आप और शायद वे भी मेरी इस बातकी ताईद करेंगे। मुझे लगता है कि ऐसा करनेमें मैं भारत सरकारके निर्णयवाले पत्र तथा अपने आश्वासनसे भी आगे बढ़ गया हूँ। लेकिन मैं जानता हूँ कि उनमें जो भावना है, उसमें अस्पृश्यताके राजनैतिक पहलूको भी बातचीतके बाहर रखनेकी अपेक्षा है। यहाँ मेरा आशय उस पत्र-व्यवहारसे है जो श्री जेनकिंससे मैं कर रहा हूँ।

जो भी हो, यदि इस जवाबसे सरकारको सन्तोष नहीं हो, तो मेरा सुझाव है कि वह ऐसा अधिकारी भेज दे जो मुझसे बातचीत कर ले कि ऐसे मामलोंपर, जैसा कि इस पत्र-व्यवहारका विषय है, सरकार क्या चाहती है कि मैं क्या करूँ। और यदि अपने कामसे संगति रखते हुए मैं सरकारकी इच्छा पूरी कर सका, तो मैं बड़ी खुशीसे वैसा करूँगा। असामान्य परिस्थितियोंमें मुझे जो असाधारण सुविधाएँ दी गई हैं उनके बीच यदि सम्भव हो तो मेरी इच्छा है कि इस अध्यायके अन्तमें सरकारसे मुझे यह प्रमाण-पत्र मिले कि मैंने जो आश्वासन दिया था वह सम्माननीय ढंगसे निभाया गया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४), भाग, २, पृ० ३५

२३. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

१९ नवम्बर, १९३२

चि० डाह्याभाई,

तुम्हारे स्वास्थ्यके समाचार रोज मिलते रहते हैं। ऐसी व्याधियाँ भी हमारी परीक्षाके लिए आती हैं। तुम खूब धीरजसे सहन कर रहे हो, ऐसा भाई करमचन्द लिखते हैं। तुमसे ऐसी ही आशा की जाती है। मणिबहनकी चिन्ता न करना।

प्रभु तुम्हारी रक्षा करेगा ही।[1]

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई पटेल
रामनिवास पारेख स्ट्रीट
बम्बई–४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृष्ठ १४९

२४. पत्र : आनन्दशंकर बी० ध्रुवको

१९ नवम्बर, १९३२

आपको अपने बारेमें सदा आत्मविश्वास कम रहा है। काशी जाते समय भी आपको क्या कम संकोच था? मगर वहाँ कितने वर्ष आपने निकाल दिये और कौन जाने अभी कितने और निकाल देने पड़ेंगे? इसलिए यह न मान लीजिए कि आपकी हिचकिचाहटसे मैं भी धोखा खा जाऊँगा। राजाजीने मालवीयजीके दक्षिणमें न जानेके बारेमें एक अकाट्य तर्क दिया है। जबतक वे काशीमें विश्वनाथका मन्दिर नहीं खुलवा देते, तबतक दक्षिणके शास्त्री उनकी बात नहीं मानेंगे। वे यह कहेंगे कि पहले काशी विश्वनाथ खुलवाइए, फिर हमारे यहाँ आइये। आप और मैं उन्हें ऐसी विषम स्थितिमें न डालें। और उनके स्वास्थ्यके बारेमें भी राजाजी तो कहते हैं कि उनसे इतना लम्बा सफर नहीं कराना चाहिए। इसलिए यदि मालवीयजी सहमत हों, तो आप उनके प्रतिनिधिकी हैसियतसे चले जायें, भले ही लोग आपकी न सुनें। मगर यह न होने-जैसी बात है। यह तो हुआ आपकी दक्षिणकी यात्राके विषयमें।

१. देखिए, "तार : मणिबहन पटेलको", पृष्ठ २० भी।

अब शास्त्रार्थके बारेमें। मुझे जो साहित्य दिया गया है, उसमें से कुछ भेजता हूँ। इसकी जाँच कीजिए, उसे ध्यानमें रखकर एक सुन्दर जवाब जल्दी ही तैयार कीजिए और जितने पण्डित आपके साथ हो सकें, उतनोंके हस्ताक्षर उसपर करा लीजिए। यह जवाब संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजीमें होना चाहिए। एक तो प्रामाणिक सनातनी, दूसरे तटस्थ जिज्ञासु, तीसरे अस्पृश्यता-निवारणका काम करनेवाले, जिनके लिए सनातनियों वगैरहसे भेंट करते समय आपका लेख सहायक हो सके, और चौथे विधर्मी, जो समझ लें कि सच्चे सनातन धर्ममें जन्मसे कोई अस्पृश्य नहीं होता और जो खास कारणोंसे अछूत माने जा सकते हों वे भी आसानीसे स्पृश्य बन सकते हैं —इन चारोंको ध्यानमें रखकर आपको लिखना है। आपको यह भी बताना है कि आज जो अत्याचार अछूत कहलानेवालोंपर हो रहे हैं, उनके लिए कोई आधार नहीं है। जिनका आप, मैं और दूसरे हजारों आदमी आदर करते हैं, उनकी कुछ पंक्तियाँ उद्धृत करता हूँ :

> **हिन्दुस्तानके इस भागमें जबसे मन्दिरोंमें पूजा शुरू हुई, तभीसे इन वर्गोंको मन्दिरोंसे दूर रखा गया है। ऐसा समय, जब अछूतोंको मन्दिरोंमें जानेकी आजादी थी, ढूँढ़ निकालनेमें विद्वानोंको मुश्किल पड़ेगी। मुझे डर है, यद्यपि मैं इसपर गर्व नहीं कर सकता, कि जैसे धर्मका आचरण आज किया जा रहा है वैसे धर्ममें बहिष्कारका विधान है। जो इसे धर्मका सिद्धान्त मानकर इसपर कायम हैं, उनके पक्षमें कानून, शास्त्र और रूढ़ि सब हैं। ये लोग सनातनी हैं।**

इन्हें आपको जवाब देना है। कानून यानी सरकारी कानून भले ही उनके पक्षमें हों; रिवाज यानी आजकलके पतनकालका रिवाज भले ही उनके पक्षमें हो, मगर शास्त्र उनके पक्षमें नहीं हैं। हिन्दूकालका कानून उनके पक्षमें नहीं था और सच्चा रिवाज यानी शुद्ध आचार भी हिन्दुओंके उन्नति-कालमें कभी उनके पक्षमें नहीं था, यह प्रामाणिक तौरपर दिखाया जा सकता हो तो यह आपको निश्चयपूर्वक दिखाना है। आपका निर्णय डेल्फीके देवताके निर्णय जैसा न होना चाहिए। ऐसी ध्रुव-नीति जितनी जल्दी भेज सकें भेज दीजिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २५५-६

२५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१९ नवम्बर, १९३२

भाई घनश्यामदास,

रामसिंहासन महतोका खत इसके साथ रखता हूं। इसे पढ़कर या पढ़वाकर उचित करें।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९०५ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

२६. बातचीत : जी० के० देवधरसे

१९ नवम्बर, १९३२

श्री देवधरने[1] महात्माजी को बोर्ड द्वारा तैयार की गई वह योजना समझायी जो सारे महाराष्ट्रमें आम तौरपर 'अछूतों' के उद्धार और विशेष रूपसे अस्पृश्यता-निवारणके लिए काम शुरू करनेके सम्बन्धमें थी। तब उनके और महात्माजीके बीच गुरुवायूर मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें महात्माजीके प्रस्तावित उपवासपर लम्बी बातचीत हुई। श्री देवधरने उन कठिनाइयोंकी ओर संकेत किया जो अस्पृश्यता दूर करने और मन्दिरोंको अछूतोंके लिए खोलनेके रास्तेमें मलाबार प्रान्तमें अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा कहीं ज्यादा हैं। श्री देवधरकी रायमें मलाबारके हिन्दू अपने धार्मिक विश्वासों और पूर्वग्रहोंमें बहुत कट्टर हैं और अछूतोंके मन्दिर-प्रवेशका कड़ा विरोध करते हैं।

महात्मा गांधीने अपनी यह इच्छा व्यक्त की कि श्री देवधरको मलाबारका जो अनुभव है उसे देखते हुए उन्हें उस प्रान्तमें अस्पृश्यता-निवारणके सम्बन्धमें जनमत तैयार करनेका प्रचार कार्य हाथमें लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-११-१९३२

१. सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके अध्यक्ष तथा अ० भा० अस्पृश्यता-विरोधी संघके महाराष्ट्र डिवीजनल बोर्डके अध्यक्ष।

२७. पत्र : थार्नबर्गको[1]

२० नवम्बर, १९३२

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। अफसोस हुआ कि आपसे मिल नहीं सका। भीतरी सुधारका जो आन्दोलन यहाँ चल रहा है, उसमें यदि अमेरिकाको कुछ मदद करनी हो, तो पहले उसे इस आन्दोलनको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए, इसका अध्ययन करना चाहिए और इसपर ज्ञानयुक्त राय देनी चाहिए। सनातनियोंपर भी आज बुद्धिसम्मत रायका असर होता है, भले ही वह राय बाहरसे आई हो। दूसरी बात यह करनी चाहिए कि आर्थिक प्रश्नोंके बारेमें विशेषज्ञोंकी मदद सुधारकोंको मुफ्त सुलभ करानी चाहिए। उदाहरणके तौरपर मृत पशुका माँस खानेवालोंका प्रश्न बड़ा विकट है। जबतक मरे हुए ढोरोंका कब्जा हरिजनोंको मिलता रहेगा, तबतक वे मृत पशुका माँस खाना नहीं छोड़ सकेंगे। वे मरे हुए ढोरकी चमड़ी उतार लेते हैं और माँस खाते हैं। मरे हुए ढोरोंके चमड़े स्वच्छ और अच्छे ढँगसे उतारनेकी तथा ढोरके बाकीके भागका उत्तम-से-उत्तम उपयोग करनेकी पद्धति खोजनेकी मैंने कोशिश की है। लेकिन इसके लिए विशेषज्ञोंकी सहायता लेनेमें रुपया खर्च करनेकी इच्छा न होने और उसकी शक्ति भी न होनेके कारण मुझे अँधेरेमें भटकना पड़ा है। इस काममें अमेरिका आसानीसे हमें विशेषज्ञोंकी मुफ्त मदद दे सकता है। अमेरिकाके धर्मपरायण आदमियोंको अगर यह समझाया जाये कि हिन्दू धर्म, इस्लाम और दुनियाके दूसरे बड़े धर्म भी ईसाई धर्मके बराबर ही सच्चे हैं और इसलिए उन धर्मोंका नाश करनेकी नहीं, बल्कि जहाँ जरूरत हो वहाँ सुधार करनेकी आवश्यकता है, तो धर्म-परिवर्तनका हेतु रखे बिना वे यह मदद दे सकते हैं। अमेरिकाके सयाने लोग इस मौजूदा महान आन्दोलनका यदि अच्छी तरह अध्ययन करें तो मैं जो कहता हूँ उसके बारेमें उन्हें विश्वास हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २५९–६०

१. एक अमेरिकी नागरिक, जिन्होंने दो बार गांधीजी से मुलाकातकी माँग की किन्तु अनुमति नहीं मिली। फिर उन्होंने अपना हस्ताक्षर-संग्रह भिजवा कर गांधीजीसे अमेरिकी जनताके लिए संन्देश भी माँगा।

२८. पत्र : अमीना गु० कुरैशीको[1]

२० नवम्बर, १९३२

बेटा अमीना,

मुझे तेरा खत पसन्द आया। तूने स्पष्ट लिखकर ठीक किया। तेरा शरीर सुधारनेका तो वही उपाय है जो मैंने बताया। तू नहीं पढ़ी इसमें तेरी थोड़ी त्रुटि है। इस बातको तू सोचकर देखना। बाकीका दोष मेरा है। मैंने आश्रमकी शिक्षापर पूरा ध्यान नहीं दिया, यह दोष मेरा। लेकिन तू अगर सचमुच पढ़नेको तैयार हो तो मैं तुझे किसी मदरसेमें भरती करा देनेको तैयार हूँ। भावनगर जा सके तो वहाँकी कन्याशालामें रख दूं। अमरेलीमें भी अच्छी पाठशाला है। दोनों जगहोंमें तुझपर विशेष ध्यान दिया जायेगा। यदि पढ़ाईकी कमीको लेकर ही परेशान है तो मैं यह परेशानी दूर कर सकता हूँ। तेरी जो इच्छा हो मुझे लिखना। नारणदाससे भी दिल खोलकर बातें करना। ईश्वर तुझे शान्ति दें।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६३) से। सी० डब्ल्यू० ४३०८ से भी; सौजन्य : हामिद कुरैशी।

२९. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२० नवम्बर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

इन दिनों मेरी ओरसे पत्रकी उम्मीद नहीं करनी है; इसलिए मैं दो लकीरें लिख दूं तो सन्तोष मानना। तुम लोग तो लिखते ही रहना।

जेल-जैसी खुराकसे हार मत मानना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. इमामसाहब अब्दुल कादिर बावजीरकी बेटी, जिसका विवाह गुलाम रसूल कुरैशीसे हुआ था।

३०. पत्र : गुलाब ए० शाहको

२० नवम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

तेरे अक्षरोंके लिए ४ नम्बर।

इस शरीरका नाश हो जानेपर भी जो जीवित रहता है, वह आत्मा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३०)से।

३१. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२० नवम्बर, १९३२

चि० जमना,[1]

क्या स्टोव सम्बन्धी पत्र[2] के किसी कोनेमें भी मेरे हस्ताक्षर नहीं हैं? यदि हस्ताक्षर करना रह गया हो और उसकी जरूरत हो तो अन्तिम पृष्ठ मुझे भेज देना।

स्टोवकी बहुत जरूरत पड़ती हो तो प्राइमसके बदले जो मिट्टीके तेलके अन्य स्टोव मिलते हैं उनमें से कोई इस्तेमाल करो। महादेवका कहना है कि आजकल तो ऐसे बहुत अच्छे और सस्ते स्टोव मिलते हैं। क्यों न इस्तेमाल करके देखो। जलानेमें तो कुछ भी मेहनत नहीं करनी पड़ती।

पुरुषोत्तम[3] और कनु[4] मजेमें होंगे।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६३) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. नारणदास गांधीकी पत्नी।

२. यह उपलब्ध नहीं है; लेकिन देखिए खण्ड ५१, "पत्र : जमनाबहन गांधीको", १३-११-१९३२ और "पत्र : नारणदास गांधीको", पृ० २३३-४

३ व ४. जमनाबहन गांधीके पुत्र

३२. पत्र : केशव गांधीको

२० नवम्बर, १९३२

चि० केशू,[1]

जैसे विचार तुझे आते हैं वैसे दूसरोंको भी आते हैं। रामको रटते रहना। इससे धीरे-धीरे ये विचार नष्ट हो जायेंगे। शिक्षकको पवित्र और अपने विषयका जाननेवाला होना चाहिए। विद्यार्थी नम्र और परिश्रमी हो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२८४)से।

३३. पत्र : मणिबहन पटेलको

२० नवम्बर, १९३२

चि० मणि,

डाह्याभाईकी बीमारीके बारेमें मेरा तार मिला होगा।[2] तुझको हमेशा खबर देनेकी और तुझे जो लिखना हो [डाह्याभाईको या उसके बारेमें] वह लिखनेकी इजाजत[3] मिल गई है। इसलिए तू वहाँसे रोज लिख सकती है। वह पत्र मैं डाह्या-भाईको पहुँचा दूंगा। यहाँसे तो रोज पत्र लिखा ही करूँगा। डॉ० मदन[4] का पत्र आया है। वह इसके साथ भेज रहा हूँ। उसके बाद आज भी भाई करमचन्दका पत्र आ गया है। इसलिए कल तकका हाल अच्छा ही माना जायेगा। आज १४ दिन पूरे हुए हैं। अभी बुखार १०० से १०३ के बीच रहता है। एक बार ९९.५ तक भी गया था। छाती, फेफड़े वगैरह ठीक हैं। फलोंका रस, जौका पानी और कभी-कभी पतली छाछ, इतनी चीजें ले सकता है। खास नर्सें रखी गई हैं। हर तरहसे ध्यान रखा जाता है, इसलिए चिन्ताका जरा भी कारण नहीं है।

१. मगनलाल गांधीके पुत्र।

२. देखिए पृष्ठ १९।

३. देखिए "पत्र: ई० ई० डॉयल्को", पृष्ठ १४-५।

४. बम्बईके कुशल पारसी डाक्टर।

हम सब आनन्दमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृष्ठ ९०-१

३४. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

२० नवम्बर, १९३२

चि० नर्मदा,

तेरे पत्र[1]की गलतियाँ सुधारकर उसे वापस भेज रहा हूँ। उन्हें सावधानीसे देख जाना। गलतियाँ होती हैं इस कारण तुझे दुःखी नहीं होना चाहिए। बहुत-सा तो अपने बलपर ही सीखा जा सकता है। रोज धैर्य रखकर लिखनेसे अक्षर अच्छे हो जाते हैं। रटनेसे पहाड़े पक्के हो जाते हैं। शब्दोंके हिज्जे शब्दकोषमें देखने चाहिए। रोज सवाल हल करनेसे अंकगणित सुधर जाता है।

इस तरह बहुत-सी बातोंमें किसीकी मदद जरूरी नहीं होती। काम-धन्धा भी शिक्षण है।

बापू

[पुनश्चः]

अक्षरोंका आकार सुधारा है और नीचे नमूनेके लिए[2] जो लिखा है, उसे भी देखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २७६८) से; सौजन्य : रामनारायण न० पाठक।

१. १४ नवम्बर, १९३२ का।
२. इसमें लिखा था : "आपका कृपा पत्र मिला। इसे पढ़कर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई।"

३५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२० नवम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

अभी और कुछ दिनों मैं छोटे पत्र ही लिख पाऊँगा। तेरे पत्र लम्बे हों तो उसकी मुझे चिन्ता नहीं। मुझे तेरे द्वारा भेजे वर्णन जरूर चाहिए। मैं खबर तो दे ही नहीं सकता। मैं तो विनोदपूर्ण या प्रेमपूर्ण पत्र ही लिखूंगा। उलाहना दूंगा और देते बनेगा तो कभी-कभी ज्ञान भी दे दूंगा। परन्तु तुझे तो अपना हिसाब देना होगा, सुख-दुःखकी बातें कहनी होंगी।

रमाबहन[1] के बारेमें तुझे तंग नहीं करना चाहता। तेरे लिखनेकी भंगिमा ही ऐसी है कि उसमें से प्रेम निकाल सकना मुश्किल है। गनीमत यही है कि तेरे वचनोंमें जितना कटाक्ष होता है उतना तेरे कार्योंमें नहीं आता। मेरे पास समय होता तो इसपर बड़ा व्याख्यान दे देता। परन्तु तुझे हरिजनोंने बचा लिया है, क्योंकि उन्होंने मेरा सारा समय ले रखा है।

अमीना खूब परेशान जान पड़ती है। उसका दुःख मालूम कर सको तो कर लेना और उसे शान्ति दे सको तो देना।[2]

मंगलाका हाल वैसा ही है जैसा तूने लिखा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३११)से। सी० डब्ल्यू० ६७५० से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. छगनलाल जोशीकी पत्नी।

२. देखिए "पत्र : अमीना गु० कुरैशीको", पृ० २६।

३६. पत्र : रुक्मिणीदेवी और बनारसीलाल बजाजको

[२०][1] नवम्बर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरी चिट्ठी मिली। बच्चा[2] आश्रममें है, यह कितनी अच्छी बात है। तेरे शरीरके सुधारके लिए घूमना मुख्य चीज है। और यह भी वहाँ जहाँ धूल न उड़ती हो।

चि० बनारसी,

इस बार पिताजी[3]का पत्र मिला है। उसमें उन्होंने व्यापारकी बात लिखी है। एक शब्द नहीं पढ़ पाया। चाय-काफी जैसा लगता है। क्या वे चाय-काफीका व्यापार करते हैं? या किसी और चीजका?

तुम्हारा व्यापार ठीक चलता होगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री बनारसीदास[4] बजाज
ठठेरी बाजार
बनारस सिटी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४५)से।

३७. पत्र : सीताराम कृष्णाजी नलावडेको

२० नवम्बर, १९३२

भाई सीतारामजी,

आपका पत्र मिला। आप और आपके साथ जो भाई आना चाहते हैं वे गुरुवार तारीख २४को ३ बजे आयें तो मैं खुशीसे भेंट करूँगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९९)से।

१. डाकखानेकी मुहरसे।
२. रुक्मिणीका पुत्र।
३. रामेश्वरलाल बजाज।
४. गांधीजी बनारसीलाल बजाजको बनारसीदास बजाज लिखते थे।

३८. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

२० नवम्बर, १९३२

भाई मुलचंदजी,

प्रकृति पुरुष एक हि चीज है क्योंकि ईश्वरके सिवाय और कुछ नहि परंतु उपाधिके कारण अनेकता प्रतीत होती है। अंतमें जड कुछ नहि है। वनस्पतीमें भी जीव तो है परंतु वह वनस्पती जीव है। भेद प्रत्यक्ष है। हमारी प्रार्थना साकार निराकारकी है। मूर्ति पूजा उनके लिये आवश्यक है जिसे वह चाहिये। इतर लोग नहि वता सकते हैं। जिसको रोटीकी भूख है उसे रोटी चाहिये। प्रार्थनाका प्रकार सवके लिये एक नहि हो सकता क्योंकि नहि है ऐसा स्पष्ट है।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७१)से।

३९. पत्र : प्रभावतीको

२० नवम्बर, १९३२

चि० प्रभावती,

तुमारा खत आया है। मैं तो जैसे तु लिखती है ऐसे हि खत भेजता हुं। मैं समझ हि नहि सकता क्यों तुमको मेरे खत नहि मिलते हैं। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। दूध, भाजी, फल और रोटी लेता हुं। वजन १०३।। तक गया है। तुम सवको आशीर्वाद। आजकल मुझे काम वहोत रहता है। आश्रम उठानेकी कोई वात नहि है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४२५)से।

४०. पत्र : अमतुस्सलामको

२० नवम्बर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

आजकल मेरी तरफसे लम्बे खतकी उम्मीद न रखी जाये। कुदसियाकी[1] फिकर छोड़ दो। उसके नसीबमें होगा वही होनेवाला है। तुम्हारे मरनेकी बात करना नहीं। ऐसे क्यों हार जाती है? खुदा तुम्हारेसे बहुत खिदमत लेगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६४) से।

४१. पत्र : काशीनाथ एन० केलकरको

२१ नवम्बर, १९३२

प्रिय काशीनाथ,

मुझे तुम्हारे पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनी ही है, और नहीं तो केवल इसलिए कि तुम एक प्यारे मित्रके बेटे हो। यदि गर्भागारका अर्थ — मन्दिरका पूजास्थान है, तो मैंने स्पष्ट कहा है कि वह पुजारियोंके लिए सुरक्षित रहना चाहिए। मैंने हमेशा जामोरिनकी स्थितिसे सहानुभूति रखी है। जहाँ कानून सुधारकके विरुद्ध हो वहाँ उसे तबतक रुकना होगा जबतक कि कानूनमें परिवर्तन नहीं हो जाता। कुछ समय बाद में इन बातोंको विस्तारसे कहनेकी आशा करता हूँ। तबतक आशा है, तुम हर तरहसे सुधार-कार्यको आगे बढ़ानेमें मदद करोगे।

हृदयसे तुम्हारा
मो० क० गांधी

काशीनाथ एन० केलकर, एडवोकेट
यदुगोपाल पेठ, सतारा सिटी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९७७) से; सौजन्य : जी० एन० कानिटकर।

१. अमतुस्सलामकी भांजी।

४२. पत्र : केशव गांधीको

२१ नवम्बर, १९३२

चि० केशू,

एक तरफसे हँसी, दूसरी तरफसे रोना। सन्तोकको छोटी और बा को बड़ी माँ समझना चाहिए। जब तूने [चरखेकी] माँग की तो मैं समझा छोटी माँके लिए माँग की है और जब बड़ी माँने माँग की तो मैं समझा कि बड़ी माँका इरादा छोटी माँ से चरखा छीन लेनेका है। तेरे पत्रसे बात समझा कि मैंने बड़ी माँ के प्रति बड़ा अन्याय किया। मैंने उसके प्रति न जाने ऐसे पाप कितने किये हैं। अब यदि इसकी उससे माफी माँगूं तो जानकर उसे दुःख होगा। इसलिए मेरे हाथमें तो अपने पापका प्रायश्चित्त चुपचाप रहकर करना ही शेष रहा। तू बड़ी माँसे हँसी-हँसीमें बता सके तो बता दे। किन्तु शायद यह तुझसे न बन सके। मैं जब कभी मिलूँगा, तब तो कहूँगा ही।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४६८) से; सौजन्य: राधाबहन चौधरी।

४३. पत्र : मणिलाल गांधीको

२१ नवम्बर, १९३२

चि० मणिलाल,

रेलगाड़ीमें लिखा हुआ तुम्हारा कार्ड मिला। प्रागजी[1] के बारेमें लिखा पत्र भी मिला था। प्रागजीने जो रकम इकट्ठी की थी उसमें से उन्होंने ४५० पौंड अपने लिए रख लिये थे, इस विषयमें तुमने नहीं लिखा। उनका पत्र फिरसे पढ़ना। अपने एक दूसरे पत्रमें उन्होंने लिखा है कि तुम्हें दिसम्बरके अन्ततक फीनिक्स वापस पहुँच जाना चाहिए। २ जनवरीको, कुछ भी हो, तुम्हें अपना वचन रखना चाहिए। मेरे लिए वचन-भंग नहीं किया जा सकता। धर्म-कार्यके निमित्त मेरा शरीर चला जाये, इसमें खेद तो हो ही नहीं सकता। और तुम्हारे रहनेसे उसमें एक क्षणका भी परिवर्तन नहीं हो सकता। तेरे रहनेसे तुम्हें और तुम्हें सन्तोष रहेगा लेकिन ऐसे सन्तोषका मोह तो छोड़ना ही पड़ता है न? वहाँ सबको आशीर्वाद।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८०१) से।

१. प्रागजी खण्डूभाई देसाई, दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी।

४४. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२१ नवम्बर, १९३२

इस बार तुम्हारा पत्र काफी देरसे मिला है। मेरे पत्रका कुछ अंश क्यों नहीं काटा जा सकता? कैदी तो कैदी ही है।

तुमने 'गीता रहस्य'[१]की टीका लिख डाली, यह अच्छा ही किया। मैं तो जाने कब देख सकूँगा। इस समय तो मैं हरिजन-कार्यमें इतना ज्यादा व्यस्त हो गया हूँ कि दूसरे काम शायद ही देख पाऊँ। तुम्हारे जैसे बन्धुओंको लम्बे-लम्बे पत्र लिखनेकी इच्छा अभी पूरी नहीं की जा सकती।

यदि तुमने गुरुवायुर-सम्बन्धी मेरे सभी लेख[२] देख लिए हों तो तुम्हारे मनमें इस विषयमें कोई शंका नहीं रहनी चाहिए। संक्षेपमें तो स्थिति यह है: केलप्पन प्राण देनेको था। मेरे कहनेसे उसने उपवास छोड़ दिया। छोड़ देना ही धर्म था। किन्तु छुड़ानेवालेके लिए नया धर्म उत्पन्न हो गया। अर्थात् अगर केलप्पनको नैतिक दृष्टिसे उपवास करना पड़े तो मुझे उसका साथ देना होगा। केलप्पनको करना पड़ेगा या नहीं यह तो अभी देखना बाकी है।[३]

इस बार तुमने अपने स्वास्थ्यके बारेमें कुछ नहीं लिखा, इससे अनुमान लगाता हूँ कि तुम ठीक ही हो।

उपवास आरम्भ करते समय मेरा जितना वजन था उतना फिर हो गया है। हम सबका स्वास्थ्य अच्छा है। तुम्हारे हाथका लिफाफा मुझे नहीं मिला। साधारणतया पत्र लिफाफेसे निकालकर ही दिये जाते हैं।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृ० ११७-८

१. बाल गंगाधर तिलकका लिखा हुआ।

२. देखिए "वक्तव्य: अस्पृश्यतापर", पृ० १-४ और पृष्ठ ९-१२; तथा खण्ड ५१ भी।

३. देखिए परिशिष्ट १।

४५. पत्र : नारणदास गांधीको

२१ नवम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

मुझपर कामका बोझ दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। दोनों कोहनियोंको भी आरामकी जरूरत है। इसलिए सबसे कह देना कि फिलहाल मुझसे लम्बे पत्रकी आशा न करें। शायद मुझे केवल कुसुम[1]-जैसे बीमारों या तुमको पत्र लिखकर सन्तोष करना पड़ेगा। इसे हम हरिजन भाइयोंके लिए किया गया कम-से-कम त्याग मानें। अभी तो बहुत अधिक त्याग करना होगा। इस शुद्धिके लिए पूरे आश्रमको बलिदान कर देना पड़े तो भी मैं उसे बड़ा त्याग नहीं मानूंगा। किन्तु वैराग्यके बिना त्याग नहीं किया जा सकता और शुद्धिके बिना वैराग्य नहीं हो सकता। इसलिए जिसे शुद्धि-यज्ञमें अपनी आहुति देनी हो वह शुद्ध हो। इस स्थितिपर 'हरिनो मारग,[2] बिलकुल ठीक लागू होता है।

किन्तु मैंने फिलहाल तो भोजनमें सादगीकी माँग की है। कई लोग उसीसे डरते दिखाई दे रहे हैं। लेकिन जो डर रहे हैं और अपना डर दूर नहीं कर पा रहे हैं वे सत्यका पालन तो कर ही रहे हैं; और इसके लिए उनकी तारीफ करनी चाहिए। शर्मके मारे किया हुआ त्याग कबतक टिक सकता है? जिन्हें भक्तराजकी बात[3] याद हो वह इतना सोच लें कि भक्तराजकी देखा-देखी जो लोग उनके साथ निकल पड़े थे वे दो-तीन दिनमें ही थक कर भाग गये थे।

अभी मेरे पास समय नहीं है। समय मिलनेपर और बहुत-से परिवर्तन करनेका सुझाव देना चाहता हूँ। यदि हम जरूरतसे ज्यादा खायें या ऐसी वस्तु खायें जिसे खानेकी आवश्यकता नहीं थी तो हमारी मान्यताके अनुसार यह चोरी मानी जायेगी। स्वास्थ्यकी दृष्टिसे कुछ लेना अलग बात है। मैं जिस प्रयोगका सुझाव दे रहा हूँ वह कोई मनमाना प्रयोग नहीं है, शास्त्रीय है? अच्छी तरहसे देखें तो गरीब या कैदीको जो-कुछ मिलता है उससे ज्यादा कुछ लेना चाहें तो आवश्यकता सिद्ध हो जानेपर ही लें। जीवनमें अधिकाधिक सादगी लानेके प्रयत्न करते रहनेके सिवा गति नहीं है। जरूरी है कि हम एक बारमें कम वस्तुएँ खानेकी कला सीखें, स्वास्थ्यके लिए यह आवश्यक है, इसे डाक्टरोंने प्रयोग द्वारा सिद्ध किया है। दिन-भरमें हम अधिक वस्तुएँ भले लेते हों, लेकिन एक समयमें ही सब-कुछ न लें। रोटी, दाल,

१. कुसुम गांधी, व्रजलाल गांधीकी कन्या।

२. नरसी मेहताका पद "हरिनो मारग छे शूरानो, नहिं कायरनो काम जोने" अर्थात् विचार कर देख, हरिका मार्ग शूरोंका है, कायरोंका नहीं।

३. जॉन बनियन कृत पिलग्रिम्स प्रोग्रेसमें।

शाक, दूध, भात यह सब एक ही समय न खायें। बल्कि एक वक्त दूध-रोटी या दूध-शाक या दाल-भात या दूध-भात, दाल-रोटी लें दाल और दूध कभी न लें। बाजरेके साथ गेहूँ न लें। भात और शाक न लेना ही अच्छा है। मैंने यह पढ़ा है और इसपर अमल किया है, उसके अनुसार यह लिख रहा हूँ। ऐसा करनेसे पेटपर बोझ कम पड़ता है। और शरीर हलका रहता है। जो लोग यह प्रयोग समझे बिना करेंगे उन्हें इससे कष्ट जरूर हो सकता है। यह भी हो सकता है कि ऐसे प्रयोगमें यदि मन साथ न दे तो उसका कुछ फल नहीं हो। मनमें ऐसा दृढ़ विचार करें कि इस प्रयोग द्वारा हम त्याग सीखते हैं, गरीबोंका ध्यान रखते हैं, धन बचता है और स्वास्थ्य अच्छा होता है, तो हम ऐसा प्रयोग कर सकते हैं।

दूध, रोटी, शाक और फल पूर्ण खुराक है, मुझे ऐसा लग रहा है। मेरा वजन १०३ $\frac{१}{२}$ पौंडतक गया है। ताजे फल अलग ही लेता हूँ। दूधके साथ खजूर या शाक लेता हूँ। आधा दूध खजूर डालकर और आधा वैसे ही पी जाता हूँ। इस प्रकार अढ़ाईसे लेकर पौनेतीन रतलतक दूध पी लेता हूँ। सुबह केवल मौसम्बी और सन्तरे खाता हूँ। सात बजे दूध और खजूर। बारह बजे २ सन्तरे या मोसम्बी,[१] चार बजे शाक, दूध और रोटीका एक टुकड़ा। यही मेरी खुराक है। दूध, डबलरोटी छोड़ देनेका विचार कर रहा हूँ। खट्टा नींबू दो बार पानी और सोडेके साथ पी लेता हूँ। शायद ऐसा करनेकी जरूरत नहीं है। पर यह अभी देखना है। आजकल मीराबहन भी लगभग ऐसा ही कर रही हैं। उसने बताया है कि इससे उसे फायदा हुआ है। अभी इस फायदेके बारेमें जोर देकर कुछ नहीं कह सकते। हो सकता है कि उसे मनसे प्रयोग पसन्द है इसलिए उसे फायदा दिखाई देता है। वास्तवमें फायदा नहीं होगा तो इसका पता चल जायेगा। ज्वारकी राबकी मात्रा ठीक रखना जरूरी है। सारा ही भोजन माप-तोल कर खायें तो अच्छा है। पेटमें दर्द हो, सिरमें दर्द हो, कब्ज या बदहजमी हो तो एक दो बार खाना न खायें, बिलकुल ही न खायें। किसी-को भी फौरन ही हार नहीं मान लेनी चाहिए। संयुक्त रसोईघरको बिना किसी परिश्रमके चलानेका सरल मार्ग यह है कि जिसे जो चीज अच्छी न लगे, वह उसे छोड़ दे। किन्तु उसके बदले नई चीज न माँगे। पूरे भोजनमें जो चीजें होती हैं उन्हींमें से निर्वाह लायक तो मिल ही जाता है। साधारण तौरपर दूध-शाक तो सबके लिए ठीक है। उन्हींसे काम चला सकते हैं। एक दिन बिलकुल भोजन न करनेसे शरीर दुर्बल हो जाता है, ऐसा मानना तो भ्रम है। यों ये सब बातें बीमार व्यक्तियों पर लागू नहीं होतीं। उनको तो स्वास्थ्यके लिए जो-कुछ देना ठीक हो वही दिया जाना चाहिए। किन्तु मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि हम खुराक शास्त्रीय ढंगसे और मर्यादापूर्वक लें तो कोई बीमार ही नहीं पड़ेगा। आजके लिए खुराक-सम्बन्धी इतनी चर्चा ही काफी होनी चाहिए। सबको पढ़वा देना। उसमें जिसे जो पसन्द न आये, वह उसे छोड़ दे।

१. इसके बादका अंश एम० एम० यू०-१ की माइक्रोफिल्ममें भी उपलब्ध है।

भाई प्रभाशंकर[1] आ गया होगा और आनन्दमें होगा। उसे कहना कि उसका पत्र मुझे मिल गया था। उसके जवाबमें इस समय इतना ही लिखता हूँ। वह इन सुझावोंसे सहमत होगा। रतिलाल[2] शान्त हो गया है न? रामजीको कई शिकायतें हैं, यह मालूम है न? अमीना दुखी है। पूछना।

बापू

[गुजरातीसे]

बापूना पत्रो – ९ : श्री नारणदास गांधीने, भाग-१, पृ० ४९७-९। सी० डब्ल्यू० ८२६५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४६. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२१ नवम्बर, १९३२

चि० परसराम,

लम्बा पत्र लिखनेकी स्थिति नहीं रही। कुछ कक्षाएँ[3] बन्द हो गईं तो हर्ज नहीं। जो बच गई हैं उन्हें चलाते रहें। सबके साथ हिन्दीमें बात करनेसे भी वातावरण बना रह सकेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५१२)से। सी० डब्ल्यू० ४९८९ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

४७. भेंट : समाचारपत्रोंको

२१ नवम्बर, १९३२

एक भेंटमें गांधीजीने उस आंग्ल-भारतीय अखबारमें प्रकाशित बातोंको निराधार बताया जिसने यह कहानी गढ़ी थी कि महात्माजी 'आध्यात्मिक' होते जा रहे हैं, जैसेकि अरविन्द घोष हो गये थे, और सक्रिय राजनीतिमें उनकी दिलचस्पी खत्म होती जा रही है।

गांधीजी कहते हैं कि हिन्दू-धर्मके लिए सामाजिक सुधार अभी बहुत जरूरी है। लेकिन यह उन्हें उनके राजनीतिक उद्देश्यसे अलग नहीं हटा सकता और न वे हटे ही हैं।

१. रतिलाल मेहताके श्वसुर।
२. डॉ. प्राणजीवन मेहताके पुत्र।
३. हिन्दी कक्षाएँ।

इस सीधे सवालका उत्तर देते हुए कि क्या अपना सारा समय वे अस्पृश्यता-निवारणके कार्यमें लगानेका इरादा रखते हैं, महात्माजीने कहा :

मैं नहीं कह सकता कि ऐसा मेरा इरादा अभी है, या ऐसा कभी होनेकी सम्भावना है। यह कहना सर्वथा सच होगा कि मेरा जीवन हिन्दू-धर्मके लिए परमावश्यक इस सुधारको समर्पित है। लेकिन मेरा जीवन अन्य अनेकों चीजोंको भी समर्पित है। मैं ऐसा नहीं मानता कि मेरा जीवन इतने अलग-अलग हिस्सोंमें बाँटा जा सकता है। वह एक पूर्ण संगठित इकाई है और यह पता चलेगा कि मेरी सारी कार्यवाहियाँ एक ही स्रोतसे, यानी जीवनके हर क्षेत्रमें सत्य और अहिंसाके प्रतिपादन की तीव्र इच्छासे निकलती हैं, चाहे वह क्षेत्र कितना ही छोटा हो या बड़ा।[1]

इसमें वे सारी 'शर्तें' संक्षिप्त रूपमें आ जाती हैं, जिनपर महात्माजी रिहाई स्वीकार कर सकते हैं। उनकी रिहाईकी सम्भावना पूर्णतया इस बात पर निर्भर है कि शासक वर्ग उपर्युक्त वक्तव्यका क्या मतलब समझता है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २३-११-१९३२ और **हिन्दू**, २३-११-१९३२

४८. लॉर्ड सैंकीको लिखे पत्रका अंश

[२२ नवम्बर, १९३२ या उससे पूर्व][2]

ऐसा समझा जाता है कि लॉर्ड सैंकीके निमन्त्रणका उत्तर देते हुए महात्मा गांधीने लॉर्ड सैंकीको आश्वासन दिया है कि वे स्वभावतः सहयोगी हैं और वस्तुतः सहयोगके लिए लालायित हैं। लेकिन ओटावा[3] और अध्यादेश विधेयकोंमें सहयोग प्राप्त करनेकी वैसी कोई इच्छा दिखाई नहीं दी है। अन्तमें, कहा जाता है, महात्माजीने लॉर्ड सैंकीको आश्वासन दिया है कि यदि सरकारकी तरफसे सहयोगका सच्चा संकेत मिला तो वे "गांधीको अपनी जेबमें" पायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २३-११-१९३२

१. यह अनुच्छेद **हिन्दू** में **द इवनिंग न्यूज ऑफ इंडिया** के पूना-स्थित 'संवाददाताको भेंट' के रूपमें प्रकाशित हुआ था। इसी भेंटके महादेव देसाई द्वारा दिये गये विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट–१।

२. यह रिपोर्ट "बम्बई, २२ नवम्बर" तिथिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

३. ओटावा तट-कर विधेयक; जिसके अन्तर्गत ब्रिटिश साम्राज्यमें पैदा होनेवाली सभी वस्तुओंपर १० प्रतिशत तट-कर लगानेके विषयमें ओटावा-सम्मेलनके समझौतेको अमलमें लानेकी व्यवस्था की गई थी।

४९. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२२ नवम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डायल,

सेठ जमनालाल बजाजके बारेमें अपने पत्रके[1] सिलसिलेमें मुझे आगे यह निवेदन करना है कि मुझे उनकी पत्नी और बच्चोंसे और भी जानकारी मिली है, जो मुझे बेहद फिक्रमें डालती है। वे उन विशेषज्ञ, सर जे० जे० हॉस्पिटलके डॉ० मोदीसे मिले हैं जिन्होंने जमनालालजीको उनके जेल जानेसे पहले सलाह दी थी। डॉ० मोदी उनके वजन और पूरी हालतसे सन्तुष्ट नहीं हैं। यह ध्यानमें रखते हुए कि उन्होंने मरीजको हालमें नहीं देखा है यह स्वाभाविक है कि उनका कथन उन सूचनाओंपर आधारित है जो उन्हें सामान्य लोगोंसे मिली हैं। जो भी हो, मैं जब डॉ० मोदीके कथनको मरीजकी अपनी मानसिक स्थितिसे, जैसी कि उनके तारसे जाहिर हुई है, जोड़कर देखता हूँ तो मैं घबरा जाता हूँ।

इस सिलसिलेमें यदि मैं इस तथ्यका उल्लेख करूँ कि जमनालालजी मेरी ओर इस तरह आशासे देखते हैं जैसे कि पिताकी ओर देखते हैं, तो शायद इसे धृष्टता नहीं समझा जायेगा। उनके बच्चे मेरी देखरेखमें और अनुशासनमें हैं। वे खुद अक्सर कई महीनोंतक लगातार आश्रममें रहे हैं। इसलिए स्वाभाविक है कि कैदी होते हुए भी मैं उनके परिवारके सदस्योंको, जो पाबन्दियाँ मुझपर लगाई गई हैं उन्हें मानते हुए, जितनी भी राहत और निर्देशन दे सकता हूँ, देनेकी कोशिश करता हूँ। यदि जमनालालजीका तबादला इस जेलमें किया जा सके और उन्हें ऐसा भोजन तथा ऐसी विशेष डाक्टरी सलाह दी जा सके जो उनके स्वास्थ्यके लिए अपेक्षित हो, तो मुझे तथा उनके परिवारको बहुत राहत मिलेगी। मैं लगभग सभी जगहकी इस डाक्टरी रायपर जोर दूँगा कि जमनालालजी एक ऐसे रोगसे पीड़ित हैं जो दिनों-दिन बढ़ सकता है और घातक रूप ले सकता है और ऐसे लक्षण बिना पर्याप्त पूर्व चेतावनीके ही प्रकट होते हैं। इसलिए मैं सरकारसे शीघ्र निर्णय लेनेकी प्रार्थना करता हूँ।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल, फाइल नं० ८००(४०) (२), भाग-१, पृ० ३८५

१. देखिए पृष्ठ १९।

५०. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

२२ नवम्बर, १९३२

चि० डाह्याभाई,

देवदासने तुम्हारे कुशल-समाचार देते हुए लिखा है कि हमारे पत्र तुम्हें रोज मिलें तो तुम्हें प्रसन्नता होगी। हम तो जान-बूझकर तुम्हें नहीं लिखते यद्यपि रोज आशीर्वाद तो जाते ही हैं। रोज तुम्हारा स्मरण होता है। अब पत्र भी मिलेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १५०

५१. पत्र : भाऊ पानसेको

२२ नवम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

तुम्हारा कब्ज अभीतक बना है, इससे यही सूचित होता है कि आतें बहुत कमजोर हो गई हैं और जिन पाचक रसोंका स्राव होना चाहिए वह भी नहीं होता। बीजापुर जाकर देखना चाहिए, यह बात तो मुझे पसन्द है। लेकिन यदि वहाँ जाने पर भी कब्ज कम न हो तो केवल शाक और फल लेना चाहिए। रोट या रोटी भी नहीं लेनी चाहिए। नियमित शौच होने लगे तब दूध शुरू करना चाहिए और जब इसके बाद भी शौच ठीक होता रहे तो गेहूँ, ज्वार, बाजरा शुरू करना चाहिए। इस तरह कब्ज कम होना ही चाहिए। अर्थात् बीजापुर भी जाओ और ऊपरके मुताबिक उपाय-योजना भी करो। इसके बाद भी सुधार न हो तो दूसरे उपवासकी बात सोचना। पर मुझे विश्वास है कि इससे ठीक हो जायेगा। इस बार तकलीके बारेमें लिखनेका इरादा छोड़े दे रहा हूँ। बनेगा तो मैं तुम्हें यहीं बुलवा लूँगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७४४) से। सी० डब्ल्यू० ४४८७ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे।

५२. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

२२ नवम्बर, १९३२

चि० जानकीबहन,[1]

तुम्हारे पत्रके उत्तरमें विनोद तो बहुत-सा करना था, पर अब वक्त ही कहाँ है। कमलनयन[2] की बात भूल गया था, अब लिखता हूँ। कमलनयनको अंग्रेजी पढ़ने की बड़ी इच्छा है। उसे शिक्षाका वातावरण चाहिए। इसलिए मुझे लगता है कि उसे कोलम्बो जाने दो। वहाँ जी-भरकर अंग्रेजी सीख लेगा। जगह पासकी पास है और दूरकी दूर। बच्चे साथ रखनेसे ही अच्छे रहते हैं, इसे सिद्धान्त रूपमें नहीं मान लेना चाहिए। आश्रमका जितना प्रभाव पड़ सकता था उतना पड़ चुका है, ऐसा सोच लेना चाहिए। लंकाके न्यूवारा स्थानमें रहे तो वहाँ जलवायु सुन्दर मिलेगा। और मैं मानता हूँ कि वहाँ पढ़नेकी सुविधा अच्छी है। तुमको कुछ भी चिन्ता करनेका कारण नहीं रहेगा। इस विषयमें मुझे लिखना चाहो तो लिखना।

जमनालालजीके बारेमें बिलकुल चिन्ता न करना। खबर आये तो मुझे देती रहना। इस सम्बन्धमें मेरा पत्र-व्यवहार चल रहा है। मदनमोहन[3] को अलग पत्र नहीं लिखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०४) से।

५३. पत्र : मणिबहन पटेलको

[२२ नवम्बर, १९३२][4]

चि० मणि,

तुझे तार[5] दिया है। पत्र[6] लिखा है। दोनों मिले होंगे। तू रोज लिखे तो मुझे पत्र मिलेगा और वह डाह्याभाईको पहुँचा दिया जायेगा। आज भी खबर अच्छी ही है। देवदास देखकर आया है। वह कहता है कि डाह्याभाईको देखकर तो कोई

१. जमनालाल बजाजकी पत्नी।

२. जानकीदेवीके पुत्र।

३. मदनमोहन चतुर्वेदी, जमनालाल बजाजके सचिव।

४. साधन-सूत्रमें तिथि अनिश्चित है। अतः तिथिका निश्चय गांधीजीकी दैनन्दिनीमें पत्रके उल्लेखसे किया गया है।

५. देखिए पृष्ठ २०।

६. देखिए पृष्ठ २८।

कह ही नहीं सकता कि टाइफाइड हुआ है। ऐसी हिम्मत और शक्ति दिखाई देती है।

सब कदी बहनोंको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल
कैदी, सैंट्रल जेल, बेलगाँव

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहन पटेलने, पृष्ठ ९१

५४. पत्र : मदालसा बजाजको

२२ नवम्बर, १९३२

चि० मदालसा,[1]

तुम्हारे अक्षर तो बहुत सुधरते जा रहे हैं। तुम्हारा अभ्यास-क्रम भी अच्छा है। शक्तिसे ज्यादा मेहनत मत करना। शरीर बिगाड़कर अध्ययन करनेसे दोनों बिगड़ेंगे। यह तुम जानती हो कि क्रोध बुरा है; अतः धीरे-धीरे वह चला ही जायेगा। इसी प्रकार अभिमानको समझो। चलते-फिरते रोना आ जाता है। यह कमजोरीका कारण है। तुम अगर खेल-कूदमें लग जाओ तो रोना बन्द हो जायेगा। जरा भी रोनेका मन हो तो ऊँचे स्वरसे गीता पाठ करने लग जाओ तो रोना भूल जायेगा। यह करके देखना।

तुम कैसे कहती हो कि मन्दिरमें रात-दिन कोई नहीं रहता? मन्दिरके पुजारी तो रहते ही हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृष्ठ ४७१

१. जमनालाल बजाजकी पुत्री।

५५. पत्र : मथुरादास पु० आसरको

[२२ नवम्बर, १९३२][1]

चि० मथुरादास,[2]

महादेवके अक्षर ही तुमको मिल सकते हैं; उसके पत्र नहीं। वह नियमके विरुद्ध होगा।

तुमने जो लिखा है वह मैं सब समझ गया।

महादेव पहले सदा पींजता था। जबसे छक्कड़दास[3] ने नियमित रूपसे पूनियाँ भेजना शुरू किया है तबसे उसका पींजना बन्द हो गया है। अभी तो पर्याप्त पूनियाँ हैं।

इन दिनों छक्कड़दासकी पूनियाँ थोड़ी बिगड़ गई हैं। उनमें किरी बच जाती है और कचरा भी। लेकिन यह कोई शिकायतका कारण नहीं है। बहुत सोच-विचार कर मैंने एक नियम बना लिया है। मजबूती जाँचनेके मोहमें समय न खोकर ताना डालने लायक सूत हो जानेपर बुनवा लिया जाये। सदा एक ही बुनकरसे बुनवायें तो उसकी रायके अनुसार सूतको उत्तम बनाते जाना चाहिए। दूसरा व्यावहारिक उपाय यह है कि सूतको तकुएपर जोरसे लपेटें; टूटे तो चिन्ता न करें। समान कत रहा है या नहीं, इसपर निगाह रखें। अपने शरीरको लेकर चिन्तित न हों; बल्कि सादे उपाय करते रहें। खुराक और मेरी नई खोजोंके बारेमें सुनते तो होगे ही।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७५८)से।

५६. पत्र : के० केलप्पनको

२३ नवम्बर, १९३२

प्रिय केलप्पन,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं चाहता हूँ कि तुम रोज लिखो और रोज-ब-रोजकी प्रगतिकी पूरी रिपोर्ट मुझे दो। निश्चय ही, यदि जरूरी हुआ तो तुम अपना उपवास प्रसन्नतापूर्वक फिर शुरू करोगे। लेकिन वह फिर शुरू न हो इसके लिए हमें पूरी-पूरी कोशिश करनी चाहिए।

१. साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है, किन्तु गांधीजी की "दैनन्दिनी, १९३२" से इस तिथिकी पुष्टि होती है।

२. आश्रमवासी खादी-कार्यकर्ता

३. पूनियाँ बनानेमें कुशल कार्यकर्ता।

एक क्षणके लिए भी यह मत सोचो कि तुमने अपने तारमें कुछ कहा था इसलिए मैंने तुम्हारे साथ उपवास करनेका वायदा किया था। मैं जानता हूँ कि यदि मैं उपवासमें तुम्हारा साथ नहीं दूंगा तो तुम्हें ज्यादा खुशी होगी। लेकिन मेरे लिए यह सम्मानका सवाल था कि यदि मेरी सलाहपर मुल्तवी किया गया उपवास फिर शुरू करना पड़े तो मुझे तुम्हारा साथ देना चाहिए। आखिर जब मैं तुम्हें यह बताता हूँ कि उपवासके दिनोंमें मेरे सभी कार्य अन्तरात्माकी आवाजसे प्रेरित होते थे, तो तुम्हें मेरी बातपर विश्वास करनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। परमेश्वरको पूर्णतया समर्पित जीवनके सभी काम इसी तरह निर्दिष्ट होते हैं और मेरी बराबर यह कोशिश है कि मैं अपना जीवन ऐसा ही पूर्ण समर्पित बनाऊँ। इसलिए मैं चाहूँगा कि तुम मुझे उपवाससे, यदि वह जरूरी हो जाता है तो, अलग हटानेमें अपनी शक्ति न लगाओ, बल्कि अपनी शक्तिका हर बिन्दु जनमत तैयार करनेमें लगाओ जिससे कि मन्दिर नियत तारीखसे पहले ही हरिजनोंके लिए खुल जाये। जमोरिनको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढ़ा है। मैं समझता हूँ कि वह काफी ठीक है। वैदिकों और तान्त्रिकोंका सारा उल्लेख यदि तुमने छोड़ दिया होता तो और बेहतर होता। उनके सम्बन्धमें तुम्हारी स्थिति पहलेसे ही विदित थी।

सदाशिव रावसे मेरी लम्बी बातचीत हुई। उन्होंने मुझे तुम्हारे बारेमें सब बताया। मैंने उन्हें अपने विचार पूरी तरह बता दिये हैं, लेकिन आश्वासनको और भी निश्चित बनानेके लिए मैं उन्हें लिख रहा हूँ।

हमारा यह दावा कि प्रस्तावित उपवासमें दबावकी गंध कभी नहीं आ सकती, इस मान्यता पर आधारित है कि मन्दिर जानेवाले सवर्णोंकी बहुसंख्या अस्पृश्योंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें है। यदि यह बात पूर्णतया सिद्ध नहीं की जा सकती, तो हमारे उपवास करनेका कोई आधार ही नहीं है। यह जानते हुए कि सवर्ण हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध हैं, उपवास करना निस्सन्देह दबाव-जैसा ही होगा। यदि हमें यह दुःखद स्थिति पता चले तो भी उसका अर्थ यह नहीं होगा कि अवर्णोंके मन्दिर-प्रवेशके लिए आन्दोलन हम बन्दकर देंगे। लेकिन तब आन्दोलनको दूसरी दिशा लेनी होगी। ऐसी हालतमें मैं उपवासकी सम्भावना भी सोच सकता हूँ। लेकिन वह केवल एक स्पष्टतः भिन्न वातावरणमें ही हो सकता है। यह तथ्य सभी सम्बन्धित लोगोंके आगे प्रदर्शित करनेके लिए कि मन्दिर जानेवालोंकी बहुसंख्या हमारे पक्षमें है, मन्दिर जानेवालोंका, या यों कहिए कि मन्दिरके इर्द-गिर्द दस मीलके दायरेमें, सही तरीके से मत लिया जाना चाहिए। और यह काम सर्वथा समुचित ढंगसे हो इसके लिए सार्वजनिक सभाओंमें, हस्ताक्षरकर्त्ताओंको जाननेवाले गवाहोंके सामने, पूरे नाम सहित हस्ताक्षर लिये जाने चाहिए, जिनके साथ पता, रोजगार, उम्र व लिंग भी रहना चाहिए। ऐसा कहा जा रहा है कि यद्यपि बहुत-से लोग हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हैं, पर वे अपने जमींदारोंके या अन्य दबावके कारण खुले रूपसे ऐसा कहनेसे डर सकते हैं। मैं तो कहूँगा कि उस हालतमें भी हम लोगोंको पराजित घोषित किया जाना चाहिए। मत देनेसे रुकनेका चाहे जो भी कारण हो, यदि हमें बहुसंख्यामें

मत नहीं मिलते तो, जहाँतक प्रस्तावित उपवासका सम्बन्ध है, हमें लड़ाईमें हारा घोषित किया जाना चाहिए।

यह कहनेकी जरूरत नहीं कि मत लेते समय हमारी तरफसे किसी भी तरहका दवाव नहीं होना चाहिए। इसके विपरीत, हर तरहसे ऐसी कोशिश की जानी चाहिए कि मतदान विरोधियोंके सहयोग और सद्भावसे हो सके। तथाकथित रूढ़िवादी दल और सुधारकोंके वीच मतभेदके मुद्दे कम-से-कम रहने चाहिए। सुधारक जवतक दवावका कोई रास्ता अख्तियार न करें, रूढ़िवादी दलको उनके विरुद्ध कहनेको कुछ नहीं हो सकता। यदि उन्हें आश्वस्त कर दिया जाये कि सुधारकों अथवा हरिजनोंकी तरफसे जवर्दस्ती मन्दिर-प्रवेशका कतई कोई प्रयत्न नहीं किया जायेगा, तो रूढ़िवादियोंकी तरफसे कोई विरोध नहीं होगा, और यदि हुआ भी तो वह वेकार रहेगा। सच्ची अहिंसा हिंसाको कभी जन्म नहीं दे सकती। इस वातपर जितना भी जोर दिया जाये थोड़ा है कि अस्पृश्यता-निवारण उसके राजनैतिक पहलूके अलावा, जो तय हो चुका है, सर्वथा धार्मिक मसला है।

मुझसे यह प्रश्न पूछा गया था कि क्या मन्दिर-प्रवेशके हिमायती दूसरी जनवरीसे कुछ दिन पहले उपवास शुरू कर सकते हैं — मेरे खयालसे शायद इसलिए कि मामले पर दवाव डाला जा सके। यह किसी भी कारण कतई नहीं किया जाना चाहिए। और यदि उपवास शुरू हो जाये तो न ही किसीको सहानुभूतिवश हमारे साथ उपवास करना चाहिए।

तुम्हारा उपवास, यदि वह फिर शुरू हो तो, आम सड़कपर नहीं होना चाहिए। वह किसी मकान या झोंपड़ीमें होना चाहिए। और जव तुम उपवास कर रहे हो तव तुम्हारा कोई सार्वजनिक प्रदर्शन नहीं होना चाहिए।

स्वर्गीय देशवन्धु दासकी विधवा वहन उर्मिलादेवी यहाँसे २७ को मद्रास एक्सप्रेससे रवाना होंगी। उनके साथ उनका वेटा रहेगा। वे वहाँ गोपाल मेननके इस सुझावपर भेजी जा रही हैं कि उत्तर भारतसे एक वहन भेजी जाये। उनका दिल कमजोर है, इसलिए उनसे ज्यादा भाग-दौड़का काम नहीं लिया जाना चाहिए। वे एक हिन्दू विधवाका पवित्र जीवन विताती हैं। वे अंग्रेजीकी अच्छी विदुषी हैं और वर्षों वंगालमें सार्वजनिक कार्य करती रही हैं। इस कामके लिए मैं उनसे ज्यादा योग्य महिला उत्तर भारतसे नहीं भेज सकता था। उर्मिलादेवी पुरुषोंके और स्त्रियोंके भी समक्ष वरावर भाषण दे सकती हैं। उन्हें रूढ़िवादियोंके घरों तथा हरिजनोंके क्वार्टरोंमें भी जरूर ले जाना। पता नहीं उन्हें कहाँ ठहरानेकी वात सोची गई है। अगर और कोई प्रवन्ध पहले ही न कर लिया गया हो तो मैं उस गुजराती घरका सुझाव दूंगा जहाँ पिछले दौरेमें मुझे ले जाया गया था। यदि वहाँ मच्छर हों तो उन्हें एक मच्छरदानी मिलनी चाहिए। जहाँसे भी हो सके, उन्हें एक कमोड दिया जाना चाहिए। वे शुद्ध शाकाहारी हैं।

तुम्हें अपने आपको विलकुल ठीक रखना चाहिए। आत्मविश्वासमें कतई कमी नहीं आनी चाहिए और कोई काम मानसिक तनावमें नहीं करना चाहिए। हम केवल

उत्साह और ईमानदारीसे काम कर सकते हैं। परिणाम परमेश्वरके हाथोंमें है। केवल सबसे खरे लोग ही आन्दोलनका नेतृत्व करें। मुझे सभी सक्रिय कार्यकर्त्ताओंकी सूची भेजो। मेरा सुझाव है कि मालवीयजीको केरल जानेके लिए परेशान न किया जाये। वे बहुत कमजोर हैं और वैसे ही उनके हाथोंमें बहुत काम है। तुम्हें उनको इस आशयका तार दे देना चाहिए कि यदि वे अपना आशीर्वाद तथा सन्देशवाहक भेज दें तो वह बहुत सराहा जायेगा, लेकिन केरल उन्हें लम्बी यात्राके कष्टसे, जब कि वे अत्यन्त महत्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्यमें लगे हैं, बरी रखेगा।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २०००४) से।

५७. पत्र : नारणदास गांधीको

२३ नवम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

कुसुम और भाऊ[1] के पत्र पढ़कर उन्हें दे देना। कुसुमकी बीमारीमें देखभालकी जरूरत है। भयकी कोई बात नहीं है। स्वस्थ हो जानेकी कुंजी स्वयं कुसुमके हाथमें है। सारा समय खुली हवामें रहे और जो पचे और जितना पचे उतनी ही खुराक लें तो अवश्य अच्छी हो जायेगी। दस्त आते हैं तो उन्हें रोकनेका एकमात्र उपाय उपवास ही है। उपवासके दरम्यान जितना पी सके उतना पानी पिये। पानीके हर प्यालेमें थोड़ा-सा सोडा डालना चाहिए। वह दस्त बन्द करनेमें बहुत सहायक होता है। एक औंस पानीमें एक ग्रेन सोडा डालना ठीक रहता है। यदि फलोंका रस हजम हो जाये तो उपवासकी कोई जरूरत नहीं है।

अंडोंकी चर्चा मैं पहले कर चुका हूँ। शुद्ध अंडे मछलीके तेलसे ज्यादा निर्दोष हैं। शुद्ध अंडे वे हैं जिन्हें चाहे जितने भी समय क्यों न रखें, उनसे जीव उत्पन्न नहीं हो सकता। और ऐसे अंडोंके लिए मुर्गीके लिए मुर्गेका संग जरूरी नहीं होता। ऐसे अंडोंको बिना उबाले, कच्चा ही फोड़कर जो रस निकले वह खाना चाहिए। इससे दस्त बन्द हो जाते हैं और वे दूधसे ज्यादा पौष्टिक होते हैं। यदि कुसुम सहमत हो तो वह चाहे इसे खाये। ऐसे अंडे अहमदाबादमें भी मिल सकते हैं। किन्तु मेरी समझमें मेरी अक्लको बहुत महत्व नहीं देना चाहिए। दूर बैठकर मैं जो कहता हूँ वैसा करनेके बदले जो-कुछ डाक्टर कहे वही करना ठीक माना जायेगा और वैसा ही करना। मैंने जो कहा है सो डाक्टरको बता देना और उसके बाद जैसा वह कहे वैसा ही करना।

भाऊके विषयमें जो सुझाव उसके पत्रमें दिया है उसके अतिरिक्त कुछ नहीं कहना है। कान्ति ठीक न हुआ हो तो उसके मामलेको विचार करने लायक मानूँगा।

१. भाऊ पानसे; देखिए पृष्ठ ४१।

अर्थात् उसे काला ज्वर है, यह मानकर इलाज करना चाहिए। तब वह पूरा आराम करे, अनाज-मात्रका त्याग करे और सिर्फ फलोंका रस ही ले। और सचमुच भूख लगे तो थोड़ा-थोड़ा दूध पीये। पाखाना न हो तो पिचकारी ले।

फिलहाल तुम या कोई भी अन्य व्यक्ति रोज एक पोस्टकार्ड लिख देगा तो काफी होगा।

रामजी कल मिलकर गया है। उसे तो मथुरादासके विरुद्ध बहुत-सी शिकायतें हैं। मथुरादास उनका समाधान करे। वह किसी तरहका कष्ट भी दे तो उसे भी सहन कर लेना चाहिए। महादेवके सूतको एक-सा बुननेका उसे बहुत शौक है। यदि ऐसा हो और उसके विरुद्ध कोई खास बात न हो, तो इससे कुछ नुकसान होनेकी सम्भावना हो तो भी वह बर्दाश्त करके उसे बुनाई करने देना चाहिए। उसे पास बैठाकर बाकी सब-कुछ पूछ लेना। वह कुछ कहे तो हमें उसका दुःख नहीं मानना चाहिए और अपमान करे तो भी सहन कर लेना चाहिए। यह सब हमारे प्रायश्चित्तका अंश है। यह सब मथुरादासको पढ़वा देना।

हरियोमल[1] कैसा चल रहा है?

पूनामें रामजी ईसाई सेवा संघमें ठहरा था। साधारण तौरपर कोई भी वहाँ ठहरे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। यह तो अच्छा लगता है। पर रामजीको वहाँ ठहरना पड़ा इसका यही अर्थ हुआ न कि उसे किसी दूसरे स्थानपर आश्रय नहीं मिला। उससे पूछना चाहिए था और उसके लिए कुछ बन्दोबस्त करना चाहिए था। शायद ऐसा करनेमें तुम्हें कठिनाई होती और सम्भव है इसलिए तुम चुप रह गये। ऐसे भाइयोंको जहाँ रख सकें मैं ऐसे घर खोज लूँगा और तुम्हें लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२६९ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. एक सिन्धी आश्रमवासी।

५८. देवदास गांधीको लिखे पत्रका अंश

२३ नवम्बर, १९३२

यह किस्सा[1] खत्म न हो जाये, तबतक तू आना बन्द कर दे। एक-दूसरेको पत्र लिखकर हम सन्तोष कर लेंगे। मुझसे मिलनेके लालचमें आकर माफी नहीं माँगी जा सकती; और जहाँ माफी माँगना धर्म हो जाये, वहाँ माफी माँगनेमें जरा भी संकोच या शर्म न होनी चाहिए। ऐसे छोटे-छोटे किस्सोंसे भी हमें तो प्रेम-धर्मका पालन ही सीखना है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २७१

५९. पत्र: हीरालाल ए० शाहको

२३ नवम्बर, १९३२

यह बात मेरे ध्यानके बाहर नहीं थी कि रंगरेजका दृष्टान्त पूरी तरह ठीक बैठनेवाला नहीं है। मगर वह काम-चलाऊ था। तुम जो समझते हो कि जेलमें अस्पृश्यताका निपटारा हो गया है, सो यह सब निपटारा किताबी ही है। जैसा तुम मानते हो, ऐसा कुछ भी नहीं हो रहा। मैं तो आँखों देखी बात कहता हूँ। क्या जेलमें और क्या बाहर, सच बात तो यह है कि हिन्दुस्तानके काफी बड़े हिस्सेमें और अधिक-से-अधिक समयतक तो भंगीकी पोशाकका अर्थ है एक लंगोटी। मैं खुद भंगीका काम लगभग डेढ़ सालतक लगातार कर चुका हूँ। मैं तो यह काम मजदूरोंकी पोशाक पहनकर ही करता था। आश्रममें यह काम कच्छ पहनकर निपटाया जाता है। रंगरेज जितना मैला हो जाता है, उतना मैल भंगीका काम करनेवालेको चढ़ता ही नहीं। वह सारी सफाई शास्त्रीय ढंगसे करे, तो उसके लिए सिर्फ मृत्तिका-स्नान ही काफी है। तुम तो शायद जानते भी होगे कि धर्मस्मृतियोंमें और इस्लाममें मृत्तिका-स्नान पूर्ण स्नान है। मगर ऐसे भी दूसरे धन्धे हैं, जिनमें मृत्तिका-स्नान या पानी भी पूर्ण स्नान नहीं है। साफ होनेके लिए साबुन और जन्तुनाशक दवा वगैरहकी जरूरत पड़ती है। चमार, डाक्टर, रंगरेज और कोयलेका काम करनेवालोंका धन्धा ऐसा है। और भी ऐसे बहुत-से धन्धे हैं। भंगीकी सफाई अस्पृश्यता-निवारणमें बहुत

१. एक दिन पहले देवदासको गांधीजी से मिलने नहीं दिया गया था, क्योंकि सितम्बरमें गांधीजी के उपवासके समय जेल-सुपरिंटेंडेंटको लगा था कि "देवदासने उनके अधीनस्थ अधिकारियोंके समक्ष उनका अपमान किया था"।

कम महत्त्व रखती है। इन सब बातोंपर गहराईसे विचार करना। अनुपात नहीं भूलना चाहिए। अधिक चर्चा करनी हो तो मेरे पास आ जाना।[1]

'क्रानिकल' की टिप्पणी मुझे अनुचित नहीं लगी। अभी भंगी चाहे जिसका काम करते हैं, लेकिन हिन्दुओंने यदि उनको अपनाया होता, तो उनकी आज जो स्थिति है, वह कभी न होती। यूरोपके भंगी या दुनियाके और किसी भी हिस्सेके भंगीकी हालत दूसरे मजदूरोंसे जरा भी गिरी नहीं है। उनके लिए न तो खास मुहल्ले हैं और न विशेष पोशाक है। भंगी-जैसी जाति हिन्दुस्तानसे बाहर कहीं नहीं है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २७१-२

६०. भेंट : महिलाओंको[2]

२३ नवम्बर, १९३२

जमोरिन एक अच्छा आदमी है। वह जिद्दी भी नहीं है। परन्तु उसे अपने अन्य न्यासियोंको अवश्य साथ लेकर चलना चाहिए। ऐसा केवल तभी हो सकता है जब कि यह निश्चय हो जाये कि जनमत वास्तवमें अनुकूल है। महिलाओंमें समझाने-बुझानेकी शक्ति होती है। वे भक्तिभावसे मन्दिर जानेवालोंको विश्वास दिलाएँ कि सच्चा धर्म लोगोंके हृदयको खोलेगा और प्रत्येक मानवके लिए मन्दिरके द्वार खोल देगा और किसीको जातिबाह्य नहीं कहेगा।

मलाबारमें जाइए, वहाँ नम्बूदरी और नैयर महिलाओंको इस कामके लिए तैयार कीजिये कि वे १० मीलके दायरेके भीतर भक्तिभावसे मन्दिर जानेवालोंसे इस आशयके वक्तव्यपर हस्ताक्षर करवायें कि वे अस्पृश्य जातियोंके लोगोंको मन्दिरमें प्रवेश करने देनेके लिए तैयार हैं। यह काम महिलाओंके लिए विशेष रूपसे उपयुक्त है और मलाबारकी 'विमेन्स इंडियन एसोसियेशन' की शाखाको इसमें आगे बढ़कर भाग लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, ३०-११-१९३२

१. साधन-सूत्रसे स्पष्ट नहीं होता कि इस परिच्छेद तथा अगलेके बीचका कोई अंश छोड़ दिया गया है या नहीं।

२. बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-११-१९३२ के अनुसार श्रीमती कज़िन्स, श्रीमती उर्मिला देवी, श्रीमती अम्बालाल साराभाई तथा भारतीय महिला सभाकी अन्य सदस्याएँ शामको गांधीजी से मिली थीं।

६१. पत्र : मीराबहनको

२४ नवम्बर, १९३२

चि० मीरा,

आज फिर वही प्रातःकालीन प्रार्थनाके पहलेका समय है और मैं महादेवकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

तो किशन तुम्हारे पास नहीं है। तुम्हें भाँति-भाँतिके अनुभव हो रहे हैं।

मैं तुम्हें बुद्ध धर्मपर एक पुस्तक भेज रहा हूँ, जो हालमें ही मिली है। आशा है यह दिलचस्प मालूम होगी। मैंने इसे अभी पढ़ा नहीं है। इसे मुझे लौटा देना और लिखना कि तुम्हारे खयालसे यह अच्छी लिखी गई है या नहीं। मैंने लेखकको वचन दिया है कि मैं इसे देख जाऊँगा। परन्तु लौटानेकी कोई जल्दी नहीं है। अभी दो या अधिक सप्ताहतक तो मैं किसी चीजको छू भी नहीं सकूंगा।

विना छने गेहूँके बारेमें तुम्हारी बात मेरे ध्यानमें है। तुम्हारा अनुभव मैं आश्रम तक पहुँचा दूंगा।

विलकुल अच्छी हो जानेके लिए जो चाहो सो परिवर्तन कर लो। कल मेरा वजन १०३ पौंड निकला। अभी तो सम्भवतः यही स्थिर रहेगा। मावेकी मात्रा अब शायद मैं न वढ़ा सकूँ। और कामके वढ़ते वोझके कारण वजन बढ़नेकी आशा भी नहीं है। परन्तु १०३ पौंड मेरे लिए अच्छा वजन है। कोहनियाँ बिलकुल ठीक नहीं हैं। डाक्टर चाहते हैं कि मैं एक सप्ताहतक कातना कतई बन्द कर दूँ, और मैंने यह बात मान ली है। दर्द कातनेके परिश्रमके ही कारण है, इसका उन्हें इतना विश्वास है कि उनके खयालमें आरामसे अवश्य लाभ होगा। अगले बुधवारतक मैं इसे आजमा कर देखता हूँ।

अव यहाँ ठीक सर्दीका मौसम शुरू हो गया लगता है।

हम सवकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७१६ से भी ।

६२. पत्र : बम्बई सरकारके गृह सचिवको

२४ नवम्बर, १९३२

सचिव, बम्बई सरकार
गृह विभाग

प्रिय महोदय,

यह पत्र लिखनेसे पहले मैंने लगभग हताश हो जानेकी हदतक इन्तजार किया है। अस्पृश्यताका कार्य मुझे उससे निपटनेकी अपनी क्षमतासे अधिक लग रहा है। और यह तब जब कि सरदार वल्लभभाई और श्रीयुत महादेव देसाईसे मदद मिल रही है। पत्र-व्यवहार दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। मुलाकातियोंकी संख्या रोज बढ़ती जा रही है और जैसे-जैसे आन्दोलन आगे बढ़ता है इन मुलाकातोंको अधिकाधिक समय देना होता है। पत्र-व्यवहारमें और उन वक्तव्योंको लिखनेमें जो मुझे जनताके लिए जरूर देने चाहिए, मैं पहले ही पिछड़ गया हूँ। मेरी कठिनाई इस बातसे और बढ़ गई है कि मेरी कुहनियाँ पहलेसे अधिक तकलीफ दे रही हैं और मैं अपने हाथोंको उतना इस्तेमाल नहीं कर पाता हूँ जितना कि मुझे करना चाहिए। और न ही मैं उपवाससे पूर्ववाली ताकत फिरसे पा सका हूँ कि मैं जितना काम अभी कर रहा हूँ उससे ज्यादा कर पाऊँ। अभी हम सब सुबहके ४ बजे काम शुरू करते हैं और आवश्यक मध्यान्तरोंके साथ काम रात्रिके ९ बजेतक जारी रहता है। इसलिए इस कठिनाईसे निकलनेका एक ही रास्ता है कि सरकार मेरे एक साथी कैदीको मेरे साथ रहनेके लिए भेज दे। अभी मुझे निम्नलिखित नाम याद आ रहे हैं:

१. श्रीयुत मोहनलाल भट्ट	कैम्प जेल, यरवदा
२. श्रीयुत शंकर कालेलकर	सेन्ट्रल जेल, यरवदा
३. श्रीयुत रामदास गांधी	सेन्ट्रल जेल, यरवदा
४. श्रीयुत स्वामी आनन्द	कैम्प जेल, नासिक रोड
५. श्रीयुत छगनलाल जोशी	(जेल मालूम नहीं)
६. श्रीयुत जुगतराम दवे	बाइकुल्ला, सुधार गृह

ये कैदी मुझसे घनिष्ठ रूपसे सम्बन्धित रहे हैं, मेरे नीचे काम कर चुके हैं और अंग्रेजी, गुजराती तथा हिन्दी जानते हैं जिसकी कि मुझे जरूरत है। यदि मुझे चुनावका अवसर हो तो मैं स्वामी आनन्दको इस कामके लिए सबसे योग्य मानकर चुनूंगा। वे कांग्रेस द्वारा १९२९ में गठित अस्पृश्यता-विरोधी कमेटीके सचिव रह चुके हैं और तबसे अपना अधिकांश समय अस्पृश्यता कार्यमें लगाते रहे हैं।

मुझे यह कहनेकी जरूरत नहीं कि मैंने अपनी मांग कम-से-कम उतनी मदद तक ही रखी है जितनी की मुझे तत्काल जरूरत है। यदि यह ऐसा मामला हो

जिसे केवल भारत सरकार ही तय कर सकती हो, तो मैं चाहूंगा कि मेरी प्रार्थना तार द्वारा उसतक पहुँचा दी जाये।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स: होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४) भाग–२, पृ० ७७

६३. पत्र: एम० जी० भण्डारीको

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

आपके नाम १४ तारीखके अपने पत्र[1] में मैंने कुछ नाम सरकारके आगे रखे थे कि उन्हें स्वर्गीय डॉ० पी० जे० मेहताकी जायदादके सिलसिलेमें मुलाकातकी इजाजत दे दी जाये। उसी सन्दर्भमें मेरी प्रार्थना है कि इस मामलेको अत्यावश्यक माना जाये, क्योंकि डॉ० मेहताकी विधवा तथा जायदादके उत्तराधिकारी मृतकके मामलोंका शीघ्र निपटारा चाहते हैं।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स: होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं ८०० (४०) (२), भाग–१, पृ० ३४७

६४. पत्र: एम० एम० अनन्त रावको[2]

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

मैं बिलकुल साफ देख रहा हूँ कि हम 'गीता' को भिन्न दृष्टिकोणसे देखते हैं। मेरे निकट 'गीता' का मुख्य विषय जीवनका एकत्व है। इसकी अनुभूति निष्काम कर्म

१. देखिए खण्ड ५१, "पत्र: एम० जी० भंडारीको", १४-११-१९३२।

२. सनातन धर्म कार्यालय, मद्रासके प्रबन्धक, जिन्होंने अपने १८ नवम्बर १९३२ के पत्र (सी० डब्ल्यू० ९५५९) में कहा था कि गांधीजीका यह विचार कि 'गीता' का मुख्य विषय "जीवनका एकत्व और इसलिए उसकी समानता है" शायद अध्याय ५ के १८ वें श्लोकपर आधारित है। लेकिन "संदर्भ तथा विषय" के अनुसार, वह श्लोक केवल "कर्म-संन्यास द्वारा योग" का उल्लेख करता है और 'स्पृश्यता' और 'अस्पृश्यता' के प्रश्नपर लागू नहीं होता, जो केवल कर्म और उसके प्रभावोंपर आधारित है। उन्होंने गांधीजी से कहा था कि अस्पृश्यता-निवारणकी वकालतके पक्षमें जो प्रमाण हो, आप उसपर प्रकाश डालें।

द्वारा होती है। अस्पृश्यता जिस तरह आज प्रचलित है, वह मुझे एकत्वके इस दैवी तथ्यके सर्वथा प्रतिकूल लगती है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९५६०) से; सौजन्य: मैसूर सरकार।

६५. पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय भाई,

आपके मूल्यवान पत्र मिले।[1] आपकी आलोचना मुझे राहत देती है। आपकी चुप्पीसे मैं घबरा जाता हूँ। समयके साथ आपके प्रति मेरा प्रेम और गहरा होता जाता है। हमारे मतभेद मुझे ऊपरी लगते हैं। अन्दर गहराईमें मुझे मतैक्यका अनुभव और स्पर्श होता है और वह मूल्यवान है।

मैं जरूर चाहता हूँ कि मैं कभी ईश्वर या अन्तरात्माकी आवाज या अन्तरात्माकी बात न करूँ। लेकिन रामनामकी तरह, चाहे उसका कितना ही दुरुपयोग क्यों न होता हो, जब भी वह कामका हो उसे दुहराना ही होता है, और दुहराना लगभग जरूरी हो जाता है। यदि गलत समझे जाने या जालसाज कहलानेके डरसे मैं वह न कहूँ जो मुझे सच महसूस होता है, तो सत्यको गहरी चोट पहुँचेगी।

आपने मुझे जो टाइप की हुई टिप्पणियाँ भेजीं, वे मैंने ध्यानसे पढ़ी हैं। वे तर्क मुझे प्रभावित नहीं कर सके। लेखकने आगमोंके फलितार्थोंको बहुत खींचा है।

आशा है आप अच्छी तरह होंगे।

सस्नेह,

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २४५

१. साधन-सूत्रमें निम्नलिखित टिप्पणी है: "इसी समयके अन्य पत्रोंसे हमें पता चलता है कि अन्य मुद्दोंके साथ श्री शास्त्रीने ये दो मुद्दे उठाये थे:

(क) 'मैंने उनसे विवादका अवसर निकाला। अपने लेखोंमें कई जगहोंपर वे अहिंसाको उसके सम्मानित स्थानसे गिराते और शारीरिक साहसके नकली देवताको ताज पहनाते-से लगते हैं। वास्तवमें वे कायरतापूर्ण अहिंसाकी अपेक्षा साहसपूर्ण हिंसाको ज्यादा पसन्द करते हैं। अहिंसा के प्रचारमें यह असंगति अस्थिरचित्तताकी सूचक है। 'गीता' के अर्जुनकी तरह, अपनी आलोचनाका तीर छोड़कर मैंने अपने हाथ जोड़े और विनती की कि "मुझे ज्ञानका प्रकाश दीजिए, क्योंकि मेरी आत्मा सन्देहसे ग्रस्त है और आप सब जानते हैं।"

(ख) 'अन्तरात्माकी आवाजके बार-बार उल्लेखपर मैंने आपत्ति उठाई है।'

६६. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय गुरुदेव,

आपके पहलेवाले पत्र[1] से मुझे राहत मिलती है। मेरे लिए इतना ही काफी है कि आप देख रहे हैं और प्रार्थना कर रहे हैं।

हार्दिक प्रेम सहित,

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३६) से।

६७. पत्र : एडा वेस्टको

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय देवी,

श्री आर० सोलसे, यदि लेखकका वस्तुतः यही नाम है, तुम्हें कितना धृष्टतापूर्ण पत्र मिला है। मैं आशा करता हूँ कि तुम उसपर खूब हँसी होगी।

हिल्डा अगर अल्बर्टको उसके काममें मदद दे सकती है, तो वह जरूर बहुत होशियार हो गई होगी। कामकी कमी और परेशानीके इन दिनोंमें, मैं समझता हूँ, अल्बर्टके लिए काम चलाने लायक गाहकी जुटाना बहुत ही कठिन होता होगा।

पास आ रहे उपवासकी तुम्हें चिन्ता नहीं करनी है। इस बातकी बहुत सम्भावना है कि चीजें स्वयं ऐसा रूप धारण कर लेंगी कि उस अग्नि-परीक्षामें से गुजरना शायद जरूरी नहीं होगा।

तुम सबको प्यार।

तुम्हारा,
भाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४३६) से; सौजन्य : ए० एच० वेस्ट। जी० एन० ७६२२ से भी।

१. १५ नवम्बर, १९३२ का जिसमें रवीन्द्रनाथ ठाकुरने लिखा था : "आपके उपवाससे गतिशील हुई स्वतन्त्रताकी शक्तियाँ अभी भी कार्य कर रही हैं और गाँव-गाँव फैल रही हैं. . .", और अन्तमें लिखा था : "मुझे पूरी आशा है कि जो लोग अभी सत्यके मार्गमें बाधा बनकर खड़े हैं, वे उसके पक्षमें हो जायेंगे।"

६८. पत्र : जे० एस० हॉलैंडको

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय हॉलैंड,

महादेव, जिनसे यह पत्र लिखवाया जा रहा है, मुझे बताते हैं कि आप घनिष्ठ या सच्चे मित्रों द्वारा हॉलैंड कहलाना पसन्द नहीं करते। मैं समझता हूँ कि मित्रताके विभिन्न स्तर होते हैं। पर मैंने उनसे यह कहकर कि आपके हस्ताक्षरमें कोई 'जैक' नहीं है, अपना तरीका बदलनेसे इनकार कर दिया। लेकिन आखिर नाममें क्या रखा है? यह तो दिल है जो माने रखता है, और दिल आपके साथ है, चाहे कलम जैक लिखे या जॉन या हॉलैंड।

इस बारका आपका पत्र एक ही कागजमें सिमटी पूरी पुस्तक है। रूसके बारेमें मैंने इधर-उधर पढ़कर और यात्रियोंसे सुनकर जो-कुछ जाना है, यह उससे ज्यादा मुझे बताता है। मुझे यह स्वीकार करना होगा कि आपके पत्रके प्रति यह पक्षपात अधिकतर इसलिए है कि मुझे आपके विचारोंके सर्वथा सही होनेमें और आपकी सचाईमें विश्वास है।

आपको तथा अन्य मित्रोंको मैं प्रस्तावित दूसरे उपवासके बारेमें चिन्तित न होनेकी चेतावनी देना चाहता हूँ। शायद उस अग्नि-परीक्षामें से गुजरना ही न पड़े। लेकिन चाहे गुजरना पड़े या न पड़े, एक ही बात है। मैं ईश्वरके हाथोंमें सुरक्षित हूँ और अनेक देशोंके अनेक मित्रोंकी प्रार्थनाएँ इस बातका पक्का प्रमाण है कि मैं सर्वथा उसके शासनमें हूँ।

आप सबको प्यार,

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५०८) से; सौजन्य: वुडब्रुक कॉलेज तथा श्रीमती जेसी हॉलैंड।

६९. पत्र : ओलिव एलेक्जेंडरको

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय ओलिव,

अच्छा हुआ कि कुमारी हॉवर्डने मुझे आपके पिता[1]के न रहनेकी सूचना दे दी। पता नहीं, आप या होरेस[2] प्रियजनोंकी मृत्युपर सचमुच दुख महसूस करते हैं या नहीं। मैंने खुद वर्षोंसे मृत्युपर शोक करना बन्द कर दिया है। जब कोई साथी मुझसे छिन जाता है तो धक्का-सा लगता है, लेकिन वह केवल निजी लगावके कारण होता है, जो दूसरे शब्दोंमें स्वार्थ ही है। परन्तु मैं तुरन्त ठीक हो जाता हूँ और समझ लेता हूँ कि मृत्यु तो छुटकारा है और उसका स्वागत उसी तरह किया जाना चाहिए जैसे कि किसी मित्रका किया जाता है, और मृत्युका अर्थ शरीरकी समाप्ति है, उसके भीतर रहनेवाली आत्माकी नहीं। लेकिन मुझे दार्शनिकता नहीं बघारनी चाहिए। आपके तथा अपने प्रति सच्चे रहनेके लिए मुझे अपना विश्वास व्यक्त करना था और साथ ही आपको यह जताना था कि महादेव और मैं तथा यहाँपर आपके अन्य मित्र इतने उदासीन नहीं हैं कि आपके परिवारमें होनेवाली घटनाओंपर ध्यान न दें।

ईश्वर करे आपके पिताकी आत्माको शान्ति मिले।

हम सबकी तरफसे आपको तथा होरेसको प्यार।

हृदयसे आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१६) से।

१. जॉन डब्ल्यू० ग्राहम; देखिए "पत्र : एलिजाबेथ हॉवर्डको" पृष्ठ ६१।
२. होरेस जी० एलेक्जेंडर, ओलिवके पति।

७०. पत्र : हरिभाऊ पाठकको

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय हरिभाऊ,

महादेवने पुरन्दरेकी पाण्डुलिपि पढ़ ली है। मैं उनसे सोमवारको मिलूँगा। मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि उन्हें संघमें लिया जा सकता है। मैं उनसे बात करके देखूँगा कि क्या किया जा सकता है।

घोषणापत्रका मसौदा मैं नीचे दे रहा हूँ। मैंने सोचा कि आप इसे केवल महाराष्ट्रके लिए चाहते हैं। मैं अपनेको केवल मसौदेके लिए ही उत्तरदायी मानता हूँ। यह वितरित किया जाना चाहिए या नहीं, या इसपर अधिक संख्यामें हस्ताक्षर होंगे या नहीं, इसका अन्दाज मैं यहाँसे नहीं लगा सकता। यह उन लोगोंके अन्दाज लगानेकी बात है जो बाहर हैं। मसौदा यह है:

> नीचे हस्ताक्षर करनेवाले हम लोगोंका यह विश्वास है कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मपर कलंक है और यह दूर की जानी चाहिए। हम मन्दिर-पूजामें विश्वास रखते हैं और ऐसा विश्वास रखनेवाले हम लोग सभी हिन्दू मन्दिरोंके न्यासियोंसे सादर आग्रह करते हैं कि वे उनके दरवाजे हरिजनोंके लिए उन्हीं शर्तोंपर खोल दें जो कि सवर्ण हिन्दुओंके लिए हैं। अपनी माँगमें हम गर्भागारको शामिल नहीं करते हैं, जो केवल पुजारियोंके लिए ही खुला होता है। समस्त भारतका ध्यान क्योंकि फिलहाल गुरुवायूर मन्दिरकी तरफ लगा है, इसलिए हम जमोरिन तथा अन्य सभी सम्बद्ध लोगोंसे सादर आग्रह करते हैं कि वे उस मन्दिरको आगामी पहली जनवरीसे पहले हरिजनोंके लिए खोलकर इस दिशामें अग्रणी बनें।

आप इस मसौदेको जितने भी मित्रोंको दिखलाना चाहें दिखला लें और जो भी परिवर्तन जरूरी समझें वे यदि इस माँगके क्षेत्रमें बाधक न हों तो कर लें। इस विषयमें यदि आपको मुझसे मिलनेकी जरूरत हो तो आप पुरन्दरेके साथ सोमवारको आ जायें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २०००५) से।

७१. पत्र : एक अमेरिकी महिलाको

२४ नवम्बर, १९३२

ईश्वरके अस्तित्व या प्रार्थनाके असरको साबित करनेके लिए दैवी उपचारके प्रयोगका विचार मुझे पसन्द नहीं है। ईसा मसीह आज अगर पृथ्वीपर लौट आयें, तो रोगमुक्त करनेकी उनकी शक्तियों और उनसे सम्बन्धित अन्य चमत्कारोंका आज जो उपयोग हो रहा है उसे देखकर वे क्या सोचेंगे, कहना मुश्किल है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – २, पृ० २७५

७२. एक पत्र

२४ नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रसे मुझे आघात पहुँचा है।[१] बम्बईसे चलते समय आपने मुझे जो पत्र लिखा था, उससे मुझे यह लगा था कि मेरे सब कामों और विचारोंसे आप पूरी तरह सहमत हैं। आपने लोगोंको भी यह माननेका मौका दिया कि आप बहुमतके साथ हैं। अपने मनमें जो विरोध आप रखे हुए थे, उसका किसीको पता नहीं था। और कुछ नहीं तो कम-से-कम मेरे मार्गदर्शनके लिए ही आपको अपने विचार मुझे बता देने चाहिए थे। आप जानते हैं कि आपकी रायका मैं कितना आदर करता हूँ। आपके मौनसे सत्यको क्षति पहुँची है, क्योंकि वह सम्मतिसूचक नहीं था। मित्रता तो ठोस चीज है। वह ऐसी होनी चाहिए जो सख्त चोटतक बरदाश्त कर सके। आइन्दा मुझे बचानेका विचार न करके सीधी बात कहकर ही आप इस ध्येयकी ओर मेरी मदद कर सकेंगे।

राधाकान्तने मुझे यह कहकर सावधान कर दिया था कि मैं सुरंगपर खड़ा हुआ हूँ। मैं सोचता हूँ कि उसकी बात ठीक थी।

लेकिन यह सब मैं आपके लिए ही लिख रहा हूँ। आपके पत्रका कुछ भी उपयोग न करनेकी आपकी इच्छाका मैं आदर करूँगा। वह पत्र मैं फाड़े दे रहा हूँ।

सस्नेह,

आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – २, पृष्ठ २७३-४

१. पत्र-लेखकने पूना-समझौते तथा सम्बन्धित उपवासके विषयमें गांधीजी से मतभेद व्यक्त किया था और लिखा था: "मैंने आपकी विवेकबुद्धिके विरुद्ध न कुछ किया है और न कुछ कहा है, क्योंकि मैं बम्बईकी सभामें तथा पूनाकी समितिमें उपस्थित नहीं था।"

७३. पत्र : सेंट फ्रांसिस मठकी साधिकाओंको[1]

२४ नवम्बर, १९३२

............[2] तो सचमुच शाहखर्च है। जहाँ-तहाँ अपना प्रेम बिखेरता फिरता है और बेटा बनकर बड़ी उम्रके आदमियोंका दिल जीत लेता है। अलबत्ता, आप इतना तो जानती ही हैं कि यद्यपि वह हिन्दुस्तानमें है, तो भी हम एक-दूसरेसे नहीं मिलते। मगर इससे क्या होता है, और होना भी नहीं चाहिए। शरीरसे पास न होनेपर भी मैं उसकी आत्माको अपने पास अनुभव करता हूँ। आध्यात्मिक सम्बन्ध कभी टूट नहीं सकता। आध्यात्मिक सान्निध्य कभी विच्छिन्न नहीं हो सकता। आप लिखती हैं कि आप सब प्रार्थनाकी शक्तिको न भूलनेकी भरसक कोशिश कर रही हैं। उसे भूलना हमारे लिए खतरनाक ही होगा।

[अँग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी भाग – २, पृष्ठ २७७-८

७४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२४ नवम्बर, १९३२

भाई घनश्यामदास,

शिंदेजीकी बड़ी शिकायत है कि हमने उनकी संस्थाका नाम चुरा लिया। यह शिकायत ठीक मालूम होती है।[3] हमको कामके साथ काम है नामके साथ नहीं। इसलिये मेरी सूचना है कि हम 'अखिल भारत हरिजन सेवा संघ' नाम रखें और अंग्रेजी और देशी भाषामें यही नाम रखें। तुम आ तो रहे हो लेकिन शायद यह तुम्हें वक्तपर मिल जायगा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला
बिड़ला हाउस
अल्बूकर्क रोड
नई दिल्ली

सी० डब्ल्यू० ७९०६ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

१. इतालियन कन्वैंटकी नर्से।

२. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।

३. श्री घनश्यामदासजी की अध्यक्षतामें एक संघका "अखिल भारतीय अस्पृश्यता-विरोधी संघ" नाम बिना यह जाने हुए रख दिया गया था कि उसी नामका एक और संघ पहलेसे ही वी० आर० शिंदेकी अध्यक्षतामें काम कर रहा था।

७५. पत्र : एलिजाबेथ एफ० हॉवर्डको

२५ नवम्बर, १९३२

प्रिय वहन,

आपके पत्र और आपकी सहानुभूति तथा आपकी अपनी कविताके लिए धन्यवाद। आपके सामने मैं यह बात स्वीकार करता हूँ कि अस्पृश्यता सम्बन्धी कार्यमें मैं इतना अधिक व्यस्त हूँ कि कविता पढ़नेका मुझे समय ही नहीं मिला। लेकिन मैं कविता पढ़ने तक आपको पत्र लिखना मुल्तवी रखना नहीं चाहता था। मैं आपको यह भी वता दूँ कि मैं कविता धीमी गतिसे पढ़नेवाला व्यक्ति हूँ।

आपने बहुत अच्छा किया कि मुझे जॉन डब्ल्यू० ग्राहम[1] की मृत्युकी सूचना दे दी। अन्यथा मुझे पता ही नहीं चलता। जैसा कि आप बहुत ही ठीक कहती हैं, उनका मरनेका ढंग बहुत शानदार था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६४) से।

७६. पत्र : अगाथा हैरीसनको

२५ नवम्बर, १९३२

प्रिय अगाथा,

मेरी अनियमितताके बावजूद तुम नियमित रही हो। लेकिन तुम्हारा नियमित रूपसे लिखना जरूरी है, जब कि मेरे लिए नियमित रूपसे लिखनेका कोई कारण नहीं है — हाँ, यदि मैं बिल्लियों और पेड़ोंके बल्कि बर्त्तनों और स्टोव तकके अपने परिवारकी घटनाएँ बयान करना चाहता, तो बात दूसरी थी। वे भी उतने निर्जीव तो नहीं हैं जितना कि हम उन्हें समझते हैं, और उनकी क्षति हमें उसी तरह महसूस होती है जैसी कि प्रियजनोंकी। सवाल केवल मात्राका है। लेकिन अगर मैं परिवारके इन सब सदस्योंका हाल बयान करने लगूँ, तो हो सकता है कि मेरा पत्र एक या दो बारके बाद ही धूलजैसा नीरस हो जाये। इसलिए यह एकतरफा व्यापार, जिसमें तुम बदलेमें कुछ उम्मीद किये बिना देती रहती हो, मौजूदा परिस्थितियोंमें सबसे

१. ओलिव एलेक्जेंडरके पिता। देखिए "पत्र: ओलिव एलेक्जेंडरको", पृष्ठ ५७।

ज्यादा सहज है। मैं चार्लीको अलगसे नहीं लिख रहा हूँ। लेकिन कृपया उन्हें बताना कि गुरुदेव और मैं दिनोंदिन करीब आते जा रहे हैं। मैं जानता हूँ कि इस समाचारसे उन्हें मेरे द्वारा भेजी जा सकनेवाली किसी भी अन्य चीजसे ज्यादा प्रसन्नता होगी।

हम सबकी तरफसे प्यार।

सस्नेह

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११४६०) से।

७७. पत्र : काशीनाथ एन० केलकरको

२५ नवम्बर, १९३२

प्रिय काशीनाथ,

हिन्दू लॉपर आपकी रचनाकी प्रतिके लिए आपका आभारी हूँ। आपने जो सन्दर्भ मुझे दिया है, उसके अलावा इस उपहारकी भी मैं कद्र करूँगा। आशा है कि कभी मुझे यह पूरी रचना पढ़नेका समय मिलेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

काशीनाथ एन० केलकर, एडवोकेट
पूशालकारी वाड़ा, यदुगोपाल पेठ, सतारा सिटी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९७८) से; सौजन्य : जी० एन० कानिटकर।

७८. पत्र : अब्बास तैयबजीको

२५ नवम्बर, १९३२

मेरे प्यारे दढ़ियल दोस्त और भाई,

जो परिपत्र आप चाहते हैं, वह मैं आपको नहीं भेजनेवाला हूँ। काठियावाड़के राजा और लोग आपको उतनी ही अच्छी तरह जानते हैं जितना कि मुझे। आपकी बुजुर्गी, मुस्कान और शक्ति, जिससे नवयुवक तक होड़ कर सकते हैं, यदि काठियावाड़के राजाओं व धनी लोगोंसे मदद प्राप्त नहीं कर सकती, तो मेरी किसी अपीलसे भी वैसा नहीं हो सकता। और फिर मैं नहीं चाहूँगा कि आप अपने-आपमें, अपने उद्देश्यमें और परमेश्वरमें विश्वासकी कमी जाहिर करें। लेकिन यदि परिपत्र होना ही चाहिए, तो इस पत्रसे उसका काम लीजिए।

सस्नेह,

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८१) से।

७९. पत्र : एस्थर मेननको

२५ नवम्बर, १९३२

मेरी प्यारी बिटिया,

तुम्हें पास आ रहे दूसरे उपवासकी चिन्ता नहीं करनी है। हो सकता है वह हो ही नहीं। लेकिन यदि वह होता है, तो उसे आनन्दका विषय मानना। जीवनको सच्चा बनानेके लिए निरन्तर त्यागमय बनना चाहिए। आनन्द उसके बाद नहीं आता है। खुद त्याग ही आनन्द है। हर लेना और अधिक देनेके लिए होना चाहिए। यह बात मेरे मनमें अधिकाधिक स्पष्ट होती जा रही है। इसलिए जो-कुछ हो रहा है और जो हो उसे तुम पूरी शान्तिसे, आनन्दसे और प्रार्थना करते हुए देखना।

मुझे तुम्हें और अधिक समय नहीं देना चाहिए। अस्पृश्यता-सम्बन्धी काम प्रेम-पत्रोंके लिए कोई समय नहीं छोड़ता।

तुम्हें प्यार व बच्चोंको चुम्बन।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० ११६) से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृ० ९६-७ से भी।

८०. पत्र : फ्रान्सिस्का स्टैंडेनथ[1] को

२५ नवम्बर, १९३२

सत्यवान[2] की पवित्रताकी कुँजी शायद तेरे ही हाथमें है। तुझे हिमालय जैसी धैर्यवान और सागर जैसी उदार बनना है। किसी भी कारणसे तुझे उसे गुस्सा नहीं दिलाना चाहिए। वह विकारवश हो जाये, तो उसका न्याय करने नहीं बैठना। तुझे कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता, क्योंकि तू विकारको जानती ही नहीं। इसलिए तेरा ब्रह्मचर्य तेरे लिए गुण नहीं है, मगर सत्यवानके लिए है। क्योंकि उसे सदा शैतानसे लड़ना पड़ता है। और अगर वह अन्तमें उसे हरा देगा, तो निश्चय ही एक बड़ी बात होगी, अनोखी विजय होगी। इसलिए हम सब प्रार्थना करें कि उसे दुश्मनको पछाड़नेके लिए आवश्यक बल मिले।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – २, पृष्ठ २७९

८१. सैम्युअल ई० स्टोक्सको[3] लिखे पत्रका अंश

२५ नवम्बर, १९३२

लोग जब यह समझ जायेंगे कि धर्म बाहरी कर्मकाण्डमें नहीं है, बल्कि मनुष्योचित उच्चतम प्रेरणाओंके अधिकाधिक हार्दिक अनुसरणमें है, तो यह कितने आनन्दकी बात होगी।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – २, पृष्ठ २७९

१. गांधीजीने इनका नाम सावित्री रखा था।

२. फ्रेड्रिक स्टैंडेनथ, फ्रान्सिस्काके पति।

३. एक अमेरिकी पादरी जो ब्रिटेनका नागरिक बन चुका था और भारतमें बस गया था।

८२. पत्र : रामन्नी मेनन[1] को

२५ नवम्बर, १९३२

मन्दिरमें जानेवालोंकी ठीक-ठीक मतगणना करनेमें कोई मुश्किल नहीं होनी चाहिए। आप जितनी दृढ़तासे यह कहते हैं कि लोकमत मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध है, सुधारक उतनी ही दृढ़तासे मुझे यह विश्वास दिलाते हैं कि लोकमत उनके पक्षमें है। मेरा सुझाव है कि हर पक्ष अपने-अपने प्रतिनिधि नियुक्त करे और किसी भी पक्षकी तरफसे अनुचित दबाव डाले बिना ईमानदारीसे मतगणना की जाये। जिस प्रश्नपर मत लेना है, वह ठीक तरहसे तैयार कर लिया जाये और मतदाताओंको समझा दिया जाये। यह शुद्ध धार्मिक मामला है; इसमें जरा भी गरमागरमी लानेकी जरूरत नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २८०

८३. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरके सचिवको

२५ नवम्बर, १९३२

इतनी दूरसे भी मैं गुरुदेवकी वेदनाका अन्दाज लगा सकता हूँ। पर मेरा खयाल है कि यह अनिवार्य है। गुरुदेव इस समय जैसी वेदनामें से गुजर रहे हैं, वैसी ही वेदनामें से जबतक हमारे देशकी विशुद्ध आत्माएँ नहीं गुजरेंगी, तबतक सनातनियोंके दिल नहीं पिघलेंगे और न अस्पृश्यताका अभिशाप ही मिटेगा। हम प्रार्थना करें कि ईश्वर उन्हें सही-सलामत और बहुत वर्षोंतक जीवित रखे।

गुरुदेवने जमोरिनको जो कड़ा पत्र लिखा है, उसका उनपर असर पड़ना ही चाहिए। कष्टके इन दिनोंमें गुरुदेवका आशीर्वाद और उनकी मदद मेरे लिए अमूल्य है। कृपया उन्हें मेरा प्रेम निवेदन कीजिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २८१

१. जिन्होंने सनातन सभाकी गुरुवायुर शाखाकी ओरसे लिखा था : "यह आपने कैसे निश्चय किया कि जनमत आपके साथ है? वह हमारे साथ है।"

८४. एक पत्र[1]

[२५ नवम्बर, १९३२

आप मेरे शरीरकी इतनी चिन्ता रखते हैं, इसकी मैं कद्र करता हूँ। आपकी इस बातको कि यह राष्ट्रकी सम्पत्ति है, मैं पूरी तरह मंजूर करता हूँ। मगर राष्ट्र ईश्वरका है और ईश्वर यदि शरीरसे कोई काम लेना चाहे तो उसका विरोध कौन कर सकता है?

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २८१

८५. रतलामवासी पाठकोंके प्रश्नोंके उत्तर[2]

२५ नवम्बर, १९३२

१. महान् वस्तुओंका दुरुपयोग अनादि कालसे होता आया है और होता रहेगा। इसलिए उनका त्याग नहीं किया जा सकता। धर्मके नामपर जितना ढोंग इस दुनियामें हुआ है, उतना और किसी चीजका नहीं हुआ होगा। फिर भी यदि धर्मको छोड़ दें, तो जगतका नाश हो जाये।

२. केलप्पनकी भूल साधारण थी। उसका परिमार्जन किया जा सकता था और किया भी गया। अगर उपवास अपने-आपमें एक त्याज्य साधन होता, तो मैं हरगिज उनका साथ नहीं दे सकता था। उन्होंने सौ फीसदी उस भूलका प्रायश्चित्त कर लिया, इसलिए एक साथीके नाते और इस कार्यके प्रणेताके नाते उनका साथ देना मेरा स्पष्ट धर्म था।

३. जमोरिनका धर्म न मेरा साथ देना है और न सनातनी उपवासियोंका। उनका स्पष्ट धर्म केवल न्यायका साथ देना है। सम्भव है दो आदमी एक-दूसरेके विरुद्ध उपवास कर रहे हों और दोनोंके उपवास न्यायविरुद्ध हों। यदि ऐसा हो, तो सत्य-धर्म और अहिंसा-धर्म यह सिखाते हैं कि दोनों उपवासियोंको मरने दिया जाये, और न्याय ही देखा जाये। जन्म-मरणके कर्ता हम नहीं हैं। ये दोनों बातें ईश्वरके हाथमें हैं। उपवास करने पर भी लोग बच गये हैं और उपवास न करनेवाले जीवोंको अनेक कारणोंसे मरते हुए हम प्रतिक्षण देखते हैं।

१. एक बंगाली असिस्टेंट एकाउंटेंट-जनरलको, जिन्होंने गांधीजी को लिखा था, "आपका शरीर एक न्यास है और बार-बार उपवास करनेका आपको कोई अधिकार नहीं है"।

२. कुछ पाठकोंने बारह प्रश्न एक संयुक्त पत्रमें लिख भेजे थे। ये उन्हींके उत्तर हैं।

४. मेरे व्यक्तित्वका असर पड़ता है, यह मुझे मालूम है। मगर इसलिए मैं धर्म कैसे छोड़ दूं? और मेरे व्यक्तित्वसे प्रभावित होकर भी कोई अस्पृश्यताका त्याग कर देगा, तो यह कोई अधर्माचरण तो नहीं माना जायेगा।

५. मुझसे सत्यका त्याग करानेके लिए अरबों मनुष्य उपवास करने लगें, तो भी मैं अपने दिलको पत्थर-जैसा सख्त बनाकर सत्य-मार्गका त्याग न करूँ, यही प्रार्थना मैं ईश्वरसे करता हूँ और ऐसी आशा भी रखता हूँ। यह सब विचार करते समय एक बात नहीं भूलनी चाहिए। अन्यायको कायम रखनेके लिए उपवास करके मर जानेवाले बहुत लोग नहीं निकलेंगे। सच बात तो यह है कि न्यायके लिए मरने-वालोंकी संख्या भी ज्यादा होनेकी सम्भावना कम है।

६. एक करोड़ मनुष्य आत्म-प्रेरणाका नाम लेकर काम करें, तो भी वे झूठे या मूर्ख हो सकते हैं; और एक आदमीको सचमुच ही आत्म-प्रेरणा हुई हो, तो वह बेचारा क्या करे? दूसरे आत्म-प्रेरणाका गलत दावा करेंगे, इस डरसे क्या वह भी आत्म-प्रेरणाको दबाकर झूठा बन जाये और नास्तिक हो जाये?

७. सनातनियोंके पीछे जनमतकी ताकत नहीं है, ऐसा मेरा खयाल हो तो इसे मैं क्यों छिपाऊँ? लेकिन उनके पास वह ताकत हो, तो उसे दबा देनेका मेरे पास कोई साधन नहीं है। और उनके पास वह ताकत हो, तो उसे साबित करना उनके लिए आसान है।

८. प्रथम तो मेरे राजनैतिक विचार, धार्मिक विचार और सामाजिक विचार सब एक ही वृक्षकी अलग-अलग शाखाएँ हैं। इसलिए वे परस्पर विरोधी नहीं हैं। मगर जिसे वे अलग लगते हों, वे मेरी राजनैतिक शक्तिका उपयोग करनेके लिए अपना धर्म न छोड़ें। लेकिन कोई मूर्ख या भीरु यदि धर्मरूपी हीरा बेचकर राजनैतिक कंकर लेने लगे, तो क्या मैं अपना धर्म छोड़ दूं? इस सम्बन्धमें बलात्कार शब्दका उपयोग करना भाषापर बलात्कार करने जैसा है। व्यक्तिगत प्रभाव आदि शक्तियाँ तो दुनियामें काम करती ही रहेंगी। इन्हें हम बलात्कारमें शुमारकर लें, तो पुरुषार्थ जैसी चीज ही न रहे।

९. प्रश्न अनुचित है।

१०. हरिजनोंके साथ प्रीतिभोज अस्पृश्यता-निवारणका आवश्यक अंग है ही नहीं।

११. भारतभूषण पंडितजी[1] के और मेरे विचारोंमें थोड़ा भेद जरूर है। मगर इस उपवासके बारेमें कुछ भेद है, यह मुझे मालूम नहीं। लेकिन हो भी तो लोग क्या करें, यह उन्हें ही सोचना होगा। जो विचार उनकी बुद्धि और उनका हृदय स्वीकार करे, वे उसीका अनुसरण करें।

१२. रूढ़िवादी सनातनियोंके विचार बदलनेके लिए उपवासकी योजना नहीं है, बल्कि जो रूढ़ियोंको पार करके अस्पृश्यताको पाप समझने लगे हैं, उन्हें काममें लगाने और जो शंकित मनके हैं, उन्हें विचार करनेकी प्रेरणा देनेके लिए यह योजना है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २८२-३

१. पंडित मदनमोहन मालवीय।

८६. पत्र : मणिबहन पटेलको

२५ नवम्बर, १९३२

चि० मणि,

तेरा लम्बा पत्र–तुझे डाह्याभाईकी बीमारीकी खबर देनेके बाद पहला ही–आज मिला। तू व्यर्थ चिन्ता करती है। तुझे जानना चाहिए कि जब बापू और तू जेलमें हैं तो बाहर बैठे हुए लोग जो-कुछ करना चाहिए, उसे करनेसे चूक नहीं सकते। टाइफाइडका पता चलते ही तुरन्त वालचन्द[1] ने करमचन्दको कहा कि रात-दिनकी दो नर्सें रखो, डाक्टरोंमें से जिसे रोज बुलाना उचित हो उसे बुलाओ; और सारा खर्च खुद ही देनेको कहा। रोज ३०-४० रुपये खर्च होते हैं। वे ही देते हैं। अस्पतालसे ज्यादा अच्छी देखभाल होती है। घरके लोगोंमें करमचन्द, छोटूभाई[2] हैं (जो सारा दिन पास ही रहते हैं), और दो नर्सें हैं जो बहुत मिलनसार हैं और डाह्याभाईको भा गई हैं। इसके सिवा बख्शी[3] और दूसरे मित्र भी हैं ही। इस समय डाह्याभाईके पास तू नहीं है, तुझे यह खटकना स्वाभाविक है। लेकिन जिसे ईश्वरसे प्रेम है, उसकी वह कड़ी-से-कड़ी परीक्षा लेता है। यहाँ करमचन्द्र, छोटूभाई वगैरहके पत्र रोज आते हैं। यह तीसरा हफ्ता है। अब बुखार १०२ से ऊपर नहीं जाता। कल तो सामान्य भी हो गया था। डाक्टर आशा करते हैं कि अगले सोमवारतक बुखार बिलकुल उतर जायेगा और बढ़ना-घटना बन्द हो जायेगा। तुझे तो डॉ० मदानका, जो देखभाल और इलाज करते हैं, वल्लभभाईके नाम आया हुआ पत्र भी भेजा था। उससे भी तू समझेगी कि डॉक्टर भी प्रेमसे देखभाल कर रहे हैं। मोसम्बीका रस, छाछ वगैरह देते हैं। साधारण तौरपर तो टाइफाइडके बीमारको दस्त या ऐसा ही कुछ शुरूसे ही रहता है। डाह्याभाईको इनमेंसे कोई व्याधि नहीं है। इसलिए चिन्ता करनेका कुछ भी कारण नहीं है। तू अपने काममें लीन रहना और ऐसी प्रार्थना करना कि डाह्याभाई जल्दी अच्छे हो जायें। दादीके लिए शोक किया ही नहीं जा सकता। उनके जैसी भाग्यशाली मृत्यु कितनोंको मिलती है? हम किसी स्वजनकी सेवा नहीं कर पाये और वह चला गया, यह भावना पैदा हो तब ऐसा निश्चय करके निश्चिन्त हो जायें कि आगे किसीकी भी सेवा करनेका मौका हाथसे नहीं जाने देंगे।

१. सेठ वालचन्द हीराचन्द, एक उद्योगपति।

२. मणिबहनके चचेरे भाई।

३. जमनादास बख्शी, बम्बईके एक शेयर-दलाल।

हम तीनों आनन्दमें हैं। सोनेके कुछ घंटे छोड़कर हम तीनोंका बाकी सारा समय अस्पृश्यता-निवारणके काममें लग जाता है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : मणिबेहन पटेलने, पृष्ठ ९२-३

८७. एक पत्र

२५ नवम्बर, १९३२

उनसे पूछा जाये कि तुम कोई सेवा करोगे या नहीं? हमें इन लोगोंमें से अन्त्यज सेवक पैदा करने हैं, इसलिए उनके साथ यह शर्त्त करना जरूरी हो जाता है। जहाँ आवश्यक होगा वहाँ खींचखाँच करके भी देंगे। हममें यह कहनेकी ताकत होनी चाहिए कि यदि दस हजार योग्य लड़के भी इस तरहकी छात्रवृत्तियाँ माँगनेवाले मिल जायेंगे, तो भी सबको देंगे।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २८०-१

८८. पत्र : क० मा० मुंशीको

२५ नवम्बर, १९३२

भाई मुंशी,

कुछ दिनों पहले थोड़ा-सा पत्र-व्यवहार हम लोगोंके बीच हुआ है। पर इस बार तो मैं विनम्रतापूर्वक आपके सामने एक शिकायत रखना चाहता हूँ। एक नवयुवकने 'ब्रह्मचर्याश्रम', नामका आपका एक प्रहसन भेजा है और बड़े दुःखी मनसे उसे जो कहना है सो भी उसने मुझे लिखा है। पहले तो पुस्तिका सरदार देख गये। महादेवने जहाँ-तहाँ नजर डाली और उसमें से कुछ वाक्य पढ़कर सुनाये। निर्दोष व्यंग-विनोदको समझनेके लिए अगर कोई इनाम रखा जाये, तो मैं मानता हूँ कि कोई छोटा-मोटा इनाम मैं चौंसठ बरसकी उम्रमें भी ले जाऊँगा। आप जैसे मित्रोंने भी मेरी विनोद समझनेकी बुद्धिको दाद दी है। लेकिन आपके प्रहसनमें मुझे मधुर विनोद दिखाई नहीं देता, बल्कि गँवार और बैठे-ठाले लोग बातचीतके दौरान जैसी अश्लीलता तक जा पहुँचते हैं और जिसे सुनकर कानके कीड़े झड़ जाते हैं, उसमें मुझे वैसा हँसी-मजाक दिखाई दिया। जेलमें बैठकर आपसे सुन्दर साहित्य पानेकी आशा रखी जाती है। मैं अधिक विस्तारमें नहीं जाऊँगा। इतना कहकर ही मैं अपनी प्रार्थना

सामने रखे दे रहा हूँ कि प्रकाशकको लिखकर आप वह प्रकाशन वापस ले लें। उक्त नवयुवकने लिखा है कि इस प्रहसनको कहीं रंगमंचपर प्रस्तुत करनेकी बात तक सोची जा रही है; इसलिए वह बेचारा और भी परेशान हो उठा है। उसने मुझे भी लिखा है कि इसे रंगमंचपर कदापि नहीं खेला जाना चाहिए। जो व्यक्ति अपनी हँसी उड़ाता है, उसे चाहे जैसी दिल्लगी करने या अपनी आड़में दुनियाकी या दुनियाके सिद्धान्तोंकी दिल्लगी करनेका हक नहीं मिल जाता। आपकी सूक्ष्म बुद्धिको यह बताना आवश्यक नहीं है। आपका स्वास्थ्य वहाँ बराबर सुधरता जा रहा होगा। सभी साथियोंको वन्देमातरम्।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५१८) से; सौजन्य: क० मा० मुंशी।

८९. पत्र: डाह्याभाई पटेलको

२५ नवम्बर, १९३२

चि० डाह्याभाई,

श्री० नटराजन लिखते हैं:

> मुझे पूरी आशा है और मैं प्रार्थना करता हूँ कि बाकीके थोड़े दिन डाह्याभाईको और कोई कष्ट नहीं होगा। उसकी उम्र, सक्रिय जीवन, स्वाभाविक रूपमें मजबूत शरीर, उसके हकमें हैं। हमारे घर वह सबका लाड़ला है। जब वह अपने चाचाके यहाँ रहता था तब अधिक समय हमारे यहाँ ही बिताता था। कामकोटीको उसके भाइयों और बहनके साथ वह भी अक्का ही कहता है। हमारे यहाँ वह घरके सदस्य-जैसा ही है।

उन्हें मैंने पत्र लिखा था। उसके उत्तरमें उन्होंने जो पत्र लिखा उसीमें से ऊपरका उद्धरण दिया है। कल भाई करमचन्दका पत्र देरसे मिला था। मैं अस्पृश्यताके बारेमें आये हुए लोगोंके साथ व्यस्त था, इसलिए कल नहीं लिख सका। मालूम होता है तुम्हारा बुखार धीरे-धीरे उतरता जा रहा है। अच्छी तरह आराम लिया जाये और खाने-पीने वगैरहके नियमोंमें भूल न हो, तो अन्तमें टाइफाइड बुखारसे फायदा ही होता है, क्योंकि शरीरसे सब जहर निकल जाता है।

तुम आनन्दमें होगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १५०-१

९०. पत्र : गोविन्दलाल शाहको

२५ नवम्बर, १९३२

भाई गोविन्दलालजी,[1]

प्रभुदास लिखता है कि आप बीमार हो गये हैं यहाँतक कि ऑपरेशनके लिये राँची जानेकी तैयारी कर रहे थे। मेरी उम्मीद है कि अब अच्छा होगा। संपूर्ण हकीकत लिखें।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०६७५)से।

९१. भेंट : खीमजी और जे० के० मेहताको[2]

२५ नवम्बर, १९३२

महात्मा गांधीने इस बात पर जोर दिया कि अस्पृश्यता-निवारणके लिए और खासकर फिलहाल मन्दिर-प्रवेशके लिए जोरदार प्रचार होना चाहिए। उनका ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलाया गया कि बम्बईमें महिला कार्यकर्त्ताओं और अन्य लोगों द्वारा गुरुवायुर मन्दिरमें हरिजनोंको जाने देनेके लिए मतसंग्रह किया जानेवाला है। इसपर उन्होंने कहा कि ऐसा मतसंग्रह बहुत उचित होगा, क्योंकि यह सारे भारतके लोगों तथा गुरुवायुर मन्दिरके न्यासियोंको यह दिखा देगा कि सवर्ण हिन्दुओंकी भावनाएँ क्या हैं। उन्होंने यह भी कहा कि प्रान्तीय बोर्डोंको अपनेको मत-संग्रहके काममें लगा देना चाहिए।

निस्संदेह, उन्होंने गुरुवायुरके पास होनेवाले मतसंग्रहके महत्वपर जोर दिया। वे चाहते थे कि यह बात साफ तौरपर समझ ली जाये कि यदि सारे भारतके लोग गुरुवायुर मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशके पक्षमें हों और गुरुवायुर मन्दिरमें वस्तुतः जानेवाले लोग, जिन्हें इस प्रश्नका अन्तिम निर्णायक माना जाना चाहिए, इसका विरोध करें, तो वे गुरुवायुरके लोगोंका ही निर्णय स्वीकार करेंगे। उन्होंने सुझाव दिया कि विख्यात शास्त्रियोंसे इस विषयमें अपनी राय देनेके लिए कहा जा सकता है कि इस प्रश्नपर शास्त्रोंका मत क्या है।

१. मई १९३१ में गांधीजीके ताल्लुका, नैनीतालके दौरेके समय उनके मेजबान।

२. ये दोनों अखिल भारतीय अस्पृश्यता-विरोधी संघकी ओरसे गांधीजी से मिले थे।

उन्होंने इस बातके महत्वपर फिर जोर दिया कि शहरमें दलित वर्गकी, खासकर अलग-अलग उन्नोंके उनके बच्चोंकी शिक्षाके सम्बन्धमें, मर्दुमशुमारी की जाये।

उन्होंने इस बातपर भी जोर दिया कि अस्पृश्य बालिग स्त्री-पुरुषोंने, विभिन्न सूत्रोंसे, शिक्षा ग्रहण करनेकी इच्छा व्यक्त की है और उनके लिए रात्रि स्कूल खोले जाने चाहिए। उन्होंने दलित वर्गोंके विद्यार्थियोंको हाईस्कूलों या कॉलिजोंमें वजीफे दिये जानेकी पैरवी की, ताकि दलित वर्गोंमें उच्चतर शिक्षाको प्रोत्साहन मिल सके और कहा कि वे लोग शिक्षा समाप्त करनेके बाद एक-दो साल अपने भाइयोंकी सामाजिक स्थिति सुधारनेके कार्यमें लगा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-११-१९३२

९२. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – ९

[२६ नवम्बर, १९३२][1]

पहली जनवरी जैसे-जैसे निकट आ रही है, गुरुवायुरपर पत्र-व्यवहार बढ़ता जा रहा है। पत्रोंसे उठनेवाले प्रश्नोंका एक-एक करके उत्तर देनेकी बजाय, शायद यह आसान रहेगा कि मैं अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए एक वक्तव्य दूँ और उसीके द्वारा उनका भी उत्तर दे दूँ। आगामी २ जनवरीसे पहले यदि गुरुवायुर मन्दिर हरिजनोंके लिए बिलकुल उन्हीं शर्तोंपर नहीं खुलता है जो आम तौरपर सवर्ण हिन्दुओंके लिए हैं, तो उस तारीखसे उपवास शुरू हो जायेगा। लेकिन यदि यह स्पष्ट हो जाता है कि आस-पड़ोसके मन्दिर जानेवाले हिन्दू हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध हैं, या यदि यह स्पष्ट हो जाता है कि यद्यपि हर कोई मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेको राजी है, पर कोई कानूनी कठिनाई ऐसी है जो आगामी २ जनवरीसे पहले दूर नहीं हो सकती, तो उपवास स्थगित कर दिया जायेगा।

मुझे जो पत्र मिले हैं उनमें से ज्यादातर मुझे यह यकीन दिलाते हैं कि मन्दिर जानेवाले इस पक्षमें हैं कि हरिजन उपासकोंको मन्दिरमें प्रवेश करने दिया जाये। एक-दो पत्र-लेखक इस बातका बड़े जोरसे प्रतिवाद करते हैं और यह दावा करते हैं कि एक सम्यक् मतसंग्रहका परिणाम यही निकलेगा कि भारी बहुसंख्या इस तरहके प्रवेशके विरुद्ध है। इन पत्र-लेखकोंने अपने मतके समर्थनमें मुझे कोई प्रमाण नहीं दिया है, जबकि दूसरोंका कहना है कि उन्होंने अपने ढंगसे वस्तुतः मतसंग्रह किया है और उसे हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें पाया है। यदि पुरातनपंथी सहमत हों तो दोनों पक्षों द्वारा नियुक्त किये गये निरीक्षकोंकी उपस्थितिमें तुरन्त नया मतसंग्रह

१. देखिए अगला शीर्षक।

किया जा सकता है। पिछले शनिवारको टाइम्स ऑफ इंडियाके संवाददाताके एक प्रश्नका उत्तर देते हुए मैंने जो योजना सुझाई थी, उसे यहाँ दोहरानेकी जरूरत नहीं है। हर हालतमें, सुधारवादी पक्षको अपने दावेको अकाट्य प्रमाण द्वारा पुष्ट करनेमें देर नहीं करनी चाहिए।

परन्तु उनका कहना है कि यद्यपि मन्दिर जानेवालोंकी राय ज्यादातर उनके पक्षमें है, लेकिन मन्दिरकी कुंजी जमोरिनके हाथमें है। तकनीकी तौरपर निस्सन्देह यह सच है, पर जमोरिन मालिक नहीं हैं। वे न्यासी हैं, जो मन्दिर जानेवाले लोगोंका प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए वे उनकी बहुसंख्याकी स्पष्ट रूपसे व्यक्त की गई इच्छाका प्रतिरोध नहीं कर सकते। यदि कोई कानूनी कठिनाई है तो उसे दूर करना उनका कर्त्तव्य है। और यदि वे ऐसा नहीं करते हैं, तो इसका अर्थ केवल यही है कि जनमतकी शक्ति अभी इतनी प्रबल नहीं हुई है कि उन्हें अपने इस स्पष्ट कर्त्तव्यके लिए बाध्य कर सके।

उपवास उस स्थितिमें जनमतको और मजबूत करेगा जिससे कि वह महसूस किया जा सके। इसलिए मन्दिरकी कुंजी वस्तुतः जनताके ही हाथमें है। लेकिन जैसी कि कानूनी कहावत है, कानून या न्याय सजगकी ही सहायता करता है, निद्रालुकी कभी नहीं करता। केरलके सुधारकोंको, इसलिए, जमोरिनको दोष नहीं देना चाहिए।

उनकी नीयतपर शक करना अशिष्टता और गलती होगी। यदि वे मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेसे इनकार करते हैं, तो हमें यह मानना चाहिए कि सार्वजनिक माँगका उन्हें अभी विश्वास नहीं हुआ है। उनका इनकार हमारे लिए उन्हें बुरा-भला कहनेका नहीं, बल्कि अपनी स्थितिकी कमजोरी खोजनेका संकेत होना चाहिए। लोगोंके लिए अधिक गौरवपूर्ण और उचित यह होगा कि वे उन्हें यह महसूस करा दें कि यह उनकी स्पष्ट रूपसे व्यक्त की गई इच्छा है और जमोरिन, जो उनके प्रतिनिधि हैं, उसकी अवज्ञा नहीं कर सकते।

गुरुवायुर सारे भारतके लिए चिन्ताका विषय हो गया है। अतः भारत-भरके सवर्ण हिन्दुओंको सक्रिय हो जाना चाहिए और अपने इस मतकी घोषणा कर देनी चाहिए कि वे चाहते हैं कि गुरुवायुर मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल दिया जाये। ईमानदारीसे और आजादीके साथ व्यक्त किये गये इस तरहके मतकी नैतिक शक्तिका कोई भी प्रतिरोध नहीं कर सकेगा।

सुधारकोंको मैं यह चेतावनी पहले ही दे चुका हूँ कि वे सनातनियों या – जैसा कि महामहिम वाइसरायको भेजी गई याचिकामें उन्होंने अपनेको कहा है – परिवर्तन-विरोधियोंके लिए अशोभन शब्दोंका प्रयोग न करें। उन्हें अपना मत व्यक्त करनेका अधिकार है। अस्पृश्यताके इस प्रश्नको मैं मुख्य रूपसे धार्मिक मानता हूँ, और मैं चाहूँगा कि परिवर्तन-विरोधी और सुधारक दोनों, एक-दूसरेकी नीयतपर शक किये बिना, धार्मिक भावनासे काम करें। कोई भी सुधार और धार्मिक सुधार तो खास तौरपर, जबर्दस्ती नहीं किया जा सकता और न किया जाना चाहिए।

प्रस्तावित उपवासकी सीमाओं और उसके कार्योंको मैं स्पष्ट शब्दोंमें कई बार दोहरा चुका हूँ।

परन्तु एक सज्जन अपनी तथा अन्य लोगोंकी ओरसे गुजरातीमें लिखते हैं:

> आपका यह कहना बहुत अच्छा है कि आप किसीको भी बाध्य करना नहीं चाहते। परन्तु आपकी जो स्थिति है वह कुछ लोगोंको उनकी इच्छाके विरुद्ध कार्य करनेको बाध्य किये बिना नहीं रह सकती। हममें से कुछको आपके धार्मिक विचारों या आपके सामाजिक सुधारोंपर कोई श्रद्धा नहीं है। परन्तु हम यह चाहते हैं कि आप अपनी राजनैतिक शक्तिके लिए जीवित रहें। इसलिए यदि आप उपवासपर अड़े रहेंगे, तो हमें अपने विश्वासोंको उठाकर रख देना होगा और मन्दिर-प्रवेशके आपके संघर्षमें आपकी सहायता करनी होगी। यदि यह बाध्य करना नहीं है तो फिर बाध्य शब्दका क्या अर्थ है, हमें नहीं मालूम।

मेरा उत्तर है, केवल इसलिए कि भारतीय जगतमें मेरा एक प्रमुख स्थान है, या मेरा कुछ राजनैतिक प्रभाव है, मुझसे यह अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए कि मैं अपने प्रिय विश्वासोंको छोड़ दूंगा। अपनी सामाजिक स्थिति या अपना राजनैतिक प्रभाव कायम रखनेके लिए, मैं अपनी आस्थाको छोड़ नहीं सकता और उसकी गतिको दबा नहीं सकता, क्योंकि उनकी उत्पत्ति उसी आस्थासे है। मुझसे आप उसे नकारने या दबानेको कहें, तो वह मुझसे आत्महत्या करनेको कहनेसे भी कहीं बुरा होगा। मैं तो यह कहनेका भी साहस करूँगा कि जो अपने विश्वासोंको मेरी स्थिति या मेरे राजनैतिक प्रभावके लिहाजसे कम महत्त्व देते हैं, उनके यदि कोई विश्वास हों भी तो केवल उथले ही हो सकते हैं।

विश्वास कड़ी धातुके बने होते हैं। हमें मालूम है कि लोग अपने विश्वासोंके लिए अपना सब-कुछ दाँवपर लगा देते हैं, और उन विश्वासोंको तब धर्म कहा जा सकता है।

एक पत्र-लेखक पूछते हैं:

> बेचारे जमोरिन क्या करें? एक ओर आप और श्री केलप्पन उपवास करनेवाले हैं। दूसरी ओर, सुनते हैं, १,००० परिवर्तन-विरोधियोंने ऐसा करनेका निश्चय किया है। जमोरिन आखिर किसको खुश करें?

बिना किसी झिझकके मेरा उत्तर यह है कि वे किसी भी पक्षको खुश न करें। वे ईश्वरको खुश करें, जो सत्य है। वे अपना कर्त्तव्य पूरा करें, और यदि उसके लिए हजारों परिवर्तन-विरोधियोंका, श्री केलप्पनका और मेरा बलिदान आवश्यक हो, तो उनमें वैसा करनेका साहस होना चाहिए। इस तरह वे अपनी पीढ़ी और आगे आनेवाली पीढ़ीके सम्मानके पात्र होंगे।

उपवास करनेवाले भाइयोंकी फिक्र ईश्वर आप करेगा। जिन्हें उपवास करना है, वे सत्यकी, जैसा वे उसे समझते हैं, रक्षार्थ ही उपवास करेंगे। और ईश्वर या सत्य उनका जो चाहेगा करेगा। यदि उनका उपवास अन्तःप्रेरणाके उत्तरमें है, तो

वह अपना पुरस्कार आप होगा, और जिस उद्देश्यके लिए वह किया गया है वह जाहिरा चाहे पूरा हो या न हो, वह उनके लिए अच्छा रहेगा।

परन्तु वही पत्र-लेखक हठपूर्वक कहते हैं:

> आपका ईश्वरी आदेश, अन्तःकरण और भीतरकी आवाज आदिकी बातें करना बहुत अच्छा है, परन्तु अन्य लोग भी इसी तरहके दावे कर सकते हैं। लेकिन हम लोग, जिनके पास कोई भीतरकी आवाज नहीं है और ऐसा ईश्वर भी नहीं है जिसे सर्वसाधारणके आगे प्रदर्शित किया जा सके, क्या करें और किसपर विश्वास करें?

मैं केवल यही कह सकता हूँ, आपको अपने सिवा किसीपर भी विश्वास नहीं करना है। आपको भीतरकी आवाज सुननेकी कोशिश करनी चाहिए। लेकिन यदि आप उसके लिए 'भीतरकी आवाज' शब्द प्रयुक्त न करना चाहें तो आप 'विवेक का आदेश' शब्द प्रयुक्त कर सकते हैं। और यदि आप ईश्वरको प्रदर्शित नहीं करते हैं, तो मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि आप किसी और चीजको प्रदर्शित करेंगे जो अन्तमें ईश्वर सिद्ध होगी, क्योंकि सौभाग्यसे इस संसारमें ईश्वरके सिवा कुछ और है ही नहीं। मेरा यह भी निवेदन है कि भीतरी आवाजकी प्रेरणा पानेवाला हर व्यक्ति उस प्रेरणाके अनुसार काम करनेका दावा नहीं करता है। हर अन्य कुशलताकी तरह, भीतरकी शान्त और सूक्ष्म आवाजको सुननेकी इस कुशलताके लिए भी पहले प्रयत्न और प्रशिक्षण आवश्यक है, बल्कि शायद किसी अन्य कुशलताकी अपेक्षा कहीं अधिक प्रयत्न और प्रशिक्षण आवश्यक है। और यदि हजारों दावेदारोंमें से थोड़े-से भी अपने दावेको सिद्ध करनेमें सफल हो जाते हैं, तो भी संदिग्ध दावेदारोंके होने और उन्हें बर्दाश्त करनेकी जोखिम उठाना वाजिब होगा।

इतना तो गुजराती पत्र-लेखकके लिए हुआ। अब इस वक्तव्यको मुझे एक अंग्रेजी पत्र-लेखकका एक प्रश्न देकर समाप्त कर देना चाहिए। पत्र लम्बा है और उसमें तर्क विस्तारसे प्रस्तुत किया गया है। परन्तु मैं समझता हूँ कि निम्नलिखित सारांश उनका बिलकुल सही प्रतिनिधित्व करता है:

> अभीतक मैं आपको साम्प्रदायिकताके चिह्न तकसे मुक्त जानता आया था, पर अब अचानक आप साम्प्रदायिक जामेमें सामने आ रहे हैं। स्वराज्य या अखिल भारतीय एकताके लिए आपका उपवास मेरी समझमें आ सकता था और वह मुझे न्यायोचित लग सकता था। पर, हिन्दू-धर्मके लिए यह उपवास मेरी समझमें नहीं आता। मैंने आपको हिन्दू कभी नहीं समझा था, और एक संकीर्ण हिन्दू तो हरगिज नहीं समझा था। मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए, जो उनमें जाना नहीं चाहते, खोलनेमें आखिर क्या रखा है?

इस प्रश्नसे मुझे खुशी है। मेरी यह इच्छा बिलकुल नहीं है कि जो-कुछ मैं हूँ उससे भिन्न किसीको भी लगूँ। हिन्दू-धर्मपर या हिन्दूपर मुझे कोई लज्जा नहीं है। मैं संकीर्ण हूँ – इस बातको मैं सर्वथा अस्वीकार करता हूँ। मेरा यह खयाल है कि कोई संकीर्ण मत, मुझे एक क्षणको भी बाँधे नहीं रख सकता। अस्पृश्यताको ऊपरसे

लादनेसे हिन्दू-धर्म एक संकीर्ण मत बन जायेगा। इसीलिए तो मैंने उसके खिलाफ विद्रोह किया है। और उस कलंकको मिटानेमें यदि मेरा जीवन चला जाये तो मैं उसे एक सस्ती कीमत ही मानूँगा।

साम्प्रदायिताका मुझमें लेश भी नहीं है, क्योंकि मेरा हिन्दू-धर्म सर्वग्राही है। वह मुसलमान-विरोधी, ईसाई-विरोधी या किसी भी अन्य धर्मका विरोधी नहीं है। बल्कि वह मुसलमान-पक्षी, ईसाई-पक्षी और संसारके हर अन्य जीवित धर्मके पक्षमें है। मेरे लिए हिन्दू-धर्म उसी मूल तनेकी एक शाखा है जिसकी जड़ों और जिसके गुणका अन्दाजा हमें केवल विभिन्न शाखाओंके एक साथ होनेपर उनके सामूहिक बल और गुणसे होता है। यदि मैं हिन्दू शाखाकी, जिसपर मैं टिका हूँ और जो मेरा पोषण करती है, फिक्र करता हूँ, तो मैं निश्चय ही उसकी बहन अन्य शाखाओं की भी फिक्र करता हूँ। यदि हिन्दू शाखा विषाक्त हो जाती है, तो दूसरी शाखाओंमें भी विष फैल सकता है। यदि वह शाखा सूखने लगती है, तो उसके सूखनेसे मूल तना भी कमजोर होगा ही।

यदि इस पत्र-लेखकने और इसकी तरह सोचनेवालोंने अभीतक मेरी गति-विधियोंपर ध्यान रखा है, तो वे देखेंगे कि ईश्वर यदि मुझे अपनी धारणाके इस हिन्दू-धर्मके लिए मरनेका सौभाग्य प्रदान करता है, तो मेरा यह मरना सबकी एकताके और स्वराज्यके भी लिए होगा। अन्तमें, मुझे वह बात जो मैं इससे पहले भी कह चुका हूँ, फिर दोहरा देनी चाहिए कि हरिजन मन्दिरोंमें जाना चाहते हैं या नहीं या यदि वे उनके लिए खोल दिये जायें तो वे उनमें जायेंगे या नहीं, यह प्रश्न अप्रासंगिक है। अस्पृश्यताको मिटाना हरिजनोंपर अनुग्रह करना नहीं है। यह तो सवर्ण हिन्दुओं द्वारा किया जानेवाला एक प्रायश्चित्त और शुद्धिकरण है। हिन्दू-मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोलना और उन्हें उनमें आमन्त्रित करना एक ऐसा प्रायश्चित्त है जो उन्हें अवश्य करना है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-११-१९३२

९३. पत्र : के० माधवन नायरको

२६ नवम्बर, १९३२

आपके पत्रकी मैं सराहना करता हूँ। मैं आज एक वक्तव्य[1] जारी कर रहा हूँ जिसे आपको ध्यानसे पढ़ना चाहिए। साथियों और सुधारकोंकी दण्डनीय उपेक्षाकी जब मैं बात करता हूँ तो मेरे दिमागमें कोई विशेष व्यक्ति नहीं होता है। यह कहनेसे कोई फायदा नहीं कि जमोरिनका रुख सख्त होता जा रहा है। आप देखेंगे कि यदि मन्दिर जानेवाले लोग मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशकी माँग करें, तो पृथ्वीकी कोई भी शक्ति उन्हें रोक नहीं सकती। सचाई यह है कि हमारा आन्दोलन अभी बस शुरू ही हुआ है। यह तीव्र होना चाहिए, पर साथ ही अनुशासित रहना चाहिए। जमोरिनके खिलाफ एक भी शब्द कहनेकी जरूरत नहीं है। कानून यदि सचमुच हमारे विरुद्ध है तो निस्सन्देह उसमें सुधार होना चाहिए। और उसे भी जनताकी आवाज यदि साफ और जोरदार हो तो, रोका नहीं जा सकता। अपने-आपमें या इस ध्येयमें हमारा विश्वास डिगना नहीं चाहिए। मेरी बात साफ हो गई न? यदि साफ न हुई हो, तो मुझे फिर लिखनेमें संकोच न करना।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २८७

९४. पत्र : डॉ० मुहम्मद आलमको

२६ नवम्बर, १९३२

प्रिय डॉ० आलम,

आपकी नेक बीवी अपने उर्दूके सुन्दर पत्रों द्वारा मुझे आपके स्वास्थ्यका समाचार देती रही हैं। उनके बड़ी खूबसूरतीसे लिखे पत्रोंने मुस्लिम बहनोंके सांस्कृतिक स्तरके बारेमें मेरी आँखें खोल दी हैं। इस प्रकारकी तीन महिलाओंसे मेरा पत्राचार है—बेगम आलम, जोहरा अन्सारी और रैहाना तैयबजी। इनका शब्दचयन अच्छा होता है और बेगम आलम तथा जोहरा, इन दोकी लिखावट तो ताम्रफलक-सी लगती है। रैहाना लाड़से बिगड़ी लड़की है। शायर होनेके कारण उसकी लिखावट उतनी उच्च स्तरकी नहीं रही है जितनी कि अन्य दो की है। परन्तु मुझे यह पत्र आपको अपने सौभाग्यकी बातें बतानेसे ही नहीं भरना चाहिए। उस सौभाग्यका कुछ अंश तो आपकी बिना शर्त रिहाईके कारण मुझसे छिन जायेगा, क्योंकि बेगम आलम यह

१. देखिए पिछला शीर्षक।

सोचेंगी कि मुझे पत्र लिखनेकी अब कोई जरूरत नहीं रही है। लेकिन उन्हें यह जान लेना चाहिए कि मैं उन्हें इतनी आसानीसे रिहाई देनेवाला नहीं हूँ। मुझे आशा है कि इस बीमारीका आपकी विनोदी प्रकृतिपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा होगा और आप निरर्थक पत्रोंका भी स्वागत करने और रस लेनेके योग्य होंगे।

बीमारीके कारण मिली आपकी रिहाईपर मैं आपको बधाई तो नहीं दे सकता, पर हमें इसका पूरी तरह सदुपयोग करना चाहिए और जिस उद्देश्यसे रिहाई मंजूर हुई है उसे पूरा करना चाहिए। आपको इसलिए जल्दीसे स्वस्थ होना है। बेगम आलमका तार पाकर मैंने डॉ० देशमुखको तार भेजा था। उनकी और स्थानीय डाक्टर मित्रोंकी राय मैंने तार द्वारा आपको बता दी है। उनका खयाल है कि आप बम्बईका सफर कर सकते हैं। आपको ऐसा ही करना चाहिए और अपनेको डॉ० देशमुखके हाथोंमें सौंप देना चाहिए। यदि डाक्टर ऑपरेशन आवश्यक समझें तो मेरी रायमें उसमें देर नहीं करनी चाहिए। कृपया मुझे बताइए कि आप क्या कर रहे हैं और आपके स्वास्थ्यकी ठीक-ठीक क्या स्थिति है। ईश्वर आपको अपनी सेवाके लिए बहुत समयतक सलामत रखे।

हम सबका प्यार।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १९)से।

९५. पत्र: जमनालाल बजाजको

२६ नवम्बर, १९३२

चि० जमनालालजी,

तुम्हारे यहाँ पहुँच जानेका शुभ समाचार[1] अभी-अभी मिला। यात्रासे थकावट तो नहीं हुई होगी। यहाँ डाक्टर जो फलादि खानेको दें, सो खाना। खाँसी कैसी है? मिलनेकी इजाजत पानेका प्रयत्न कर रहा हूँ। हम सब मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०५)से।

1. यरवदा जेलमें तबादलेका। परन्तु उन्हें अलग रखा गया था। देखिए पृष्ठ ४० भी।

९६. पत्र : मणिबहन पटेलको

२६ नवम्बर, १९३२

चि० मणि,

आज डाह्याभाईके समाचार अधिक अच्छे हैं। बुखार १००·५° से आगे गया ही नहीं और ९८·५° तक उतरा था। इसलिए कह सकते हैं कि अब उतारपर है। कल अथवा परसों बिलकुल सामान्य होकर फिर नहीं चढ़ेगा, ऐसी डाक्टर आशा रखते हैं। कमजोरी है, सो तो होगी ही। परन्तु चिन्ताका जरा भी कारण नहीं है। इसलिए अब तुझे तार करनेकी जरूरत नहीं है और यहाँसे तेरे पास तार भेजनेकी भी जरूरत नहीं है।

तुझे रुपया भेजनेके लिए तो बापूने करमचन्दको कल लिख ही दिया है। हम तीनों मजेमें हैं। तेरा पत्र डाह्याभाईको भेज दिया है। अपनी तबीयतके समाचार क्यों नहीं भेजती?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ९३-४

९७. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

२६ नवम्बर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरा कार्ड मिला। जो नियम निश्चित किया है उसपर दृढ़ रहना। जो छोटे-छोटे नियमोंका पालन करना सीख जाता है, उसमें बड़े-बड़े संकल्पोंके पालनकी शक्ति सहज ही आ जाती है। किसी भी उपायसे तेरी तन्दुरुस्ती ठीक हो जाये तो अच्छा। अब मनका तो कोई क्लेश नहीं है न?

अगर तू मेरे पास आकर रहे तो रोज स्वस्थ बकरीका ताजा दूध पीनेको दूँ। ऊपरके अक्षर किसके हैं? पहचान पायेगी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४६) से।

९८. पत्र : कुसुम गांधीको

२६ नवम्बर, १९३२

बीमारोंका ऐसा अफसोस करना कि हम सेवा लेते हैं और सेवा नहीं कर सकते, बड़ी भूल है। बीमार शुद्ध विचार रखें तो वह सेवा ही होगी। कम-से-कम सेवा लेना, शुश्रूषा करनेवालोंको अपने प्रेमसे नहलाना और खुद प्रफुल्लित रहना भी सेवा है। हमें यह कभी न भूलना चाहिए कि भगवानका शुद्ध चिन्तन भी सेवा ही है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २८६

९९. पत्र : आनन्दस्वरूपको

२६ नवम्बर, १९३२

भाई आनंदस्वरूप,

आपका पत्र मिला। प्रश्न सब अच्छे हैं। सबका उत्तर देनेका समय नहीं है। अखबारों द्वारा भी कब दे सकूँगा, नहीं जानता। लेकिन इतना लिख दूँ।

रामनाम और ॐकार दोनों एक ही चीज हैं। तुलसीदासजी ने यह स्पष्टतया बता भी दिया है। जप करते हुए मन स्थिर नहीं रहता इसी कारण तो तुलसीदासने नाम महिमा गाई है। यदि श्रद्धापूर्वक कोई भी आदमी जपेगा तो अंतमें वह स्थिरचित्त होगा ही, ऐसी सब शास्त्रोंकी प्रतिज्ञा है और ऐसा जप करनेवालोंका अनुभव है। जप करते समय आँख मूंदना ही काफी होगा। भृकुटि-मध्यमें ध्यान रखा जाय तो अवश्य अच्छा है।

परमेश्वर ही सत्य है ऐसा कहनेमें दोष यह आता है कि परमेश्वर और कुछ भी है। परमेश्वर सहस्रनामधारी है, बहुनामी है और यह सब सही है। परंतु परमेश्वरके लिये बहुनामका खयाल करनेसे जिस चीजको हम सर्वार्पण करना चाहते हैं वह-चीज छोटी-सी होनेका डर रह जाता है। लेकिन सत्य ही परमेश्वर है ऐसा कहनेमें दूसरे सब नाम छूट जाते हैं, ध्यान केवल सत्यका ही रहता है और अद्वैतवादके साथ यह ज्यादा मिलता है। नास्तिकवादको यहाँ स्थान ही नहीं रहता है क्योंकि नास्तिक भी "अस्ति" को मानता है और अस्तिका मूल रूप सत् है। इस जगह सत्यका अर्थ सत्य कहना ही नहीं है, सत्यका अर्थ यहाँ मन, वचन और कायाकी एकरूपता है और इससे अधिक है। जो कुछ भी इस जगतमें वस्तुतः है, भूतकालमें था, भविष्यमें होगा —— वही सार है, सत्य है, परमेश्वर है और उसके सिवाय कुछ नहीं है।

अब कुछ शौचकूपोंकी शुद्धि और स्वच्छताके बारेमें। शौचकूप एक कमरेमें रखा जाय जिसमें निरन्तर सूर्यप्रकाश आ सके। शौचकूपकी रचना ऐसी हो कि वह हर रोज उठाकर साफ किया जा सके। एक बालटी मूत्रके लिये और एक विष्टाके लिये ऐसी दो बालटियाँ एक लकड़ीके 'फ्रेम' में रखी जायें। शौच-क्रियाके बाद मलको धूल या मट्टीसे ढँक दिया जाय। मट्टीकी भी एक बालटी कमरेमें मौजूद रहनी चाहिये। और अगर मकानके पास बाग या खेत हो तो उसमें मलमूत्र गाड़ दिया जाता रहे ताकि उसका खाद बने। वर्षाके दिन छोड़कर अन्य मासके लिए तो कमरेकी छत ऐसी हो सकती है कि वह उठा ली जा सके, ताकि ऊपरसे धूप दिन-भर आ सके। ऐसा रखनेसे और बालटियाँ और कमरा हर रोज साफ कर धोये जानेपर शौचगृह भी शयनगृहके समान स्वच्छ रहेगा और रहना चाहिये। गाँवोंमें तो यह व्यवस्था बहुत आसान है, मेरठ-जैसे शहरोंमें भी मुश्किल नहीं होनी चाहिए।

मोहनदास गांधी

[पुनश्च :]

बालटियाँ लकड़ीके फ्रेममें ही रखनेकी आवश्यकता है ऐसा नहीं, पत्थर या ईंटके पहियेके बीचमें भी बालटियाँ रखी जा सकती हैं।

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४५२) से; सौजन्य : भारत कला भवन, वाराणसी।

१००. भेंट : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के संवाददाताको

२६ नवम्बर, १९३२

पिछले सप्ताह गांधीजी से मुलाकात करनेवाले कुछ लोग यरवदा जेलसे यह धारणा लेकर लौटे कि गांधीजी ने उन्हें यह विश्वास दिलाया है कि गुरुवायुर मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशका मामला एक बार हल हो जानेपर वे, भारत-भरके मन्दिरोंके न्यासियोंको इस बातके लिए बाध्य करनेको कि सभी मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल दिये जायें, अपने उपवासको और बढ़ा देंगे। यह बात उन लोगोंने अपने मित्रोंको बताई और खबर बड़ी तेजीसे फैल गई। मुझे ऐसा लग रहा था कि कहीं-न-कहीं जरूर कोई गलती हुई है, इसलिए आज सुबह मैंने गांधीजी से इसकी पुष्टि या निराकरण चाहा। उन्होंने तुरन्त इसे गलत बताया। गांधीजी ने कहा :

मेरा इस तरहका कार्य जनमतको क्षुब्ध करेगा और विश्वासघात होगा। उपवासके एक बार समाप्त हो जाने और मन्दिरके खुल जानेसे इस बातकी बड़ी सम्भावना है कि बहुत-से अन्य मन्दिर भी हरिजनोंके लिए खोल दिये जायेंगे। क्योंकि गुरुवायुर जबतक खुलेगा तबतक इतना प्रचार-कार्य हो चुका होगा और जनमत इतना

प्रभावित हो चुका होगा कि अन्य न्यासियोंको अपनी देख-रेखमें चलनेवाले मन्दिरोंको खोलनेमें सम्भवतः कोई बहुत झिझक नहीं होगी। यदि ऐसा नहीं होता है, तो पुनः उपवास शुरू करनेकी बात मुझे पूरी तरह सोच-विचार किये बिना और किसी सर्वथा न्यायोचित ध्येयके बिना कभी नहीं सोचनी चाहिए। जहाँतक मैं अब कह सकता हूँ, अस्पृश्यता-निवारण कार्यक्रमके किसी खास मुद्देके लिए इस तरहके उपवासकी कोई बात सोची नहीं गई है।

मेरे इस प्रश्नके उत्तरमें कि गुरुवायुर मन्दिरके आस-पड़ोसकी स्थितिके बारेमें क्या वे कोई विस्तृत सूचना रखते हैं, गांधीजी ने कहा कि जहाँतक सूचना मिल पाई है, आस-पड़ोसके सवर्ण हिन्दू, जिन्हें इस मन्दिरमें जानेकी आदत है, भारी संख्यामें इस बातके पक्षमें हैं कि हरिजनोंको ठीक उन्हीं शर्तोंपर प्रवेश करने दिया जाये जो खुद उनके प्रवेशके लिए हैं।

परन्तु आस-पड़ोसके लोगोंके मेरे पास ऐसे पत्र भी आये हैं जिनमें मेरी सूचनाकी सचाईपर आक्षेप किये गये हैं। इसलिए मैंने यह सुझाव रखा है कि मन्दिरके चारों ओर दस मीलतक बसे सवर्ण हिन्दुओंका, निर्णायकोंकी उपस्थितिमें, जल्दीसे मत-संग्रह कर लिया जाये। एक निर्णायक सुधारकोंकी ओरसे और एक सनातनियोंकी ओरसे नियुक्त कर दिया जाये। यदि जरूरत महसूस हो तो एक निर्णायक पंच भी नियुक्त कर दिया जाये। ये सज्जन मतदानका निरीक्षण करें, जिससे कि दबाव डालने, दूसरेके नामसे मत देने या किसी अन्य दुराचारका कतई अवसर न रहे।

लेकिन यदि जल्दीसे किये गये इस मत-संग्रहका परिणाम यह निकला कि मेरे पास जो सूचना थी वह गलत थी, तो मैं निस्संकोच श्री केलप्पनको यह सलाह दूँगा कि वे अपना उपवास तबतकके लिए मुल्तवी कर दें जबतक कि जनमत इतना शिक्षित न हो जाये कि मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेकी माँग करने लगे।

इस बीच उन्होंने स्वर्गीय श्री सी० आर० दासकी बहन उर्मिलादेवीसे दक्षिण जाने और वहाँ आन्दोलनमें सहायता करनेके लिए कहा है।[१]

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, २८-११-१९३२

१. देखिए पृष्ठ ४६।

१०१. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० डाह्याभाई,

तुम्हारी सेहतकी आज और भी अच्छी सूचना मिली है।

कलके अपने पत्रमें मैंने कहा था कि बीमार आदमी भी सेवा कर सकता है। वह उसे इस तरह कर सकता है: आरामके अपने समयको वह ईश्वरके ध्यानमें लगा सकता है और अपने अधैर्य और क्रोधपर काबू पाकर अपनी परिचर्या करनेवालोंको अपने प्रेमसे सराबोर कर सकता है। इस तरहका एक उदाहरण पश्चिमका और एक अपने देशका मुझे मालूम है। अट्ठारह वर्षकी एक फ्रांसीसी लड़कीने अपनी बीमारीके दिनोंमें, जिसका अन्त उसकी मृत्युमें हुआ, इतनी सुरभि फैलाई कि उसे सन्त मान लिया गया है। वह अब चिर निद्रामें सोई है।

पोरबन्दरके निकटवर्ती बिल्खाके लाढा महाराज श्वेत कुष्ठसे पीड़ित थे।[1] वे बिल्खाके शिव मन्दिरमें गये और वहाँ आसन लगाकर बैठ गये। दिन-भर वे रामनाम जपते रहते या 'रामायण' पढ़ते रहते। अन्तमें, वे ठीक हो गये और प्रसिद्ध कथा-वाचक बन गये। मैंने उन्हें देखा था और कथा कहते सुना था।

ईश्वरका भक्त अपनी बीमारीतक का सदुपयोग करता है। वह बीमारीसे हिम्मत नहीं हारता।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहन पटेलने, पृष्ठ १५१

१. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ २९-३० भी।

१०२. पत्र : भाऊ पानसेको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

कब्जके बारेमें मेरा पत्र[1] मिला होगा। अन्नका जो प्रकार न पचे, वह फिलहाल न लिया जाये। मुझे अधिक जानकारी दोगे तो फिर लिखूंगा।

तकली प्रकरण खेदजनक है। मैंने लिखा तो है। मौनकी महिमाका न समझा जाना विचित्र बात है। धीरजके साथ जो बने, करना। एक भी व्यक्ति ठीक ढंगसे सीखनेवाला मिले तो उस अकेलेको सिखानेमें हर्ज नहीं है। कोई एक भी तुम्हारी विद्या पूरी तरह अर्जित कर ले तो ठीक।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७४५)से। सी० डब्ल्यू० ४४८८ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे।

१०३. पत्र : भीखीबहनको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० भीखीबहन,

तुमने अपना परिचय ठीक भेजा। आश्रममें सुखी रहो और खूब सेवा-कर्म करो तथा [उसमें] भक्ति रखना सीखो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४७) से।

१. देखिए पृष्ठ ४१।

१०४. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० दूधीबहन,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। फिलहाल तो तुम दोनों बच्चों और एक-दूसरेको सँभालो। जब वालजी बिलकुल अच्छा हो जाये तब तुमने जो लिखा है उसके मुताबिक काम करना मुझे ठीक लगेगा। वहाँ किसके साथ हो? लम्बे अरसेतक रह सको, तो अच्छा हो।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत वा० गो० देसाई
संजोली, शिमला हिल्स, उ० प० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४४४) से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई।

१०५. पत्र : गुलाब ए० शाहको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

तू गुजराती अच्छी तरह सीख ले।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३१) से।

१. वालजी गो० देसाईकी पत्नी।

१०६. पत्र : उमादेवी बजाजको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० ओम,

तू बड़ी चालाक छोकरी जान पड़ती है। बारीक सूत कातती नहीं और मोटे सूतका दान देकर परोपकारी बन बैठती है। यह सब तुझे विनोबा सिखाते हैं या जानकीमैया?

बापू

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृष्ठ ३३५

१०७. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० जमना,

कुसुम और हम सभी भगवानकी शरणमें हैं। मेरी कोहनीकी भी चिन्ता मत करना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६४) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१०८. पत्र : जमनादास और खुशालचन्द गांधीको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० जमनादास,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। एक निश्चित सीमातक आत्मनिन्दा ठीक वस्तु है। सीमा पार कर जानेपर वह हानिकारक हो जाती है। वर्णन करनेकी तेरी शक्तिसे तो मेरे-जैसे अनुभवी व्यक्तितक को ईर्ष्या होती है। भाषा तो तेरी सुन्दर है ही; फिर तू अपने प्रति आश्वस्त क्यों नहीं है? कार्य करनेकी क्षमता भी है। तू चिरंजीवी हो।

अपने ट्रस्टियोंके नाम भेजना।

इससे अधिक फिलहाल नहीं लिखूंगा। दूसरे उपवासके विषयमें मेरे लेख पढ़कर जितना समझा जा सके, समझना। लोग घबरा जाते हैं, यह तो सच है। यह घबराहट कई बार जरूरी है। इसका सही नाम 'मंथन' है। मंथनके बिना जबर्दस्त परिवर्तन

नहीं होते। पर सीधी बात यह है कि मेरा उपवास मेरा नहीं है। ईश्वर-प्रेरित है, मेरा अभिप्राय ऐसा है। अस्पृश्यता-सम्बन्धी तेरे पत्रकी प्रतीक्षा रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

आदरणीय भाईकी सेवामें,
आप दोनों मेरे कामके प्रति हार्दिक आशीर्वाद भेज पायें तो भेजें।

मोहनदासके दोनोंको दण्डवत प्रणाम

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१०९. पत्र : लक्ष्मी दूधाभाई दाफड़ाको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० लक्ष्मी,

तेरा पत्र मिला। ठीक भूख लगे तो ज्वारकी नमकीन राव अच्छी लगनी चाहिए। मुझे तो वहुत अच्छी लगी थी। दाल-भातके वजाय शाक-रोटी खाना अधिक अच्छा है। आदत डाल लेनेसे सब अच्छा लगने लगता है। तू जेलमें राव नहीं लेती थी? शाक-रोटी पसन्द नहीं आती थी?

शरीर स्वस्थ रख।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४९२) से। सी० डब्ल्यू० ७७५६ से भी; सौजन्य : लालचन्द जयचन्द वोरा।

११०. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। तेरे वर्धा जानेकी वात मुझे पसन्द आई है। उपवाससे अगणित लोगोंको फायदा हुआ है। तुझे नहीं हुआ यह जानता हूँ। इसे मैं अपने अनुभवका दोष मानता हूँ। आसन आदि तो हैं ही। कुछ समयके लिए लोनावाला जरूर चला जा। हवा-पानीका असर तो होता ही है। लेकिन अभी तुझे इस झंझटमें नहीं डालूंगा। जैसे भी हो तू अपना स्वास्थ्य सुधार ले।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०५) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१११. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२७ नवम्बर, १९३.

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। जो संयमका मूल्य समझता है उसे तो आहारके परिवर्तनमें मजा ही आता है। अखबारोंमें किसने लिखाया कि आश्रममें जेलका भोजन शुरू किया गया है? यह बात सच होती तो कोई हर्ज नहीं था। परन्तु हम तो दूध, घी वगैरह बहुत-सी चीजें लेते हैं। फिर भी जेलका भोजन शुरू किया है, यह कैसे कहा जा सकता है? इस गपकी जड़ ढूँढ ली हो तो लिखना।

तेरी यह शिकायत सही है कि कठोर नियम भी मैं बनाता हूँ और विलासी मनुष्य आश्रममें आ पहुँचते हैं, उसका कारण भी मैं हूँ। मैंने तो कहा है कि उनका विरोध तुम सब कर सकते हो और अपनी क्षमताके बाहरके किसी व्यक्तिको लेनेके लिए बँधे नहीं हो। मैं तो केवल सलाह ही दे सकता हूँ। अमल करना-न करना सर्वथा तुम लोगोंके हाथमें है। इतना मुझे अवश्य लगता है कि स्वयं कड़े नियमोंका पालन करते हुए भी कोई अनियमित ढंगसे रहनेवाला व्यक्ति आ ही जाये, तो उसे निभानेकी, उसके प्रति उदार बने रहनेकी शक्ति हममें होनी चाहिए।

तेरी नसीहतको ध्यानमें रखूंगा। . . .[1]का सारा किस्सा दुःखद है। 'निग्रहः किं करिष्यति?'[2]

नारणदासके साथ बैठकर इन्दु[3] का विचार कर लेना।

बाबूकी[4] चिन्ता नहीं है। वह तो ठिकाने आ ही जायेगा।

आज तो कह सकता हूँ कि जब आना हो तब तुम दोनों[5] आ जाना। कलकी राम जाने।

छोटी-बड़ी जो भी प्रतिज्ञा लें उसका पालन हम कर सकें, तो समझना चाहिए कि वह ईश्वरकी ही कृपा है।

लक्ष्मीके साथ बात करके देखना। उसे विवाह तो नहीं करना है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१२)से। सी० डब्ल्यू० ६७५१से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. नाम छोड़ दिया गया है।

२. भगवद्गीता, ३, ३३।

३ और ४. क्रमशः आश्रमकी पाठशाला और बाल मन्दिरके विद्यार्थी।

५. प्रेमाबहनने अपनी सहेली सुशीलाके साथ आनेकी इच्छा व्यक्त की थी।

११२. पत्र : नारणदास गांधीको

मौन लेनेके बाद, २७ नवम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

इसके साथ अपंग बच्चोंकी पाठशालाका पत्र तुम सबकी जानकारीके लिए भेज रहा हूँ। मैं इस पाठशालाके बारेमें पहले लिख चुका हूँ। मुझे उसका मधुर स्मरण है। ऐसा कुछ अपने यहाँ भी चाहता हूँ। यह अन्तिम वाक्य नींदमें लिखा था इसलिए देखता हूँ . . .[1] इसका कुछ भी अर्थ नहीं है। पाठशालाके शिक्षकोंका बालकोंके प्रति प्रेम और उनका धैर्य अनुकरणीय है। जो चाहते हैं वे पत्र लिखकर ज्यादा जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

खड्गबहादुर[2] कहाँ है यह मालूम हो तो लिखना।

कुसुमको रोज पोस्टकार्ड लिखता हूँ, वह मिल जाता होगा। कल नहीं लिख पाया।

ज्वार पीसनेके बाद आटा छाना नहीं जाता होगा। पहलेसे ही अच्छी तरह साफ कर लिया हो तो उतना ही काफी होना चाहिए। गेहूँके बारेमें भी ऐसा ही समझें। उसे तो बाहरसे पिसवाते होंगे। यदि हम गेहूँ स्वयं पीसते हों और उसे अच्छी तरह साफ करके पीसा जाता हो तो फिर बिना छाने जैसे-का-तैसा इस्तेमाल करना चाहिए। अनाज बिना छाने खाया जाये तो उससे शरीरको रेचक पदार्थ मिलता है। छानकर कुछ अंश निकाल देनेसे बहुतसे आवश्यक तत्त्व निकल जाते हैं।

पुरुषोत्तमको वहाँ बीमार पड़नेतक राह नहीं देखनी चाहिए। जहाँ भी जायेगा वहाँ काम और सेवा होगी ही। जब स्वास्थ्य सुधर जाये और शरीर ज्यादा काबूमें हो जाये तो भले ही चला आये। तुम्हारा प्रयोग सफल हो तो इच्छा होनेपर कोई भी आकर रह सकता है। सफलता मिलनी ही चाहिए, ऐसा मुझे अवश्य लगता है।

भाऊको पत्र[3] लिख चुका हूँ वह तो मिला ही होगा।

परशुरामके विषयमें भी लिख चुका हूँ।

मदानकी पुस्तक[4] भेज रहा हूँ। फौरन भेजना याद नहीं रहा।

तकलीके बारेमें सबसे इतना ही कहना : चरखा राजा है किन्तु तकली रानी है। रानी बिना राजाकी शोभा नहीं और राजाके बिना रानीका काम नहीं चलता। रानीके बिना वंशवृद्धि तो कदापि नहीं हो सकती, यह भी समझना चाहिए। चरखा

१. मूल पत्रमें इसके पहलेका एक वाक्य काट दिया गया है।

२. एक आश्रमवासी।

३. देखिए पृष्ठ ८४।

४. उपवासके विषयमें।

हजारोंके लिए है तो तकली करोड़ोंके लिए है। तकलीकी शक्ति कितनी ज्यादा है यह भाऊके बता देनेपर भी सभी उसका उपयोग नहीं सीख रहे, यह आश्चर्यकी बात है। पहले महीन-से-महीन सूत भी तकलीसे काता जाता था। यह तकली बाँसकी होती थी। आज भी मद्रासमें ब्राह्मण जनेऊके लिए बहुत महीन सूत तकलीपर ही कातते हैं। चरखा बनानेमें समय लगता है। परन्तु तकली तो जहाँ चाहे बना सकते हैं। वह बिगड़ती नहीं, आवाज भी नहीं करती। इसलिए यह बिलकुल सम्भव है कि तकली चरखेको भी हरा दे। हम तो दोनोंमें से एककी भी हार नहीं चाहते। दोनोंपर एक-सा और पूरा अधिकार कर लेना चाहते हैं।

जोशीके बारेमें ज्यादा जानकारी मिली हो तो लिखना। नानीबहन[1] कहाँ रहती है?

गोसेवा संघकी रसीद महादेवके हस्ताक्षरके लिए रजिस्टरी करके भेज देना।

कान्ति ठीक हो गया होगा।

हरिइच्छासे कहना कि पत्र लिखे।

अप्पा साहबका पत्र मुझे नहीं मिला।

मगनभाई और रावजीभाईका पत्र रोककर ठीक ही किया। जरा भी शककी बात लगे तो रोक ही लेना चाहिए। मुझे कुछ भी जाननेकी कोई इच्छा नहीं है। जिन विषयोंमें मैं न कुछ कर सकता हूँ, न कह सकता हूँ, वे केवल भार बन जाते हैं।

मीराबहनका पत्र नियमपूर्वक आता है। उसने फिर नमक छोड़ दिया है। शरीर स्वस्थ रहता है। किशनको थाना ले गये हैं इसलिए अब फिर मीराबहनके पास कोई सखी नहीं है। किसी खास मित्रका मोह छोड़ दें तो मनुष्यमात्र, और ज्यादा अच्छी तरह समझ लें तो पशु, पक्षी, पेड़-पौधे, पत्थर सभी, हमारे सखा-सखी हैं। अनासक्ति योग यही पाठ सिखाता है। मेरा वजन इस बार १०३ हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

अपंग बच्चोंकी पाठशालाके पत्र-सहित कुल ४५ पत्र हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७० से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. आश्रमकी गोशालाके प्रबन्धक पन्नालाल झवेरीकी पत्नी।

११३. पत्र : सुलोचना ए० शाहको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० सुलोचना,

तुमने बा को ठीक उत्तर दिया। बदली हुई खुराक शरीरको माफिक न आये तो तुरन्त कह देना चाहिए। चोरको चोरी करनेकी आदत पड़ जाती है। कोई देखा-देखी चोरी करता है तो कोई उसे अपना धन्धा ही बना डालता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४६) से।

११४. पत्र : मणिबहन पटेलको

२७ नवम्बर, १९३२

चि० मणि,

आज कलसे भी ज्यादा अच्छी खबर है। [डाह्याभाईका] बुखार उतरकर ९७·०५ तक गया था। १०१·०५ से ज्यादा नहीं बढ़ा। नींद अच्छी आती है। तू अपने कर्त्तव्यमें निमग्न रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

डाह्याभाईके खर्चका बोझ सब मित्रोंने उठा लिया है।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० ९४

११५. पत्र : अमतुस्सलामको

२७ नवम्बर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा लम्बा खत मिला। मैं तो छोटा ही लिख सकता हूँ। देहली जानेके बारेमें और सब चीजमें जैसे नारणदास कहें वही करो। बीमार भी सेवा कर सकते हैं, यह बात तुम्हारे अच्छी तरह जानना चाहिए। मैंने दो शख्सोंकी बात कुसुम[1] के खतमें लिखी है उसे पढ़ लो। बहुत खयालोंमें पड़ना छोड़ दो। खुदा तुमको सलामत रखे और सेवा करनेके सब इरादेमें तुमको कामयाबी देवे।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६५) से।

११६. मन्मथ रायको लिखे पत्रका अंश[2]

[२८ नवम्बर, १९३२ से पूर्व][3]

मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि किसीको भी अछूत नहीं माना जाना चाहिए। मुझे विश्वास है कि जब हम हिन्दुओंमें से चालीस लाखको अछूत मानना बन्द कर देंगे, तब हम ईसाइयों और मुसलमानोंको भी अछूत नहीं मानेंगे।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, ३०-११-१९३२

१. कुसुम गांधीका पत्रका उपलब्ध पाठमें, पृष्ठ ८०, यद्यपि इसी विषयपर है, पर ये दो नाम उसमें नहीं हैं। देखिए "पत्र : डाह्याभाई पटेलको", पृ० ८३ भी।

२. मन्मथ रायने गांधीजीसे पूछा था कि क्या उनका अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन सबपर लागू होता है या केवल हिन्दू अछूतोंतक ही सीमित है।

३. "बल्लरघाट, नवम्बर २८" तिथिके अन्तर्गत प्रकाशित।

११७. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

२८ नवम्बर, १९३२

प्रिय बालक-बालिकाओ,

तुम्हारी खुराकमें जो परिवर्तन हुआ है, क्या तुम उसका कारण समझते हो? उसका तुम्हारे शरीर तथा मनपर क्या असर होता है इसे मनमें अंकित करना और मुझे लिखना।

भाऊ कहते हैं कि तुममें से किसीको तकलीका शौक नहीं है। तकलीपर अधिक और अच्छी कताईका आधार तो एकाग्रता और मौन ही है। वे गुण तुममें नहीं हैं, ऐसा भाऊने माना है। थोड़ी देर भी बातें किये बिना बैठे नहीं रह सकते। ऐसा है तो बुरी बात है। शान्तिकी दृष्टिसे तो तकलीका स्थान चरखेसे बहुत बढ़ जाता है। तुम लोगोंको तकलीकी पूरी शक्ति जान लेनी चाहिए और उसका लाभ भी उठाना ही चाहिए। जिसे एकान्तमें रहना, मौन साधन और एकाग्रता पसन्द नहीं आते, निश्चय ही समझ लेना कि वह किसी भी कालमें ब्रह्मचारी नहीं हो सकता। और तुम सब तो अभी ब्रह्मचारी ही हो। इसके बारेमें भाऊसे बातचीत कर लेना और सभी तकली-यज्ञ तो करना ही।

बापू

[पुनश्च:]

यह मौनवारको प्रातःकालकी प्रार्थनाके तुरन्त बाद लिखा गया है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

११८. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२८ नवम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

मुझे आज एक आश्चर्यजनक समाचार मिला है। रत्नगिरि जेलमें सविनय अवज्ञाके कारण कैद भोग रहे श्रीयुत अप्पासाहब पटवर्धन आजकल कम आहारपर रह रहे हैं, क्योंकि उन्हें और कुछ दूसरे कैदियोंको, जिन्हें भंगीका काम करनेकी अनुमति दी थी, आपके आदेशसे अचानक यह काम करनेसे रोक दिया गया है। मुझे आशंका गई है कि यह आदेश हमारी बातचीतके दौरान मेरे इस कथनके परिणामस्वरूप निकाला गया है कि आपकी नीति सब जगह एक-जैसी नहीं है, क्योंकि रत्नगिरि जेलमें तो आप भंगियोंसे इतर कैदियोंको भंगीका काम करनेकी अनुमति दे रहे हैं और इस

जेलमें ,आप ऐसा नहीं कर रहे। उन कैदियोंको जो स्वेच्छासे यह काम करना चाहें क्यों रोका जाये, यह मेरी समझमें नहीं आता। निस्सन्देह आप जबरदस्ती छुआ-छूतको जेलोंमें बनाये रखना चाहते हैं, जब कि वह बाहर समाप्त होती जा रही है। अप्पासाहबने बम्बई विश्वविद्यालयसे एम० ए० किया है। वह समाज-सुधारक और चरित्रवान व्यक्ति हैं। कोई भी राज्य उन्हें अपना नागरिक बनानेमें गर्व अनुभव करेगा। अछूतोंकी सेवा उनके लिए आस्थाका विषय है। उन्होंने १९३० में उपर्युक्त कारणसे उसी जेलमें उपवास रखा था। उस वक्त भी मुझे उनकी ओरसे हस्तक्षेप करना पड़ा था।[1] यदि वर्तमान स्थितिकी मुझे गलत सूचना मिली हो तो आप मुझे बतायें कि वास्तविकता क्या है। यदि मेरी सूचना सही है तो आपके ध्यानमें जो परिस्थितियाँ लाई गई हैं उन्हें देखते हुए कृपया आप यह अनुदेश तार द्वारा भेज दें कि मेरे मित्र और उनके साथियोंको भंगीका काम करनेकी अनुमति दे दी जाये। यह आश्वासन कि यह काम स्वेच्छासे किया जा रहा है, आपको जिस रूपमें उचित लगे उस रूपमें उनसे लिखितमें ले लें।

यद्यपि मैं कैदी हूँ, पर आप मुझसे यह आशा न रखें कि मैं अपने एक साथीको तिल-तिल मरते हुए देखूँ। वह किसी अपराधके फलस्वरूप या विशेष अधिकारकी कामनासे नहीं, अपितु इसलिए भूखा रह रहा है कि उसे वह मानव-सेवा करनेसे वंचित किया जा रहा है जिसके लिए सरकारने मुझे विशेष सुविधाएँ देनेकी आवश्यकता स्वीकार कर ली है।

सम्भवतः यहाँ आप मुझे यह स्मरण दिलानेकी अनुमति देंगे कि इस और पिछले दो कारावास-कालोंमें जेलका अनुशासन बनाये रखनेमें मैंने कई बार, अपने विनम्र तरीकेसे, अधिकारियोंकी सहायता की है। मैं इस तथ्यका जिक्र इसलिए नहीं कर रहा कि इसे मेरी योग्यता माना जाये। वह सहायता मैंने इसलिए की कि सत्याग्रहके नियमोंके अनुसार वह मेरा कर्त्तव्य था। इसका जिक्र मैं यहाँ इसलिए कर रहा हूँ कि आप या सरकार यह जान ले कि कैदी मित्रोंके लिए राहत चाहनेका यह मतलब कि मैं प्रशासनमें अनधिकार हस्तक्षेपका दोषी हूँ।

मुझे विश्वास है कि आप इसे तत्काल ध्यान देने योग्य मामला समझेंगे, क्योंकि इससे आपकी कैदमें बन्द एक साथीकी अत्यधिक क्षति पहुँचनेकी सम्भावना है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, पॉलिटिकल, फाइल सं० ३१/१०८ राज०, १९३२, पृ० ११-१२; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार।

१. अप्पासाहब पटवर्धनको कातनेसे मना किया गया था, देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ १०५ और १०७।

११९. पत्र : केशव गांधीको

२८ नवम्बर, १९३२

चि० केशव,

नारंगियाँ, पूनियाँ और तकली मिली। नारंगियाँ मैंने इस भावसे खाईं, मानो वे मगनलालने ही भेजी हों। वल्लभभाई और महादेवने भी खाईं। अभी उनमें विशेष खाद देनी जरूरी है, ऐसा मुझे लगा। उनमें रस और मिठास कम थी। अपनी मिट्टीका विश्लेषण कराकर जानना चाहिए कि किस चीजकी कमी है।

इन दिनों कोहनीके दुखते रहनेके कारण कातना बन्द है। इसलिए पूनियों और तकलीका उपयोग नहीं कर पाता। जब करूँगा, लिखूंगा।

मैंने तेरी पूनियोंसे ५४ नम्बरका सूत तो काता था।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४६९) से; सौजन्य : राधाबहन चौधरी।

१२०. जनतासे अनुरोध

२९ नवम्बर, १९३२

मैं देखता हूँ कि लोग केवल 'दर्शन' के लिए मुझसे मिलने आने लगे हैं। मुझे खेद है कि आज मुझे उनमें से कुछ-एकको मिलनेसे मना करना पड़ा।

भेंटके लिए प्रतिबन्धोंमें जो छूट दी गई है उसके अन्तर्गत मैं लोगोंसे केवल वास्तविक अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके सिलसिलेमें ही मिल सकता हूँ, और किसी सिलसिलेमें नहीं। इसलिए मैं सभी सम्बन्धित लोगोंसे कहूँगा कि वे इस मर्यादाका ध्यान रखें और अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके सिलसिलेमें भी केवल वही लोग मुझसे मिलें जिन्हें कोई जरूरी काम करना हो या कोई विचार-विमर्श करना हो। मेरे पास काम इतना ज्यादा है कि मैं उसे निपटा नहीं पा रहा हूँ। जहाँ कहीं सम्भव हो, पहलेसे समय ले लेना ज्यादा अच्छा रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-११-१९३२

१२१. पत्र : बम्बई सरकारके गृह सचिवको

२९ नवम्बर, १९३२

प्रिय महोदय,

मैं सरकारका आभारी हूँ कि उसने मुझे सेठ जमनालाल बजाजसे उनके इस जेलमें दाखिल होनेके बाद शीघ्र ही मिलने दिया। उनके और मेरे जो सम्बन्ध हैं, सरकार उन्हें अब जानती है। हम दोनोंने ही आज मुलाकातके समय सुपरिन्टेंडेंटसे पूछा कि क्या हम जब-तब एक-दूसरेसे मिल सकते हैं। उसने बताया कि उसके पास केवल उसी एक मुलाकातकी इजाजत है। यदि सेठ जमनालाल एक बुरे रोगसे ग्रस्त न होते, और जो कारण मैं अभी बतानेवाला हूँ यदि वह न होता, तो मैं कभी-कभी की मुलाकातसे ही, जैसी कि आज हुई, सन्तुष्ट हो जाता। लेकिन यह देखते हुए कि वे अपने स्वास्थ्यके कारण ही खास तौरपर यरवदा लाये गये हैं, हमें अगर जब-तब मिलनेकी इजाजत नहीं मिलती है तो वह हम दोनोंपर जरूरतसे ज्यादा दबाव डालना होगा। हाँ, हमारी बातचीतपर नियन्त्रण रखा जा सकता है। मुझे उनसे कोई राजनीतिक बातचीत करनेकी इच्छा नहीं है। लेकिन अस्पृश्यताकी समस्याओंपर मैं उनके साथ बातचीत करना चाहूँगा, क्योंकि वे कांग्रेस द्वारा १९२९ में नियुक्त अस्पृश्यता-विरोधी बोर्डके अध्यक्ष थे और उन्होंने अपना पारिवारिक मन्दिर तथा भारतके बहुत-से हिस्सोंमें कई अन्य मन्दिर हरिजनोंके लिए खुलवाकर मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर विशेष योग्यता प्राप्त की है।

उनके विशेष चिकित्सक डॉ० मोदीने उन्हें अपनी बीमारीकी चिन्तासे ध्यान हटानेकी सलाह दी है। उनके लिए अस्पृश्यताकी समस्यामें दिलचस्पी लेना स्वयं एक बलवर्धक औषधि होगी। वस्तुतः आज इस समस्यापर बात करनेका उनका मन हुआ था, लेकिन भेंटके लिए दिये गये सीमित समयमें वैसा करना मेरे लिए असम्भव था।

इसलिए उनके स्वास्थ्यके लिए तथा जिस कामके लिए भारत सरकारने मुझे सुविधाएँ दी हैं, उसके लिए मैं सेठ जमनालाल बजाजसे उपर्युक्त नियन्त्रणोंके अधीन जब-तब मिलनेकी अनुमतिकी प्रार्थना करता हूँ।

मैं हूँ आपका विश्वस्त,

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (२), भाग १, पृष्ठ ३९९; तथा जी० एन० ३८७१ भी।

१२२. पत्र : एक बंगाली युवकको[1]

२९ नवम्बर, १९३२

तुम्हें अच्छा बननेका दृढ़ संकल्प करना चाहिए। सदा ईश्वरसे प्रार्थना करो कि वह तुम्हें अच्छा बनाये और तुम अच्छे बन जाओगे।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २९१

१२३. एक पत्र[2]

२९ नवम्बर, १९३२

कोई संस्था ऐसी नहीं जिसमें कोई-न-कोई बुराई न घुसी हुई हो। परन्तु मेरी राय यह है कि यद्यपि मन्दिरोंमें कितनी ही ऐसी बुराइयाँ हैं जिनसे इनकार नहीं किया जा सकता, फिर भी वहाँ जो करोड़ों मनुष्य जाते हैं, उनपर इन बुराइयोंका कोई असर नहीं होता और उन्हें इन मन्दिरोंसे आवश्यक राहत मिल जाती है।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २९१

१२४. पत्र : एक सिन्धी डॉक्टरको[3]

२९ नवम्बर, १९३२

'गीता' का अर्थ करनेमें हमारे बीच मतभेद है। आप ऐसा नहीं कर सकते कि लड्डू पूरा-का-पूरा रहे और आप उसे खा भी लें। 'गीता' की बात रहने दीजिए। यदि आपको अपने इलाज लोगोंकी भलाईके लिए नहीं अपितु अपनी कमाईके लिए गुप्त रखने पड़ें, तो ईश्वरार्पण या अपनेको शून्य बनानेकी बात बहुत दूर रही। भंगियोंको ही लीजिए, किस तरह वे समाजके लिए गन्दा काम करके अपनी आजीविका

१. बंगाली युवकने लिखा था: "मैं पूरी तरह पापमें डूबा हुआ हूँ। महिलाओंको देखने-मात्रसे मेरी वासना जागृत हो जाती है और मुझे चोरीकी भी आदत पड़ गई है। मुझे छुटकारा दिलाइए।"

२. पत्र-लेखकने मन्दिरोंकी बुराइयोंका सवाल उठाया था।

३. पत्र-लेखकने पूछा था "मैं अपने-आपको ईश्वरार्पण कैसे करूँ? मुझे अपने इलाज गुप्त रखने पड़ते हैं और यदि मैं ऐसा न करूँ तो मेरी कमाई बन्द हो जायेगी।"

कमाते हैं। यदि आप अपनेको शून्य बना दें तो आप स्वेच्छा और प्रसन्नतासे वैसी ही सेवा करेंगे जैसी कि भंगी करते हैं और इसके साथ-साथ आप गरीब और दुःखी लोगोंको अपने चिकित्सा-सम्बन्धी ज्ञानका लाभ बिना उनसे कुछ लिये देंगे। यह असम्भव मत मानिये क्योंकि बहुत-से लोगोंने यह कार्य सफलतापूर्वक किया है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२ पृ० २९१-२

१२५. पत्र : वसन्तराम शास्त्रीको

२९ नवम्बर, १९३२

आपकी पुस्तिका[1] किसीने मुझे भेजी है। उसे थोड़ा पढ़ा। मैंने सपनेमें भी यह आशा नहीं की थी कि आप इतना असत्य लिख सकते हैं। मुझे तो इससे नुकसान नहीं होगा। मगर वैष्णव धर्मका क्या होगा?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १९१

१२६. पत्र : प्रभावतीको

२९ नवम्बर, १९३२

चि० प्रभावती,

तुम्हारा खत मिला। तुमको मैं क्या लिखुं। मुझको लिख लिखकर थकाव हुई। तुमको खत मिलते ही नही है। तब मैं कहाँ तक लिखा करूँ? मैं यहाँसे लिखुं और तुमको खत नहीं मिले उसमें रंज क्या? ऐसा विश्वास क्यों नहीं रखती है कि मैं तुमको कभी न भूल सकता हूँ न बगैर खत रख सकता हूँ। जब बाहेर थी मेरे खत तुमको नियमबद्ध मिलते थे तो मैं अब क्यों न लिखुं? इसलिये रंजकी बात भूल जाओ और साथ-साथ इतना भी समज लो कि अगर खत लिखनेकी मनाई हो जाय तो हम क्या करें? सच्चा सहारा न माताका है, न पिताका है, न किसी औरका, सच्चा सहारा ही ईश्वरका है।

मेरा शरीर अच्छा रहता है। वजन १०३ है। खानेमें दूध, रोटी, फल और भाजी। दूध भी करीब २½ रतल होता है।

१. **साठीना साठ सूत्रो** ('साठसालके साठ सूत्र', जिसका भाव यह था कि गांधीजी अब सठिया गये हैं।)

वल्लभभाई, महादेव भी अच्छे हैं। जयप्रकाश अच्छा है और उसको साथी भी बहुत अच्छे मिले हैं। मेरी उम्मीद है कि यह खत तुमको मिल जायगा और मिलने पर जो कुछ लिखना चाहती है लिखो।

बापुके आशीर्वाद

प्रभावती देवी
कैदी 'ए' क्लास, सेंट्रल जेल, लखनऊ,[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४२६) से।

१२७. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२९ नवम्बर, १९३२

भाई कृष्णचन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला था। उसका जवाब छोटा-सा भेज दिया था। वह नहीं मिला हो तो अब मिलेगा। मैंने अब तक जो उत्तर[2] दिये हैं उनमें से ही सब शंकाओंका निरसन करनेकी कोशिश करो। प्रत्येक प्रश्न पूछते रहनेसे शान्ति न होगी, उसका उत्तर हृदयमें से ही प्राप्त करनेका प्रयत्न करो। मुझे हरिजनोंके काम में से तनिक भी अवकाश नहीं रहता है यह तो जानते हो न?

मोहनदास गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२६५) से।

१. पता अंग्रेजीमें है।
२. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ २४२, २८१ और ३४२।

१२८. पत्र : ई० ई० डॉयलको

३० नवम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

अप्पासाहब पटवर्धनके बारेमें मैंने जो पत्र[१] लिखा था उसका शीघ्र उत्तर देनेके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। परन्तु आपने जो रुख अपनाया है उसके लिए मुझे खेद है। चूँकि यह मामला सरकारके पास चला गया है इसलिए मैं उसका ध्यान निम्नलिखित तथ्योंकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ :

१. अप्पासाहब पटवर्धन इस विचारके हामी हैं कि उन्हें भंगियोंके साथ काम करना चाहिए और उनके लिए यह अत्यन्त घृणास्पद है कि जो छुआछूत वह जेलके बाहर नहीं मानते, उसे जेलके भीतर मानें।

२. इसी कारण उन्हें १९३० में उपवास रखना पड़ा था।

३. मैं अपने इस वक्तव्यपर दृढ़ हूँ कि अप्पासाहब पटवर्धन वास्तवमें रत्नगिरि जेलमें भंगीका काम तबतक करते रहे हैं जबतक कि उन्हें रोक नहीं दिया गया।

४. उनके किसी तरहकी धमकी देनेका प्रश्न ही नहीं था और मेरी विनम्र रायमें, अपने नैतिक दावेको कहने और उस दावेके न माने जानेके परिणाम बतानेको धमकी नहीं माना जाना चाहिए।

५. नैतिक या धार्मिक प्रश्नपर विचार करते हुए श्रमिकोंकी कमीका प्रश्न ही पैदा नहीं होता।

६. मेरी रायमें अप्पासाहब पटवर्धन-जैसे पूरी तरह विनम्र कैदीके लिए, जो बताये गये हर कामको करनेके लिए हमेशा तैयार रहते हैं, यह कहना कि वे 'खास किस्मके कामके लिए संघर्ष कर रहे हैं,' न्यायसंगत नहीं है। उन्हें जो भी काम दिया जाये उसके अलावा वे भंगीका काम करना चाहते हैं।

७. हम तीनोंको मिलाकर यरवदामें बहुत-से ऐसे कैदी हैं जो अपना मैला साफ करनेका काम स्वयं करना चाहते हैं, और चूँकि आपने इसपर सहानुभूतिसे विचार नहीं किया है इसलिए मैं स्वयं चुप रहा हूँ और अपने साथियोंको कठिनाईसे यह समझा पाया हूँ कि वे इस बातको निष्ठाका मामला न बनायें।

८. जैसा कि आपको मालूम है, इस मामलेमें और सविनय अवज्ञाके कारण जेल भोग रहे कैदियों द्वारा हाथ-कताईके बारेमें बातचीत इसलिए मुल्तवी होती रही है कि इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण मामले सामने आते रहे हैं जिनमें मेरा वक्त और ध्यान लगा रहा है। परन्तु ये दो मामले हममें से बहुतोंके लिए अत्यन्त ही महत्वपूर्ण हैं।

१. देखिए पृष्ठ ९३-४।

९. मैं सादर पुनः यह कहे बिना नहीं रह सकता कि अप्पासाहब पटवर्धनको, इसलिए कि वे भंगी-जातिके नहीं, अपने भंगी साथियोंके साथ स्वेच्छासे काम न करने देनेका मतलब जेलोंमें छुआछूतके बन्धनको मजबूत करना है, जबकि जेलकी दीवारोंके बाहर उसे तेजीसे हटाया जा रहा है।

इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आपने जो यह कड़ा रुख अपना रखा है इसके बारेमें निजी तौरपर फिरसे विचार करें और विनम्र अप्पासाहब पटवर्धन और उनके साथियोंको मैला साफ करनेका काम करने दें। मुझपर विश्वास कीजिए कि उनकी प्रार्थनामें अवहेलना का भाव बिलकुल नहीं है। हममें से कुछ-एक लोग, जिन्हें सविनय अवज्ञामें विश्वास है, अपनी अवज्ञा जेलकी दीवारोंके बाहर छोड़ आते हैं और जेलकी दीवारोंके अन्दर प्रवेश करनेपर जेलके अनुशासनका ज्यादा-से-ज्यादा, जहाँतक हमारी अन्तरात्मा मानती है, पालन करने और उसे माननेके लिए उत्सुक रहते हैं। यह हम इसलिए करते हैं कि हम यह दिखा सकें कि हमारी अवज्ञा हमेशा सविनय है, अविनय या अपराधपूर्ण कभी नहीं है।

यदि मेरे कहनेसे भी आपको या आपकी सरकारको यह स्पष्ट और न्यायसंगत स्थिति स्वीकार नहीं है, तो मुझे आपको अत्यन्त खेद-सहित यह सूचना देनी है कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं अगले महीनेकी ३ तारीख, शनिवारसे अप्पासाहबके साथ उनके विरोधमें शामिल हो जाऊँगा और सादर यह निवेदन करता हूँ कि मैं अपना मैला साफ करनेका काम स्वयं करूँगा। और यदि उन्हें राहत न दी गई तो मैं कम भोजनपर नहीं रहूँगा अपितु पूर्ण उपवास शुरू कर दूँगा। मैं चाहूँगा कि आप इसे धमकी न मानें अपितु मानव होनेके नाते एक साथीकी भावनाओंका आदर करें। मैंने अपना दिल कठोर तो बना रखा है, परन्तु इतना नहीं कि मैं यह देखता रहूँ कि एक माननीय साथी मनमें संजोये हुए सिद्धान्तकी रक्षार्थ तिलतिल कर प्राण देता रहे और मैं उसकी पीड़ा और त्यागमें रत्ती-भर भी हिस्सा न बटाऊँ। यकीन मानिए कि इस तरहके पत्र लिखनेमें मुझे कतई खुशी नहीं होती।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेन्ट, पोलीटिकल, फाइल सं० ३१/१०८ राज०, १९३२, पृ० १६-७; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार।

१२९. पत्र : एफ० मेरी बारको

३० नवम्बर, १९३२

प्रिय मेरी,

तुमने केवल एक पोस्टकार्डकी माँग की है, लेकिन वह मेरे लिए काफी नहीं होगा। किसी चीजको मैं अपने लिए लाभकारी नहीं पाता, केवल इसलिए मुझमें दूसरोंके प्रति उपेक्षा नहीं होनी चाहिए और न यह होना चाहिए कि मैं यह पता लगानेका भी कष्ट न उठाऊँ कि वह उनके लिए लाभप्रद है या नहीं। मैं जानता हूँ कि मूर्तिपूजाका वह विशेष रूप लाखों लोगोंके लिए लाभप्रद है, इसलिए नहीं कि वे (मानसिक रूपसे) मुझसे कम विकसित हैं, बल्कि इसलिए कि उनका गठन दूसरे प्रकारका है। मेरे बारेमें जो बात भूलनी नहीं चाहिए वह यह है कि मैं न केवल मूर्तिपूजाको पाप नहीं समझता हूँ, बल्कि यह भी जानता हूँ कि किसी-न-किसी रूपमें वह हमारे जीवनकी एक वास्तविकता है। एक प्रकारकी पूजाका दूसरे प्रकारकी पूजासे अन्तर मात्रामें है, प्रकारमें नहीं। मस्जिद जाना या गिरजाघर जाना एक प्रकारकी मूर्तिपूजा है। 'बाइबिल', 'कुरान', 'गीता' और ऐसे ही अन्य धर्मग्रन्थोंका पूजन भी मूर्तिपूजा है। चाहे आप किसी पुस्तक या इमारतका उपयोग न करें, बल्कि अपनी कल्पनामें परमतत्वका एक चित्र खींच लें और उसमें कुछ गुण आरोपित कर दें, तो वह भी मूर्तिपूजा है। मैं उस व्यक्तिकी पूजाको जो पत्थरकी प्रतिमा रखता है, निकृष्ट कोटिकी पूजा माननेसे इनकार करता हूँ। विद्वान न्यायाधीश अपने घरोंमें ऐसी प्रतिमा रखते देखे गये हैं। पं० मालवीय जैसा दार्शनिक गृहदेवताकी पूजा किये बिना भोजन नहीं करता। ऐसी पूजाको अन्धविश्वास मानकर नीची निगाहसे देखना गुस्ताखी और अज्ञानता ही होगी। फिर पूजा करनेवालेकी कल्पनानुसार ईश्वर उसी पत्थरमें होता है जिसकी प्रतिष्ठा हो चुकी है, आसपास पड़े पत्थरोंमें नहीं। गिरजाघर में भी गर्भगृह उसके अन्य स्थानोंसे ज्यादा पवित्र होता है। तुम इस तरहके अनेक उदाहरण जुटा सकती हो। यह सब तर्क चिन्तन या पूजामें ढिलाईके लिए बहाना नहीं है, बल्कि इस तथ्यको निश्चित रूपसे माननेके लिए है कि सच्ची पूजाके सभी प्रकार समान रूपसे अच्छे और पूजा करनेवालोंके लिए समान रूपसे कारगर हैं। वह जमाना लद गया जब एक व्यक्ति या समूहका एकाधिकार होता था। परमेश्वर पूजाके रूपों अथवा शब्दोंकी परवाह नहीं करता, क्योंकि वह हमारी काया और वाणीके भीतर पैठ सकता है और हमारे भावोंको, जान और समझ सकता है, भले ही हम स्वयं उन्हें न समझते हों। परमेश्वरको हमारे भावोंसे ही प्रयोजन है।

मुझे खुशी है कि तुम मारियाके साथ हो। उसके परिवारकी तुम्हारी तस्वीर, जिसमें हमारे चौपाये स्वजन भी शामिल हैं, शिक्षाप्रद है और बिलकुल मारियाके

योग्य है। उसका पत्र न लिखना मुझे बुरा नहीं लगता। जब उसे मुझसे कुछ कहना हो तो उसके पत्रका मैं स्वागत करूँगा। लेकिन मैं यह नहीं चाहूँगा कि चूँकि कोई और मुझे पत्र लिख रहा है इसीलिए वह भी मुझे कुछ लिखनेपर एक मिनट भी खर्च करे।

मुझे खुशी है कि तुम्हारे पास १४ महीनेका समय है। तुम्हारा कार्यक्रम मुझे पसन्द है। जहाँतक मुझे याद है तुम शान्ति निकेतन नहीं गई हो। कम-से-कम तुम्हें वहाँ जाना चाहिए था। तुम अपना दौरा पूरा कर लो। उससे पहले मैं तुम्हें अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यमें जोतना नहीं चाहूँगा। अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यकी एक लम्बी योजना है और तुम उसके लिए जब भी बिलकुल तैयार हो, तभी उसमें लगाई जा सकती हो। हाँ, उसके लिए तुम्हारे अन्तरसे स्पष्ट आवाज आनी चाहिए। मैं चाहूँगा कि तुम इस आन्दोलनकी सभी शाखाओंका चुपचाप अध्ययन करो और इसके पीछे जो भावना है उसे आत्मसात करो, और यदि तुम इसके लिए अपने-आपको अर्पित करो तो सम्पूर्ण मनसे बिना झिझकके करो। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम अपने सभी सन्देह मेरे सामने रखनेमें संकोच न करो और जब तुम्हारा दिल और दिमाग दोनों पूरी तरह सन्तुष्ट हो जायें, तभी अपने-आपको इस सेवाके लिए समर्पित करो। निश्चय ही, अस्पृश्यता-कार्यके सिलसिलेमें तुम मुझसे किसी भी समय मिल सकती हो।

कृपया यह पत्र मारियाको भी दिखा देना। तुम दोनोंको मेरा प्यार और महादेवका भी प्यार।

तुम्हारा
बापू

[पुनश्च :]

दुबारा नहीं पढ़ा गया है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८६) से। सी० डब्ल्यू० ३३१३ से भी; सौजन्य : मेरी बार।

१३०. पत्र : चित्तूर राजगोपालाचारीको

३० नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपका सुझाव आन्दोलनको एक ऐसी रूपरेखा देता है जो मेरी सोची हुई रूपरेखासे भिन्न है। अस्पृश्यता सवर्ण हिन्दुओंकी गढ़ी हुई बुराई है। इसलिए उन्हें ही वह बुराई दूर करनी है और बाकी सब-कुछ उससे हो जायेगा। हरिजनोंका शुद्धिकरण, यदि शुद्धिकरण शब्दका इस सिलसिलेमें प्रयोग किया जा सकता हो तो, अस्पृश्यता-निवारणके बाद होगा। वह निवारणसे पहलेकी शर्त कदापि नहीं होनी चाहिए। यद्यपि मैं आपके सुझाये हुए आन्दोलनसे अपनेको जोड़ना नहीं चाहूँगा, पर आप उसे शुरू कर सकते हैं। यदि आपकी सुझाई हुई रस्में

पूरी करनेके बाद हरिजनोंको प्रवेश करने दिया जाता है, तो वह एक अग्रिम कदम होगा। निश्चय ही मुझे आपसे अपनी मुलाकातें, आदि याद हैं।

आप जो-कुछ भी करें कृपया उसमें अपने नामरासी[1] से सलाह कर लें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत चि० राजगोपालाचारी
चित्तूर

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१-१९३३

१३१. पत्र : टी० चिन्नैयाको[2]

३० नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मेरा दृढ़ मत है कि प्रधान मन्त्रीके निर्णयसे यरवदा सन्धि कहीं ज्यादा अच्छी है। यह प्रधान मन्त्रीके निर्णयकी अपेक्षा कई ज्यादा सीटें देती है और किसी ऐसे उम्मीदवारके चुनावके विरुद्ध व्यवस्था देती है जो हरिजनोंके बहुमत द्वारा पहले मंजूर न किया गया हो। जहाँतक शपथका सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ कि मुझे यह जाँचने देना चाहिए कि वह तोड़ी गई या निभाई गई। निश्चय ही मैं व्यापारियों जमींदारों और अन्य लोगोंके लिए विशेष निर्वाचक-मण्डलोंके पक्षमें नहीं हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत टी० चिन्नैया, एस० एम० पी० एस०
९, सरस्वती विलास
पूनांगी स्ट्रीट
नंगम्बकम
मद्रास

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५०७१)से।

१. चित्तूर राजगोपालाचारीने राजाजीको अपनी एक अपीलमें कहा था: "मैंने महात्मा गांधीके सामने प्रस्ताव किया है कि इन अधिकृत एवं विधिवत संस्कारों द्वारा और उनके पश्चात् मंदिर-प्रवेश करनेसे हरिजनोंकी प्रतिष्ठा शास्त्रोक्त रीतिसे अपने-आप बढ़ जायेगी. . ."।

२. अखिल भारतीय आदि-द्रविड़ महाजन सभाके संचालक।

१३२. पत्र : मणिबहन पटेलको

३० नवम्बर, १९३२

चि० मणिबहन,

आज डॉ० कानूगाका पत्र आया है। वह साथमें भेज रहा हूँ। इससे तुझे पता लग जायेगा कि डाह्याभाईकी चिन्ता करनेका कोई कारण नहीं है। बुखारके जानेमें तो अभी समय लगेगा, मगर इसमें चिन्ता करने-जैसी कोई बात नहीं है। हम तीनों मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० ९५

१३३. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

नवम्बर, १९३२

चि० पण्डितजी,

हमें बाबा खूब मिले। आप गये, यह ठीक ही किया। वह मन्दिर भी किसी दिन खुलेगा। आसपासके गाँवोंमें चाहे जितनी उदासीनता क्यों न हो, जाते रहना। प्रेमसे सभी गाँठें खुलेंगी।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २३८)से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१३४. तार : यू० गोपाल मेननको

[१ दिसम्बर, १९३२][१]

आपका तार मिला। मतसंग्रह सुचारू रूपसे हो रहा है यह जान कर खुशी हुई। आशा है, मतदाताओंको समस्याके विषयमें स्पष्ट जानकारी होगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१२-१९३२

१. "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तिथिकी प्रविष्टिसे।

१३५. पत्र: नारणदास गांधीको

३० नवम्बर/१ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

आजकी डाकमें राधा और कुसुमके नाम छोटे-छोटे परचे भेजे हैं। उन्हें तुमने पढ़ लिया होगा। दोनोंके साथ बैठकर अच्छी तरह बात कर लेना और उसके बाद जिस डॉक्टरसे परामर्श किया हो उसकी बातका अक्षरशः पालन करना। ऐसा करके तुम बेफिक्र हो सकोगे और यहाँ मैं भी बेफिक्र हो सकूँगा। जीवन-मरण हमारे हाथमें नहीं है। डाक्टरोंके हाथमें भी नहीं है। लेकिन प्रयत्न करना तो हमारे हाथमें है। हमें जो ठीक लगे उतना कर लेनेपर निश्चिन्त रह सकते हैं।

. . . [1] चला गया, इसे ईश्वरकी कृपा ही मानें। तुमने उसकी छुट्टी मंजूर कर ली थी। इसके बाद भी तुमने अनायास ही उसे थोड़े समयके लिए रोक लिया था। कौन जाने ऐसा उसकी परीक्षाके लिए हुआ हो। आश्रमके इतिहासमें ऐसी घटनाएँ होती रही हैं। पाप अपने आप फूट पड़ा है।

खुराकके बारेमें बहुत विस्तारसे लिखनेकी इच्छा तो है किन्तु ऐसा कर नहीं सकता। संक्षेपमें ही लिखकर काम चलाना होगा। रोज बाजरेकी रोटी दें, यह ठीक नहीं है। एक दिन बाजरेकी, एक दिन ज्वारकी और एक दिन गेहूँकी दें। ऐसा करनेसे तीनों अन्नोंका लाभ मिल सकेगा। सारा अनाज तौलकर लेना चाहिए। और रोटियाँ बराबर-बराबर वजनकी होनी चाहिए। वजन कितना होना चाहिए यह तो तुम्हें अनुभवसे मालूम हो सकेगा। ऐसा करनेसे सबको मात्राका अन्दाज हो जायेगा। यहाँ छोटी-से-छोटी रोटी ६ औंसकी होती है। सुबहकी राबका पूरा-पूरा फायदा उठाना हो तो उसके सिवा और कुछ नहीं खाना चाहिए और राबमें भी आटा तौलकर डालना चाहिए। पानी भी नापकर डाला हो तो फौरन मालूम हो जायेगा कि किसने एक बार कितना आटा लिया। उतनेसे सन्तोष न हो और इच्छा हो तो और ले लें, किन्तु अपने लिए जितनी मात्रा तय की हो, उससे ज्यादा न लें। किसी दिन भूख न हो तो इससे कम ले सकते हैं। बहुत भूख लगनेपर भी निर्धारित मात्रासे ज्यादा न लें। इससे तनिक भी नुकसान होनेकी सम्भावना नहीं है।

यदि अनाज अच्छी तरह साफ किया हो तो आटेको छाने बिना पूरा इस्तेमाल करना चाहिए। डाक्टर तलवलकरका घी-दूध बढ़ानेका सुझाव मुझे अच्छा लगा है। चटनीका सुझाव तनिक भी अच्छा नहीं लगा। चटनी आदि लेनेवालोंको भी कब्ज रहता है। उसका प्रयोग करना हो तो कर सकते हो। जिन्हें बराबर कब्जकी शिकायत रहती हो उनके लिए चटनी बनाओ और वे उसे खाकर देखें। उनपर उसका

१. यहाँ नाम नहीं दिया जा रहा है।

अच्छा ही असर पड़े और तुम सब आजमा कर देखना चाहो तो ऐसा कर सकते हो। इस चटनीमें लाल मिर्चके बदले काली मिर्च डालना। इस सम्बन्धमें डॉ० तलवलकरको जो लिख रहा हूँ सो देखना। चटनीके बारेमें मुझे तो अच्छा अनुभव नहीं है। मैं विलायत जानेसे पहले लाल व काली मिर्च काफी खाता था, ऐसा कह सकता हूँ। उस समय स्वादके सिवा और किसी बातका खयाल नहीं था। विलायतमें लाल मिर्चका जो अर्क मिलता है वह महीने-भर खाया होगा। उसका नतीजा भी भोगना पड़ा। बादमें एकाध महीनेके अन्दर मेरा जीवनक्रम ही बदल गया और मसाले आदि जो छूटे सो छूट ही गये। उसके बाद सैकड़ों प्रयोग किये हैं। किन्तु जब कभी औषधिके रूपमें मसालेकी जरूरत पड़ी तब उससे फायदा हुआ हो, ऐसा मुझे याद नहीं। मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि कब्ज बदहजमीकी ही निशानी है। जो खुराक हजम हो सकती है उससे कब्ज नहीं होता। खुराक कैसी भी क्यों न हो हजम होने पर उसका कुछ-न-कुछ अवशेष बाकी रहना ही चाहिए। और जब खुराक हजम होती है तो अंतड़ियाँ वह अवशेष फेंक देती हैं। इस सबके बाद भी मेरा कोई आग्रह नहीं है। मसाले शारीरिक ब्रह्मचर्यके लिए घातक हैं, यह बात प्रसिद्ध है। इस दृष्टिसे भी हम उन्हें खुराकमें स्थान देनेसे पहले सौ बार विचार करें। हम मसाले सिर्फ औषधिके रूपमें एक विशेष अवधिके लिए अवश्य दे सकते हैं, और जहाँतक उनका उपयोग औषधिके रूपमें ही किया जाये वहाँतक हो सकता है कि वे ब्रह्मचर्य-पालनमें घातक भी न हों। जैसे कि किसीको ठण्ड लग रही हो और उसे निरी ब्रान्डी दें तो उसकी ठण्ड दूर हो जायेगी पर उस ब्रान्डीसे आदमी नशेमें चूर नहीं होगा क्योंकि शराबकी सारी शक्ति ठण्ड दूर करनेमें लग गई होगी। अब चटनीके बारेमें काफी लिख दिया है। डाक्टर तलवलकरने मूँगफली देनेका जो सुझाव दिया है वह मानने लायक नहीं है। मूँगफलीके बारेमें जितने प्रयोग मैंने किये हैं उतने शायद ही किसीने किये हों। आश्रममें भी उसका अच्छी तरह प्रयोग किया गया है। कुल मिलाकर उसका परिणाम खराब ही निकला है। इस प्रयोगमें तुमने दाल एकदम छोड़ दी लगती है। यदि इसका परिणाम अच्छा निकला हो तो ठीक ही है। परिणाम जाननेके लिए सबका वजन लेना चाहिए और तबीयत कैसी रहती है यह भी उनसे मालूम कर लेना चाहिए। और यह सब तुम सँभालपाओगे या नहीं, यह तुम्हीं जानो। यदि इस प्रयोगमें तुम्हें आश्रमवासियोंका पूरा-पूरा सहयोग न मिले तो तुम्हें इस प्रयोगके जंजालसे छुटकारा पा लेना चाहिए। यदि सबसे सहयोग मिले तो शायद इसे भार नहीं मानोगे।

रामजीकी उलझन सुलझा सको तो अच्छा हो।

बाकी सब-कुछ अब सोमवारकी डाकमें। सभी आश्रमवासियोंको इतना तो समझ ही लेना चाहिए कि तीन बार जो खानेको मिलता है उसके अतिरिक्त किसीको बीचमें कुछ भी खाना या चबाना नहीं चाहिए। यदि कोई बीचमें कुछ भी खाये या चबाये, भले ही वह इमलीका एक टुकड़ा हो अथवा जो सब्जी उग रही है उसको ही तोड़कर खाया हो, तो वह भी अस्तेयका भंग और प्रयोगमें विघ्नकारी होगा।

१ दिसम्बर, १९३२

डॉ० तलवलकरका पत्र पढ़ लेना, तुम्हें ठीक लगे तभी देना।

इसके साथ प्राइमसके सम्बन्धमें जो कागज है, वह सबको पढ़ाना। क्या केशुकी तबीयत अच्छी नहीं रहती?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७१ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१३६. पत्र: मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा गया है

१ दिसम्बर, १९३२

चि० मीरा,

आज फिर गुरुवारको सुबहके चार बजेसे पहले लिख रहा हूँ। तुम्हारा पत्र लिखनेमें मुझे जल्दी न करनी पड़े, इसलिए महादेव आरामसे बैठे हैं। कोई मुझे बता न देता, तो मैं तुम्हें ४० सालकी हरगिज नहीं मानता। आशा है तुम जब एक सालकी बच्ची थीं, तबसे अब कम-से-कम ४० गुनी ज्ञानवान होगी, और अगर हर क्षण हमारे ज्ञानकी वृद्धि हो, तो वह वृद्धि असीम न सही, बेहिसाब तो हो ही जायेगी। भगवान करे तुम्हारी ज्ञान-वृद्धि असीम हो!

तुम्हारे स्वास्थ्यके लिए मैंने अपना हालमें ही अर्जित ज्ञान तुम्हें बता दिया है। अब यह तुम सोच लो कि तुम्हारे लिए क्या अच्छा है। अपने भोजनमें कुछ सलाद, लेटूस, पक्के टमाटर या किसी हरी सब्जीके कोमल पत्ते और जोड़ लो। आँतोंके लिए यह निस्सन्देह अच्छा रहता है। लेकिन तुम्हारे लिए क्या अच्छा है, यह सबसे ज्यादा तुम ही जान सकती हो।

वेरियर[1] लगभग एक महीने पहले वापस आ गया था। वह किसीसे नहीं मिलता, अपने-आपको उसने पूरी तरह अच्छे काममें लगा दिया है और मेरा खयाल है कि वह ठीक है। शामराव[2] बीमार है और उसे अस्पताल जाना पड़ा है।

तिलकम[3] आश्रममें है। वह पूरी तरह सशक्त नहीं है। मैंने उससे कहा है कि वह जब चाहे अस्पृश्यता-कार्य हाथमें ले सकता है। उसकी इच्छा ईसाई अछूतोंके बीच काम करनेकी है।

१. वेरियर एल्विन।

२. शामराव हीवले, वेरियर एल्विनके निकट मित्र।

३. एक आश्रमवासी।

तुम्हारा कार्यक्रम बहुत व्यस्त लगता है। अपने लिए तुमने जितना आराम रखा है, तुम्हें उससे अधिक रखना चाहिए। मेरे विचारसे तुम्हें अपने साथ कठोरता नहीं बरतनी चाहिए। बराबर थकावटके बजाय, ताजगी महसूस होनी चाहिए। क्या तुम काफी नींद लेती हो? तुम्हें मन ही मन घुटते नहीं रहना चाहिए।

अपने बारेमें मुझे एक असाधारण परिणामकी सूचना देनी है। मैं १०३ से एकदम १०६ पौंडपर पहुँच गया हूँ। मावा बराबर ले रहा हूँ। लेकिन शक्तिमें उतनी वृद्धि या कोहनियोंकी पीड़ामें उतनी कमी नहीं हुई है। न कातनेसे भी अभीतक कोई फर्क नहीं पड़ा है। इसलिए सम्भव है वजन बढ़ जाना विशुद्ध वरदान न हो। इस अचानक परिवर्तनको मैं ध्यानसे देख रहा हूँ।

मेरी सारी पढ़ाई रुक गई है। पत्र-व्यवहार और मुलाकातोंके सिवाय कुछ नहीं होता। बा, वेलाबहन[1] और बाल[2]को साथ लेकर दक्षिण चली गई है।[3] उर्मिला देवी[4]को भी वहाँ भेज दिया गया है। इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दू अपने धर्मके बारेमें जितना आजकल सोच रहे हैं, उतना पहले कभी नहीं सोचते थे।

अब मुझे बस करना चाहिए। सुबहके ५।। बज चुके हैं। मुझे अब 'पुस्तकालय' जाना चाहिए और फिर सैरके लिए।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

आशा है, तुम्हें बौद्ध-धर्मपर पुस्तक मिल गई होगी।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२५२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७१८ से भी।

१. लक्ष्मीदास आसरकी पत्नी।

२. काका साहब कालेलकरका पुत्र बालकृष्ण।

३. बा और दूसरे लोग हरिजन-कार्यके लिए दक्षिण भारत गये थे।

४. सी० आर० दासकी बहन।

१३८. पत्र : बेचरदास जे० दोशीको

१ दिसम्बर, १९३२

भाई बेचरदास;

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। पूँजाभाईके विषयमें जो लिख चुका[१] हूँ उससे ज्यादा लिखनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। जो लिखा है वह तो तुमने पढ़ा ही होगा। उसका उपयोग कर लेना। तुम्हारी भेजी हुई पुस्तकें मिली थीं। 'सन्मति प्रकरण' पुस्तक नहीं मिली। तुम्हारा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा होगा। मेरा हाथ तो वैसा ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३४३)से।

१३९. पत्र : श्यामजी मारवाड़ीको

१ दिसम्बर, १९३२

भाई शामजी;

तुम्हारे पत्र और तुम्हें प्राप्त उनके उत्तरोंकी नकलें मिल गई हैं। मिलनेपर अन्तिम पत्रके जवाबकी नकल भी भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५२०७) से।

१४०. पत्र : नारणदास गांधीको

२ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

भाऊको ज्वर आनेका तो एक ही कारण हो सकता है कि उसने बहुत जल्दी अन्न लेना शुरू कर दिया। यदि मेरा अनुमान सही हो तो भाऊको महीना भर अनाज न खानेके नियमका सख्तीसे पालन करना चाहिए। वह सब्जी, फल और दूध ही ले। सब्जीमें हरी सब्जी ले, कंद नहीं। शौच ठीक होने लगे, तभी अन्न शुरू करे। सात दिनके उपवासके बाद यदि उसका पारणा ठीकसे किया जाये तो ज्वर कदापि नहीं आता।

१. देखिए खण्ड ५१, "चिरंजीव पूँजाभाई", पृष्ठ २९९-३०१।

मदनकी पुस्तक जाने कहाँ रख दी गई थी; मिल ही नहीं रही थी। आज मिली है। इसलिए रजिस्टरी करके भेज रहा हूँ। भाऊ उसका अधिकांश अच्छी तरह पढ़ ले। किन्तु मुख्यतः उपवास छोड़नेकी रीतिके बारेमें जो-कुछ १४९ और १७३ पन्नोंपर है उसे पढ़ ले। पुस्तक पढ़नेमें बहुत आसान है, इसलिए वह जल्दी ही पूरी की जा सकती है। तुम तो उसे पढ़ ही लोगे। जिस व्यक्तिने जंजीवारसे पुस्तक भेजी है, उसने पेंसिलसे जिल्दके ऊपर जो लिखा है, वह उसका विश्वास और प्रेम जाननेके विचारसे पढ़ने लायक है।

कुसुम और राधा ठीक होंगी। पुरातनकी खबर तो अब बादमें मिलेगी। जमना को एकाएक दमा कैसे हो गया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१४१. पत्र: रुक्मिणीदेवी बजाजको

२ दिसम्बर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

अब तेरा पत्र नियमपूर्वक आने लगा है। देखना आगे अब तू लिखनेमें आलस्य नहीं करेगी और भूलेगी भी नहीं। वहाँ तू बीमार है और आश्रममें राधा। हमें तो बीमारीमें प्रसन्नचित्त रहना है। ईश्वर जैसे रखे वैसे सन्तुष्ट रहना सीखना है। हमसे जहाँतक बन पड़े वहाँतक संयमपूर्वक रहें और चिन्ता न करें। जबतक ज्वर है परिश्रम नहीं करना है — नियमका पालन करना। क्या घरमें हवा और रोशनी ठीक है? अब छगनलाल जोशी मुझे सहायता देनेके लिए आयेगा। . . .[1] ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४७)से।

१. यहाँ एक शब्द सम्भवतः जेल-अधिकारियोंने काट दिया था।

१४२. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२ दिसम्बर, १९३२

चि० हेमप्रभा,

आजकल मैंने तुमको नहिं लिखा है क्योंकि सतीशबाबु यहाँ है और सब हाल तुमको मिलता रहता है। तुमारे हाल मुझे मिलते रहते हैं। बस्तीयोंके बारेमें मैंने सतीशबाबुको सब कह दिया है। तुम्हारा काम[1] मुझे बहोत प्रिय लगता है।

आश्रमके बारेमें तुमने अच्छा प्रश्न उठाया है। उत्तर सीधा है। जब हम आश्रमको संयमी स्त्रीपुरुषोंके मार्फत हि चलाना चाहते हैं तो जो संयमका पालन करना चाहते हैं उनको हि दाखल करें। वे नियमोंको समझ कर आवेंगे और पालन करनेके लिये। दूसरे जो केवल आजीविकाके कारण आते हैं उन पर सब नियमोंका बोज नहिं डाल सकते हैं। ऐसे तो नौकर जैसे बने। उनको हम नौकर जैसे न रखे। हमारे साथी समजे और जहाँ तक सच्चाईसे अपना काम करते रहे तब तक रहे। मुसीबत यहाँ है जो नियम पालनके लिये आते हैं वह भी ढीले हो जाते हैं। ऐसे मौके पर विवेक दृष्टिकी आवश्यकता रहती है। ईश्वरके नामसे ईश्वरकी शक्तिसे हम जो हो सकता है वह करें।

ये समज में आया? यदि नहिं तो मुझे दुबारा पूछो।

ज्यादा लिखनेका समय नहिं है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६९३) से।

१४३. पत्र : रैहाना तैयबजीको

२ दिसम्बर, १९३२

प्यारी बेटी रैहाना,

बहुत दिनोंके बाद तुम्हारा खत देखकर बहुत खुशी हुई। अब्बाजानने मुझे खबर दी थी कि तुम अहमदाबाद गई थी। खुशी और रंज हम दोनोंके लिए एक ही चीज होनी चाहिए। मानो बीमारी भी खुदाकी तरफसे एक नियामत है। मैंने डाक्टर आलमको[2] लिखा कि मुझे उर्दूमें खत लिखनेवाली तीन हैं। एक जोहरा, दूसरी बेगम आलम और तीसरी रैहाना। उनमें से पहली दोनों कापर प्लेट-सी उर्दू

१. हेमप्रभादेवी हरिजनोंके बीच कार्य कर रही थीं।

२. देखिए पृष्ठ ७७-८।

लिखती हैं लेकिन रैहाना क्योंकि कवि है इसलिए खूबसूरत हरफमें ही लिखती है। मैं देखता हूँ कि इस वक्त तुमने भी कापर प्लेट भेजे हैं।

अब मेरी कवि बेटी मिट गई क्या? क्या कवि भी होना और कापर प्लेट लिखना तो रवीन्द्रनाथ ही बन सकते हैं? क्या अब रैहाना भी ऐसा ही करेगी? खुदा तुमको शान्ति देवे।

बापूकी बहुत दुआ

बीबी रैहाना
मार्फत डी० डी० नानावती, महोदय, आई० सी० एस०
पूना

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६५) से।

१४४. भेंट : दलित वर्गोंके नेताओंको[1]

[२ दिसम्बर, १९३२][2]

श्री गांधीने उनका हार्दिक स्वागत किया। उन लोगोंने श्री गांधीको बताया कि मन्दिर-प्रवेशका आन्दोलन बड़ी धीमी गतिसे चल रहा है, और अहमदाबादमें अब तक केवल दो ही मन्दिर उनके लिए खोले जा सके हैं। श्री गांधीने स्वीकार किया कि वे यह बात जानते हैं और सलाह दी कि उन लोगोंको यह देखना चाहिए कि स्थानीय अस्पृश्यता-विरोधी संघ इस मामलेमें क्या कर सकता है। श्री गांधीने यह भी कहा कि जो भी हो मैं मन्दिर-प्रवेशको अस्पृश्यता-निवारणके लिए अनिवार्य मानता हूँ, और इसलिए इसी उद्देश्यके लिए प्रयत्नशील हूँ।

अन्तमें भेंटकर्ताओंने श्री गांधीसे हिन्दी पत्रिका 'विजय' के लिए, जो उन्होंने तभी निकालनी शुरू की थी, दलित वर्गोंके उत्थानपर लेख देनेकी प्रार्थना की। श्री गांधीने बताया कि उस पत्रिकाकी प्रति उन्हें मिल रही है और उसके लिए लेख देनेका वायदा किया।

भेंटकर्त्ताओंमें से एकने भेंटके दौरान ही श्री गांधीका एक रेखाचित्र बनाया और श्री गांधीसे उसपर हस्ताक्षर करनेको कहा। श्री गांधीने वैसा करनेसे यह कहकर इनकार कर दिया कि यह जेलके नियमोंके विरुद्ध है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१२-१९३२

१. कीकाभाई, दूधाभाई, लावजीभाई तथा तीन अन्य व्यक्ति।
२. "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तारीखकी प्रविष्टिसे।

१४५. तार : माधवन नायरको[1]

[३ दिसम्बर, १९३२][2]

आपका तार मिला। ईश्वर करे सत्य प्रकट हो।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-१२-१९३२

१४६. पत्र: ई० ई० डॉयलको

३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

आज सुवह लगभग ७-१५ पर मेजर मेहताने मुझे निम्नलिखित सन्देश दिया:

> **श्री गांधीजी यदि चाहें तो उन्हें अपना मैला साफ करनेका काम करने दिया जा सकता है। लेकिन उन्हें सूचित कर देना चाहिए कि सरकार कैदी अप्पासाहव पटवर्धनकी तरफसे उनकी मध्यस्थता स्वीकार नहीं कर सकती।**

मुझे लगता है कि सरकारने स्थितिको सही रूपमें नहीं समझा है। मुझे अपना मैला साफ करनेकी इजाजत देना कोई महत्वकी वात नहीं है। अप्पासाहव पटवर्धनके लिए राहत ही मुख्य और केन्द्रीय सवाल है। जैसा कि आपको पत्र[3] में लिखा था, मेरा उपवास आज सुवह शुरू हो गया है और तवतक चलेगा जवतक कि अप्पासाहव पटवर्धन और उनके साथियोंको राहत नहीं दे दी जायेगी। यह वात समझ लेनी चाहिए कि उन्होंने अपना मैला साफ करनेकी इजाजत नहीं माँगी है, वल्कि जो वरावर सफाईका काम करते हैं उनमें शामिल होनेकी इजाजत माँगी है, और ऐसा उन्होंने एक पवित्र सिद्धान्तको लेकर किया है। सरकारको यह भी मालूम होना चाहिए कि केवल भंगियोंको ही यह काम नहीं दिया जाता है, वल्कि अन्य लोग भी, जो नीची जातिके वताये जाते हैं, इस कामको करनेके लिए मजवूर किये जाते हैं, यद्यपि जेलके वाहर उन्होंने यह काम कभी नहीं किया है। अप्पासाहव पटवर्धन

१. उनके तारके जवावमें जिसमें यह सूचना थी कि गुरुवायुरमें एक सम्मेलनके साथ जिसका उद्घाटन श्रीमती कस्तूरबा गांधीने किया, आन्दोलन शुरू कर दिया गया है, और गांधीजी का आशीर्वाद माँगा गया था।

२. "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तारीखकी प्रविष्टिसे।

३. देखिए पृष्ठ १००-१।

जैसे सुधारक, जो १९३० में रत्नगिरिमें सविनय अवज्ञा करनेवाले कैदी थे, गैर-भंगी कैदियोंका यह कष्ट बर्दाश्त नहीं कर सके कि उन्हें उनकी इच्छाके विरुद्ध यह काम करनेको मजबूर किया जा रहा था, और उन्होंने अधिकारियोंसे निवेदन किया कि उन्हें व उनके साथियोंको ऐसे कैदियोंकी जगह काम करनेकी इजाजत दी जाये। मेरी रायमें यह एक प्रशंसनीय सुझाव था, जिसे अधिकारियोंको यदि सधन्यवाद नहीं तो खुशी-खुशी स्वीकार कर लेना चाहिए था। यह सरकारको मदद देनेके लिए स्वेच्छासे रखा गया सुझाव था। इसी बीच दिल्लीका समझौता[1] हो गया। वही सुझाव इस बार फिर दोहराया गया और इन कैदियोंको वह काम करनेकी इजाजत दे दी गई। लगता है कि अचानक उस कामके निषेधके हुक्म भेज दिये गये हैं। इसीलिए अप्पा-साहब पटवर्धनने खुराक कम कर दी है। मुझे जैसे ही इस दु:खद बातका पता लगा, मैंने राहतके लिए कोशिश की।

मेरी विनम्र और सहायतापूर्ण मध्यस्थताको ठुकराकर, लगता है, सरकारने वह नीति ही बदल दी है जो वह मेरे सम्बन्धमें १९२२-२३ से ही अपनाती रही है। १९२२ में अपने पहले कारावासमें एक कैदीकी हैसियतसे जब मैंने भूख-हड़ताल कर रहे दो कैदियोंकी तरफसे बीचमें पड़ना चाहा, तो पहले तो उसपर रोष प्रकट किया गया, पर फिर पुनर्विचार करनेपर सरकारने मेरी बात स्वीकार कर ली[2]। पुलिसके तत्कालीन इंस्पैक्टर-जनरलने, जिन्हें कि महामहिम सर जॉर्ज लॉयडने मेरे साथ बात-चीत करनेके लिए नियुक्त किया था, और इस जेलके सुपरिंटेंडेंटने उस मध्यस्थताके सुखद परिणामके लिए मुझे धन्यवाद दिया था। मेरे विनम्र प्रयत्नके परिणाम-स्वरूप दो मूल्यवान जीवन बच गये थे और सरकारने एक लाभप्रद परिपत्र जारी किया था। १९३० में उसी तरहकी परिस्थितियोंमें नये सुपरिंटेंडेंटने, जो अभी बताये गये १९२२-२३ के इस मामलेके बारेमें बहुत कम या शायद कुछ भी नहीं जानते थे, मेरे सुझावको नापसन्द किया, लेकिन बादमें उसे आपने स्वयं स्वीकार किया और उसका परिणाम फिर सुखद रहा। तबसे यह रिवाज ही बन गया कि मुझे साथी कैदियोंसे मिलनेकी इजाजत इसी सुनिश्चित उद्देश्यसे दे दी जाती है कि मैं उनके और प्रशासनके बीच मध्यस्थका कार्य कर सकूँ। वह रिवाज अबतक चलता रहा है और मैं समझता हूँ उसका परिणाम कभी बुरा नहीं रहा है। मुझे आशा है कि सम्बद्ध अधिकारी इस बातको प्रमाणित करेंगे कि हर बार जब भी मैं बीचमें पड़ा, मैंने वह काम मदद करनेके ढँगसे ही किया। इसलिए सरकारका बिना किसी प्रकट कारणके इस नीतिको उलट देना, और वह भी तब जब कि मैं बहुत ही अनिच्छासे उपवास करनेको बाध्य हुआ हूँ, मेरे लिए समझ पाना कठिन है। जबतक मेरे मित्रोंको राहत नहीं दे दी जाती और मध्यस्थताका मानवीय अधिकार, जिसे सरकार अबतक स्वीकार करती रही है, मुझे फिरसे वापस नहीं मिल जाता, तबतक मुझे उपवास खेदपूर्वक जारी रखना होगा।

१. १९३१ का गांधी-इर्विन समझौता; देखिए खण्ड ४५।
२. देखिए खण्ड २३, पृष्ठ १८१-४।

एक बात और मैं कहना चाहूँगा। अस्पृश्यताके सम्बन्धमें मैं अनेक मित्रोंसे, जो मुझसे मिलने आते हैं, रोज गम्भीर बातचीतकर रहा हूँ। अभी इस वक्त मुझपर दबाव सामान्यसे ज्यादा है, क्योंकि अस्पृश्यता-विरोधी संघके सदस्य पूनामें हैं। मुलाकाती उस शारीरिक दुर्बलताको जरूर देखेंगे जो आज ही मुझे दबा सकती है और वे उसका कारण भी पूछेंगे ही। मैं सचाईको उनसे छिपा नहीं सकूँगा। फिर भी मेरी कतई इच्छा नहीं है कि वे सरकार और मेरे बीचकी इस दुर्भाग्यपूर्ण घटनाके बारेमें कुछ जानें, क्योंकि मैं आशा कर रहा हूँ कि सरकार मेरी माँगका नितान्त औचित्य स्वीकार कर लेगी।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, पोलिटिकल, फाइल नं० ३१/१०८-पोल, १९३२, पृ० ४०-४२; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

१४७. पत्र : जी० एन० कानिटकरको[1]

३ दिसम्बर, १९३२

आप लिखते हैं कि हरिजनोंको मन्दिरोंमें इसलिए जाने देना चाहिए कि शास्त्रोंका उल्लंघन तो सभीने किया है। यह अनैतिक विचार है। यदि हमने ९९ मामलोंमें शास्त्रोंका उल्लंघन किया है तो यह इस बातका कारण नहीं है कि सौवें मामलेमें भी उनका उल्लंघन किया जाये। यह सुधार नहीं हुआ, बल्कि बिगाड़ हुआ। मेरा मुद्दा तो यह है कि हरिजनोंको मन्दिरोंमें जानेसे रोकना अन्याय है और धर्म-विरुद्ध है। धर्मकी प्रगतिके लिए यह एक धार्मिक आन्दोलन है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३०२

१. यह कानिटकरके जिस पत्रके जवाबमें था वह इस प्रकार था: "शास्त्रियोंने बहुधा शास्त्रोंका उल्लंघन किया है। फिर इस मामलेमें ही उन्हें शास्त्रोंके वचनोंपर क्यों अड़ना चाहिए?"

१४८. पत्र : मणिबहन पटेलको[1]

३ दिसम्बर, १९३२

हमने धर्मके बारेमें जो-कुछ सीखा है, उसकी कसौटी तो ऐसे ही समय होती है। पढ़ा और सोचा हुआ किसी काम न आये, तो जान लेना चाहिए कि हम कुछ भी नहीं सीख पाये। वकील-डाक्टर खूब पढ़ें और पाण्डित्य बघारें, मगर एक भी मामला हाथमें न ले सकें, तो वे कहने-भरके ही वकील-डाक्टर हैं। इसी तरह यदि कोई बड़े धर्म-धुरन्धर हों, मगर उनका धर्म सिर्फ पुस्तकोंमें और दिमागमें ही चक्कर काटता रहे, तो वे कहनेके ही धर्म-पण्डित हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३०२

१४९. भेंट : 'फ्री प्रेस' के प्रतिनिधिको

[३ दिसम्बर, १९३२][2]

मैंने यह कभी नहीं कहा कि मैं अपनी सारी शक्ति सेवा [हरिजन-उद्धार] पर केन्द्रित नहीं करूँगा। परन्तु मैं अपनेको कोई और काम न करनेके लिए पहलेसे प्रतिबद्ध नहीं कर सकता। परिस्थितियाँ मुझे ऐसे काम करनेके लिए बाध्य कर सकती हैं जिन्हें न करना मेरे लिए पाप होगा।

इस प्रश्नके उत्तरमें कि अस्पृश्यता-निवारण प्रचार, जिसे वे अब जेलके अन्दरसे कर रहे हैं, उन्हें बाहरसे क्यों नहीं करना चाहिए, उन्होंने कहा :

मैं अब अपनी सारी शक्ति हरिजनोंपर केन्द्रित करनेके सिवा और कुछ नहीं कर रहा हूँ।

प्र० : आप चूँकि उपवासको बहुत महत्त्व देते हैं, इसलिए क्या आप औरोंको भी इन्हीं तरीकोंसे आन्दोलन चलानेकी सलाह देंगे?

उ० : उपवास एक बहुत ही विशिष्ट तरीका है और कोई भी, जबतक उसे वैसा करनेका निश्चित आह्वान न मिले, उपवास नहीं कर सकता। इसलिए नकलके लिए कोई उपवास नहीं होना चाहिए, और मैं यह कहनेकी धृष्टता करूँगा कि यदि कोई अस्पृश्यताके सिलसिलेमें सहानुभूतिमें उपवास करना चाहता है, तो उसे मुझे

१. महादेव देसाईने "मणि" का उल्लेख एक वचनमें किया है जिससे अनुमान है कि यह पत्र मणिबहन पटेलके नाम लिखा गया था; उस समय उनकी आयु उस तरह उल्लेख करने लायक थी।

२. "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तारीखकी प्रविष्टिसे।

सूचित करना चाहिए और वैसा करनेसे पहले मेरी स्वीकृति लेनी चाहिए। परन्तु मैं यह कह सकता हूँ कि अकेले गुरुवायुरके प्रश्नपर केलप्पन और मेरे सिवा और किसीको उपवास नहीं करना चाहिए। लेकिन हर कोई और सैकड़ों तरीकोंसे, जो सबके लिए खुले हैं चूँकि सेवाके तरीके बहुत तरहके हैं, इस आन्दोलनको जारी रख सकता है और रखना चाहिए।

प्र० : अपने-आपको हरिजनोंके लिए समर्पित कर देनेसे क्या आपका जीवन अब उन्हींका नहीं हो गया है?

उ० : यह कहना कि मेरा जीवन हरिजनोंका है केवल अर्धसत्य है। पूर्ण सत्य यह है कि मेरा जीवन ईश्वरका है और इसलिए वह हरिजनोंका है और इस दृष्टिसे पूरी सृष्टिका है। ईश्वर ही मुझे जीवित रख सकता है या इस दुनियासे उठा सकता है।

यह पूछनेपर कि जब वे अस्पृश्यताकी लड़ाई लड़ रहे हैं, तो क्या उन्हें अन्य प्रश्नोंपर उपवास करके अपनी शक्ति बरबाद करनी चाहिए, महात्माजीने कहा :

यह भी उसी दिशामें है। इसलिए शक्तिको बरबाद करनेका कोई प्रश्न नहीं है।

प्र० : इस आन्दोलनको छेड़े[1] अब एक साल होनेवाला है। हमारा अगला कदम क्या होना चाहिए? नये वर्षके लिए क्या आप कोई सन्देश देंगे?

उ० : मुझे जो अनुमति मिली हुई है यह प्रश्न उसके क्षेत्रसे बाहरका है।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-१२-१९३२

१५०. वक्तव्य : उपवासपर अस्पृश्यता-निवारण संघके समक्ष[3]

४ दिसम्बर, १९३२

उपवासके मूल कारणके बारेमें और सरकार व मेरे बीच जो घटनाएँ घटीं, उनके बारेमें मुझे जो कहना हो वह कहनेकी इजाजत यद्यपि इन्स्पैक्टर-जनरलने मुझे दे दी है, फिर भी उनकी दी हुई इस छूटका पूरा फायदा उठानेकी मेरी इच्छा नहीं है। जो-कुछ हुआ है उसका सार ही आपको सुना दूंगा, ताकि आपकी बेचैनी मिटे और मेरी स्थितिके बारेमें गलतफहमी पैदा न हो।

आप यह जानकर खुश होंगे कि कल मैंने जो उपवास शुरू किया था, वह अभी यहाँ आनेसे पहले ही छोड़ा है। मेरी स्थिति असाधारण है। हालाँकि मैंने अपना

१. संकेत सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दोबारा शुरू किये जानेसे है। देखिए खण्ड ४३।

२. देखिए परिशिष्ट २ भी।

३. संघके सदस्य गांधीजीसे एक बजे मिले। वे बिस्तरमें लेटे थे और धीमी आवाजमें बोल रहे थे।

हृदय कड़ा कर लिया है, तो भी कुछ ऐसी बातें हैं जिनका मेरे हृदयपर बहुत ही तीव्र असर होता है। महत्वके मामलोंके बारेमें मेरे मनमें तारतम्य नहीं है; और जितनी शक्ति मुझमें बड़े कामके लिए प्राण दे देनेकी है, उतनी ही शक्ति साथीके जीवनके लिए भी प्राण दे देनेकी है।

तो इस मामलेमें मेरे सामने सवाल यह था कि मैं अपने एक प्रिय साथीको मरने देकर लापरवाहीसे जीऊँ, या उसकी जिन्दगी बचानेकी कोशिशमें अपनी जान जोखिममें डालूँ? अप्पासाहब पटवर्धन, जो रत्नगिरि जेलमें कैदी हैं, मेरे प्रिय साथी हैं। मैं जानता हूँ कि अप्पासाहब शुद्ध कुन्दन हैं, सौ फीसदी सत्यनिष्ठ हैं। जेलके नियमोंसे गुजरकर मेरे पास खबर आई कि अप्पासाहबको हरिजनोंकी जो सेवा करनी थी, वह उन्हें नहीं करने दी गई, इसलिए उन्होंने कम-से-कम — शरीरमें प्राण टिके रहें उतनी ही — खुराक लेनी शुरू की है। मैंने सरकारको, यथासम्भव अधिक-से-अधिक सौम्य भाषामें लिखा[1] कि अगर अप्पासाहबको राहत न दी गई, तो जो वेदना और यंत्रणा वे भोग रहे हैं वही मुझे भी भोगनी पड़ेगी। मैंने कहा कि मुझे उपवास करना पड़ेगा। मैं अगर उन्हें छोड़ सकता हूँ, तो हरिजनोंको भी छोड़ सकता हूँ। और जो आदमी अपने साथियोंको छोड़ देता है, उसका अधिक मूल्य नहीं है। मुझे थोड़े समयका नोटिस देना पड़ा, क्योंकि मेरे पास दूसरा रास्ता नहीं था।

यद्यपि मैं जानता हूँ कि अप्पासाहब वज्र हृदयवाले आदमी हैं, फिर भी अति अल्पाहार करनेवालेको जो वेदना भोगनी पड़ती है उसकी मुझे कल्पना थी। इसलिए मेरे पास थोड़े समयका नोटिस देनेके सिवाय कोई उपाय न था। मुझे यह कहते हुए आनन्द होता है कि ऐसे हालात पैदा हो गये कि मैं अपना उपवास तोड़ सका, फिर भी इसका अर्थ यह नहीं है कि इस प्रकरणका अन्त हो गया है। जेलोंके इन्स्पैक्टर-जनरल, जो यहाँ थे, सरकारके साथ सलाह-मशविरा कर रहे हैं और बुधवारको सुबह या उससे पहले सरकारका निर्णय मिल जानेकी आशा रखते हैं। इस निर्णयके आनेतक मैंने अपना उपवास स्थगित कर दिया है। मगर आशा है कि मुझे वह दुबारा नहीं करना पड़ेगा। जहाँतक मेरे शारीरिक स्वास्थ्यका सम्बन्ध है, मैं कहूँगा कि मेरी जैसी सँभाल यहाँ रखी जाती है, उससे अच्छी कहीं नहीं रखी जा सकती। और कोई यह न समझे कि सरकारको मेरी जिन्दगीकी जरा भी परवाह नहीं है, या वह मुझे जेलमें मरा देखना चाहती है। मुझे छोड़ना ही हो, तो सरकार ईमानदारीसे मुझे मेरी उम्रके लिहाजसे पूरी तन्दुरुस्तीके साथ छूटा हुआ देखना चाहती है। प्रस्तुत मामलेमें मैंने बहुत छोटी-सी माँग की थी, परन्तु सरकारको शायद ऐसा लगा कि वह बहुत ज्यादा थी। मगर मेरा खयाल है कि अब वह इस नाजुक स्थितिको समझ जायेगी और माँगी हुई राहत दे देगी।[2] उपवासके सम्बन्धमें दूसरी बातें भी हैं, परन्तु उनमें पड़ना मुझे पसन्द नहीं है। सरकारके और मेरे

१. देखिए "पत्र: ई० ई० डोयलको", ३०-११-१९३२।

२. इससे आगेका अंश महादेव देसाईका है।

बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है, वह सरकार छाप दे तो बहुत ही अच्छा हो। मगर यह बात मैं उसीपर छोड़ता हूँ।

मुझे आशा है कि मैंने आपसे जो कहा उससे आपको विश्वास हो जायेगा कि मैंने मूर्खता, उतावली या नासमझीसे कदम नहीं उठाया। आप मुझे जानते हैं, इसलिए ऐसा मौका फिर आ जाये, तो आप चाहेंगे कि मैं इसी तरहका आचरण करूँ। अपने मामलेमें मैं कहूँगा कि ऐसे प्रसंगपर मुझसे जो-कुछ हो सके, वह सब अगर मैं न करूँ, तो मेरी नजरमें अपनी सारी कीमत गिर जायेगी और मैं अपनेको पामर प्राणी मानूँगा। मेरे-जैसे आदमीके लिए, जिसे हिंसा नहीं करनी है और जिसने मन, वचन और कर्मसे अहिंसक रहनेकी प्रतिज्ञा की हुई है, आखिरी सहारा आत्म-बलिदानका ही है। मेरे-जैसे अल्प मनुष्यको ईश्वरने जो बुद्धि दी है उसके अनुसार जब कड़ा प्रसंग आये, तब उसके लिए प्राणोंकी बाजी लगा देना ही मेरा बड़े-से-बड़ा शस्त्र है। इस तरह मेरा जीवन उपवासके अनेक प्रसंगोंपर आधारित है। यह प्रार्थनाका सबसे उत्कट रूप है। दुनियाके सामने तो यह हाल ही में आया है, परन्तु मेरे पास तो यह बहुत वर्षोंसे है। यह विचारहीन कर्म नहीं है। इसमें किसीपर बलात्कार नहीं है। यह व्यक्तियोंपर और सरकारपर दबाव जरूर डालता है; परन्तु वह आत्मत्यागके स्वाभाविक और नैतिक परिणामसे अधिक और कुछ नहीं है। यह सोई हुई आत्माको झंझोड़कर जगाता है और प्रेमी हृदयोंको कार्यमें प्रवृत्त करता है। जिन्हें मनुष्य, समाजकी स्थिति और वातावरणमें मौलिक परिवर्तन कराना हो, उनका काम समाजमें क्षोभ पैदा किये बिना नहीं चलता। ऐसा करनेके दो ही रास्ते हैं — हिंसा और अहिंसा। हिंसाका दबाव शरीरको लगता है, और उससे करने और भोगनेवाले दोनोंका पतन होता है। परन्तु उपवास द्वारा खुद कष्ट उठाकर डाले गये अहिंसक दबावका असर बिलकुल दूसरी तरहका होता है। जिसके खिलाफ वह किया जाता है, उसके शरीरको तो वह छूता ही नहीं, परन्तु उसकी नैतिक शक्तिको स्पर्श करके उसे सबल बनाता है।

मेरा खयाल है कि अभी इतना काफी होगा। कौन जाने मुझे कितने उपवास करने होंगे और घुल-घुलकर मरना होगा। परन्तु ऐसा हो तो मैं चाहता हूँ कि आप मेरे कामके लिए गर्वित हों और यह न मानें कि यह जड़ मनुष्यका कार्य था। मेरे जीवनपर बहुत-कुछ बुद्धिका राज्य चलता है, और जब बुद्धि बेकार साबित होती है, तब उसपर बुद्धिसे बड़ी शक्तिका — श्रद्धाका शासन चलता है।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, ५-१२-१९३२। महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४७०-१

१५१. तार : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

४ दिसम्बर, १९३२

ब्रजकृष्ण
द्वारा मोहुर
दिल्ली

उपवास तोड़ दिया है। चिन्ताका कोई कारण नहीं है। वक्तव्य[१] देखिए।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३९५) से।

१५२. पत्र : ई० ई० डॉयलको

४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

मैं यह पत्र मौन धारण करनेके बाद लिख रहा हूँ।

मैंने स्थितिको जैसा समझा है वैसा लिख देना बेहतर है।

उपवास बुधवारकी सुबह तकके लिए मुल्तवी है, ताकि सरकारको अन्तिम निर्णयपर पहुँचनेका समय मिल जाये।

यदि सरकार अप्पासाहब पटवर्धन और उनके साथियोंको उन लोगोंके साथ जो बराबर सफाईका काम करते हैं, मैला साफ करनेकी इजाजत दे देगी, तो उपवास फिरसे शुरू नहीं किया जायेगा। यदि यह इजाजत उसी वार्डमें इस तरहकी सेवा करनेतक सीमित हो जिसमें कि वे हैं, तो भी काफी समझी जायेगी।

स्वयंसेवकोंको ऐसी इजाजत देनेका बड़ा सवाल भी जितनी जल्दी हो सके हल करना है।

आज उपवास भंग कर मैं साथी कैदियोंकी ओरसे मध्यस्थताका मानवीय अधिकार छोड़ नहीं रहा हूँ। सरकारने मेरी मददको बीचमें दखल देना[२] कहा है। मैं ऐसा नहीं मानता। मेरी पहलेकी मध्यस्थता सदा सहायक रही है, जैसा कि, मैं समझता हूँ, मेजर जोन्स, मार्टिन, भण्डारी और शायद आप भी प्रमाणित कर सकते हैं।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए "पत्र : ई० ई० डॉयलको", पृष्ठ ११५-७।

मैं इसके साथ एक पत्र अप्पासाहब पटवर्धनको भेजनेके लिए रख रहा हूँ। मैं यह जाननेको बहुत उत्सुक हूँ कि वे कैसे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्मेंट, पोलिटिकल, फाइल नं० ३१/१०८-पोल, पृ० २१, १९३२; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (६), पृ० १२१ भी

१५३. पत्र : ई० ई० डॉयलको

४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

आपकी टिप्पणी[1] के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

सुबहकी बातचीतमें मैंने यह जरूर कहा था कि तथाकथित छोटी जातिके कैदियोंको काममें लगानेकी मौजूदा रीति एकाएक नहीं बदली जा सकती और इसी-लिए यह और भी जरूरी है कि सच्चे स्वयंसेवक जब भी सफाईके कामके लिए अपनेको स्वतः अर्पित करें, उन्हें प्रोत्साहन दिया जाये। मैं यह भी मानता हूँ कि जबतक ऊँच-नीचका भेद नहीं मिट जाता, तबतक यह प्रयोग केवल खूब सतर्कतासे ही किया जा सकता है।

जब मैं उपवास पर वक्तव्य[2] दे चुका, तो संघने अस्पृश्यतापर विचार-विमर्श से मुझे मुक्त कर दिया।

अप्पासाहबको पत्र भेज देनेके लिए धन्यवाद।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, पोलिटिकल, फाइल नं. ३१/१०८-पोल, पृ० २३, १९३२; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं. ८०० (४०) (६), पृ० १२५ भी

१. देखिए परिशिष्ट ३।
२. देखिए पृष्ठ ११९-२१।

१५४. पत्र : मणिलाल गांधीको

४ दिसम्बर, १९३२

चि० मणिलाल,

प्रागजीका पत्र साथमें है। मेरे छोटे-से उपवाससे घबराये तो नहीं होंगे। मेरे उपवास तो अब रोजकी बात हो गये हैं, इसलिए घबरानेका कोई कारण ही नहीं है। जानेकी बात पक्की रखी होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८०२) से।

१५५. तार : मीराबहनको

५ दिसम्बर, १९३२

मीराबाई,
कैदी, आर्थर रोड जेल
बम्बई

ईश्वर ही हमारा एकमात्र सहारा है। उपवास शनिवारको शुरू हुआ, कल टूट गया। सुबह दूध लिया। कुछ भी चिन्ता न करना।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२५४) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७२० से भी।

१५६. तार : नारणदास गांधीको

५ दिसम्बर, १९३२

नारणदास
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

ठीक हूँ। कल केवल फल लिये। आज दूध। महावीरको और रकम मत देना।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२७५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१५७. पत्र : नारणदास गांधीको

[४]/५ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

मेरी मुख्य डाक शुक्रवार तक नहीं मिली, यह आश्चर्यकी बात है। पता लगाऊँगा।

लगता है, छाराओंसे[1] होनेवाली परेशानी बढ़ती जा रही है। तुम्हें कोई उपाय खोजना चाहिए। क्या मावलंकर कुछ नहीं सुझाते? कलेक्टरको लिखा जा सकता है, "हम किसीको सजा दिलानेके लिए कदम नहीं उठा सकते, किन्तु जिनका धन्धा चोरी करना है, उन्हें आश्रमके पास बसा देनेकी नीति कहाँतक योग्य कही जा सकती है, इसपर विचार करनेकी प्रार्थना है।" इस आशयका पत्र मावलंकरसे मिल-कर लिखा जा सकता है, ऐसा मुझे लगता है।

केशुके ज्वरका तुरन्त उपाय करना।

राधा और कुसुमके विषयमें मुझे थोड़ा भय लग रहा है। यदि हम किसी एक डॉक्टरका इलाज करा रहे हों, और दूसरेको बुलाना आवश्यक जान पड़े, तो यह पहले डॉक्टरकी मारफत ही किया जाये। इसमें केवल विवेक नहीं है, यह आवश्यक भी है। ऐसा करनेसे नये डॉक्टरको पुराने डाक्टरके अनुभवका लाभ मिल जाता है। यदि तलवलकरको बिलकुल ही न छोड़ दिया हो, तो वह डॉ० हरिलालसे मिल जाये, ऐसा कहना।

१. मध्य गुजरातकी एक जरायम-पेशा जाति।

महावीरको लिख दो कि बापूने अब और पैसा भेजनेकी मनाही कर दी है।

सोमवार, सुबह [५ दिसम्बर, १९३२]

मेरा छोटा-सा उपवास आया भी, गया भी। डेढ़ ही दिनोंमें काफी कमजोर हो गया। काम भी बहुत किया। किन्तु सम्भव है, शक्ति जल्दी आ जाये। कोई इसकी चिन्ता न करे। मेरा उपवास रोजकी बात हो गई है, इसीलिए इसमें चिन्ताकी कोई बात नहीं बची।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१५८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

यह पत्र प्रार्थनाके बाद लिख रहा हूँ। लम्बे पत्रकी तुझे आशा नहीं रखनी चाहिए। परन्तु तुझे तो लम्बे पत्र लिखने ही चाहिए। उनमें से मुझे बहुत कुछ मिल जाता है। वह सब मुझे चाहिए।

तारादेवी[1]का क्या हाल है? क्या पंजाब जानेका विचार कर रही हैं?

अमीना जो कहे सो सुनना। सच तो यह है कि जो भी कोई अपनी बात कहे उसे सुनना चाहिए। जिम्मेदार आदमीको ऐसा करना ही पड़ता है। इस प्रकार शान्तिपूर्वक सुननेसे भी बहुत कुछ बातें निबट जाती हैं।

किसनका समाचार मिलता रहता था, पर अब उसका तबादला हो जानेसे नहीं मिलता। परन्तु वह मजेमें होगी। सुशीलाका पत्र साथमें है, उसे भेज देना।

छारा लोगोंमें तू, लक्ष्मीबहन[2] वगैरह क्यों नहीं जाती? यह सच है कि तुम्हें किसीको समय नहीं रहता। परन्तु थोड़े समयके लिए कोई काम छोड़कर भी जा सकती हो। वे लोग कितने हैं। दिन-भर क्या करते हैं?

उपवासके बारेमें नारणदासके पत्र[3]में लिखा है।

धुरन्धरका पत्र अब मुझे मिलना चाहिए। कृष्ण नायरका मेरे पास कोई पत्र नहीं आया। व्रजकृष्णको लिखकर पूछना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१३) से। सी० डब्ल्यू० ६७५२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. प्यारेलाल नैयरकी माँ।
२. पण्डित खरेकी पत्नी।
३. देखिए पिछला शीर्षक।

१५९. पत्र : मीराबहनको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० मीरा,

जो छोटा-सा उपवास शनिवारको शुरू होकर रविवारको दोपहर एक बजे खत्म हो गया, उसका तुमपर कोई असर नहीं होना चाहिए। वह महान कार्यकर्त्ता अप्पासाहबके कारण था। तुम्हें उनकी याद है? कल मैंने केवल फल लिये और आज प्रातः दूध।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२५३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७१९ से भी।

१६०. पत्र : भाऊ पानसेको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

नारणदासने खबर दी है कि ज्वर उतर गया है। अब दुबारा न हो इसका ध्यान रखना। दूध, सब्जी और फल लेना। फलोंमें काली मुनक्का भिगोकर खाना। अंजीर भी अच्छी चीज है। सूखी अंजीर खूब चबाकर खाना। तीन रतलके करीब दूध पी सको तो अच्छा है। जितना हजम हो उतना लेना। चौलाईका साग या मेथी अथवा लौकी और कद्दू अच्छे हैं।

खुराकमें थोड़े सन्तरे या मोसम्बी लेना। खर्च चाहे हो।

बापू

[पुनश्च :]

मेरा हाथ अच्छा होगा तो जरूर बुलाऊँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७४६) से। सी० डब्ल्यू० ४४८९ से भी; सौजन्य: भाऊ पानसे।

१६१. पत्र : चम्पाबहन र० मेहताको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० चम्पा,

तेरा पत्र मिला। नारणदास ट्रस्टी नहीं बनेगा। तू थोड़ा धीरज रखना। तुझे बताये बिना कुछ नहीं होगा। अभी बाड़ लगानेका काम मत कराना। उसमें खर्च बहुत हो जायेगा। सम्पत्तिका हिसाब हो जानेपर मालूम पड़ सकेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७५५)से।

१६२. पत्र : गुलाब ए० शाहको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

सुबह मिलनेवाली राब तू लेता है या नहीं? तुझे अच्छी लगती है? ज्वार कहाँ पीसी जाती है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३३)से।

१६३. पत्र : मनु गांधीको

५ दिसम्बर, १९३२

मनुड़ी,

तेरा पत्र मिला। मैंने तुझे विलायती कपड़ेके बारेमें उलाहना देनेके लिए नहीं लिखा था। तू अपना स्वास्थ्य ठीक रख और स्वस्थ रह। तुझे रोना नहीं है। मुझे नियमपूर्वक पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१६४. पत्र : मथुरादास पु० आसरको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० मथुरादास,

यदि बुनकर होशियार और ईमानदार न हो तो बहुत मदद नहीं मिलती। जितना बारीक सूत हो, यान्त्रिक जाँचकी उपयोगिता उतनी ही कम समझो। किन्तु बुनकर उसके दोष हमें बता सकता है; हम तदनुसार उसमें सुधार करते जायें।

रामजी का काम कठिन है। उसे जीतनेमें ही हमारा प्रायश्चित्त है। हमने उन लोगोंका इतना उत्पीड़न किया है कि स्वतन्त्र होनेपर वे हमारा दुगुना करें तो भी हम उसे धैर्यपूर्वक सहन करें। उसे सहते हुए मनमें स्वार्थ नहीं होना चाहिए, किसी तरहकी जबर्दस्ती नहीं होनी चाहिए। हमें काम लेना है, यह भाव हो तो वह लालच है। बापूकी इच्छा है इस कारण सहन करना तो जबर्दस्ती हुई। सहन करते समय मनमें क्रोध नहीं दया होनी चाहिए।

किन्तु यदि रामजीके साथ किसी तरह न निभे तो उससे काम लेना छोड़ दें। जो-कुछ करें सो संकोचवश या दुखी होकर न करें।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७५९) से।

१६५. पत्र : नारणदास गांधीको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारे तीन और चार तारीखके दो पत्र एकसाथ मिले हैं। तुम्हारे पत्रका अर्थ यह लगाता हूँ कि कुसुम तो जैसा डॉ० तलवलकर कहेंगे वैसा ही करेगी, पर राधा वैसा नहीं करेगी। यदि इलाज कराना हो तो लगकर करायें। प्रत्याशित लाभ तभी हो सकेगा। कुरैशी लखनऊ जा रहा है सो ठीक ही है। तुमने हसमुखरायका पत्र न भेजकर अच्छा ही किया। पार्वतीको कुछ समझा सको तो अब भी समझाकर रोकना।

रतिलालके विषयमें जो प्रयोग तुम कर रहे हो मैं उसे करनेकी हिम्मत नहीं कर सकता। इसका यह अर्थ नहीं कि तुम्हें भी वह नहीं करना है। इसका यह अर्थ अवश्य हो सकता है कि तुममें प्रेमकी मात्रा मुझसे ज्यादा है। और इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। शिक्षककी खरी कसौटी अपने शिष्यको अपनेसे ज्यादा

बड़ा बनानेमें है। इस तरह शिक्षकके पास जो-कुछ भी हो सो सभी उसे शिष्यको दे डालना चाहिए। किन्तु यदि शिष्यको वह सब प्राप्त करनेमें बहुत कष्ट उठाना पड़े तो उसकी विद्या अथवा कला सीमित रहेगी। किन्तु शिष्यमें पर्याप्त स्वाभाविक योग्यता हो तो शिक्षककी दी हुई शिक्षा उसमें बहुत विकसित हो उठती है। इसलिए मैंने जो लिखा है वह कोरी प्रशंसा नहीं है। वह मेरी हार्दिक इच्छाको ही व्यक्त करता है। यह मेरा पुराना स्वभाव है। जो-कुछ मुझे आता है यदि मैं किसीको वह सिखाने बैठता हूँ तो मनमें यही इच्छा होती है कि वह मुझसे प्राप्त शिक्षणकी शोभा और भी बढ़ाये। कुछ छोटी-छोटी बातोंमें ऐसा हुआ भी है।

लगता है प्रेमा अपने-आपको धोखा दे रही है। अपनी शक्तिसे बढ़कर काम करके बीमार पड़ जाती है। पिछले पत्रमें लिखा था कि कमरमें अब दर्द बिलकुल नहीं है और उसे विश्वास है कि अब फिर नहीं होगा। उसे उचित इलाज तुरन्त करा लेना चाहिए। गलेका ऑपरेशन करवाना ही जरूरी हो तो फौरन करवा डालो।

भाई छगनलाल हैदराबादमें है। वहाँसे उसे दो-तीन दिनमें मेरे पास पहुँच जाना चाहिए।

'फ्लावर्स ऑफ सेंट फ्रांसिस' मुझे नहीं मिली। तुम्हारे पास हो तो भी मुझे भेजनेकी जरूरत नहीं है। दूसरी प्रति मिल गई है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१६६. पत्र: आश्रमके बच्चोंको

५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय बालको और बालिकाओ,

मेरे उपवाससे तुम्हें प्रसन्न होना है, घबराना नहीं है। बिना सोचे, बिना किसी कारणके बोलें ही नहीं, तो गप्पें मार ही कैसे सकते हैं? इसका यह अर्थ हुआ कि खाते हुए या काम करते हुए कामकी दृष्टिसे ही बोलें, वह भी धीरेसे। बहुत ऊँचे स्वरमें बात करना नासमझी है। सबको तकलीपर पूरा अधिकार कर लेना चाहिए। यह सब जान लो कि भाऊकी कला बहुत उपयोगी है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१६७. पत्र : राधा गांधीको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० राधिका,

तुझे क्या लिखूं? अपनेको ईश्वरकी शरणमें डालकर रहो।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६९०) से; सौजन्य : राधाबहन चौधरी।

१६८. पत्र : सुलोचना ए० शाहको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० सुलोचना,

तेरा काम ठीक चलता दिखता है। मनको पवित्र बनानेके लिए सेवा-कार्यमें मन लगा और रामनाम जपती रह।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४८) से।

१६९. पत्र : बबलभाई मेहताको

५ दिसम्बर, १९३२

चि० बबल,

तुमने मुझे खबर भेजकर ठीक किया। मैंने नानासाहबसे इस मामलेमें हस्तक्षेप करनेका अनुरोध किया है। मुझे पत्र लिखते रहना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४४५) से।

१७०. पत्र : अमतुस्सलामको

५ दिसम्बर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

जितना खुदा करने दे उससे खुश रहो। दूसरे ठंडीसे तड़फड़ें [तड़पें] और हम गर्म कपड़ा पहनें वह अच्छा नहीं जंचता। लेकिन हमको जरूरी कपड़ा पहननेका हक है, अगर है तो[1]। दूसरोंके लिए पैदा करनेकी कोशिश करें। देनेवाला तो खुदा है। सब बातकी फिकर छोड़ो।

बापूकी दुआ

उर्दकी फोटो-नकल (जी० एन० २६६) से।

१७१. पत्र : रैहाना तैयबजीको

५ दिसम्बर, १९३२

प्यारी बेटी रैहाना,

तुम्हारा कार्ड मिला। पूना आ गई सो तो बहुत अच्छा हुआ। तुम्हारी सेहत दुरुस्त हो जानी चाहिए। दिल चाहे तब आ सकती है। जजकी लड़की आना चाहे तो आवे। जिन दिन आना है, मुझे पता दे दो। एक बजेके नजदीक आना। इतवार छोड़ देना। अब्बाजानका खत मुझे मिला था। तुम्हारा अगला खत मिला था। मैंने जवाब भी भेजा था।[2]

दायाँ हाथ दुखता है इस कारण बायेंसे लिखता हूँ इसीलिए उर्दूके अक्षर बहुत खराब लिखे गये हैं। जल्दी आना।[3]

बापूके आशीर्वाद

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६४) से।

१. बहन अमतुस्सलाम वाडज गांवके हरिजन बच्चोंकी सेवा करती थीं। उनके पास कपड़े नहीं थे, इसलिए खुद गरम कपड़े पहनकर उनकी सेवा करना चुभता था। इसी बारेमें बापूने लिखा है।

२. देखिए पृष्ठ ११३-४।

३. ये दो पंक्तियाँ गुजरातीमें हैं।

१७२. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

५ दिसम्बर, १९३२

मेरा भविष्य ईश्वरके हाथमें है।

मुझे जब वार्डमें ले जाया गया, तब गांधीजी चारपाईपर आराम कर रहे थे। एक मुलाकाती महिला, जो मुझसे १० मिनट पहले जेलमें घुसी थी, गांधीजीके पास बैठी थी और एकतरफा बातचीत कर रही थी, क्योंकि गांधीजीका मौन-दिवस अभी समाप्त नहीं हुआ था। महात्माजीके सचिव श्री महादेव देसाई पत्र-व्यवहार देखनेमें व्यस्त थे। ठीक दो बजे महात्माजीने अपना मौन तोड़ा।

महात्माजीने गुरुवायुरमें हो रहे मतसंग्रहका उल्लेख करते हुए कहा कि उन्हें खुशी है कि यह काम बिलकुल ठीक ढंगसे किया जा रहा है। मत-पत्रके पीछे निर्देश छपे हैं और हर गृहस्थको पूरी स्थिति साफ समझाई जाती है।[1]

कानूनी कठिनाइयों[2] का उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा कि उन कठिनाइयोंका अध्ययन करना उनका काम नहीं है। कानून जाननेवाले मित्रोंसे निर्देश लेनेको वे तैयार हैं। महात्माजीने इस बातपर जोर दिया कि हर कठिनाईका सामना करना ही होगा। 'हिन्दू' में प्रकाशित डॉ० सुब्बारायनके विधेयक[3] से वे सन्तुष्ट थे। उनसे पूछा गया कि क्या वे यह देखते हुए कि उस दिशामें प्रयत्न किये जा रहे हैं, अपना उपवास अब मुल्तवी करेंगे। गांधीजी ने कहा कि यदि मतसंग्रह उनके हकमें रहा, और कानूनी कठिनाइयाँ दूर करनेका प्रयत्न २ जनवरीसे पूर्व होने लगता है तो उपवास मुल्तवी करना लाजमी होगा। लेकिन यदि डॉ० सुब्बारायनको विधेयक पेश करनेकी अनुमति न मिली, तो २ जनवरीको उपवास शुरू हो जायेगा।

समाचारपत्रोंमें दिये गये इस सुझावपर कि गुरुवायुरके सिलसिलेमें गाँधीजी को उपवास करनेसे रोकनेका सबसे ज्यादा निश्चित तरीका मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध मत देना है, महात्माजीने कहा :

१. "टाइम्स ऑफ इंडिया", ७-१२-१९३२ में रिपोर्ट थी : "लगभग ३०० स्वयंसेवक बाकायदा लोगोंके घर जाकर तीन तरहके आँकड़े इकट्ठे कर रहे हैं : (१) नगरपालिकाके ऐसे मतदाता जो मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हैं, (२) ऐसे सब पुरुष जो उसके पक्षमें या विरुद्ध हैं, और (३) ऐसी सब स्त्रियाँ जो उसके पक्षमें या विरुद्ध हैं।"

२. मद्रास प्रेजीडेंसीके धार्मिक अनुष्ठानोंको शासित करनेवाले अधिनियमसे उत्पन्न।

३. जो मद्रास विधान-परिषद्में रखा गया था। इसका उद्देश्य "स्थानीय मन्दिरोंमें हरिजनोंके प्रवेशके बारेमें जो परम्परा हो उसे बहुमत द्वारा बदलनेका अधिकार वहाँके हिन्दू नागरिकोंको देना" था।

ऐसे छलसे मैं उपवाससे नहीं बच सकता। तब मुझे अपने-आपपर आमरण अनशनसे भी कहीं ज्यादा कठोर अग्नि-परीक्षा थोपनी होगी।

गांधीजी मुझे जो जवाब दे रहे थे, उन्हें उनके इर्द-गिर्द बैठे लोग सुन रहे थे। उनमें से एकने कहा कि आमरण अनशनसे ज्यादा कठोर कुछ हो ही नहीं सकता। गांधीजीने इसपर कहा :

नहीं, अबतक मैंने उपवासकी बात सशर्त रखी है। उससे ज्यादा कठोर निश्चय तीस दिनका उपवास होगा।

इसके बाद गांधीजीने दिल्लीके २१ दिनके उपवासके निश्चयको समझाया, जो एकता चाहे होती या न होती, होना ही था।

यदि मैंने तीस दिनका उपवास शुरू कर दिया तो चाहे मन्दिर हरिजनोंके लिए खोला जाये या न खोला जाये, मैं उपवास पूरा करूँगा।

दक्षिण भारतके कुछ पण्डितोंके इस सुझावपर कि सनातनी लोगों व सुधारकोंमें यह समझौता हो जाना चाहिए कि यदि हरिजन शुद्धि-संस्कार करा लें तो उन्हें मन्दिरोंमें जाने दिया जा सकता है, गांधीजीने कहा :

मैं ऐसे सुझावके पक्षमें नहीं हूँ। सवर्ण हिन्दुओंको ही अछूतोंके प्रति किये गये घोर *अन्यायके लिए अपना शुद्धि-संस्कार* करना है।

महात्माजी हरिजनोंपर कोई विशेष शर्त लगानेको सहमत नहीं हुए, जैसे कि, उदाहरणके लिए, हरिजन जबतक साफा न बाँधे, उसे मन्दिरमें प्रवेश न करने दिया जाये। 'मन्दिर जानेवाले सभी हिन्दुओंसे मरे पशुका माँस न खानेकी अपेक्षा की जाती है।

डॉ० अम्बेडकरने पूनाके पास हुई एक घटनाकी ओर गांधीजी का ध्यान खींचा था। वहाँ हरिजनोंने मरे हुए पशुका माँस खाना छोड़ देनेका निश्चय किया था। वे मरे हुए जानवरोंको उठानेसे होनेवाला लाभ त्यागनेको तैयार थे। सवर्ण हिन्दुओंको हरिजनोंका मृत जानवर न हटानेका निश्चय अच्छा नहीं लगा। उन्होंने हरिजनोंको मरे हुए पशुका माँस खानेको यह कहकर बाध्य किया कि यह उनका धर्म है। सवर्ण हिन्दू ही वास्तवमें उन्हें उकसानेवाले लोग हैं, और, जैसा कि कानूनमें है, उकसानेवाला दण्डसे बरी नहीं होता। इसलिए सवर्ण हिन्दुओंको दण्ड मिलना चाहिए। उनको ही अपना शुद्धि-संस्कार करवाना है।

यह पूछे जानेपर कि क्या जेलमें कैदियों का किसी विशेष प्रकारके कामकी माँग करना जेलके अनुशासनको भंग करना है, गांधीजी ने कहा :

सविनय अवज्ञा करनेवाले किसी भी कैदीको यह छूट नहीं है कि वह किसी अन्य कामके बदलेमें किसी विशेष कामकी माँग करे। यदि कैदी ऐसे माँग करने लगें तो जेलका सारा अनुशासन ही भंग हो जायेगा।

महात्मा गांधीने बात जारी रखते हुए कहा कि श्री पटवर्धनने किसी अन्य कामके बदलेमें कोई विशेष काम नहीं माँगा है। उन्होंने तो यह कहा है कि उन्हें भंगीके या मैला साफ करनेके कामसे अलग न रखा जाये। जो काम उन्हें दिया गया है वह वे करेंगे और मैला साफ करनेका काम भी करेंगे। उन्होंने उसी श्रेणीमें रहना चाहा जिसमें तथाकथित नीची जातिके लोग हैं। केवल भंगी ही यह काम नहीं करते। सभी नीची जातिके लोग यह काम कर रहे हैं। हर जेलमें भंगी नहीं हैं। जेल अधिकारी इस गन्दे कामको नीची जातिके लोगोंसे ही लेते हैं। यदि वे ऐसा न करें तो सवर्ण हिन्दू उग्र आन्दोलन कर दें कि सरकार उनका धर्म नष्ट कर रही है और उन्हें नीची जातिका काम करनेको कह रही है। सरकार नहीं चाहती कि ऐसा कोई आन्दोलन हो। इसलिए ऐसा नियम रहा है कि ऊँची जातिके हिन्दू सफाईसे बरी रखे जायें। श्री पटवर्धनके लिए इस नियमका लाभ उठाना सम्भव नहीं था, इसलिए उन्होंने आग्रह किया कि उन्हें यह काम करनेकी अनुमति दी जाये। सरकार उनके मामलेपर विचार कर रही है। गांधीजीने कहा कि सरकारसे ऐसी माँग करना जेलका कोई नियम भंग करना नहीं है। यह जेलके नियमोंका पालन न करना भी नहीं है।

गांधीजीने कहा कि भविष्य परमेश्वरके हाथमें है, सरकारके हाथमें नहीं है। पिछले शनिवारके उपवासके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि उन्होंने दैवी आवाज सुनी थी और इसलिए उसीके अनुसार काम किया।

महात्माजीने बात जारी रखते हुए कहा कि यह सच है कि वे अब चौबीसों घंटे अस्पृश्यता-कार्यमें लगे रहते हैं। सोते-सोते भी उसीके विषयम सोचते रहते हैं।

यह पूछे जानेपर कि क्या जेलसे बाहर आनेपर भी वे इतना समय इस समस्यापर लगायेंगे, गाँधीजीने अपनी आँखोंमें चमक लाते हुए कहा :

निश्चय ही, मैं इसकी उपेक्षा नहीं करूँगा।

इसी समय जेलका डॉक्टर आ गया और उसने महात्मा गांधीकी परीक्षा की। डाक्टरने बताया कि गांधीजीको "टेनिस एल्बो" (टेनिस खेलनेसे कोहनीमें होनेवाली तकलीफ) है। एक मुलाकातीने कहा, "गांधीजीने कभी टेनिस नहीं खेला है।" इस पर महात्माजीने मजाक करते हुए कहा :

हाँ, यह सच है। मैं इसे "तकली एल्बो" कहता हूँ।

श्री ठक्करने गांधीजीको याद दिलाया कि तीन बजनेवाले हैं और समाचारपत्रोंके प्रतिनिधि ही सारा समय ले रहे हैं। महात्माजीने उनसे मजाक करते हुए कहा :

श्री ठक्करको अपने अध्यक्षकी आज्ञाका पालन करना चाहिए।

श्री बिड़ला (अस्पृश्यता-निवारक संघके अध्यक्ष)ने कहा कि उन्हें समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंसे कोई शिकायत नहीं है।

गांधीजीने देशमें चल रहे अस्पृश्यता-निवारण कार्यकी प्रगतिपर सन्तोष व्यक्त किया।

गांधीजीने घो णा की कि वे सशर्त रिहाई नहीं स्वीकार करेंगे। यह पूछे जानेपर कि क्या आप गुरुवायुर् जानेके लिए १५ दिनकी पैरोल स्वीकार करेंगे, महात्माजीने कहा :

पैरोल भी सशर्त रिहाई है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१२-१९३२

१७३. अस्पृश्यता-निवारण-दिवसका कार्यक्रम[1]

६ दिसम्बर, १९३२

अस्पृश्यता-निवारक संघके कार्यके लिए हर कहीं घर-घर जाकर चन्दा इकट्ठा करना।

कुछ सवर्ण हिन्दू हरिजनोंके घरोंमें सफाई करके और इसी तरहके अन्य तरीकोंसे उनकी सेवा करके औरोंके लिए एक उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं।

हरिजन और सवर्ण हिन्दू बच्चोंके खेल-कूद और जलपान जैसे सम्मिलित कार्यक्रमोंका आयोजन होना चाहिए।

हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओंके जुलूस और कीर्तन-मण्डल संगठित किये जाने चाहिए और दोनोंको एक जगह, विशेषकर सवर्ण हिन्दुओंके इलाकोंमें, एकत्रित करनेकी आम कोशिश होनी चाहिए।

हर कहीं सार्वजनिक सभाएँ होनी चाहिए, जिनमें अस्पृश्यताके सभी रूपों और उसकी सभी किस्मोंकी बुराइयाँ साफ-साफ समझानी चाहिए और यह प्रार्थना की जानी चाहिए कि वे शीघ्र और पूरी तरह मिट जायें।

इन सभाओंमें इस उद्देश्यके लिए निरन्तर प्रचार-कार्य करनेके प्रस्ताव और सभी हिन्दू मन्दिरों, विशेषकर गुरुवायुरको हरिजनोंके लिए खोलनेके पक्षमें विशेष प्रस्ताव भी पास किये जाने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-१२-१९३२

१. यह १८ दिसम्बरको मनाया जाना था।

१७४. तार : अप्पासाहब पटवर्धनको

६ दिसम्बर, १९३२

अप्पासाहब पटवर्धन
कैदी, रत्नगिरि जेल
रत्नगिरि

कुछ ऐसा पता चला है कि सरकारने आपको मल-सफाईका काम करने नहीं दिया, इसलिए आपने कम भोजन लेना शुरू कर दिया है। यह सुनकर मैंने शनिवारको उपवास शुरू किया और रविवारको जबतक सरकार इसपर विचार करे तबतक के लिए उसे मुल्तवी कर दिया। सरकार आपके विचारकी सराहना करती है, पर वह इसे अखिल भारतीय प्रश्न मानती है और इसलिए आपके और अन्य साथियोंके मामलेमें तुरन्त कोई निश्चय नहीं ले सकती। अतः उसका सुझाव यह है कि जबतक इसपर अखिल भारतीय आधारपर विचार हो तबतक आपको आंशिक उपवास स्थगित रखना चाहिए और पूरा भोजन लेते रहना चाहिए। अपना यह अधिकार आप सुरक्षित रखें कि यदि निर्णय प्रतिकूल हो तो आप आंशिक उपवास फिर शुरू कर सकते हैं। आपकी स्थितिको यदि मैं ठीक-ठीक समझ पाया हूँ तो सरकारका सुझाव मुझे बिलकुल मुनासिब लगता है। यदि आपको यह ठीक लगे तो कृपया फिरसे पूरा भोजन लेने लगिये और मुझे तारसे उसकी तथा अपने स्वास्थ्यकी सूचना दीजिए।[1]

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाईल नं० १०

१. अप्पासाहब पटवर्धनका उत्तर इस प्रकार था: "आपका कृपापूर्ण तार मिला। कार्यवाही स्थगित करना स्वीकार है। पत्र भेज रहा हूँ। स्वास्थ्य बिलकुल ठीक है।"

१७५. तार : केलप्पनको

[६ दिसम्बर, १९३२][1]

यहाँ आनेकी तब तक चिन्ता न करो जबतक कि उद्देश्यके लिए ही जरूरी न हो। आनेके लिए स्वास्थ्यको कतई जोखिममें न डालो।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-१२-१९३२

१७६. पत्र : रामदास के० गांधीको

६ दिसम्बर, १९३२

क्या 'रामगीता'[2] समझमें आई? उसमें मुख्य तत्व है: भक्ति और उसका फल। शुद्ध भक्तिसे अनासक्ति और ज्ञान पैदा होते ही हैं। न हों तो वह बकवास है, भक्ति नहीं। ज्ञानका अर्थ है सारासारका विवेक। जिस अक्षरज्ञानके परिणामस्वरूप यह विवेक-शक्ति न आये वह ज्ञान नहीं, कोरा पांडित्य है। तू देखेगा कि इस तरह समझनेसे और 'रामगीता' के गले उतर जानेके बाद चिन्ता और अधीरता चली जाती है।

यह पत्र सुबहकी प्रार्थनाके बाद लिख रहा हूँ। लिखना था उपवासके विषयमें। शुरू हो गया 'रामगीता' के विवेचनसे। उपवास तो बहुत पुराना हो गया। डेढ़ ही दिनका था, इसलिए कुछ मालूम नहीं हुआ। कमजोरी तुरन्त आई और तुरन्त ही चली भी गई। उपवासके दिन और रविवारको भी काम खूब किया था। काफी दूध लेना शुरू कर दिया है। इसलिए मेरे उपवासोंकी फिक्र करनी ही नहीं चाहिए। इतना समझ लेना चाहिए कि उपवास मैं नहीं करता। वे भगवानकी प्रेरणासे होते हैं, इसलिए वही करता है, यह कह सकते हैं। उपवास हो जाये तो उसका शोक नहीं करना चाहिए, बल्कि हर्ष होना चाहिए कि मैं इस तरह धर्मपालन करता हूँ। इसीके साथ यह भी याद रखना चाहिए कि मेरी होड़में कोई उपवास न करे। मुझसे सम्बन्ध रखनेवाले तो मुझे पूछकर ही करें, तो ठीक होगा। ऐसे अवसरोंकी कल्पना की जा सकती है, जब मुझसे पूछनेका समय ही न हो, या अन्तःप्रेरणा स्पष्ट हो। मुमुक्षु जीवोंकी परम्परा यह है कि जिसे अपनेसे अधिक अनुभवी व्यक्ति मानते हो जबतक

१. "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तारीखकी प्रविष्टिसे।
२. गांधीजीने विशेष रूपसे रामदासके लिए कुछ श्लोक लिख भेजे थे। देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ३९२-५।

वह पासमें हो, तबतक उससे पूछकर नया कदम उठाया जाये। अन्तर्नाद सभीको सुनाई नहीं देता। अन्तर्नादका आभास मात्र ही हो सकता है और सच पूछा जाये तो वह 'मैं' का ही नाद होता है। 'मैं' का अर्थ है शैतान, रावण, अह्रिमान, और दैत्य। हमारे भीतर राम बोल रहा है या रावण, इसका पता आसानीसे नहीं लग सकता। रावण अक्सर साधुके वेशमें ही आता है और उस समय राम-जैसा लगता है। इसलिए जो अधिक अनुभवी हो उससे पूछा जाये। यह तो जरा-सा लिखते-लिखते बहुत लिखा गया। सबको पढ़वा देना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग २, ३०७

१७७. पत्र : ई० ई० डॉयलको

६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

श्रीयुत एस० वी० मेढ दक्षिण आफ्रिकाके दिनोंसे मेरे पुराने साथी हैं। वह १४ तारीखको बम्बईके बन्दरगाहसे रवाना हो रहे हैं और उससे पहले मुझसे मिलनेके लिए व्याकुल हैं। वर्तमान आदेशोंमें उनका नाम नहीं आता। उनसे मुलाकात करनेसे पहले सरकारसे अनुज्ञा लेना आवश्यक है। वे दक्षिण आफ्रिकासे सिर्फ दो-तीन महीने पहले ही यहाँ आये हैं और यहाँकी राजनैतिक परिस्थितिसे उनका कतई सम्बन्ध नहीं है। उनके पत्रका, जो मैं इसके साथ जोड़ रहा हूँ, सारभूत वाक्य यह है कि "विदा होनेसे पहले आपसे आशीर्वाद प्राप्त करनेके लिए मैं व्याकुल हूँ, ईश्वर जाने कि मैं पुनः आपसे कब मिल सकूँगा?" यदि सम्भव हो तो मैं इस पत्रका स्वीकारात्मक उत्तर देना चाहूँगा और वह तभी सम्भव है यदि आप टेलीफोन या तार द्वारा अनुज्ञा प्राप्त कर सकें।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेज़ीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० ९

१७८. पत्र हृदयनाथ कुंजरूको

६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय हृरिजी,

आपका नोट मिला। आपके पत्रको ध्यानमें रखते हुए मैंने वह अंश फिर पढ़ा, पर "सीमित" शब्दको रखनेसे पहले वाक्यमें कोई असंगति आती है, ऐसा मुझे नहीं लगता। फिर भी यदि आप ऐसा सोचते हैं कि इस परिवर्तनसे हमारा उद्देश्य ज्यादा अच्छी तरह पूरा होगा, तो जो परिवर्तन आपने सुझाया है मुझे उसपर आपत्ति नहीं है। लेकिन मैंने कुछ अन्य परिवर्तन किये हैं जिन्हें आप कृपया देख लें, और मैंने वह शर्त्त भी जोड़ दी है जिसे मैं जल्दीमें छोड़ गया था। आप देखेंगे कि वह शर्त्त बहुत ही जरूरी है। मैं मूल मसौदा संशोधनों सहित, आपको लौटा रहा हूँ और पत्रके साथ उसकी एक नकल भेज रहा हूँ जिसमें सारे संशोधन कर दिये गये हैं। केवल "तक ही अपनी गतिविधियाँ सीमित रखेगा" या "के लिए काम करेगा" अंश वैसे ही छोड़ दिये गये हैं ताकि आप उनमें से एकको चुन लें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

संलग्न

अस्पृश्यताका अर्थ है किसी व्यक्तिके स्पर्श, निकट आने या दर्शनसे किसी अन्य का अपवित्र हो जाना। परन्तु लोगोंको अस्पृश्योंकी श्रेणीमें रखनेका चलन विभिन्न प्रान्तोंमें इस परिभाषाके सदा अनुरूप नहीं होता है। इसलिए और चलनकी विविधताको ध्यानमें रखते हुए, हरिजन सेवक संघने यह फैसला किया है कि इन वर्गोंको वही दर्जा दिलानेके लिए जो अन्य हिन्दुओंको प्राप्त है, अन्य निर्योग्यताओंमें से वह फिलहाल निम्नलिखितको मिटाने तक ही अपनी गतिविधियाँ सीमित रखेगा या के लिए ही काम करेगा: सार्वजनिक मन्दिरों, कुंओं, मार्गों, विद्यालयों, उद्यानों, औषधालयों, अस्पतालों, श्मशान-भूमियों आदिके उपयोगका निषेध।

परन्तु यह मान लिया गया है कि अस्पृश्यता-निवारणमें अन्तर्जातीय भोज, जिस अर्थमें आज वह लिया जाता है, या अन्तर्जातीय विवाह शामिल नहीं होगा।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६६२) से।

१७९. पत्र : के० माधवन नायरको

६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय माधवन,

आपका पत्र मिला। आपको क्षमा माँगनेकी जरूरत नहीं है। आप जिस तनावमें से गुजर रहे हैं, उसे देखते हुए केवल एक ही व्यक्ति पत्र लिखे और वह भी मुझे आवश्यक सूचना देनेके लिए। उर्मिलादेवी तो पत्र लिखती ही हैं और उन्हें प्राय: रोज ही कुछ-न-कुछ लिखे बिना सन्तोष नहीं होता।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६६१) से।

१८०. पत्र : अ० भा० व० स्व० संघके महामन्त्री[1]को

६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला, उसके लिए धन्यवाद। कोई भी सनातनी मित्र यदि आते हैं तो मुझे उनसे मिलकर प्रसन्नता ही होगी। और यदि वे मुझे मेरी गलतीका विश्वास दिला दें, तो मैं खुशीसे अपने कदम पीछे हटा लूँगा।

परिवर्तन-विरोधी शास्त्रियों और परिवर्तन-पक्षी शास्त्रियोंकी यदि एक सभा बुलाई जा सके, तो मुझे प्रसन्नता होगी। वह निश्चय ही शिक्षाप्रद होगी और कुछ हदतक उपयोगी रहेगी। बन्दी होनेके कारण मैं तो ऐसी सभा[2] की व्यवस्था कर नहीं सकता। मैं बन्दी न होता तो भी, एक सामान्य जन होनेसे, मुझे इस तरहकी सभा बुलानेके लिए आगे बढ़नेमें बड़ी झिझक होती। परन्तु मैं आपसे कहूँगा कि आप अपने सुझाव बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके आचार्य ध्रुवको भेज दें शायद आप और वे मिलकर जिस तरहकी सभा आप सोच रहे हैं, बुला सकें।

जहाँतक जोर-जबर्दस्तीके आक्षेपका सवाल है, मैं आपको केवल यही आश्वासन दे सकता हूँ कि ऐसा कोई इरादा नहीं है। जो व्यक्ति मेरे विचारोंसे विपरीत दृढ़

१. हीरालाल डी० नानावटी।

२. सभा ७ दिसम्बरको हुई थी; देखिए परिशिष्ट ४।

विचार रखता है, उसपर मेरा उपवास किस तरह जोर-जबर्दस्ती कर सकता है, यह बात मेरी समझमें नहीं आती।

हृदयसे आपका,

महामन्त्री
अखिल भारतीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघ
रामबाग, बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८६५९) से।

१८१. पत्र : यू० गोपाल मेननको

६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

आपका पत्र मिला। आप जब इतने थके हों कि तुरन्त सोनेको तबीयत कर रही हो, तब मुझे बैठकर पत्र लिखें — यह मैं नहीं चाहता। तनाव और कामके बोझके इन दिनोंमें मुझे पत्र लिखनेसे आपकी नींद कहीं कीमती है। लिखना जब बेहद जरूरी हो जाये, तब बेशक आपको नींदका त्याग करना होगा, पर उस हालतमें आपको अपने शब्द कंजूसीसे इस्तेमाल करने चाहिए। यदि आप एक वाक्यसे काम चला सकते हैं, तो दो मत लिखिये, और सिर्फ पोस्टकार्ड ही भेजिये। अत्यावश्यक स्थितिमें आप तार भी दे सकते हैं। दूसरे शब्दोंमें, आपके सामने जो कार्य है उसके लिए कृपया अपनी शक्ति बचाइये। यदि केवल एक व्यक्ति मुझे रोजमर्राके कामकी आवश्यक सूचना देता रहे, तो वह सर्वथा सन्तोषजनक होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८६६३) से।

१८२. पत्र : यू० सुब्बारावको

६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं आपको सलाह दूँगा कि आप आन्ध्र देशके अस्पृश्यता बोर्डसे बात करें। मेरे लिए अलग-अलग मामलोंको लेना कठिन होगा और केन्द्रीय बोर्डके लिए भी उनकी जाँच करना उतना ही कठिन होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत यू० सुब्बाराव, व्यवस्थापक
श्री हरिजन आश्रम, पोन्नमण्ड
पूर्वी गोदावरी

अंग्रेजी की फोटो-नकल (जी० एन० ६७०२) से। सी० डब्ल्यू० ४४४८ से भी; सौजन्य : यू० सुब्बाराव।

१८३. पत्र : एक गुजराती विद्यार्थीको

६ दिसम्बर, १९३२

मेरा उपवास जान या अनजानमें भी दबाव या हठ न मान लिया जाये, इसी दृष्टिसे तो मन्दिरके आसपास रहनेवालोंके मत लिये जा रहे हैं। अगर बहुमत सुधारके पक्षमें हो, तो सुधार होना ही चाहिए। यह धर्म है। अल्पमतवालोंके साथ इसमें कहीं भी अन्याय नहीं होता। वे चाहें तो उनके लिए अलग समय तय किया जा सकता है या वे अपना मन्दिर अलग बना लें। चार भाई इकट्ठे रहते हों और उनमें से तीन भाई यदि अपना धर्म बदलकर संयुक्त जायदादके मालिक बन जायें व चौथेको उसका हिस्सा दे दें, तो चौथेके साथ न्याय ही हुआ माना जायेगा। यहाँ अल्पमत अधिक-से-अधिक यही माँग कर सकता है कि उन्हें नया मन्दिर बनाने लायक रुपया दे दिया जाये। लेकिन अगर उनको पूजाके लिए अलग समय दे दिया जाये, तो उनका रुपया माँगनेका भी हक नहीं रह जाता। यह विचारधारा तुम्हारे मामलेमें लागू करनेपर अभिप्राय यह होता है: पितामहको अपना धर्मपालन करनेकी छूट होनी चाहिए और तुम्हें अपना धर्म पालन करनेकी। और अगर इसी कारण तुम्हें वे घरसे निकाल दें, तो तुम्हें वह बहिष्कार चुपचाप सह लेना चाहिए।

शुद्धिके बिना पत्नी तुम्हारे साथ रहनेसे इनकार करे, तो उसके बहिष्कारको भी तुम्हें सहन कर लेना चाहिए। तुम्हें उसके साथ उसकी इच्छाके विरुद्ध नहीं रहना चाहिए। पतिको पत्नीके साथ जबर्दस्ती करनेका कोई हक नहीं है। मगर यह सम्भव है कि पत्नी ऐसा कहे: "तुम शुद्धि न करो तो मैं और क्या कर सकती हूँ? मैं तो तुम्हारे साथ रहूँगी।" ऐसा कहे तो इसका अर्थ यह हुआ कि अस्पृश्यताकी अपेक्षा तुम्हारा साथ उसे अधिक प्रिय है, यानी अस्पृश्यताके मुकाबलेमें उसने तुम्हारे साथ रहनेको धर्म माना है। यह चुनाव हमें लगभग रोज असंख्य बातोंमें करना पड़ता है। मगर चूँकि यह स्वाभाविक रूपमें होता है, इसलिए हमें इसका ज्ञान नहीं होता। इतनेमें तुम्हारे प्रश्नोंका उत्तर आ जाता है। समझमें न आया हो तो फिर पूछ लेना। दूसरे सवाल पूछने हों, तो जरूर पूछना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३०८

१८४. एक पत्र

६ दिसम्बर, १९३२

दोषी मनुष्य अपने साथ अन्याय किये जानेकी बात लिखे, यह पश्चात्तापका लक्षण नहीं है। आजतक दुनियामें जिसने भी पश्चात्ताप किया है, उसने अपनेको मिली हुई सजाको सजा माना ही नहीं। बल्कि यह माना है कि उसे कम ही सजा मिली है। तुमने तो अपनी तुलना . . .[1] के साथ की है और उसके मुकाबलेमें तुम अपनेको कम अपराधी समझते मालूम होते हो। . . .[2] के अपराधकी मुझे कुछ खबर नहीं। तुम्हें तो इतना भी भान नहीं कि तुम्हारे चरित्रपर पहले से ही दाग था और तुमसे आश्रममें भी कितनी ही बार भूलें हुई हैं। भूलोंकी मुझे चिन्ता नहीं, हम सब भूलें करते हैं। मुझे दुःख तो यह है कि भूलोंका तुम्हें शुद्ध पश्चात्ताप नहीं है। और जबतक यह नहीं होता, तबतक तुम्हारा आश्रममें वापस जानेका विचार करना भी मुझे तो अनुचित लगता है। मुझे भय है कि शुद्ध पश्चात्ताप तुम्हारे स्वभावके विरुद्ध ही मालूम होता है। फिर भी तुम नारणदासपर अच्छा असर डाल सको और वह तुम्हें स्वीकार कर ले, तो मैं बीचमें नहीं आऊँगा।

दुःखी बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२ पृ० ३०९-१०

१ व २. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

१८५. पत्र : मणिबहन पटेलको

६ दिसम्बर, १९३२

चि० मणि,

डाह्याभाईका बुखार रविवारको बिलकुल उतर जाना चाहिए था, मगर उतरा नहीं। सामान्य तो होता है, परन्तु ९९-१०० तक बढ़ जाता है। इसलिए शायद अभी इस हफ्ते और चले। डाक्टरोंको अब कोई चिन्ता नहीं रही। वे तो शक्तिके लिए सेनेटोजन देने लगे हैं। और डेढ़ सेर दूध भी देते हैं, जो अच्छी तरह पच जाता है। अम्बालाल,[1] ठक्कर,[2] बा वगैरह इन एक-दो दिनोंमें डाह्याभाईको देख आये हैं। सब कहते हैं कि डाह्याभाई आनन्दमें हैं। किसीको नहीं लगता कि चार सप्ताहसे टाइफाइडके बीमार हैं। तू जरा भी चिन्ता न कर।

मेरा उपवास तो अब पुराना हो गया। 'टाइम्स' से सब जान लिया होगा। ऐसे उपवास तो मेरे जीवनमें होते ही रहेंगे। इसलिए इसे स्वाभाविक समझकर कार्यपरायण रहना। तेरा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४: मणिबहन पटेलने, पृ० ९५-६

१८६. पत्र : सी० नारायण मेननको[3]

[७ दिसम्बर, १९३२ से पूर्व][4]

प्रिय मित्र,

मुझे यह लगता है कि यदि जमोरिनके नाम पत्र भेजा जाये, जिसपर अस्पृश्यता-निवारणमें विश्वास रखनेवाले सभी छात्रोंके हस्ताक्षर हों, तो यह एक आश्चर्यजनक चीज होगी जो हिन्दू जगतको यह दिखायेगी कि उभरती हुई पीढ़ी इस कलंकको मिटाने पर तुली हुई है। और यदि भारत-भरके हिन्दू छात्र हिन्दू विश्वविद्यालयके इस उदाहरणका अनुकरण करें तो यह एक बड़ी बात होगी।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-१२-१९३२

१. सेठ अम्बालाल साराभाई।
२. ठक्कर बापा।
३. बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके प्राध्यापक।
४. समाचारपत्रमें इसपर तिथि-पंक्ति इस प्रकार थी: "बनारस, ७ दिसम्बर"।

१८७. भेंट : श्रीपाद शंकरको[1]

[७ दिसम्बर, १९३२ से पूर्व][2]

यह पूछनेपर कि यदि हरिजनोंको 'ध्वज स्तम्भ'[3] तक जाने दिया जाये तो क्या वे सन्तुष्ट हो जायेंगे, महात्माजीने साफ-साफ कहा कि भगवानके घरमें बीचका पड़ाव कोई नहीं होता। धीरे-धीरे मन्दिर-प्रवेश जैसी चीज कोई नहीं होनी है। प्रवेश मुक्त और बिना शर्त होना चाहिए। हरिजनोंको सार्वजनिक पूजामें समानताकी वही स्थिति मिलनी चाहिए जो अन्य सवर्ण हिन्दुओंको प्राप्त है।

जब उनसे यह पूछा गया कि क्या वे शुद्धता और गोमांस-त्याग जैसी कोई प्राथमिक कसौटी रखना स्वीकार करेंगे, तो महात्माजीने कहा कि यद्यपि वे हरिजनोंकी शुद्धता और सभी दृष्टियोंसे उनके उत्थानका सदा प्रतिपादन करते आये हैं, पर मन्दिरोंमें हरिजनोंके प्रवेशके लिए किसी भी शर्तको स्वीकार न करना उनके लिए एक सम्मानका प्रश्न बन गया है। कुछ सवर्ण हिन्दुओंको भी, जिन्हें मन्दिरोंमें प्रवेशका अधिकार है, शुद्धताकी यदि अधिक नहीं तो उतनी ही जरूरत है।

हरिजनोंकी आज जो स्थिति है वह उस लज्जाजनक व्यवहारके अनुपातमें ही है जो सवर्ण हिन्दुओं द्वारा पिछली कई पीढ़ियोंसे हरिजनोंके साथ किया जा रहा है। वस्तुतः वे बुराइयाँ जिनकी शुद्धि आवश्यक है, उस तरहके व्यवहारका ही परिणाम हैं। सवर्ण हिन्दुओंकी स्थिति इस मामलेमें बिलकुल वैसी ही है जैसीकि व्यापारिक लेन-देनमें कर्जदारकी होती है। जिस आदमीने कर्ज ले रखा है वह यदि उसका एक भाग लौटाता है, तो केवल अपना कर्त्तव्य पूरा करता है; जो-कुछ उसे देना है उसमें से आधा लौटाते हुए उसे अपनेको उदार नहीं मान लेना चाहिए।

यह पूछनेपर कि मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर क्या वे सहानुभूतिमें किये जानेवाले उपवासोंकी अनुमति देंगे, महात्माजीने इसपर जोर दिया कि गुरुवायूर मन्दिरके प्रवेशको लेकर उपवासका जो प्रश्न है, उसमें सूत्रधार श्री केलप्पन हैं। यदि उपवास हुआ तो वे इस बातका पूरे जोरसे विरोध करेंगे कि कोई और उनकी सहानुभूतिमें उपवास करे या उस प्रश्नपर सत्याग्रह करे। परन्तु अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलन और मन्दिर-प्रवेशके लिए न्यायोचित देशव्यापी प्रचारकी मनाही नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१२-१९३२

१. मद्रासके, जिन्होंने दक्षिण भारतमें मन्दिर-प्रवेशकी समस्याओंपर महात्मा गांधीसे भेंट की थी।
२. समाचारपत्रमें इसपर तिथि-पंक्ति इस प्रकार थी: "बम्बई, बुधवार, ७ दिसम्बर, १९३२"।
३. यह मन्दिरके प्रांगणमें देव-प्रतिमाके सम्मुख स्थापित होता है और लोग देवताकी पूजा करनेसे पहले इसे प्रणाम करते हैं।

१८८. तार: नारणदास गांधीको

७ दिसम्बर, १९३२

नारणदास
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

कान्तिको राजकोट जाकर स्वास्थ्य-लाभ करना चाहिए। प्रेमाको ऑप-रेशन करा लेना चाहिए।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१८९. तार: क० मा० मुंशीको

७ दिसम्बर, १९३२

कन्हैयालाल मुंशी
कैदी
सेन्ट्रल जेल बीजापुर

अभी-अभी आपका तार मिला। वाहर कोई राय व्यक्त नहीं की है। मैं नहीं चाहता कि आप अपने विश्वासके विरुद्ध कोई कदम उठायें। नाटक[2] पढ़ूंगा और अपना सुचिन्तित मत आपको लिखकर भेजूंगा।

गांधी

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७५१९) से; सौजन्य: क० मा० मुन्शी

१. देखिए पृष्ठ १३० भी।

२. आशय "ब्रह्मचर्याश्रम" नामक नाटकसे हैं जिसका उल्लेख "पत्र: क० मा० मुंशीको", ७ दिसम्बर, १९३२ में है।

१९०. पत्र : डॉ० विधानचन्द्र रायको

७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डॉक्टर विधान,

मैंने बंगालके अस्पृश्यता-निवारक बोर्डके सम्बन्धमें श्री घनश्यामदास बिड़ला और सतीश बाबूसे देरतक बात की है। मेरे पास बंगालसे कई पत्र भी आये हैं, जिनमें बोर्डके गठनके सम्बन्धमें शिकायत की गई है। बोर्डके गठनसे पहले घनश्यामदासने मुझे बताया था कि वे इसके लिए आपसे कहेंगे, और मैंने बातपर पूरी तरह विचार किये बगैर उनके सुझावका अनुमोदन कर दिया था। पर अब देखता हूँ कि बंगालको यह विचार, खासकर जहाँतक सतीशबाबू और डॉक्टर सुरेशका सवाल है, रुचा नहीं है। उन लोगोंकी धारणा है कि कोई बोर्ड दलबन्दीसे मुक्त नहीं रह सकता। नहीं जानता कि उनकी यह आशंका कहाँतक ठीक है, पर मैं इतना अवश्य जानता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारण कार्यमें किसी भी प्रकारकी दलबन्दीको प्रश्रय नहीं मिलना चाहिए। हम तो यही चाहते हैं कि जो भी संस्था बने, सुधारकी इच्छा रखनेवाले व्यक्तियोंको उसके साथ हृदयसे और स्वतन्त्रतापूर्वक सहयोग करना चाहिए। इसलिए मेरा यह सुझाव है कि आप विभिन्न दलों और वर्गोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले कार्यकर्त्ताओंकी एक बैठक बुलायें, अपनी सेवाएँ उनके अर्पण करें, और वे जिसे भी सभापति चुनें या जैसा भी बोर्ड बनायें उन्हें हृदयसे सहायता प्रदान करें। मैं जानता हूँ कि इसके लिए आत्मत्यागकी आवश्यकता है। यदि मैं आपको अच्छी तरह जान सका हूँ, तो मैं यह भी जानता हूँ कि ऐसा करना आपके लिए असम्भव नहीं है। पर यदि आप समझें कि इन शिकायतोंमें कोई तथ्य नहीं है और आप सारी कठिनाइयोंको दूर करनेमें और सभी दलोंको साथ लेनेमें समर्थ होंगे, तो मुझे कुछ नहीं कहना है। मैंने जो सुझाव पेश किया है वह यह समझकर ही किया है कि इस समय बोर्ड जैसा कुछ गठित हुआ है उसके साथ सारे दलोंके लिए सहयोग करना सम्भव नहीं है। मैंने सारी बात आपके सामने रख दी है, अब आप देश-हितके लिए जैसा ठीक समझें, करें।[1]

श्री खेतानने बासन्तीदेवीके सम्बन्धमें मुझे आपका सन्देश दिया। मैंने उनसे कह दिया है कि यह वे स्वयं तय करें कि क्या करना उत्तम होगा, पर मैं यही चाहूँगा कि वे अस्पृश्यता-निवारण कार्यमें लगनके साथ जुट जायें। वे कोई सार्वजनिक पद ग्रहण करें, मैं यह आवश्यक नहीं समझता। जब मैं देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए धन इकट्ठा करनेके सिलसिलेमें वहाँ उनके पास था, तो उन्होंने मुझे बताया था कि

१. डॉ० रायके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ५; "पत्र : डॉ० विधानचन्द्र रायको", १५-१२-१९३२ भी।

वे किसी संस्थाका संचालन करना नहीं चाहती हैं; वे तो समय और इच्छा होने पर बस कार्य करना चाहती हैं।

कृपया डा० आलम[1] के सम्बन्धमें समाचार दीजिये।

हृदयसे आपका,

डॉ० विधान राय
वेलिंग्टन स्ट्रीट, कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९०७) से; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला। एस० एन० १८६६७ और **इन द शैडो ऑफ द महात्मा**, पृ० ७६-७ से भी।

१९१. पत्र : जमनालाल बजाजको

७ दिसम्बर, १९३२

चि० जमनालाल,

अपनी तबीयतका समाचार आज ही भेज देना। तुमसे मिलनेकी व्यवस्था कर रहा हूँ। अप्पाकी माँग सम्बन्धी समस्या फिलहाल तो सुलझ गई है।[2] उन्होंने अर्ध उपवास और पूर्ण उपवास मुल्तवी कर दिया है। प्रश्न पूरी तरह हल हो जायेगा। मैंने फिर दो रतल वजन बढ़ा लिया है। "आश्रमवासी प्रत्ये" ढूँढकर भेज दूँगा। और कुछ चाहिए तो मँगा लेना। कमलनयनको सीलोन भेजना बिलकुल जरूरी है।[3] कमलनयनने लिखा है कि अब तो जानकीदेवी भी सहमत हैं। वहाँकी जलवायु उसे माफिक आयेगी ही, अंग्रेजीका शौक पूरा होगा। इस समय भारतके वातावरणमें वह शान्तिसे नहीं रह सकता, सीलोनमें रह सकेगा। यह घरका-घर और बाहरका-बाहर दोनों ही है। जब जी में आये तभी वापस आ सकता है। अंग्रेजीका अध्ययन अच्छी तरह कर सकेगा। मुझे तो यह प्रयोग कई दृष्टियोंसे बहुत पसन्द आया है। अपना विचार लिखो; उसके बाद उसे भेजनेका प्रबन्ध करूँ। एक-दो जगह लिखना पड़ेगा।

घनश्यामदास कल चला गया। तुमसे मुलाकात तो हो ही नहीं सकती थी। देवदास अभी यहीं है। राजेन्द्रबाबूका स्वास्थ्य अच्छा नहीं कहा जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०६) से।

१. वे कलकत्तामें डॉ० विधानचन्द्र रायके इलाजमें थे।
२. देखिए "वक्तव्य: उपवासपर अस्पृश्यता-निवारक संघके समक्ष", ४-१२-१९३२।
३. देखिए "पत्र: जानकीदेवी बजाजको", पृ० ४२ भी।

१९२. भेंट: छात्रोंको

पूना
७ दिसम्बर १९३२

तुम उनसे कैसे लड़ सकते हो?[1] जब तुम अपना कोई काम कराना चाहते हो तो आम तौरपर क्या करते हो? तुम चीखते-चिल्लाते हो। है न?

छात्र: (हँसते हुए) "हाँ"

गांधीजी: तो चीखो-चिल्लाओ और रोओ। (हँसी)

एक छात्र कहने लगा कि उनके पिता चूँकि सरकारी नौकर हैं, इसलिए अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनमें शामिल होते उन्हें डर लगता है।

गांधीजी: पर यह राजनैतिक कार्य तो है नहीं। सरकारी नौकर बहुत-से काम कर सकते हैं। वे चन्दा दे सकते हैं, अछूतोंको अपने घरोंमें कामपर रख सकते हैं। हरिजन बालकों और बालिकाओंका पालन-पोषण कर सकते हैं। उसमें कोई राजनीति नहीं है।

हम स्कूलोंमें उनकी किस तरह सेवा कर सकते हैं?

गांधीजी: स्कूलोंमें तुम कुछ नहीं कर सकते। वहाँ तुम शिक्षाके लिए जाते हो। तुम्हारे छोटे-छोटे मस्तिष्कोंको वहाँ इस सबकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। लेकिन स्कूलके समयके बाद तुम कर सकते हो।

कैसे?

गांधीजी: हरिजन जहाँ रहते हैं, वहाँ उनसे मिलो-जुलो। उनके साथ खेलो और इसका ध्यान रखो कि उनके घर साफ रहें। झाड़ू लेकर सफाई करो और उन्हें साफ रहना सिखाओ। अपने खुदके जीवनसे उन्हें यह दिखा दो कि तुम अस्पृश्यताको नहीं मानते हो और उनसे प्रेम करते हो। उनके साथ अपने सगे भाइयोंका-सा बरताव करो। तुम अभी बहुत छोटे हो। ज्यों-ज्यों दिन बीतेंगे, ठीक काम करने का ढँग तुम्हें ज्यादा अच्छी तरह आता जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-१२-१९३२

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है: "...हाई स्कूलके किशोर छात्रोंने...गांधीजी को बताया कि वे हरिजनोंकी सेवा करना चाहते हैं। लेकिन उनके पिता उन्हें ऐसा करने नहीं देंगे। गांधीजीने हंसते हुए उनसे कहा, तो उनसे लड़िए...। अंतमें छात्रोंने गांधीजी को धन्यवाद दिया और कते सूतकी मालाएँ भेंटकर वहाँसे विदा हुए।"

१९३. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

[७][1] दिसम्बर, १९३२

सरकारने इस प्रश्नको अखिल भारतीय महत्वका माना है। जेल-प्रशासनके दृष्टिकोणसे, उसके लिए अप्पासाहब पटवर्धनकी प्रार्थनापर कोई निर्णय लेनेमें कठिनाई थी। परन्तु वह पूरे प्रश्नपर विचार करने और अपना निर्णय यथासम्भव जल्दी-से-जल्दी घोषित कर देनेको राजी हो गई। इन परिस्थितियोंमें, सरकारकी कठिनाइयाँ मैंने खुद स्वीकार कीं और मुझे अप्पासाहब पटवर्धनको तार[2] से यह सलाह देनेकी अनुमति मिल गई कि सरकारके निर्णय लेनेतक वे आंशिक उपवास स्थगित रखें। उनकी ओरसे आज सुबह मुझे निम्नलिखित तार मिला है:

> **आपका कृपापूर्ण तार मिला। कार्रवाई स्थगित करना स्वीकार है। पत्र भेज रहा हूँ। स्वास्थ्य बिलकुल ठीक है।**

परिणाम यह निकला कि अप्पासाहब आजसे पूरा भोजन लेने लगे हैं, और मेरा उपवास, स्वाभाविक रूपसे, फिर स्थगित हो जाता है। अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताकी हैसियतसे, मेरे दृष्टिकोणसे, मामला बिलकुल सीधा है। अप्पासाहब पटवर्धन और उनके साथी कार्यकर्त्ताओं जैसे तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंको, जो विशुद्ध मानवतावादी उद्देश्य और सेवाकी भावनासे स्वेच्छासे मल-सफाईका कार्य करना चाहते हैं, वह काम करने देना चाहिए। इस समय चलन यह लगता है कि इस सेवाको तथाकथित नीची जातके बन्दियोंतक ही सीमित रखा जाता है, चाहे उन्होंने बाहर मल-सफाईका काम कभी न किया हो और चाहे वे भंगी जातके भी न हों। और यह काम, चाहे वे इसे करना चाहें या न चाहें, उन्हें करना पड़ता है।

जो लोग अपने अन्तःकरणके अनुसार कार्य करनेके कारण आज जेलमें हैं, वे अपनेको श्रेष्ठ माननेका झूठा दावा नहीं कर सकते। उधर, जो चलन कितने ही सालोंसे भारत-भरकी जेलोंमें प्रचलित है उसमें अचानक उलट-पलट करनेमें स्पष्ट रूपसे प्रशासकीय कठिनाइयाँ हैं। इसलिए जबतक भारत सरकार और स्थानीय सरकार इस पूरे प्रश्नकी जाँच करें, तबतकके लिए खुद उपवास स्थगित करनेमें मुझे कोई झिझक नहीं है। अप्पासाहब इस विषयके विशेषज्ञ हैं और इसलिए इस बारेमें मुझसे बहुत ज्यादा जानते हैं। सरकारकी कठिनाइयोंको उन्होंने समझा और आंशिक उपवास स्थगित कर दिया, मुझे इसकी खुशी है। हमें यह आशा करनी चाहिए कि सरकार शीघ्र ही सन्तोषजनक निश्चयपर पहुँच जायेगी, जिससे इस समय कारावास भोगने

१. बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१२-१९३२ के अनुसार।

२. देखिए पृष्ठ १३७।

वाले सुधारक, विभिन्न जेलोंके निर्बाध प्रशासनको किसी भी तरह क्षति पहुँचाये बिना, मल-सफाई सेवा कर सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-१२-१९३२

१९४. पत्र : मीराबहनको

७/८ दिसम्बर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा साप्ताहिक पत्र मिला। आशा है, उपवास सम्बन्धी मेरा तार[1] और पोस्टकार्ड[2] तुम्हें मिल गये होंगे।

ऊपरवाला भाग कल रात लिखा था। अब सुबहके पाँच बजे हैं। प्रार्थना हो गई है और पानीके साथ शहद और फिर नारंगियाँ ले ली हैं। एक दिनमें नहीं बल्कि चार दिनमें जो ६ पौंड वजन खोया था, उसमें से २ पौंड फिर प्राप्त कर लिया है। इससे जाहिर होता है कि कुछ पौंड वजन मैं जितनी जल्दी खो देता हूँ उतनी ही जल्दी प्राप्त भी कर लेता हूँ। दूसरे शब्दोंमें, मैं फालतू अन्न-जलका ही भार लिये फिरता हूँ। उपवास केवल ४४ घंटे रहा। इससे कोई स्थायी हानि नहीं हो सकती। तुम्हारा यह कहना ठीक है कि पिछले उपवासमें पुट्ठोंमें जो दुर्बलता आई, वह अभी दूर नहीं हो सकी है।

लेकिन उपवास तो मेरा सामान्य जीवनक्रम बन गया है। यह आध्यात्मिक औषधि है, जो समय-समयपर ऐसे रोगोंपर प्रयुक्त की जाती है जो इसी विशेष चिकित्सासे ठीक होते हैं। कोई अचानक यह क्षमता नहीं पा सकता। मैंने प्राप्त की है, तो बड़े लम्बे प्रशिक्षणके बाद प्राप्त की है।

साथियोंको जब कभी मेरे उपवासकी खबर मिले, तो उन्हें उद्विग्न या जरा भी अशान्त नहीं होना चाहिए। उन्हें मेरी शुद्धता और समझदारीपर भरोसा हो, तो उल्टी और खुशी मनानी चाहिए। क्योंकि, उपवास तब हम सबके लिए और तमाम दुनियाके लिए अच्छा होना ही चाहिए, जैसा कि हरेक आध्यात्मिक प्रयत्न होता है। उससे हम सबको और अधिक हृदय-मंथन और आत्मशुद्धिके लिए प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

मुझे खुशी है कि तुम्हें सामान्य जनोंका फिर कुछ साथ मिल गया है।

नमक छोड़नेका प्रयोग मैं अभी शुरू करना नहीं चाहता हूँ। अपनी कोहनियोंको देख रहा हूँ। अभी कोई कष्ट नहीं है। कताई स्थगित रखना एक हानि है। पर, फिलहाल मुझे इसे सह लेना चाहिए।

१ व २. देखिए पृष्ठ १२४ और १२७।

मणिलाल और उसकी पत्नी अगले सप्ताह दक्षिण आफ्रिका चले जायेंगे। उनका वहाँ मौजूद रहना जरूरी है। मेरे उपवास वगैरहके कारण उन्हें अपने कर्त्तव्यसे नहीं हटना चाहिए। वे न तो घटनाक्रमको बदल सकते हैं और न मेरी कोई सहायता ही कर सकते हैं। उनका यहाँ दौड़े आना ठीक नहीं था।

बा और उर्मिलादेवी दक्षिणमें अच्छा काम कर रही हैं।

लेकिन, अब मुझे लिखना वन्द कर देना चाहिए।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२५५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७२१ से भी।

१९५. पत्र : नारणदास गांधीको

७/८ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

इसके साथ लीलाधरका पत्र भेज रहा हूँ। उसने प्रेमाके बारेमें लिखा है। बात क्या है? परशुराम भी सख्त शिकायत करता है। और मारनेके बारेमें तो सबकी शिकायत है ही। इस वक्त मेरे पास लिखनेकी फुरसत नहीं है इसलिए तुम्हें सिर्फ इतना लिखकर ही इसका फैसला करता हूँ। और फिर अगर उसका ऑपरेशन होना है तो इस समय मैं उसे किसी तरह दुःखी नहीं करना चाहता।

लीलाधरकी डायरी रजिस्टरीसे वापस भेज रहा हूँ . . .[1] कल मिली। उसका और . . . का[2] सम्बन्ध निर्विकार नहीं मान सकते। दोनोंका पतन नहीं हुआ, पर मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि दोनोंके मन एक-दूसरेके प्रति विकारवश हैं। वे साथ नहीं रह सकते। . . .[3] का लम्वा पत्र है, दुःखपूर्ण है। उसने भी यह स्वीकार किया है कि साथ रहना सम्भव नहीं है। अब क्या हो सकता है यह देखूंगा। इसकी चिन्ता तुम्हें नहीं करनी; मुझे ही इसे देखना होगा। ईश्वर समस्याको हल करेगा। समय मिलेगा तो और लिखूंगा।

बापू

८ दिसम्बर, १९३२

समय बचाकर भी छगनलालको पत्र तो लिख ही देना चाहिए, ऐसा सोचकर लिख डाला है। साथका पत्र पढ़कर उसे भेज देना ताकि फिर मुझे तुम्हें कुछ लिखने

१. २ व ३. नाम यहाँ छोड़ दिये गये हैं।

१९७. पत्र : एस० ए० के० सुब्रह्मण्यमको[1]

८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मेरा यह पक्का विश्वास है कि जो लोग हिन्दू श्मशान-भूमिका उपयोग हरिजनोंके शवोंके लिए नहीं करने देते हैं, वे धर्म-विरोधी कार्य कर रहे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१-१९३३

१९८. पत्र : पी० आर० लेलेको

८ दिसम्बर, १९३२

आपके पत्रके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। अपनी मूर्खताके लिए मैं हजार बार खेद प्रकट करता हूँ। आप कृपया मुझे क्षमा कर दें। उन महिलाका जिक्र किये बिना मैं रह नहीं सका, क्योंकि उनके बारेमें मैं प्रायः सोचता हूँ।[2] कुछ दिनोंमें ही दो बार मुझसे स्मृतिकी दो मूर्खतापूर्ण भूलें हुई हैं। श्री पण्ड्याके लेखके विषयमें आप जो कहते हैं[3] वह बिलकुल सच है।

स्वामी श्रद्धानन्दजीकी पुण्यतिथिके बारेमें आपकी बातको मैं समझता हूँ। आपके सुझावकी मैंने नये संगठनके कुछ सदस्योंसे चर्चा की थी। परन्तु उनका यह खयाल है, और मैं उनसे सहमत हूँ, कि इस संगठनके लिए अपने तत्वावधानमें यह पुण्य-तिथि मनाना गलत होगा। एक संगठन ऐसा मौजूद है जो श्रद्धानन्दजीके खुदके शानदार कामोंसे ही पैदा हुआ है। उसका कार्य-क्षेत्र अस्पृश्यता-निवारण संघके

१. सलेमके।

२. गांधीजीने श्री लेलेकी दिवंगता पुत्रीको उनकी पत्नी लिख दिया था। (एस० एन० १८६५४)

३. श्री लेलेने लिखा था: "मुझे आपका ध्यान श्री पण्ड्याके लेखकी ओर आकर्षित करना है, क्योंकि १९२८ से तथाकथित अस्पृश्योंकी संख्याको घटानेके जो नाना प्रयत्न हो रहे हैं यह उनका प्रतीक है। अस्पृश्योंके अस्तित्वको नकारनेसे यदि इस समस्याका समाधान हो जाता, तो इन प्रयत्नोंकी शायद कुछ सार्थकता होती। अभी तो यह नकारना केवल सवर्ण हिन्दुओंको उनके दायित्वसे मुक्त करनेके लिए है।" (एस० एन० १८६५४)

कार्यक्षेत्रसे बहुत बड़ा है। यदि संघ पुण्यतिथिको अपने तत्वावधानमें मनाता है तो इसकी गतिविधिके बारेमें गलतफहमी पैदा होनेका पूरा अन्देशा है। और यदि यह पुण्यतिथिके कार्यक्रमको, उसे अपने उद्देश्यके अनुरूप रखनेके लिए, सीमित करे, तो वह भी गलत होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७१) से।

१९९. पत्र : पी० एन० राजभोजको

८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय राजभोज,[१]

इसी ३ तारीखके अपने पत्रमें आपने जो प्रश्न रखे हैं[२] उनके मेरे उत्तर इस प्रकार हैं :

१. मतसंग्रहके फलस्वरूप यदि यह पता चलता है कि जिस क्षेत्रका मतसंग्रह हुआ है उसके मन्दिर जानेवाले लोगोंकी बहुसंख्या हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध है, तो उपवास निस्सन्देह स्थगित कर दिया जायेगा। वह अनिश्चित कालके लिए ही स्थगित होना है। और यदि वह फिर शुरू किया गया तो उसे फिर शुरू करने का फैसला वे परिस्थितियाँ करेंगी जिनपर मैं न तो कोई नियन्त्रण रख सकता हूँ और न जिन्हें पहलेसे जान ही सकता हूँ।[३]

१. भारतीय दलित वर्ग सेवा संघ, पूनाके अवैतनिक संगठनाधिकारी और महा मन्त्री।

२. "(क) मत-संग्रहके बाद यदि यह पता चला कि सवर्ण हिन्दू मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध हैं, तो क्या आप उपवास करेंगे? आपने कहा था कि आप अपना उपवास स्थगित कर देंगे। उसे आप कबतक स्थगित रखेंगे?

(ख) गुरुवायुर मन्दिर जब खुल जायेगा तो अन्य मन्दिरोंपर सत्याग्रह किया जायेगा। क्या आप उसे अपना सक्रिय समर्थन देंगे?

(ग) जमोरिन एक बड़े जमींदार और प्रभावशाली आदमी हैं। क्या वे सवर्ण हिन्दुओंके एक बड़े भागको अपने पक्षमें नहीं कर लेंगे? मत-संग्रहसे हमें जो मिलेगा क्या वह सवर्ण हिन्दुओंके मतकी समुचित और वास्तविक अभिव्यक्ति होगी?

(घ) क्या आप यह नहीं जानते कि बहुत-से सवर्ण हिन्दू गोमांस खाते हैं? मेरे प्रश्नके उत्तरमें आपने अपने पाँचवें वक्तव्यमें हरिजनोंसे गोमांस छोड़नेके लिए कहा था। कुछ लोग इसे मन्दिरोंमें प्रवेशकी एक शर्त मानते हैं। उस हालतमें क्या गोमांस खानेवाले सवर्ण हिन्दू मन्दिरोंमें प्रवेशके अधिकारी होंगे? आपको शायद यह मालूम ही होगा कि कितने ही अस्पृश्य ऐसे हैं जो न तो गोमांस खाते हैं और न गन्दा जीवन बिताते हैं। इस तरहके अस्पृश्योंको मन्दिरोंमें जानेसे क्यों रोका जाता है?" (एस० एन० १८६५२)।

३. देखिए परिशिष्ट ७ भी।

२. मेरे खयालसे गुरुवायुर मन्दिरके खुल जानेपर अन्य मन्दिरोंके लिए सत्याग्रहकी बात अभी असामयिक होगी। हमें सदा यह आशा करनी चाहिए कि गुरुवायुरके खुल जानेसे अन्य मन्दिरोंके खुलनेका रास्ता साफ हो जायेगा।

३. मैं यह आशा करता हूँ कि जमोरिन लोगोंपर, पक्ष या विपक्षके लिए, अपना प्रभाव नहीं डालेंगे। परन्तु यदि वे ऐसा करें भी, तो मैं लोगोंसे यह अपेक्षा करता हूँ कि वे कम-से-कम ऐसे धार्मिक प्रश्नपर जैसा कि इस समय उनके सामने है, स्वतन्त्रतासे विचार करेंगे। हर हालतमें, मैं अपनेको बहुसंख्याके मतसे बाध्य समझूँगा। मतसंग्रह केवल उपवासके प्रश्नका ही निर्णायक होगा, मन्दिरको खोलनेके प्रश्नका नहीं होगा। यदि परिणाम हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध रहता है, तो जनमतको शिक्षित करने और उसे मन्दिरको खोलनेके लिए तैयार करनेके तरीके और उपाय ढूंढने होंगे। मेरे मनमें यह चीज बिलकुल साफ है कि किसी भी मन्दिरको जबर्दस्ती खुलवाना नहीं चाहिए। यह एक अशोभन बात होगी कि एक ही मन्दिरका उपयोग करनेवाले विरोधी वर्ग एक-दूसरेके दुश्मन बने रहें।

४. मेरी यह पक्की राय है कि मन्दिरोंमें हरिजनोंके प्रवेशके लिए कोई ऐसी शर्त नहीं होनी चाहिए जो अन्य हिन्दू उपासकोंपर लागू न होती हो। अतः सभीके लिए एक नियम होना चाहिए। व्यक्तिगत रूपसे मैं यह जरूर महसूस करता हूँ कि गोमांस चूंकि हिन्दू-धर्ममें एक निषिद्ध आहार है, इसलिए जो हरिजन गोमांस खाते हैं उन्हें वह छोड़ देना चाहिए, मन्दिर चाहे हरिजनोंके लिए खोले जायें या न खोले जायें। यह शर्त उन्हें, बिना किसीके कहे और मन्दिर-प्रवेश या अन्य किसी चीजका विचार किये बिना ही, अपने-आपपर लगा लेनी चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हरिजन स्वेच्छासे अपनेमें जो भी सुधार करेंगे वह इस कलंकको मिटानेकी प्रक्रियाको और तेज करेगा। इससे सवर्ण हिन्दू सुधारकोंका काम अबसे बेहद आसान हो जायेगा और अस्पृश्यता-निवारणके विरोधियोंके तर्कका सारा जोर जाता रहेगा। अतः मैं आशा करता हूँ कि कोई भी हरिजन यह नहीं कहेगा कि पहले अस्पृश्यता मिटाओ, तभी हम गोमांस और बहुत-सी अन्य चीजोंका, जिनकी हमसे अपेक्षा की जाती है, त्याग करेंगे। इस तरहका रुख उतना ही बुरा होगा जितना कि उनके मन्दिर-प्रवेश और इसी तरहकी अन्य बातोंके लिए शर्तें रखनेवालोंका रुख है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पी० एन० राजभोज
२०७, घोरपडे पेठ, पूना-२

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७२) से।

२००. पत्र: रेजिनॉल्ड रेनॉल्ड्सको

[८][1] दिसम्बर, १९३२

प्रिय अंगद,[2]

तुम्हें नहीं [मालूम] कि तुम्हारा पत्र मिलनेपर हम सबको कितनी खुशी होती है। इसलिए १० नवम्बरका तुम्हारा पत्र पाकर हमें बड़ी खुशी हुई। यह तुम्हारा तीसरा पत्र है। मेरे साथियोंमें अब केवल सरदार और महादेव ही हैं। बा और प्यारेलालको, जैसा कि स्वाभाविक था, उपवास समाप्त होनेके तुरन्त बाद ही अन्यत्र भेज दिया गया था। परन्तु रामदास और सुरेन्द्र कुछ महीने इसी जेलमें रहे और अब जमनालालजी हैं, जिनकी उनके स्वास्थ्यके कारण यहाँ बदली की गई है।

आशा है तुम हर तरहसे ठीक होगे।

हम सबका प्यार।

तुम्हारा
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५४४) से; सौजन्य: स्वार्थमोर कालेज, फिलोडलफिया

२०१. पत्र: क० मा० मुंशीको

८ दिसम्बर, १९३२

भाईश्री मुंशी,

मेरा तार[3] मिल गया होगा। उससे तुम्हारा घाव कुछ भरा होगा। तुम्हारे दुःखी होनेसे मैं भी दुःखी हुआ। किन्तु साथ ही यह जानकर खुशी भी हुई कि तुम्हें मुझसे इतना स्नेह है। दुःख-सुख स्नेहीकी बातोंसे ही होता है न?

जो बात मैंने तुम्हें लिखी[4] वही उस आलोचकको भी लिखी होगी, तुम्हारा यह भय मिथ्या था। उसे तो मैंने यह लिखा था कि यहाँ बैठकर मुझे कोई भी राय

१. साधन-सूत्रमें यह किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा हाथसे लिखा गया था, मूल अंक जेलकी मोहरसे छिप गया था।

२. *रामायण*में रामके वानर-दूत। उन्हें रावणके पास यह समझानेके लिए भेजा गया कि वह सीताको लौटा दे। सन् १९३० में नमक सत्याग्रह शुरू करनेसे पहले गांधीजीने लॉर्ड इर्विनके नाम अन्तिम चेतावनी रेनॉल्ड्सके हाथ भेजी थी। इसलिए नारणदास गांधीने उन्हें अंगदकी उपाधि दी। देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ २–९ और . . . भी।

३. देखिए पृष्ठ १४७।

४. देखिए पृष्ठ ६९।

देनेका अधिकार ही नहीं है। मैंने पूछा था कि नाटक कौन खेलना चाहता है। इसका उस युवकने कोई उत्तर नहीं दिया है। मेरी ओरसे तुम सदाके लिए निश्चिन्त हो जाओ। मैं तुम्हारे साथ सलाह किये बिना तुम्हारी रचनाओंकी टीका नहीं करूँगा। मुझे तुम दोनोंसे प्रेम है। मैंने तुमसे कह ही दिया है कि मुझे तुम दोनोंसे बहुत कुछ लेना है। वह तो तभी मिल सकता है न जब मैं तुम्हारा मन मोह लूं। समुद्र-किनारे सुबह-सुबहका वह दृश्य मैं कभी नहीं भूल सकता।

जब समय मिलेगा तुम्हारा प्रहसन पूरा पढ़ डालूंगा। तुम्हारी दृष्टिसे पढ़ूँगा और यदि कुछ लिखने लायक होगा तो लिखूंगा। तुमने जो छूट दी है उसका उपयोग नहीं करूँगा। तुम भी उसकी बिक्री बन्द न करना। स्नेहके बलपर भी तुमसे ऐसा नहीं कराना है। यह सच है कि मैंने तुम्हारी एक भी पुस्तक नहीं पढ़ी है। तुम सुझाओगे तो पढ़नेका प्रयत्न करूँगा।

जब प्रभु मिलनेका अवसर लायेंगे, तब कलाके सम्बन्धमें तुमसे बात करूँगा। [कलाके बारेमें] तुम्हारी राय पत्रसे थोड़ी-बहुत समझमें आई है।

अस्पृश्यताके विषयमें क्या लिखूं? मेरा जीवन बहुरूपी होते हुए भी उसे एक-रूप देखनेकी कला सीखो। तुम समझो और साथियोंको भी समझाओ। मेरी सभी प्रवृत्तियोंका मूल एक ही है।

तुम्हारे पत्रसे कुछ दिन पहले लीलावतीका[1] मजेदार पत्र आया था। उसका जवाब देना बाकी है।

दायें हाथकी कोहनीमें ज्यादा दर्द है, इस कारण पत्र बायें हाथसे लिखा है। सबको हम लोगोंका यथायोग्य।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५२०) से; सौजन्य: क० मा० मुंशी।

२०२. एक पत्र

८ दिसम्बर, १९३२

अगर इसमें दोष हो तो तुम उसे मेरा दोष मान सकते हो। क्योंकि तुम सबको मैंने एक महा प्रयोगमें डाला है। मेरा प्रयोग साँपके बिलमें हाथ डालने जैसा है। मुझे इसका कोई पश्चात्ताप नहीं है। यह प्रयोग तो जारी ही रहेगा। इसका परिणाम शुभ ही होगा। इसके लिए बलिदानकी जरूरत पड़ेगी तो दूंगा।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२ पृ० ३१३

१. क० मा० मुन्शीकी पत्नी।

२०३. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर–१०

९ दिसम्बर, १९३२

अस्पृश्यता-निवारक संघका नाम अब हरिजन सेवक संघ हो जायेगा, क्योंकि श्री वी० आर० शिन्देने पहले जो संगठन बनाया था उसका नाम लगभग यही था और मेरे खयालमें वह अधिक उपयुक्त भी है। संघकी बैठकमें उपस्थित मित्रोंमें से एकने मुझे एक प्रश्नमाला दी थी। उन प्रश्नोंमें उन्होंने अपनी दलीलें भी पिरो दी थीं। संक्षेपकी खातिर, मैं उन सवालोंमें से एक सबसे महत्वका सवाल पत्रके रूपमें नीचे देता हूँ :

> **संघ आपके सुझावपर और अस्पृश्यता-निवारणका कार्यक्रम पूरा करनेके लिए स्थापित हुआ है, इसलिए कार्यकर्त्ता आपसे निश्चित मार्गदर्शनकी अपेक्षा रखें, यह स्वाभाविक है। तो मुझे पहला सवाल यह सूझता है : कार्यकर्ताओंको सुधारक बनकर हरिजनोंके उद्धारका काम करना है या अपने उद्धारका? अपने उद्धारका काम करना हो, तो सवर्ण हिन्दुओंमें ही काम करनेपर अधिक-से-अधिक जोर देना चाहिए। यदि ऐसा हो तो यह काम किस ढंगसे किया जाये?**

यह एक व्यापक प्रश्न है और आशा है कि इसका जवाब देते हुए मैं इन मित्रके उठाये हुए मुख्य मुद्दोंकी चर्चा कर सकूँगा। मैंने बार-बार साफ शब्दोंमें कहा है कि सवर्ण हिन्दू दोषी हैं। उन्होंने उन लोगोंके प्रति जिन्हें अस्पृश्य कहा जाता है, पाप किया है। हरिजनोंकी मौजूदा हालतके लिए सवर्ण हिन्दू जिम्मेदार हैं। इसलिए वे हरिजनोंकी पीठपर से अस्पृश्यताका बोझा उठा लें और अपने पापोंका प्रायश्चित्त करके आत्मशुद्धि कर लें, तो तुरन्त हम हरिजनोंमें पूर्ण परिवर्तन हुआ देखेंगे। वे जिन्दगी-भरकी आदतें एकाएक छोड़ देंगे — ऐसा नहीं होगा, परन्तु आदतें छोड़नेके लिए वे सचेत प्रयत्न करेंगे और सवर्ण हिन्दुओंकी भारी संख्या उन्हें वे आदतें छोड़नेमें सर्वत्र सहायता देगी।

यह ऐसी ही बात होगी जैसे एक कुटुम्बके उत्पीड़ित सदस्योंका उत्पीड़कोंके साथ पुनर्मिलन हो और वे उनका प्रेम और जोश अनुभव करें, और उत्पीड़क उन्हें इस तरह अपनायें जैसे वे कभी अलग हुए ही न हों। यह स्थिति आनेमें कुछ समय लगेगा, इसका मुझे दु:खद भान है। परन्तु हममें से यदि कुछ लोग समझकर सही रवैया अख्तियार न करेंगे, तो यह स्थिति कभी नहीं आयेगी। उदार विचारके कार्य-कर्त्ताओंको भी मैंने अकसर यह कहते सुना है कि हरिजन अपनी कुटेवें छोड़ें, शिक्षा पायें और स्वच्छ जीवन बिताने लगें, तभी अस्पृश्यता मिटनी चाहिए। ऐसा कहनेवाले यह बिलकुल भूल जाते हैं कि हरिजन जबतक 'अस्पृश्य' रहेंगे, तबतक वे ये बातें

करना चाहें तो भी नहीं कर सकते। वे यह भी भूल जाते हैं कि जो हरिजन साफ रहन-सहन रखते हैं, उनका भी सवर्ण हिन्दू समान भावसे स्वागत नहीं करते, और उनमें से अच्छे-से-अच्छे आदमियोंतकको जीवनकी साधारण सुख-सुविधाओंसे और सवर्ण हिन्दुओंके साथ रोजमर्राके संसर्गसे अलग रखा जाता है। वे अन्त्यज पैदा हुए इसीलिए उन्हें जीवन-भर दास माना जाता है और रहन-सहनके फेर-बदल या और किसी कारणसे इस दासतामें कमी नहीं हो सकती। इसलिए हरिजनोंके लिए अच्छा रहन-सहन रखनेकी प्रेरणा देनेवाला कारण ही नहीं रह जाता; कहाँसे रहे? उनके मनमें इस विचारने गहरी जड़ें जमा ली हैं कि कम-से-कम अपने वर्तमान जीवनमें उन्हें अपने उद्धारकी आशा नहीं रखनी चाहिए।

इसलिए इस बुराईको दूर करने और उनमें मनुष्योचित स्वाभिमान उत्पन्न करनेका एक यही रास्ता है कि सवर्ण हिन्दू पहले उन्हें विना शर्त्त अपनायें। उसके बाद ही उनकी हालतमें बड़े पैमानेपर तब्दीली हो सकती है। इसलिए सवर्ण हिन्दुओं को इस दिशामें शिक्षित करने और उनका मत तैयार करनेके प्रचण्ड आन्दोलनको कार्यक्रममें सबसे पहला और प्रमुख स्थान मिलना चाहिए। यह काम अधिक-से-अधिक तेजीसे घर-घर पहुँचकर और देशमें इस विषयके साहित्यकी बाढ़ लाकर किया जा सकता है।

मेरी रायमें अस्पृश्यता असत्यकी तरह ही स्वयंसिद्ध पाप है। इस कथनको शास्त्रोंके समर्थनकी जरूरत नहीं है। फिर भी विद्वानोंका एक ऐसा वर्ग मौजूद है जो जन्मजात अस्पृश्यताको उचित ठहरानेके लिए शास्त्रोंकी मदद लेता है। इसलिए कार्यकर्त्ता सुधार-पक्षके साहित्यसे लैस रहें, यह अच्छा ही है। शास्त्रज्ञ लोगोंका ऐसा वर्ग बढ़ता जा रहा है जो आग्रहपूर्वक यह राय रखता है कि आज जो अस्पृश्यता मानी और बरती जाती है, उसके लिए शास्त्रोंमें कोई आधार नहीं है।

यह प्रचार-कार्य केवल ऐसे कार्यकर्ताओंको सौंपना चाहिए जो चरित्रवान हों, जो अपमानसे सहज ही तिलमिला न उठें और जिनमें विरोधी दलीलें सुननेका धीरज और उनका जवाब देनेकी चतुराई हो। धार्मिक सुधारके आन्दोलनमें किसी भी किस्मकी जबरदस्तीकी जरा भी गुंजाइश नहीं है। इस प्रकार खुद जनमतका पता लगाते हुए अगर यह जान पड़े कि हिन्दुओंके बड़े भागको अस्पृश्यतामें कोई पाप मालूम नहीं होता या वह अन्यथा भी उसे दूर करने और हरिजनोंका दर्जा ऊँचा करनेके विरुद्ध है, तो सुधारकोंको अपना भाग्य स्वीकार करना होगा। तब उन्हें बहुमतके खिलाफ चिढ़े बिना, खुद कष्ट उठाकर यह दिखा देना होगा कि उनकी बात सच है और बहुमतकी गलत। ऐसा करनेका उत्तम उपाय यह है कि वे हरिजनोंके साथ एकता साधें और जो हक और सुविधाएँ आज हरिजनोंको प्राप्त नहीं हैं, उन्हें खुद भी स्वेच्छासे छोड़ दें।

स्त्री-पुरुषोंके ऐसे बड़े समुदायके त्यागसे हरिजनोंमें आशाका संचार होगा, खुद अपनी नजरमें उनकी कीमत बढ़ेगी और उन्हें आत्म-सुधारके प्रयत्नके लिए प्रोत्साहन मिलेगा। सवर्णोंमें सबसे कारगर काम यह हो सकता है कि प्रत्येक परिवारको कम-से-

कम एक हरिजनको कुटुम्बीकी तरह या घरके नौकरकी तरह रखनेको राजी करना चाहिए। सम्पन्न परिवारोंमें कम-से-कम एक अतिथिको भोजन कराये बिना भोजन न करनेकी प्राचीन हिन्दू प्रथा है। आजकल इस प्रथाका पालन कम और उल्लंघन अधिक होता है। इसे पंच आह्निक यज्ञोंमें एक माना गया है। एक हरिजनको भोजनमें साथ रखनेसे ज्यादा अच्छा ढंग इस यज्ञके करनेका मैं नहीं सोच सकता।

इसे सहभोज माननेकी भूल नहीं करनी चाहिए। मेरे खयालसे सहभोजका अर्थ ऐसे लोगोंके साथ बैठकर खाना है जो आपके भोजनको छू सकें और जिनके भोजनको आप छू सकें। लेकिन एक-दूसरेका स्पर्श किये बिना एक छतके नीचे साथ बैठकर खाना सहभोज नहीं है।

हरिजनोंकी अस्पृश्यता दूर हो जाये, तो दूसरे वर्णोंको जिस ढंगसे खिलाया जाता है उसी ढंगसे उन्हें भी कुटुम्बमें खिलानेमें कोई ऐतराज नहीं हो सकता। ऐसे बेशुमार सामाजिक समारोह और उत्सव हैं, जिनमें सवर्ण हरिजनोंको कभी नहीं बुलाते। घरके ढोर और दूसरे पशु उनके सुख-दुःखमें भाग ले सकते हैं, परन्तु हरिजन नहीं ले सकते। और यदि लेते भी हैं तो ऐसे मौकोंपर जब उन्हें इस बातका तीखा एहसास करा दिया जाता है कि वे सवर्णों-जैसे मानव प्राणी हैं ही नहीं।

सवर्ण हिन्दू अपना पाप धोयें, इसके लिए उनमें जिस प्रकारके प्रचार और काम हो सकते हैं और होने चाहिए, उसके मैंने थोड़े-से ही दृष्टान्त बताये हैं। परन्तु जैसे कुटुम्बसे निकाले हुएको जब वापस बुलाया जाता है तो उसकी खास खातिर और चिन्ता रखी जाती है, वैसे ही जब सवर्णोंमें सचमुच अपने पापका भान जाग्रत होगा तब वे हरिजनोंमें खुद काम करेंगे। तब वे हरिजनोंके पास शिक्षक या दाताके रूपमें नहीं जायेंगे, बल्कि इस ढंगसे जायेंगे जैसे ऋणी ऋण चुकानेके लिए अपने ऋणदाताके पास जाता है। और उसी नम्र भावसे वे हरिजनोंको और उनके बच्चोंको शिक्षा देंगे और दूसरी तरहसे भी उनकी भरसक मदद करेंगे।

ऐसा कहा गया है कि अगर यह रचनात्मक कार्यक्रम हाथमें ले लिया गया, तो यह इतना खर्चीला और लम्बा साबित होगा कि इससे कोई तात्कालिक लाभ नहीं होगा। अगर यह मुट्ठी-भर सुधारकों द्वारा पूरा किया जाना हो, तो यह एक अलग ही कार्यक्रम होगा। परन्तु अगर इसे आत्मशुद्धिके कार्यक्रमका एक अंग बना दिया जाये, तो यह दूसरा ही रूप धारण कर लेता है। जैसे पेड़की कीमत उसके फलसे होती है, वैसे ही सवर्णोंके हृदय-परिवर्तनका मूल्य उसके परिणामोंसे लगाना पड़ेगा। इसलिए दिन-भरमें पाँच हरिजनोंको छुआ या एक हरिजनको खिलाया, इतना कहना उनके लिए काफी नहीं है। अपने नव-जाग्रत हरिजन-प्रेमके कारण उन्हें इन उपेक्षित मानव-प्राणियोंकी यथाशक्ति सहायता करनेके लिए अधीर हो जाना चाहिए।

आखिर तो खुद हरिजनोंको ही हिन्दू-धर्मकी नई जागृतिका असर महसूस करना है। जबतक सवर्ण लोग जीवनके हर क्षेत्रमें और हर प्रवृत्तिमें हरिजनोंके संसर्गमें नहीं आयेंगे, तबतक वे इस असरको महसूस नहीं करेंगे। अगर यह प्रवृत्ति सर्वव्यापी हो जाये, तो यह रचनात्मक कार्यक्रम खर्चीला नहीं साबित होगा। स्थानीय स्वयंसेवक

अपने-अपने मुहल्लोंमें काम करेंगे और उन्हें मेहनतानेकी कोई जरूरत नहीं होगी। और अगर यह जागृति सर्वव्यापी न हो, तो कार्यकर्त्ताओंका रचनात्मक कार्यक्रम चलानेका फर्ज दुगुना हो जाता है।

इसलिए धीमा हो या तेज, खर्चीला हो या सस्ता, पर यह निस्सन्देह संघकी प्रवृत्तियोंका एक अंग होना चाहिए। शायद तमाम हरिजन बालकों या डॉक्टरी सहायताकी जरूरतवाले तमाम बीमार हरिजनोंतक नहीं पहुँचा जा सके, परन्तु इस दिशामें जो-कुछ भी किया जायेगा वह महत्वपूर्ण होगा, और आगे जो अधिक काम होनेवाला है, उसकी पेशगी-जैसा होगा। . . . .

कितना धन दानमें मिलता है, इसीसे यह अन्दाज लगेगा कि सवर्ण हिन्दुओंने युगधर्म कितना पहचाना है। इस कार्यक्रममें मन्दिर-प्रवेशका स्थान सबसे महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि जब असंख्य सार्वजनिक मन्दिर हरिजनोंके लिए खुल जायेंगे, तो उन्हें तत्काल अपने लिए नवयुगका उदय होता लगेगा। वे यह भूल जायेंगे कि वे कभी समाजसे बहिष्कृत थे। मन्दिरोंमें परस्पर संसर्गसे ही उनकी दृष्टि और जीवनमें परिवर्तन हो जायेगा। वे अपनी बुरी आदतें छोड़ देंगे। मगर कुछ पत्रलेखक कहते हैं :

> **आजकल मन्दिरोंका क्या महत्त्व है? वे अनाचारके अड्डे हैं और वहाँ सब तरहके काम होते हैं।**

मेरे पास एक कतरन है, जिसमें एक बहनका खत है। एक प्रसिद्ध मन्दिरमें जो-कुछ हो रहा है, उसका उसमें भद्दा चित्र है। इन प्रसिद्ध तीर्थोंमें से कुछके खिलाफ जो आक्षेप किये गये हैं वे कहाँतक सही हैं, मुझे नहीं मालूम। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मन्दिर जब बने थे, तब जैसे थे वैसे अब नहीं हैं। मन्दिरोंका सुधार एक स्वतन्त्र विषय है। मन्दिरोंका अधःपतन हरिजनोंको उनमें प्रवेश न करने देनेका उचित कारण नहीं माना जा सकता। मैं इतना जानता हूँ कि मन्दिरोंमें जानेवाले गरीब लोगोंके बहुत बड़े समुदायको उनमें होनेवाले भ्रष्टाचारका स्पर्श नहीं होता। प्रसिद्ध मन्दिरोंके बारेमें चाहे कोई भी बात सच हो, पर वह गाँवोंके मन्दिरोंके बारेमें हरगिज सच नहीं है। गाँवके मन्दिर ग्रामवासियोंके लिए आश्रय-स्थान थे और अब भी हैं। हिन्दू ग्रामवासियोंकी जीवन-व्यवस्था मन्दिरोंके बिना चले, ऐसी कल्पना करना मुश्किल है। हिन्दू कुटुम्बमें जन्म हो, मरण हो या विवाह हो, मन्दिरोंका उसमें खास महत्त्व रहता है। इसलिए मन्दिर कैसा भी हो, उसमें हरिजनोंको प्रवेश मिलना ही चाहिए। परन्तु एक और भाई कहते हैं :

> **हरिजन कुछ नियम — जैसे कि सफाई — पालन करें ही, ऐसा आग्रह यदि आप नहीं रखेंगे, तो मन्दिरोंकी आज जो गिरी-गिरी हालत हो रही है, उसे आप और भी धक्का पहुँचायेंगे।**

मुझे ऐसी किसी विपत्तिका डर नहीं है। मैंने तो कहा है कि दूसरे हरएक हिन्दू उपासकपर जो लागू न हो, ऐसी कोई भी खास शर्त्त हरिजनोंके प्रवेशके लिए नहीं रखी जानी चाहिए।

डॉ० भगवानदासके इस सुझावका मैं हृदयसे समर्थन करता हूँ कि नासमझीसे मनुष्यको जन्मके कारण अस्पृश्य माननेके बजाय, बाह्य आचारके कारण अस्पृश्य मानना चाहिए।[1] भीतरी स्वच्छताका तो नियन्त्रण नहीं हो सकता, परन्तु बाहरी आचरणका नियन्त्रण हो सकता है। इसलिए जिनकी आदतें गन्दी हों, जो नहाये-धोये या साफ-सुथरे न हों और जो शराब पिये हुए हों, उन्हें स्वच्छ होनेतक अस्पृश्य मानना चाहिए, जैसे दुनियामें हर कहीं सभ्य समाजमें मनुष्यको जबतक वह किसी भी कारणसे अस्वच्छ हालतमें है, अस्पृश्य माना जाता है। परन्तु सफाई वगैरहका हौआ बनाकर सवर्ण हिन्दुओंको हरिजनोंका चढ़ा हुआ कर्ज चुकानेमें देर नहीं करनी चाहिए।

इसलिए पहली सीढ़ी यह है कि वे जैसे हैं, वैसे ही उन्हें अपनाया जाये। सिर्फ साधारण नियमोंकी ही — जो इस प्रसंगके लिए खास तौरपर तैयार न किये गये हों बल्कि सुधारसे पहले प्रचलित हों — मर्यादा रखी जाये। हरिजनोंकी स्वतन्त्रता ईमानदारीके साथ घोषित कर दी जाये और अच्छी तरह स्थापित हो जाये, तो बादमें अवश्य नये नियम बनाये जा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-१२-१९३२

२०४. तार : यू० गोपाल मेननको

९ दिसम्बर, १९३२

सुना है कि मत सभी हिन्दुओंका लिया गया है, चाहे वे मन्दिर जाते हैं या नहीं।[2] यदि ऐसा है तो मतसंग्रहका कतई कोई मूल्य नहीं होगा। कृपया तारसे सूचना दें[3] कि वस्तुतः क्या किया जा रहा है। यदि पूरी सावधानी नहीं बरती गई है, तो अबतक प्राप्त मत मेरे खयालसे रद्द कर देने चाहिए।

गांधीजी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७६) से।

१. देखिए "पत्र: भगवानदासको", १४-१२-१९३९ भी।

२. **हिन्दू**, १२-१२-१९३२ के अनुसार, एक व्यक्तिने गांधीजी को पत्र लिखकर यह आशंका व्यक्त की थी कि गुरुवायुरपर मतसंग्रह ठीक ढंगसे नहीं हो रहा है। देखिए अगले दो शीर्षक।

३. गोपाल मेननका तार उपलब्ध नहीं है। परन्तु गांधीजी को भेजा गया राजगोपालाचारीका १० दिसम्बर, १९३२ का तार उपलब्ध है, जो इस प्रकार है: "केवल मन्दिर जानेवाले सवर्णोंके ही मत गिने जायें, इसकी पूरी-पूरी सावधानी बरती गई है। इसके साथ समाचारपत्रोंको जो वक्तव्य दिया गया है, वह देख लीजिए।" (एस० एन० १८६८३)

२०५. पत्र : यू० गोपाल मेननको

९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

आपका पत्र मिला। मेरा खयाल है कि आपके पास अवर्णोंकी भी राय है। मैं यह बात पूरी तरह स्वीकार करता हूँ कि जो राय स्थानीय परिस्थितिके ज्ञान पर आधारित हो, उसीपर अमल होना चाहिए। मुझे खुशी है कि हालात वहाँ ठीक होते जा रहे हैं।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७५) से।

२०६. टी० एस० कल्याणराम अय्यरको लिखे पत्रका अंश[1]

९ दिसम्बर, १९३२

मेरा आशय निश्चय ही उन लोगोंसे रहा है जो वस्तुतः मन्दिर जाते हैं, क्योंकि जिनका मन्दिरकी पूजामें विश्वास है, उन्हींकी रायको महत्त्व दिया जाना चाहिए।

जिनकी मन्दिर जानेमें बिलकुल रुचि नहीं है, उन्हें मेरे खयालसे पक्ष या विपक्षमें राय देनेका कोई अधिकार नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-१२-१९३२

१. कल्याणराम अय्यरने, जो त्रिचुर नगरपालिकाके भूतपूर्व अध्यक्ष थे, १६ दिसम्बरके अपने उत्तरमें लिखा था : "९ तारीखके पत्रका उत्तर देनेकी आपने कृपा की, इसके लिए धन्यवाद। आपको लिखे अपने पत्रमें मैंने यह स्पष्ट कहा था : "मुझे आपसे यह प्रार्थना करनी है कि यह स्पष्ट करें कि सवर्ण हिन्दुओंकी (चाहे वे वस्तुतः मन्दिर जाते हों या नहीं) बहुसंख्याकी राय आपको मान्य होगी या वस्तुतः मन्दिर जानेवालोंकी बहुसंख्याकी राय", और मेरे पत्रका अन्तिम अंश इस प्रकार था : "यदि आपको यह विश्वास हो जाता है कि गुरुवायुर मन्दिरमें पूजा करनेवाले सवर्ण हिन्दुओंकी बहुसंख्या (पूजाका अधिकार रखनेवाले सवर्ण हिन्दुओंकी बहुसंख्या नहीं) हरिजनोंको प्रवेशका अधिकार मिलनेपर मन्दिर जाना छोड़ देगी, तो क्या आप तब भी उपवास करेंगे?" (एस० एन० १८७२३)

२०७. पत्र : ए० एस० अल्तेकरको

९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डॉ० अल्तेकर,

आपके पत्र और साथमें भेजी गई पुस्तिकाके लिए धन्यवाद। इससे पहले आपने जो नकलें भेजी थीं वे भी मिल गई थीं। आपकी पुस्तिका बहुत ही समयोचित है।

आप कहते हैं कि मेरे इस विचारको कि हिन्दूधर्म अस्पृश्यताका समर्थन नहीं करता, आम सनातनी हिन्दू स्वीकार नहीं करेगा। सवाल यह नहीं है कि वह स्वीकृत होता है या नहीं। सवाल यह है कि अस्पृश्यता जिस रूपमें आज बरती जाती है, उसमें विश्वासके लिए क्या कोई प्रमाण है। मैं इस बातसे पूर्णतया भिज्ञ हूँ कि स्मृतियोंमें अस्पृश्यता है। और शायद वेदोंमें भी है। पर उसका सम्बन्ध जन्मसे नहीं, बल्कि बाह्य आचारसे है। यदि आपको बुरा न लगे तो मैं चाहूँगा कि आप इस प्रश्नपर जो दृष्टिकोण मैंने सुझाया है उससे विचार करें। स्मृतियोंके अनुसार, अस्पृश्यताकी परिभाषा क्या है? किसी भी तरहके प्रायश्चित्तसे क्या वह अस्पृश्यता दूर नहीं हो सकती? और अस्पृश्य कौन-कौनसे काम नहीं कर सकते?

हृदयसे आपका,

डॉ० ए० एस० अल्तेकर
हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७८) से।

२०८. पत्र : आर० एल० विश्वासको

९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपकी भावनाओंको मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ, पर मैं आपसे थोड़ा धैर्य रखनेकी प्रार्थना करूँगा। यदि सवर्ण हिन्दू अस्पृश्यताके सम्बन्धमें कुछ करते हैं तो मैं यह बात पूरी तरह स्वीकार करता हूँ कि वह सेवाकी भावनासे होना चाहिए, संरक्षकताकी भावनासे नहीं। मेरे दिमागमें यह चीज भी बिलकुल साफ है कि उसमें दलित वर्गोंसे कोई राजनैतिक लाभ उठानेका विचार कतई नहीं रहना चाहिए। इसलिए जो संघ[1] बनाया गया है उसे राजनीतिसे बिलकुल

१. अस्पृश्यता-निवारक संघ, बादमें इसका नाम हरिजन सेवक संघ रख दिया गया; देखिए "वक्तव्य: अस्पृश्यतापर–१०", ९-१२-१९३२।

मुक्त रखा गया है। मैं यह बात बार-बार कह चुका हूँ कि अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ सवर्ण हिन्दुओंके लिए प्रायश्चित्त होना चाहिए। इसलिए आपकी इस भावनामें मैं आपका पूर्णतया सहभागी हूँ कि आपको किसीके सहारे नहीं उठना चाहिए और अपनी मुक्तिके लिए खुद कोशिश करनी चाहिए। मैं चाहूँगा कि आप मुझसे सम्पर्क रखें और नये संघके कार्यक्रम या काममें यदि आपको कोई चीज अनुचित या अवांछनीय लगे तो उसकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० एल० विश्वास, बी० ए०, बी० एल०
५९, बद्रीदास मन्दिर स्ट्रीट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७४) से।

२०९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय चार्ली,

१२ नवम्बरका तुम्हारा पत्र आज ही मिला है। यदि यह पत्र हवाई डाक़से भेजा गया था तो यह २२ नवम्बरके आसपास मिल जाना चाहिए था। इसलिए लगता यह है कि तुम्हारा पत्र मुझे दिये जानेसे पहले जाँचके पूरे चक्रमें से गुजरा है। मैं पूछताछ करूँगा। अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्य मैं बन्दीके रूपमें जैसा कर सकता हूँ, स्वतन्त्र व्यक्तिके रूपमें उससे ज्यादा कारगर ढंगसे कर सकता था — इस बारेमें कोई शंका भी हो सकती है, यह जानकर मुझे आश्चर्य होता है। मैं तो सोचता हूँ कि यह बात स्वयं स्पष्ट है कि स्वतन्त्र व्यक्तिके रूपमें मैं ज्यादा कारगर ढंगसे काम कर सकता था। साथ ही, सरकारकी स्थितिको भी मैं पूरी तरह समझ सकता हूँ। जबतक वह यह महसूस करती है कि सविनय अवज्ञाको हर कीमतपर दबाना है और मुझे सविनय अवज्ञाका प्रचार करनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ देनेसे उसकी योजना विफल हो जायेगी या रुक जायेगी, तबतक वह मुझे नजरबन्दीमें रखनेको बाध्य है। हाँ, यदि मैं उन्हें यह आश्वासन दे दूँ, चाहे यह जबानी ही क्यों न हो, कि मैं सविनय अवज्ञाका प्रचार नहीं करूँगा, तो बात दूसरी है। परन्तु, जहाँतक मेरा सवाल है, अपने-आपको पूरी तरह अस्पृश्यता कार्यतक सीमित रखनेकी चाहे मेरी कितनी ही इच्छा क्यों न हो, बाहरकी परिस्थितियोंकी पूरी जानकारी बिना, मैं अपने भावी कार्यके बारेमें कोई वचन नहीं दे सकता। सविनय अवज्ञा, आखिर, मौजूदा परिस्थितियोंमें मेरे लिए उतना ही आस्थाका प्रश्न है जितना कि अस्पृश्यता-निवारण। इसलिए मैं पहलेसे यह कभी नहीं कह सकता कि किसी अवसरपर क्या चीज पूरी तरह या अधिकतर मेरा ध्यान आकर्षित करेगी। सविनय प्रतिरोधी चूँकि अपने प्रतिरोधके बदलेमें सजाके लिए उद्यत रहता है, इसलिए उसे उसपर खीझना नहीं चाहिए।

इसीलिए, उस हदतक मुझे अपनी हालतपर सन्तोष है। आशा है, इससे तुम्हें यह स्पष्ट हो गया होगा कि मेरा दृष्टिकोण क्या है।

अप्पासाहब पटवर्धनके मामलेपर मेरे छोटे-से उपवासके बारेमें, आशा है, तुम्हें वहाँ कोई भयोत्पादक रिपोर्ट नहीं मिली होगी। उस घटनाका ब्यौरा देनेकी कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि समाचारपत्रोंमें वह तुमने देख ही लिया होगा। मुझे बस इतना ही कहना है कि थोड़ी-सी कमजोरीको छोड़, उस उपवासका और कोई कुप्रभाव नहीं पड़ा है। मुझे यह भी आशा है कि मन्दिर-प्रवेशके प्रश्न और प्रस्तावित उपवासको समझनेमें और उसका मूल्यांकन करनेमें तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होगी।

आशा है, कामके दबावके बावजूद तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा चल रहा होगा।

डॉ० अन्सारी शानदार आदमी हैं। यदि वे वहाँ हैं तो उन्हें हमारा प्यार कहना और बताना कि उनके पूर्ण स्वास्थ्यके लिए हम ईश्वरसे सदा प्रार्थना करते रहते हैं।

साम्प्रदायिक निर्णयके बारेमें तुम जो कहते हो यदि वह सच निकलता है, तो वह अन्धेरेमें आशाकी किरण है।

हम सबका प्यार।

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९७७) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृष्ठ ४२३ से भी।

२१०. पत्र : जी० एम० जोशीको

९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

प्रश्न १, २ के सम्बन्धमें कहना यह है कि वे मेरे क्षेत्र और क्षमतासे बाहरके हैं।

तीसरे प्रश्नके सम्बन्धमें मैं अपने निजी अनुभवसे यह जानता हूँ कि अस्पृश्यता भारतमें जिस रूपमें हमारी पीढ़ीके समयमें बरती जाती रही है, उससे हिन्दू समाजका विकास रुका है और उसके असरसे सारे भारतकी प्रगति रुकी है।

प्रश्न ४ फिर मेरे बूतेसे बाहरका है।

प्रश्न ५ के सम्बन्धमें मैं साफ मानता हूँ कि किसी व्यक्तिकी आत्माकी आवाज, पुरातन समाजके रिवाजोंकी तो बात छोड़िये, किसी भी चीजको बदलनेके लिए पर्याप्त कारण नहीं है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जी० एम० जोशी,
१७१-ए, बुधवार पेठ, पूना

अंग्रेजीकी माइक्रोफ़िल्म (एस० एन० १८६७७) से।

२११. पत्र : डॉ० एम० एस० केलकरको

९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डॉक्टर आईसे,[१]

आपका पत्र मिला। मन्दिरोंके सम्बन्धमें हममें परस्पर मतभेद है, इसपर सहमत होना चाहिए। लोगोंको मुझसे मिलनेकी खुली छूट केवल तभी है जब उन्हें सचमुच अस्पृश्यता-सम्बन्धी मामलोंपर बातचीत करनी हो। अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमें आपसे मिलनेके लिए विशेष अनुमति लेनी पड़ेगी। यह बिलकुल गैर-जरूरी है। मेरी अच्छी देखभाल की जा रही है और मैं तेजीसे फिर सशक्त होता जा रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एम० एस० केलकर
१७२, औंध मार्ग
खड़की, पूना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६४३) से।

२१२. पत्र : नारणदास गांधीको

९ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

पुरातनको जाकर देख आये, यह अच्छा किया। कोई-न-कोई उसके पास जाता रहे, यह आवश्यक है। कल . . .[२] के बारेमें पत्र भेजा था, मिल गया होगा।

इसके साथ पुरातन, राघवन और कुसुमके पत्र भेज रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. डॉ० केल्कर बर्फसे इलाज करते थे, इसीलिए गांधीजी उन्हें आईस (बर्फ) कहते थे।

२. यहाँ नाम छोड़ दिया गया है। देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", ७/८-१२-१९३२ भी।

२१३. पत्र : मणिबहन पटेलको

९ दिसम्बर, १९३२

चि० मणि,

यह मानकर कि तुझे बम्बईसे नियमपूर्वक खबरें पहुँचती रहती हैं, मैं रोज लिखनेकी चिन्ता नहीं करता। डाह्याभाईके स्वास्थ्यमें सुधार होता ही जा रहा है। अभी दिनमें दो-तीन घंटे थोड़ा बुखार रहता है। फिर भी शक्ति खूब आती जा रही है। आज ही देवदास आया है। वह डाह्याभाईसे मिलकर आया है। वह कहता है कि डाह्याभाई घोड़े-जैसे लगते हैं। डॉक्टर खुराक बढ़ाते जा रहे हैं। अब दूध वगैरहके सिवा सागका झोल भी दिया जाता है। और खूब आनन्दमें हैं। आज नटराजनका पत्र आया है। उसमें भी ऐसे ही अच्छे समाचार हैं। इसलिए तुझे अब बिलकुल चिन्तामुक्त हो जाना है। तेरे लम्बे पत्रका उत्तर जरा अवकाश मिलनेपर लिखाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहन पटेलने, पृष्ठ ९६-७

२१४. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

९ दिसम्बर, १९३२

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा तार मिल गया होगा। उसी वखत तुमको तारसे[1] उत्तर दिया था। अब तो मिला ही होगा। एक उपवास करना पड़ा और वह तो अब पुरानी बात हो गई। अशक्ति तो पहलेसे ही थोड़ी है ही। लेकिन फिरसे वह आइस्ता आइस्ता बढ़ती जायगी। उपवास मेरे जीवनका एक नित्य और अविभाज्य अंग हो गया है। उससे मुझे जो जानते हैं और जो निकटवर्ती है उनको गबराना नहीं चाहिये। यह विश्वास रखो कि इस शरीरसे जितनी सेवा लेनी है उतनी लिये बिना ईश्वर उसका नाश नहीं होने देगा। तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

कृष्ण नायर कहां है?

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २३९६) से।

१. देखिए पृष्ठ १२२।

२१५. तार : के० ल० दफ्तरीको[1]

[१० दिसम्बर, १९३२][2]

क्या आप अस्पृश्योंके मन्दिर-प्रवेशका विरोध करनेवाले सनातनी शास्त्रियोंकी एक छोटी-सी सभामें भाग लेनेके लिए २३ की सुबह पूना पहुँच सकते हैं? यदि आप पहुँच सकते हों तो मैं २३ से पहले आपसे मिलना चाहूँगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-१२-१९३२

२१६. पत्र : के० रामुन्नी मेननको

१० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र और साथमें मेरे नाम गुरुवायुरकी ३०० स्त्रियोंके पत्रकी नकल मिली। ऐसे सभी मामलोंमें मूल पत्र पानेवालेके पास भेजना ही सही होता है।

आपके पत्रके दूसरे पैरेके सिलसिलेमें, मुझे इस वातसे अचम्भा हुआ कि आपने छलपूर्ण तरीकेसे मतसंग्रह होनेके सम्बन्धमें शिकायतोंका उल्लेख किया है। आपके वायदेके अनुसार, मैं आरोपके प्रमाणमें विवरणकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। इस बीच मैं आपको केवल यही आश्वासन दे सकता हूँ कि, किसी भी व्यक्तिपर किसी किस्मका दवाव डाले विना, खुले ढंगसे निष्पक्ष मतसंग्रह करनेकी पूरी सावधानी वरती जा रही है। पूरी ईमानदारीसे मतसंग्रह हो सके, इसके लिए पूरी सावधानी बरती गई है। इसलिए यदि कोई ऐसी वेईमानी आपकी निगाहमें आई है तो मेरा सुझाव है कि उसे तत्काल संचालक श्रीयुत माधवन नायरके ध्यानमें लाइये और साथ ही ऐसी हर अनियमितताके सम्बन्धमें मुझे भी सूचित करते रहिए।

१. नागपुरके प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान।
२. "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तारीखकी प्रविष्टिसे।

महामहिम वाइसरायको लिखे आवेदन-पत्रकी एक प्रति मुझे मिली है। मैंने उसे ध्यानसे पढ़ा और मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि बजाय दलीलके मैंने उसे भर्त्सना और बेमतलबकी बातोंसे ही भरा हुआ पाया।

हृदयसे आपका,

श्रीयुतको कोजीपूरत रामुन्नी मेनन, बी० ए०
"रामचन्द्रम", पो० आ० गुरुवायुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६८०) से।

२१७. पत्र : यू० गोपाल मेननको

१० दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

श्री के० रामुन्नी मेननने संलग्न दस्तावेज[1] मेरे पास भेजी है। उन्होंने लिखा है कि मूल प्रति उनके पास है जो जरूरत पड़नेपर पेश की जा सकती है। आप कृपया इसके बारेमें मुझे सब-कुछ बताइये। मैं साथमें उनका पत्र तथा अपने उत्तरकी नकल भी भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत गोपाल मेनन
चलपुरम, कालीकट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७९) से।

२१८. पत्र : सदाशिव राव कर्नाडको[2]

१० दिसम्बर, १९३२

प्रिय सदाशिव राव,

आपका पत्र मिला। मुझे खुशी है कि आपने वहाँकी गतिविधिका सविस्तार विवरण दिया है। गुप्त प्रचारके बारेमें मैं केवल एक ही बात कह सकता हूँ कि

१. गांधीजी को गुरुवायुर की ३०० महिलाओं-द्वारा लिखे हुए पत्रकी नकल; देखिए पिछला शीर्षक।

२. सदाशिव रावने अपने ५ दिसम्बरके पत्रमें गुरुवायुर मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनकी गतिविधियोंका सविस्तार विवरण देते हुए यह भी लिखा था: "हमारे काममें सनातनी प्रतिनिधियोंकी गुप्त योजनाओंसे रुकावट पड़ रही है। . . . वे कुछ चुने हुए लोगोंकी गुप्त बैठकें कर रहे हैं। उनकी मंत्रणाओंमें यह निश्चय हुआ है कि हमारे लोगोंके प्रति उन्हें जो नीति अपनानी है, वह पूर्ण और शुद्ध असहयोगकी नीति होगी. . ." (एस० एन० १८६५७)।

आपको उसकी उपेक्षा करनी चाहिए। लेकिन पूरी तरहसे न्याययुक्त और ईमानदार रहनेका अपना प्रयत्न आपको दुगुना कर देना चाहिए। यदि मतसंग्रह हमारे विरुद्ध जाता है तो कोई बात नहीं। लेकिन हमारे किसी भी कार्यकर्त्ताकी ओरसे कोई अनुचित दवाव नहीं डाला जाना चाहिए। विरोधी चाहे कुछ भी कहें या करें, उनके साथ पूरी तरह शिष्ट व्यवहार होना चाहिए। यदि आप सर्वथा सच्चे रहें, तो देखेंगे कि जहर बेकार हो जाएगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सदाशिव राव कर्नाड
द्वारा गोपाल मेनन
एडवोकेट, चलपुरम, कालीकट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६८४) से।

२१९. पत्र : चास पीकॉकको[1]

१० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

मैं इससे पहले आपको पत्र नहीं लिख सकता था। आपके सामने एक दिलचस्प प्रश्न है। मैं समझता हूँ कि जिन ईसाइयोंकी धर्म-परिवर्तन करानेकी कोई इच्छा नहीं है, वे साधारण हिन्दू संस्थाओंके अधीन या साथ काम करके अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनकी ठोस मदद कर सकते हैं। जो रचनात्मक कार्य किया जाना है, उसका दायरा इतना विस्तृत है कि उसके लिए कार्यकर्त्ता कभी ज्यादा नहीं हो सकते। जहाँतक ईसाई अछूतोंका सम्बन्ध है, मैं कुछ नहीं कहना चाहता। ईसाई दोस्तोंसे जो पत्र मिल रहे हैं उनसे मैं देख रहा हूँ कि हिन्दू आन्दोलनने भारतीय ईसाइयोंकी आत्माको झकझोरा है और वे उनके बीच मौजूद अस्पृश्यताके दोषसे मुक्ति पानेको अधीर हैं। मैं समझता हूँ कि मैंने आपके प्रश्नका समुचित उत्तर दे दिया है।

हृदयसे आपका,

चास पीकॉक, महोदय
हेड मास्टर, बोर्ड मिडिल स्कूल, सालूर, (विजगापट्टम)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६८२) से।

१. पीकॉकने १७ नवम्बरके अपने पत्रमें गांधीजी से हरिजनोंके प्रति भारतीय ईसाइयोंके कर्तव्य पूछते हुए लिखा था: "मैं एक भारतीय ईसाई हूँ और एक बोर्ड स्कूलमें अध्यापक हूँ। लगभग २५ सालसे मैं अध्यापकका काम कर रहा हूँ। मैं अपना फालतू समय उन आदि-आन्ध्रोंपर लगाना चाहता हूँ जो हजारोंकी संख्यामें इस शहरमें व पास-पड़ौसमें रहते हैं। मैं अपना ईसाई धर्म छोड़े बिना और उनका धर्म-परिवर्तन करनेकी इच्छा रखे बिना उनके लिए काम करना चाहूँगा।" (एस० एन० १८६३३)

२२०. पत्र : आर० वी० पटवर्धनको

१० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं साफ देख रहा हूँ कि आप मेरे लेखोंका अध्ययन नहीं करते रहे हैं। मैं अपने उसी वक्तव्यपर दृढ़ हूँ कि मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनमें कोई दबाव नहीं है और, जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, कोई दबाव होगा भी नहीं।

२. ऐसे किसी भी मन्दिरको, चाहे वह किसी जाति विशेषका हो या सामान्य, जहाँ मन्दिरकी चारों तरफकी बस्तीके सचमुच मन्दिर जानेवाले लोगोंकी बहुसंख्या अस्पृश्योंके प्रवेशका विरोध करती है, छेड़ा नहीं जायेगा।

३. कानूनका कोई उल्लंघन नहीं होगा।

४. यदि प्रबन्धकर्त्ता मालिक हैं, तो जबतक वे सहमत नहीं होंगे, चाहे मन्दिर जानेवाले अस्पृश्योंके प्रवेशके पक्षमें ही क्यों न हों, प्रवेशका कोई प्रयास नहीं किया जायेगा।

५. एक सार्वजनिक मन्दिरके सम्बन्धमें, जहाँ प्रबन्धकर्ता न्यासी हैं, उनसे मन्दिर जानेवालोंके बहुमतका आदर करनेकी अपेक्षा की जायेगी।

६. अल्पसंख्यकोंपर कोई दबाव नहीं डाला जायेगा। मैंने पहले ही सुझाव दिया है कि उनके लिए, यदि वे राजी हों तो, उनकी संख्याके अनुसार दिनके कुछ घंटे ऐसे नियत कर दिये जायें जिनमें केवल वे ही पूजा करें। संक्षेपमें, ऐसा हर प्रयत्न किया जा रहा है कि किसीकी भी धार्मिक भावनाको ठेस न पहुँचे। शंकराचार्यके बारेमें मेरे वक्तव्यका आपने जो उल्लेख किया है, उसका अर्थ मैं नहीं जानता।

मैं कहूँगा कि गुरुवायुर मतसंग्रहके प्रतिकूल निर्णयके बारेमें मैंने जो-कुछ कहा है[1], उसे आप फिर पढ़ें। आपने मेरी स्थितिको सर्वथा गलत समझा है।[2]

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० वी० पटवर्धन
बुधवार पेठ, पूना सिटी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८९८१)से।

१. देखिए पृष्ठ ७२ और १५६।

२. अपने १६-१२-१९३२ के जवाबमें श्री पटवर्धन इस आरोपका खण्डन करते हैं कि उन्होंने गांधीजी के किसी वक्तव्यको गलत समझा है और कहते हैं: "आपकी घोषित प्रतिज्ञा किसी भी तरह उचित सिद्ध नहीं की जा सकती।" (एस० एन० १८७२६)

२२१. पत्र : जमनालाल बजाजको

[११ दिसम्बर, १९३२ से पूर्व][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारे दोनों पत्र मिल गये। मेरी व्यस्तताकी कोई सीमा नहीं और कमलनयनके बारेमें मेरे विचार भिन्न होनेसे लिखनेकी जल्दी नहीं थी; इसलिए मौका मिलते ही पत्र लिखनेका विचार किया था। आज लिखने ही वाला था कि तुम्हारा दूसरा पत्र आ गया। इस पत्रसे ऐसा लगता तो है कि तुम्हारी तबीयत गिरी है; परन्तु मुझे ऐसी आशंका नहीं होती। मवाद फिर से निकला, यह तो अच्छा ही हुआ। कृत्रिम उपायोंसे मवाद बन्द हो जाये, तो कुछ लाभ नहीं। पेटमें आँव पड़ गई लगती है, तो इसका कारण यह हो सकता है कि कोई ऐसी चीज खानेमें आ गई हो। इधर एक-दो दिन रोटी ठीक नहीं पकी थी। तुम रोटीका टोस्ट बनाकर खाओ तो शायद ज्यादा अच्छा होगा। तुम्हारे दाँत तो मजबूत हैं ही। रोटी खूब चबानी चाहिए, यह तो जानते ही होगे। यहाँसे टोस्ट बनाकर भेज सकते हैं, क्योंकि डबल रोटी हमारे वार्डसे ही वहाँ जाती है और रोटी बनानेमें थोड़ा-बहुत मेरा हाथ है। अतः टोस्ट बनानेमें कोई कठिनाई नहीं आयेगी। यदि तीन दफा खाते हो तो टोस्ट ताजे भी बनाकर भेजे जा सकते हैं।

व्यापार-सम्बन्धी भेंट-मुलाकातमें बहुत वक्त देते हो, यह भी इस समय न करना ही उचित है। डॉक्टर मोदीके कहे अनुसार पूर्ण विश्रामकी आवश्यकता है। बहुत बोलना भी अच्छा नहीं है। यहाँकी आबहवासे पूरा फायदा उठानेके लिए आराम करना और कम बोलना बहुत जरूरी है।

तुम्हारे बारेमें कर्नल डॉयलने काफी समयतक बातचीत की है; परसों ही बातें हुईं। उनकी सलाह यूरोप जानेकी ही थी; परन्तु मुझे तो इसकी कोई जरूरत मालूम नहीं होती। इस देशमें प्राप्य सहायतासे जो-कुछ हो सकता है, वह करके निश्चित रहना। परन्तु तुम्हारी इच्छा विलायत जानेकी हो तो मुझे जरूर सूचित करना। तुमसे बार-बार मिलनेकी जो माँग[2] मैंने कर रखी है, उसका जवाब भी आजकलमें आना चाहिए।

अब कमलनयनके विषयमें। कमलनयनको दक्षिण आफ्रिका भेजनेके लिए खास इजाजत लेनी होगी। वहाँ उसके लिए अध्ययनका कोई साधन नहीं है। अंग्रेजी स्कूल या कॉलेजमें उसको स्थान नहीं मिलेगा। हिन्दुस्तानियोंके लिए एक कॉलेज खोला है, परन्तु हमारी दृष्टिसे उसमें कुछ भी नहीं है। खानगी अध्ययनकी सुविधा भी बहुत ही कम है। फीनिक्स तो जंगल है। वहाँ जानेसे उसको छापेखानेमें ही लगा रहना

१. साधन-सूत्रके अनुसार पत्र इसी तारीखको प्राप्त हुआ था।
२. देखिए "पत्र: बम्बई सरकारके सचिवको", २९-११-१९३२।

पड़ेगा। अतः किसी भी दृष्टिसे दक्षिण आफ्रिकाका विचार करने योग्य नहीं है। जब कि सीलोनमें इससे उलटा है। वहाँ जितने भी स्कूल हैं, उनमें से किसीमें भी कमलनयन जा सकता है। नुवारा एलियाकी आबहवा तो उत्तमोत्तम है। सृष्टि-सौंदर्य वहाँसे अच्छा शायद ही कहीं हो। वहाँ जान-पहचानवाले काफी मिल सकते हैं। बर्नार्ड आलोविहारी तो घरका ही आदमी है और बहुत विद्वान है, चरित्रवान है। मेरे साथ ही विलायतसे आया था और सीलोनके प्राचीन महाकुटुम्बोंमें से है। वहाँ अगर ठीक न लगे तो फिर उसे तुरन्त वापस भी बुलाया जा सकता है। समय-समयपर पत्र-व्यवहार भी होता रह सकता है। इसलिए मेरी दृष्टिसे कमलनयनकी अंग्रेजी पढ़नेकी अभिलाषा पूरी करनेके लिए हमारे सिद्धान्तोंके अनुकूल जगह सीलोन ही है। खुद कमलनयनको भी अच्छी मालूम होती है। परन्तु तुमको यदि वह ठीक न मालूम दे तो अभी वह वर्धामें ही बना रह सकता है। यदि वर्धामें उसे सन्तोष मिलता हो, तो कहनेकी कोई बात ही नहीं। सन्तोष नहीं है, ऐसा उसकी बातसे और उसके पत्रसे मालूम हुआ, इसलिए यह प्रश्न उपस्थित हुआ है।

मणिलालका बुधवारको जाना मुल्तवी रहा। इसलिए अब जाना तो फिर २९ तारीखको ही हो सकता है।

छगनलाल जोशी मेरी मददके लिए कल यहाँ आ पहुँचा है। इससे मेरा काम हल्का तो नहीं होगा, परन्तु जो हमेशा अधूरा रहा करता था, उसमें फर्क पड़ जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०७) से।

२२२. पत्र : देवनायकाचार्य व हीरालाल डी० नानावटीको

११ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके ८ तारीख[1] के पत्रके लिए धन्यवाद। अपने पत्रके दूसरे पैरेमें आपने जो अर्थ निकाला है वह ठीक है। इसलिए आप कृपया आचार्य ध्रुवसे पत्र-व्यवहार करें और प्रस्तावित विचार-विमर्शका प्रबन्ध करें[2]। मैं ऐसा मानता हूँ कि ऐसे संयुक्त विचार-विमर्शका उद्देश्य मेरे दिल और दिमागपर असर डालना होगा। स्वाभाविक है कि मैं विचार-विमर्शको खुले मनसे और आदरपूर्वक ध्यानसे सुनूँगा। यदि अपने पत्रके पैरा ४ में आपका अभिप्राय इससे कुछ अधिक है तो कृपया मुझे समझायें।

आपके अन्तिम दो पैरोंमें जो झिड़की है उसका जवाब देनेकी जरूरत नहीं है।

सर्वश्री देवनायकाचार्य व हीरालाल डी० नानावटी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६८८) से। हिन्दू, १९-१२-१९३२ से भी।

१. देखिए परिशिष्ट ८।
२. इसके आगे जो लिखा है वह गांधीजी के स्वाक्षरोंमें है।

२२३. पत्र : प्रज्ञानेश्वर यतिको

११ दिसम्बर, १९३२

आपके स्पष्ट पत्रके लिए धन्यवाद। मैं आपसे कहूँगा कि मेरे लिए बहुत चिन्ता न कीजिए। मैं चालीस वर्षसे अधिक समयसे लगातार सेवाकार्य कर रहा हूँ। इस अर्सेमें दूसरोंके लिए उपवास करनेके आप मुश्किलसे बारह प्रसंग बता सकेंगे। मेरी मान्यताके अनुसार, उपवास करनेकी योग्यता जब मुझमें आ गई, उसके बाद ही वह मेरे जीवनमें आया है। कोई भी जल्दबाजीमें उपवास कर नहीं सकता। और मेरा दावा तो आप जानते ही हैं। मैं अपने-आप कार्य नहीं करता, अन्तर्यामीकी प्रेरणाके अनुसार ही करता हूँ। यह आवाज ईश्वरकी होती है या शैतानकी, यह बताना हमेशा आसान नहीं होता है। फिर भी हर मामलेमें अन्तर्यामीकी प्रेरणाका दावा न्यायोचित माना जा सकता है। मेरे और श्री माटेके बीच हुई बातचीत परसे, जैसी कि वह उन्होंने दी है, आपका अनुमान बहुत जल्दबाजीका है। इस मामलेकी सफाईके लिए शायद आपसमें मिलना बेहतर होगा। मैं . . . तारीखको . . . बजे आपकी राह देखूँगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३१८

२२४. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

११ दिसम्बर, १९३२

पहले तो अप्पासाहबके बारेमें। अछूतोंकी सेवा जहाँ वे हों वहीं करनी चाहिए, और जो अस्पृश्य नहीं हैं वे जबर्दस्ती अस्पृश्य बना दिये जायें, तो अस्पृश्योंके सेवक इसे देखते नहीं रह सकते। अप्पाकी इस विषयमें तपश्चर्या कोई नई नहीं थी और प्रश्न यह नहीं था कि अमुक कामके बजाय मुझे अमुक काम दो, बल्कि प्रश्न एक विशिष्ट धर्मसे विमुख न रहनेका था। इसमें इससे ज्यादा मैं नहीं जाऊँगा। मगर अप्पासाहब या अपने कदमके उचित होनेके बारेमें मुझे एक क्षणके लिए भी शंका नहीं हुई थी और यह कदम उठा लेनेके बाद भी कोई शंका नहीं है।

अब मन्दिर-प्रवेशके बारेमें। ट्रस्टी अपनी मर्यादाके बाहर जाकर कुछ भी करें, तो वह गैर-कानूनी होगा ही। यह आन्दोलन ट्रस्टियोंसे एक भी गैर-कानूनी कदम

१. प्रज्ञानेश्वर यतिने लिखा था: "खेदका विषय है कि आप किसी भी मुद्देपर समझौता नहीं करते और फिर भी उपवासकी धमकी देते रहते हैं। आपसे व्यवहार कोई कैसे करे?"

२२५. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

११ दिसम्बर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

इतना याद रखना कि खुराक सम्बन्धी परिवर्तनका सुझाव[1] मैंने अधिक स्वास्थ्य, संयम और शान्तिकी दृष्टिसे दिया है; जिसे ठीक न लगे वह न करे। जिसे करने पर माफिक न आया हो वह भी छोड़ दे। यह परिवर्तन जबरदस्ती, लज्जावश कोई न करे। खाते समय, यज्ञ करते समय मौन रहते हो न?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू/२)से।

२२६. पत्र : गंगाबहन बी० झवेरीको

११ दिसम्बर, १९३२

चि० गंगाबहन (झवेरी),

तुम्हारे-जैसा नियमपूर्वक पत्र लिखनेवाला लिखना छोड़ दे, यह ठीक नहीं। मैं चाहे जितना काममें व्यस्त होऊँ, तो भी मुझे तुम सबके पत्र चाहिए। तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होता जा रहा होगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५०)से।

२२७. पत्र : नारणदास गांधीको

११ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

सीतलासहायको लिखा पत्र पढ़ लेना। लक्ष्मीका भी पढ़ लेना।

छगनलाल आ गया है। उससे मालूम हुआ कि ज्वारकी कांजी कैदियोंको सब से ज्यादा प्रिय है। मैं और पूछताछ कर रहा हूँ। तुम्हें निरीक्षणसे जो अनुभव हुआ है सो लिखना। प्रयोग करनेवालोंसे बीच-बीचमें पूछते रहना। सबका वजन तो लेते ही होगे।

१. देखिए ३६-७, ९३ और १०६-७।

तुम्हारे पत्र मिलते रहते हैं। फिलहाल आवश्यकतानुसार लिखते रहना। क्या गेहूँ, बाजरा, ज्वार बिना छाने लेते हो? कहाँ पीसा जाता है? चार बार भोजन करनेवाले चाहें तो चार ही बार करें। जरूरी बात तो यह है कि फिर बीचमें कुछ न खायें। चाहे जब खा लेनेसे बहुत नुकसान होता है। अब घीकी तंगी नहीं रही होगी। क्या शंकरभाई दूध नहीं लेते? बवासीरकी ज्यादा फिक्र न करें।

रावजीभाईकी माँग उचित लगती है। डाहीबहन बलभद्रको ले गई होगी।

सोमणको लिखनेके लिए कहना। वह वजन बढ़ानेकी कोशिश करे। लेकिन बढ़ानेके चक्करमें बीमार न पड़ जाये। जमना क्यों बीमार पड़ गई? अब तो ठीक होगी।

कुल मिलाकर २५ पत्र हैं। सभी एकसाथ नत्थी कर दिये हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१ से। सी० डब्ल्यू० ८२७९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२२८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

११ दिसम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरे गलेकी गिल्टियाँ कट गई होंगी; पूरे विवरणकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

पतली राब अधिक अनुकूल पड़े तो वही लेना। मेरा कहना इतना ही है कि सवेरे राब ही लेनेसे दस्तकी दृष्टिसे लाभ हो सकता है। परन्तु मेरा किसी भी बातके लिए आग्रह नहीं है। उबाला हुआ साग लेनेकी आवश्यकता जान पड़े तो वह ले लेना। पानी भी धीरे-धीरे पीनेसे लाभ तो होता ही है।

धुरन्धरको पूनियाँ भेजी होंगी। इस मासके अन्तमें तेरी और सुशीलाकी राह देखूँगा। किसनको पत्र लिखो तब मेरे आशीर्वाद लिख भेजना।

लक्ष्मीका मन अच्छी तरह जान लेना। पद्माको समझनेका प्रयत्न करना।

क्या शान्ता आई है? उससे सब जान लेना। मुझे यह तौर-तरीका पसन्द नहीं आया। मैं उसे लिख रहा हूँ।

मेरे पत्र कितने ही छोटे क्यों न हों, तो भी तुझे तो पुराण भेजते ही रहना है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१४) से। सी० डब्ल्यू० ६७५३ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

२२९. पत्र : पद्माको

११ दिसम्बर, १९३२

चि० पद्मा,

अब तेरा मन शान्त हो गया होगा। सच्ची स्वतन्त्रता किसे कहते हैं, क्या यह बात समझ गई? समझ गई हो तो मुझे समझाना। तुझे फिर मिलना हो तो आ जाना। तेरी मनकी अशान्ति भी बीमारीका कारण है, ऐसा मैं समझता हूँ। इसपर अच्छी तरह विचार करके मनको शान्त बना। मनकी गहराईमें कहीं शादीकी इच्छा हो तो मुझे लिखना। वहाँ अच्छी तरह आराम करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४२) से। सी० डब्ल्यू० ३४९४ से भी; सौजन्य: प्रभुदास गांधी।

२३०. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

११ दिसम्बर, १९३२

चि० रामचन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। उसमें मेरे सवालका जवाब नहीं था। अब तो तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक हो गया होगा।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३०१) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

२३१. पत्र : शान्ता शं० पटेलको

११ दिसम्बर, १९३२

चि० शान्ता,

मुझे तेरा तौर-तरीका पसन्द नहीं आता, क्योंकि वह समझमें नहीं आता। लगता है कि तू अपनी मर्जीसे आती-जाती है। मंगला, पुष्पाको क्यों ले गई, यह भी समझमें नहीं आया। इन सबका शायद तेरे पास उचित कारण होगा। किन्तु उसे नारणदासको और मुझे बता देना तेरा धर्म है। मुझे ब्योरेवार पत्र लिख। मिलना हो तो आकर मिल जा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६८) से।

२३२. पत्र : सनातनियोंको[1]

११ दिसम्बर, १९३२

आप मेरा मत-परिवर्तन करनेका भरसक प्रयत्न कीजिए। किन्तु धार्मिक मामलोंमें परिषदके निर्णयको स्वीकार करनेके लिए मैं बाध्य नहीं हूँ।[2]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३१९।

२३३. पत्र : तुलसी मेहरको

११ दिसम्बर, १९३२

चि० तुलसी मेहर,

तुमारे दो पत्र मिले। मुझे तुमारा हिसाब चाहिये। प्रति वर्ष कितने चर्खे बढ़े, कितना खर्च हुआ, धुनकी कितनी हुई, कितना कपास धुना, कितना काता-बुना इ० सब जैसे कार्यालयोंमें हुआ करता है। तुमारा स्वास्थ्य अच्छा जानकर आनंद हुआ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५४२) से।

१. कुछ पत्र-लेखकोंने अपने संयुक्त पत्रमें लिखा था कि वे पण्डितोंकी एक परिषद बुलायेंगे, किन्तु वे जानना चाहते थे कि क्या गांधीजी उस परिषद्का निर्णय स्वीकार करेंगे।

२. इस विषयकी अधिक चर्चाके लिए देखिए परिशिष्ट १९।

२३४. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

११ दिसम्बर, १९३२

भाई मूलचंदजी,

न माता साथ आवेगी न पत्नी। धर्म आवेगा, इसलिये जो धर्म कहे सो करो। परमेश्वर औ[र] प्रकृति भिन्न नहि है, इसलिये प्रकृति भी अनादि है। जो परमेश्वर र्नहि है वह उपाधि है।

बापू

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७२) से।

२३५. पत्र : अमतुस्सलामको

११ दिसम्बर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला। फिकर सब छोड़ो। सब खुदाके हाथमें छोड़ो। डॉ० शर्मा[1] अगर आश्रममें आवें तो अच्छा है। हमारे यहाँ कुदरती इलाज ही होने चाहिए। लेकिन ऐसा शख्स हमको नहीं मिला जो आश्रमके कानूनका पाबन्द रहे। आजकल मेरे पाससे लम्बे खतकी उम्मीद न की जाये।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६७) से।

२३६. पत्र : टी० चिन्नैयाको

१२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका ९ तारीखका पत्र[2] मिला। मैं नहीं समझता कि पत्र लिखकर मैं आपको यकीन दिला सकता हूँ। मेरे उपवास द्वारा, जो केवल आदि-द्रविड़ोंकी सेवाके उद्देश्यसे ही किया गया था, यदि जाने या अनजाने उनके प्रति कोई अन्याय हुआ है, तो वस्तुतः मुझे बहुत खेद होगा। यदि आप यह महसूस करते हैं कि आप हिन्दू-समाज

१. डॉ० हीरालाल शर्मा, निसर्गोपचार-विशेषज्ञ।

२. उद्धरणोंके लिए देखिए परिशिष्ट ९।

के अंग हैं, तो मुझे यह मान लेना चाहिए था कि आप सवर्ण हिन्दुओं-सहित सभी हिन्दुओं द्वारा अछूत उम्मीदवारके चुने जानेका बुरा नहीं मानेंगे।

मुझे ऐसा लगता है कि पराचेरीमें[1] रहे बिना भी मैं वह जानता हूँ जो आप मुझे बताना चाहते हैं।

यदि जमींदार या व्यापारी अस्पृश्योंकी तरह असहाय वर्ग होते, यदि उनके लिए पृथक निर्वाचक-मण्डलोंकी योजना की जाती, तो निश्चय ही मेरे मनमें उनके लिए भी उपवास करनेकी बात उठती, क्योंकि मुझे पक्का यकीन है कि उनकी बेबसी तब बढ़ जाती। वैसे भी जब भी कभी जनताकी चुनी हुई विधानसभा होगी तब यह पता चलेगा कि जिनके लिए विशेष निर्वाचक-मण्डल हैं, वे उन्हें संरक्षण की पद्धति नहीं वरन् दुर्बलताकी पद्धति ही पायेंगे। ऊपर बताये गये कारणोंसे, मैं नामावलीको घटाकर दो व्यक्तियोंकी करनेको सहमत नहीं हो सकता, और किसी भी सूरतमें कोई एक व्यक्ति यरवदा समझौतेमें रद्दोबदल नहीं कर सकता। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि जैसे-जैसे समय बीतेगा, आपको स्वयं निश्चय हो जायेगा कि प्रधान मन्त्रीकी योजना तथा यरवदा योजनामें से यरवदावाली बेहतर है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६९३) से।

२३७. पत्र : उर्मिला देवीको

१२ दिसम्बर, १९३२

मेरे उपवाससे तुम्हें चिन्तित नहीं होना चाहिए। यह संयमका एक अंग है। यह बड़े आध्यात्मिक प्रयत्नसे अर्जित विशेषाधिकार है। सत्य और अहिंसाके पुजारीके शस्त्र-भण्डारमें यह सबसे शक्तिशाली अस्त्र है। इसलिए इसका प्रयोग बिरले ही अवसरोंपर किया जाता है। और हर कोई इस हथियारको काममें नहीं ला सकता। मुझमें इसके इस्तेमाल करनेकी योग्यता है, इससे तो तुम्हें आनन्द मिलना चाहिए। यह यह मानकर कहा जा रहा है कि मैं इसका उपयोग आध्यात्मिकताकी दृष्टिसे करता हूँ। यदि यह मेरी आत्मवंचना हो, तो भगवान मुझे और मुझपर श्रद्धा रखनेवाले तुम सबको बचाये। लेकिन मेरे बारेमें इसकी आध्यात्मिकता यदि तुम मान लेती हो, तो दबाव डालनेवाले मेरे इस उपवाससे तुम्हें हार्दिक आनन्द अनुभव होना चाहिए और तुममें नया बल प्रकट होना चाहिए। मुझसे प्रेम रखनेवाले सभी लोग इससे आन्दोलित होने चाहिए, पर उस आन्दोलनसे उन्हें अपना फर्ज ज्यादा अच्छी तरह पूरा करनेका जोश आना चाहिए। मैं जानता हूँ कि मैंने जो-कुछ लिखा है, वह सब आसानीसे तुम्हारी समझमें आ जायेगा और भविष्यमें मेरे उपवासकी

१. जिस स्थानपर दलित वर्ग रहते हैं।

बात सुनकर तुम कोई शिकायत नहीं करोगी। दूसरा उपवास कब आयेगा, यह कौन जानता है!

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३२१

२३८. एक पत्र

१२ दिसम्बर, १९३२

'ब्लीडिंग वूंड'[1] देखा। मुझे पसन्द नहीं आया। इतनी सम्मतियाँ मँगवाकर और छापकर क्या अर्थ सरा? वैद्य लोग जैसा अपनी औषधिके लिए करते हैं, वैसा क्या हम ऐसी पुस्तकोंके लिए करें? यदि किसीकी प्रस्तावनाकी आवश्कता थी, तो केवल चिन्तामणिजी की काफी थी। इतनी सारी सम्मतियाँ लेनेसे उनकी प्रस्तावनाका महत्त्व कम हुआ। इन सब वचनोंको छापनेके लिए जो टाइप चुने गये, उनमें कोई कला देखनेमें नहीं आती। प्रत्येक लेखके पीछे तारीख, स्थान इत्यादि नहीं दिया गया। और भी त्रुटियाँ हैं। लेकिन इतनी काफी होनी चाहिए। मेरी टीकाका हेतु तुमको हतोत्साह करनेका कभी नहीं है, भविष्यमें सावधान रहनेको बतानेका है। अपने कार्य में हमको आत्मविश्वास होना चाहिए। और जिसको आत्मविश्वास है, वह प्रस्तावना न ढूंढ़े; और जिसको नहीं है, वह एक तरफसे लेकर सन्तुष्ट रहे।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३२२

२३९. पत्र : क० मा० मुंशीको

१२ दिसम्बर, १९३२

भाई मुंशी,

हम सभीकी गिनती निकम्मोंमें की जानी चाहिए, किसीकी कोहनी दुखती है तो किसीका शरीर स्नायु-विकारसे पीड़ित है। इस तरह हम सब बीमारों-जैसे बने रहते हैं। मेरी कोहनी तो जब ठीक होनी होगी तब होगी, किन्तु तुम्हें तो स्नायु-विकारसे पीछा छुड़ा ही लेना चाहिए। यदि न छूटे तो डॉ० गिल्डरको अपनी उपाधि छोड़ देनी चाहिए। तुमने अगर पहली ही बार बायें हाथसे पत्र लिखा है तो यह बहुत अच्छा लिखा माना जायेगा।

जीजीमाँ वही हैं न जिन्हें मैंने उस सार्वजनिक प्रार्थना-सभामें देखा था और जिनके साथ थोड़ा विनोद भी किया था? उनको लकवा होनेसे मुझे कोई ज्यादा

१. इस युवकने उक्त शीर्षकसे एक लेख-संग्रह प्रकाशित किया था। उसके लिए चार विशिष्ट व्यक्तियोंसे भूमिका, प्रस्तावना और उनका आशीर्वाद प्राप्त किया था।

दुःख नहीं हुआ। वे मुझसे तो बड़ी होंगी ही। उन्हें लिखना "अन्तिम निद्राके लिए कोई-न-कोई तो निमित्त चाहिए ही, तो फिर लकवा या कोई और निमित्त उसके लिए बने, हम क्यों उसकी चिन्ता करें। इस तरह सौ वर्ष जीनेकी आशा होते हुए भी यदि मृत्यु-रूपी मित्रसे भेंट करनी ही पड़े तो हँसते हुए करनी चाहिए। जिस प्रार्थनामें आकर उन्होंने भाग लिया था हम रोज रातको वैसी ही प्रार्थना करते हैं। उसका यही उद्देश्य है कि हमें हँसते हुए प्राण देनेकी कला आ जाये। उसके अन्तिम श्लोकका ध्यान करना।

तार[1] के बाद मैंने पत्र[2] भी लिखा था। वह तुम्हें मिल गया होगा। उसमें तुम्हें तारसे भी ज्यादा स्पष्ट अभयदान दिया है। वह पत्र न मिले तो मुझे लिखना। उसकी जो बातें याद आ जायेंगी वे फिर लिखूँगा। मुझे पत्र लिखते रहना।

लीलावतीको आज सुबह पत्र लिखा। उसके बाद तुम्हारा पत्र मिला। यह उत्तर रातको लिखवा रहा हूँ।

तुम्हें आशीर्वाद दिया जा सकता हो तो

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५२१) से; सौजन्य: कन्हैयालाल मा० मुंशी।

२४०. पत्र : कमलनयन बजाजको

१२ दिसम्बर, १९३२

आत्माके विषयमें जो-कुछ कहा गया है, वह विशुद्ध आत्माके बारेमें है। जैसे कोई पानीके गुणोंका वर्णन करे, तो विशुद्ध पानीका ही किया जाता है। मैले पानीका वर्णन एक-सा हो ही नहीं सकता। पानीको ज्ञान हो, तो पानीका हर खड्डा तेरे-जैसा ही सवाल पूछे। उनमें से कोई शुद्ध पानीके गुण वर्णन करके अपने सब साथियोंसे शुद्ध बननेकी विनती करे। ठीक यही काम शुद्धात्माको जाननेवाले श्रीकृष्णने किया है। आत्माके गुणोंको जानकर उसके जैसे बननेकी कोशिश करनी चाहिए। अगर तू यह पूछे कि आत्मा अशुद्ध कैसे हो जाती है, तो वह मैं नहीं जानता। वह जाननेकी जरूरत भी नहीं। अशुद्धि है, शुद्धके गुण कैसे हैं और अशुद्धि कैसे मिट सकती है, इतना हम जानते हैं। यह हमारे कामके लिए काफी होना चाहिए। तेरे प्रश्नोंका जवाब न मिला हो, तो फिर पूछना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२ पृष्ठ ३२२-३

१. देखिए "तार : क० मा० मुंशीको", ७-१२-१९३२।

२. देखिए "पत्र : क० मा० मुंशीको", ८-१२-१९३२।

२४१. पत्र : नारणदास गांधीको

१२ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा १० तारीखका पत्र मिल गया है। राधाका मामला चौंका देनेवाला है। ज्वर १०३ तक रहता है, इसलिए वह बहुत दुर्बल हो गई होगी। लगता है कि कुसुम तो कुछ ठीक हो रही है। साबरमतीमें जिस जेठालालका देहान्त हुआ उसके बारेमें कुछ और खबर मिली होगी; कितने दिनकी सजा थी, क्या हुआ था, किस बातपर पकड़ा गया था, आदि मालूम हो तो मुझे लिखना।

मीठूबहन, भणसाली और कान्तिका पत्र मिल गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२८० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२४२. पत्र : बेगम मोहम्मद आलमको

[१२ दिसम्बर, १९३२][1]

प्यारी बहन,

इस वक्त तुम्हारा खत बिलकुल अच्छा है। हिंदू बीवियाँ ज्यादातर बहोत खराब दस्तखत निकालती हैं लेकिन जितने खत मुस्लिम बहनोंके मिलते हैं अच्छे रहते हैं। इसलिए जब कोई खत अच्छा नहीं रहता है तो मुझे अच्छा नहीं लगता। अच्छा हुआ कि मेरी मजाकने यह सब किया। हम उम्मेद रखें कि डाक्टर साहब इस बारी बिलकुल अच्छे हो जायेंगे।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २३) से।

१. मूल पाठसे जाहिर है कि यह पत्र बेगम आलमके शौहर डॉ० आलमको लिखे २६ नवम्बर, १९३२ के पत्रके बाद लिखा गया था। डॉ०-आलमको २२ दिसम्बर, १९३२को लिखे पत्र तथा "दैनन्दिनी, १९३२" की इस तारीखकी प्रविष्टमें उनकी बीवीको लिखे एक पत्रका उल्लेख है जो शायद यही पत्र है।

२४३. पत्र : चि० वि० वैद्यको

१३ दिसम्बर, १९३२

आपका इतना विस्तृत और ज्ञानवर्धक पत्र[1] पाकर मुझे खुशी हुई। अच्छा होता यदि प्रधान मन्त्रीको अपना पत्र भेजनेसे पहले आप अपनी स्थितिपर मुझसे बातचीत कर लेते। लेकिन अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है और यदि आप बिना किसी असुविधाके समय निकाल सकते हैं, तो मैं आपसे मिलना चाहूँगा और इस विषय पर आपसे बातचीत करना चाहूँगा, तबतक मैं अपनी शंकाएँ रख रहा हूँ:

१. क्या आपके कहनेका अभिप्राय यह है कि किसी भी हालतमें हिन्दू जनमत द्वारा हिन्दू कानून या हिन्दू प्रथा बदली नहीं जा सकती?

२. क्या आप यह कहते हैं कि स्मृतियाँ बदली नहीं जा सकतीं और उनमें कही गई हर बातका एक श्रद्धालु हिन्दूको अक्षरश: पालन करना है?

३. स्मृतियाँ जिस युगमें लिखी गईं क्या उस युगकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए नहीं लिखी गई थीं या प्रकट हुई थीं?

४. क्या स्मृतियाँ विभिन्न कालमें नहीं लिखी गई थीं?

५. यदि आपका ऐसा विचार है कि किसी भी प्रकारकी कल्पनीय परिस्थितिमें कानून प्रचलित प्रथाको बदल नहीं सकता, तो फिर आप उस कानूनी कठिनाईको कैसे हल करेंगे जो मद्रासमें बताई जाती है? वह कठिनाई यह है कि मौजूदा अदालतों द्वारा तय किये गये कानूनके अधीन, एक आदमीतक, चाहे जनमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें ही क्यों न हो, कुछ मन्दिरोंमें उनके प्रवेशको रोक सकता है।

६. या, आपका ऐसा मत है कि मौजूदा मन्दिर अस्पृश्योंके लिए कभी नहीं खोले जा सकते?

१. ८ दिसम्बर, १९३२ का, जिसमें लिखा था: "... मैंने (१८ नवम्बर, १९३२ को) तृतीय गोलमेज-परिषदके अध्यक्ष श्री रैम्जे मैक्डॉनल्डको एक पत्र लिखा है ... मुझे डर है कि उतावले सुधारक मन्दिर-प्रवेश और वैसे ही अन्य सुधार कानून द्वारा हिन्दुस्तानके उन बेचारे मूक सनातनियोंपर थोप देंगे जिनकी आवाज गोलमेज-परिषद अथवा विधान सभाओंमें भी सुनी नहीं जाती। इसी कारण मैंने वह पत्र लिखा ... इसके बाद **टाइम्स ऑफ इंडिया**में आपकी यह घोषणा प्रकाशित हुई कि यदि आपको अधिकार हो तो आप हरिजनोंको छूनेसे इनकार करना एक कानूनी अपराध बना देंगे। यह आखिरी तिनका था जिसने मेरी खामोशीकी कमर तोड़ दी और उसी क्षण मैंने इस विषयपर तृतीय गोलमेज-परिषदके अध्यक्ष श्री रैम्जे मैक्डॉनल्डको एक पत्र लिखा और उनसे विनती की कि नये संविधानमें वे वैसा ही प्रबन्ध करें जो वर्तमान गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्टमें मौजूद है, और जिसके अनुसार कोई भी भावी विधान सभा धार्मिक तथा सामाजिक मामलोंमें सुधार लादनेवाले कानून नहीं बना सकेगी। ... मेरे विचार इस विषयमें अत्यन्त तीव्र हैं कि ऐसे मामलोंमें राज्यकी विधान सभाओंको तटस्थ रहना चाहिए और इस उद्देश्यके लिए इस समय मैं जो-कुछ कर सकता था, उसे करना मैंने अपना कर्तव्य माना।" (एस० एन० १८६६९)।

७. या, कानूनका आपका विरोध इस मान्यतापर आधारित है कि मिश्रित कानून हिन्दू-धर्ममें दखल होगा, हालाँकि यदि हिन्दू-मत लिया जाता तो ऐसे कानूनको जनताका कोई समर्थन मिलता?

८. इस बातपर आपको क्या आपत्ति है कि मात्र हिन्दू विधायक पहले हिन्दू-धर्मके सम्बन्धमें कानून पास करें और फिर, औपचारिकता पूरी करनेके लिए, पूरा सदन या दोनों सदन, जैसी भी स्थिति हो, उसे पास करें?

९. वेदोंके अनुसार या, आप कहना चाहें तो, परम्परागत हिन्दू-धर्मके अनुसार अछूत कौन हैं?

१०. क्या अस्पृश्यता जन्मसे सम्बद्ध है और पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती है?

११. क्या ऐसी अस्पृश्यता ऐसे अस्पृश्योंके किसी प्रायश्चित्त या शुद्धि-संस्कारसे भी दूर नहीं हो सकती?

१२. परस्पर खान-पान और विवाहका निषेध क्या वर्ण-धर्मका अनिवार्य अंग है?

१३. यदि एक वर्णका आदमी दूसरे वर्णके आदमीके साथ खान-पान तथा विवाह-सम्बन्ध करनेसे बचता है, तो क्या उससे वर्णधर्मका पूर्णरूपेण पालन हो जाता है?

१४. क्या इस प्रकार परस्पर खान-पान या विवाह करनेवाला अपने वर्णसे च्युत हो जाता है?

१५. क्या वृत्तिसे वर्णकी जाँच नहीं होती, और क्या जो व्यक्ति अपनी वृत्ति बदलकर दूसरे वर्णकी वृत्ति अपना लेता है, जैसे कि ब्राह्मण किसी और वर्णकी वृत्ति अपना ले, तो वह दूसरे वर्णका हो जाता है, या उसे किसी भी वर्णमें होनेका अधिकार नहीं रहता?

अपने प्रश्नोंकी इस लम्बी सूचीमें और प्रश्न जोड़कर मैं आपका धीरज खत्म नहीं करूँगा और आपकी शक्तिपर बहुत बोझ नहीं डालूँगा। मैं यह भी नहीं चाहता कि आप, हमेशाकी तरह, तुरन्त जवाब देनेके लिए आधी राततक चिराग जलाकर बैठें। शायद आप एक या दो वाक्योंमें पूरा उत्तर दे सकेंगे जो उन सभी मुद्दोंको जो मेरे ध्यानमें आये हैं, साफ कर देगा। जो भी हो मैं आपके जवाबकी प्रतीक्षा करूँगा, और उससे भी ज्यादा उत्सुकतासे आपके इस वचनकी प्रतीक्षा करूँगा कि आप मुझसे मिलनेके लिए यरवदा आनेका समय निकालेंगे। मेरा अनुमान है कि आप मुझसे उम्रमें बड़े हैं, लेकिन मुझे विश्वास है कि उम्रका आपके जोशपर असर नहीं पड़ता।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत चि० वि० वैद्य, एम० ए०, एल०एल० बी०
गिरगाँव बैंक रोड, बम्बई नं० ४

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६९५) से।

२४४. पत्र : के० नागेश्वर रावको

१३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय नागेश्वर राव,

आपका पत्र मिला। आपके लिए मेरा सन्देश यह है कि मुझे आशा है कि आन्ध्र हिन्दू-धर्मपर से अस्पृश्यताका कलंक मिटानेमें सबसे आगे रहेगा।

श्री सूर्यनारायण रावसे भेंट[1] के सम्बन्धमें मैं नहीं समझता कि समाचारपत्रोंको भेजनेको कुछ है। मैंने उन्हें जो समय दिया उसमें से लगभग तीन-चौथाई तो उनके गुरुसे पत्र-व्यवहारके पढ़नेमें ही बीत गया और फिर इस बातपर बातचीत होती रही कि हिन्दू-धर्मके बारेमें सब-कुछ जाननेके उनके पास क्या प्रमाण हैं और उनकी क्या योग्यताएँ हैं। उन्होंने मुझे यह विश्वास दिलानेके लिए कि अस्पृश्यताका गीतामें प्रतिपादन किया गया है और उसका जन्मसे सम्बन्ध है, भगवद्गीताके कुछ श्लोक उद्धृत किये। लेकिन उन्होंने मुझपर यह प्रभाव छोड़ा कि जनमत, समाजके सामान्य हितमें, अवर्णोंके मन्दिर-प्रवेशपर से प्रतिबन्ध हटानेकी माँग करता है, और जहाँतक अन्य निर्योग्यताओंका सम्बन्ध है वे निश्चय ही दूर की जानी चाहिए। लेकिन वे इस बातपर जोर देते रहे कि मन्दिर-प्रवेशके सिलसिलेमें कोई बलप्रयोग नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि सुलह-समझौतेके ढंगसे ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए कि जहाँ कहीं जनमत तैयार हो चुका हो, वहाँ मन्दिरोंके संरक्षक मन्दिरोंको अस्पृश्योंके लिए खोलनेको राजी किये जा सकें। स्वाभाविक रूपसे, हमारे सहमत होनेका कोई सवाल ही नहीं था। लेकिन एक-दूसरेकी स्थिति समझनेका प्रयत्न किया गया और उन्होंने कहा कि चूँकि वे यह समझ गये हैं कि मैं वस्तुतः किस चीजके लिए संघर्ष कर रहा हूँ, इसलिए वे दक्षिणमें सनातनियोंको इकट्ठा करने और एक समझौता करानेका प्रयत्न करेंगे। इस समय, जब मैं यह पत्र लिखवा रहा हूँ, रामचन्द्र राव यहीं हैं और वे मेरी इस धारणाका आम तौरपर अनुमोदन करते हैं। यदि श्रीयुत सूर्यनारायण रावने कोई ऐसी बात कही है जो इस वक्तव्यसे मेल नहीं खाती, तो आपको इसे प्रकाशित करनेसे पूर्व उन्हें दिखा देना चाहिए, या यदि आप इस निष्कर्षपर पहुँचें कि मेरा वक्तव्य हर हालतमें प्रकाशित होना चाहिए, तो भी यह पहले उनको दिखाये बिना प्रकाशित नहीं किया जाना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० नागेश्वर राव,
"आन्ध्र पत्रिका"
थाम्बू चेट्टी स्ट्रीट, जॉर्जटाउन, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६९८) से।

१. ३ दिसम्बर, १९३२ को। देखिए "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तारीखकी प्रविष्टि।

२४५. पत्र : सदाशिव राव कर्नाडको

१३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय सदाशिव राव,

मुझे खुशी है कि आप मुझे अपनी वहाँकी कार्यवाहियोंसे सूचित करते रहते हैं। वा के भी विरुद्ध रोष तो होना ही था। हमें यह सब स्वाभाविक मानकर प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए। यदि हम ऐसा करें, यानी कट्टर सनातनी लोगोंके रोषका मनमें भी बुरा न मानें बल्कि ऐसा समझें कि यदि हम उनकी जगह होते तो शायद हम भी वैसा ही करते, तो आप देखेंगे कि यह रोष प्रतिरोधके अभावमें बहुत ही कम समयमें खत्म हो जायेगा। क्रोध-भाजन क्रोधपर अक्रोध द्वारा विजय पा सकता है, यह एक वैज्ञानिक तथ्य है जिसकी रोजमर्राके जीवनमें परीक्षा की जा सकती है। लेकिन मैं जानता हूँ कि यह एक कठिन काम है। पर कठिन हो या सहज, इस शुद्ध धार्मिक मामलेमें हमें आत्मसंयम नहीं छोड़ना चाहिए और किसी भी ढँगसे किसी भी रूपमें जवाबी वार नहीं करना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सदाशिव राव कर्नाड

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६९९) से।

२४६. पत्र : रामतरण मुखर्जीको

१३ दिसम्बर, १९३२

आपके पत्रके लिए धन्यवाद।[1] सभीके पास शंकराचार्य जैसी नैसर्गिक क्षमता नहीं हो सकती। परमेश्वरने मुझे जो भी क्षमताएँ दी हैं उनका उपयोग मैं अपने ढँगसे थोड़ा-बहुत कर रहा हूँ। जिस प्रकार शंकराचार्यजी जैसे धर्मप्रचारकोंने समय-समयपर अपने प्रकाण्ड ज्ञानको धर्मार्थ लगाया है, उसी प्रकार अन्य लोगोंने प्रार्थना और उपवाससे धर्मको आगे बढ़ाया है।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६६०) से।

१. देखिए परिशिष्ट १०।

२४७. पत्र : एस० पी० पटवर्धनको

१३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय अप्पा,

तुम्हारे दो पत्र[1] मिले। ७ तारीखके अपने पत्रमें तुमने जो महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाये हैं उनमें से बहुतोंकी मैं अभी चर्चा करना नहीं चाहता हूँ। पर एक चीज ऐसी है जिससे मामला उलझ गया है। इन्स्पेक्टर-जनरलको यह पता नहीं था, और अभी तक भी सरकारी तौरपर उन्हें इसकी जानकारी नहीं हैं, कि आप सचमुच मैला साफ करनेका काम कर रहे थे। इसलिए पहलेके आदेश इस बहुत ही ठोस तथ्यको न जानते हुए पास किये गये थे। अब अचानक केवल तुम्हारे केसमें परिवर्तन करना बहुत ही कठिन है। जिस चीजके लिए तुम लड़ रहे थे, और लड़ रहे हो, वह तो आखिर सिद्धान्त है। और सिद्धान्तका प्रश्न अब भारत सरकारके सामने है। उसका फैसला मुझे आशा है निश्चय ही कुछ महीनोंमें नहीं, कुछ दिनोंमें ही हो जाना है। इसलिए, मेरा खयाल है कि फिलहाल तुम्हें जो प्रगति हुई है उससे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए। मुझे भेजा गया तुम्हारा तार असंदिग्ध था, इसलिए मेरे खयालसे तुम्हें उपयुक्त पौष्टिक आहार लेना चाहिए। पूरे भोजनसे मेरा आशय वह भोजन नहीं है जो स्वस्थ बंदियोंको दिया जाता है। तुम्हारे लिए दस पौण्डकी क्षति एक बड़ी क्षति है। इसलिए मेरे खयालसे तुम्हें डॉक्टर द्वारा निर्धारित भोजन ही, यदि वह अन्यथा निषिद्ध न हो, लेना चाहिए। जहाँतक मैं समझता हूँ, जेलोंके इन्स्पेक्टर-जनरलने कृपा करके ये हिदायतें दी हैं कि तुम्हें वह भोजन मिलना चाहिए जिसकी तुम्हारे शरीरको जरूरत है। आशा है कि दूध लेनेमें तुम्हें कोई आपत्ति नहीं होगी।

दयसे तुम्हारा,

बापू

श्रीयुत अप्पासाहब पटवर्धन

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, पोलिटिकल फाइल सं० ३१/१०८-पोल, १९३२, पृ० ७१; सौजन्य : नैशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (६), पृ० २५३ भी

१. ७ और ८ दिसम्बरके।

२४८. पत्र : रामचन्द्र जे० सोमणको

१३ दिसम्बर, १९३२

भाई सोमण,

तुम्हारा पत्र कल रातको मेरे हाथ लगा। एक पत्र मिला है, ऐसा कुछ ख्याल था। इसलिए साप्ताहिक डाक भेजते हुए मनमें भ्रम रहा और तुमसे पत्रकी माँग की। जो पत्र चाहता था वह मिल गया है।

तुम्हारा प्रश्न सूक्ष्म है। सहनशीलतासे कायरता आ जाना सम्भव अवश्य है। ऐसा भय न होता तो धर्म-अधर्मके कठिन प्रश्न न खड़े होते। साधारण तौरपर कह सकते हैं कि जिस अपमानसे आत्माका गला घोटना पड़े उसे सहन नहीं करना चाहिए। अधिकतर ऐसा नहीं होता। यदि शारीरिक सुख-सुविधाका प्रश्न न हो तो जिसे सहन करनेके लिए तैयार न हों, उसका विरोध शारीरिक असुविधा मोल लेकर भी करना ठीक है। इसमें हरएकको अपनी सीमा निर्धारित कर लेनी चाहिए। फिर आत्मा और अहंताका अन्तर समझना बाकी रहता है। अहंकारी बात-बातपर क्रुद्ध हो जायेगा। जिसने स्वार्थ त्याग दिया है उसके लिए इसे समझ पाना सम्भव है। इससे जितना सन्तोष प्राप्त कर सको, करना। मेरा वजन एक दिनमें ६ रतल कम नहीं हुआ; चार दिनमें हुआ है। अप्पाका मामला अभी नहीं समझाऊँगा। मेरे उपवासोंके बारेमें चिन्ता न करना, सीखना पड़ेगा। यदि उनका मूल कारण अध्यात्म सम्बन्धी हो तो खुश होना चाहिए। और मुझे विश्वास है, मेरे सम्बन्धमें ऐसा ही है।

तुम्हारा वजन बढ़ रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४९) से। सी० डब्ल्यू० ९४ से भी; सौजन्य : रामचन्द्र जे० सोमण।

२४९. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – ११

१४ दिसम्बर, १९३२

आपने कहा है कि मतसंग्रह आपके विरुद्ध जाये, तो आपके बयान[1] के अनुसार आप अनिश्चित कालके लिए अपना उपवास स्थगित कर देंगे। इससे मान लीजिए कि मतदाता गुरुवायुर मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशके पक्षमें होते हुए भी आपके उपवासको रोकनेके लिए ही आपके खिलाफ राय दें, तो आप क्या करेंगे?

ऐसा सवाल मुझसे पूछा गया है। मैं यह आशा रखता हूँ कि मतदाता ऐसी किसी चालाकीका आसरा नहीं लेंगे। फिर भी मुझे मालूम हो जाये कि उन्होंने ऐसी चालाकी की है, तो मैं इतना ही कहूँगा कि ईमानदारीसे और अपनी मान्यताके अनुसार मत देनेके बजाय ऐसा प्रपंच करके वे मेरी जिन्दगीको ज्यादा जोखिममें डालेंगे।

अस्पृश्यता-निवारणके लिए अपनी जिन्दगीकी बाजी लगा देनेके बाद मैं आशा रखता हूँ कि ऐसी किसी चालाकीसे लाभ उठाकर मैं उसे बचानेकी कायरता नहीं दिखाऊँगा। मैंने उपवास स्थगित करनेकी जो बात कही है, वह यह ध्यानमें रखकर ही कही है कि मत ईमानदारीसे दिये जायेंगे।

मुझे अगर विश्वास हो जाये कि गुरुवायुरके आसपास रहनेवालों और मन्दिर जानेवालोंमें से अधिकतर सचमुच ही हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध हैं और फिर भी मैं उपवास करनेका आग्रह रखूँ, तो मैं अपना उद्देश्य पूरा करनेके लिए जबर्दस्तीके उपाय करनेका अपराधी ठहरूँगा। मुझे खयाल नहीं कि मैंने अपनी जिन्दगीमें कभी ऐसी बात की हो। और जन्म-भर पाले गये नियमको मैं अब, जब मैं जीवनके अन्तके निकट आ पहुँचा हूँ, भंग करूँ, यह नहीं हो सकता।

अपने इस सन्निकट उपवासको दबावके लेशमात्र भी दोषसे मुक्त रखनेको मैं बहुत ही उत्सुक हूँ। और मुझे शंका नहीं कि इस उपवासके अन्तमें सबको मालूम हो जायेगा कि यह किसी भी तरहके दोषसे मुक्त था। मेरे सोचे हुए उपवासका क्या असर होता है, यह मैं एक वैज्ञानिककी भाँति निरीक्षण कर रहा हूँ और इससे मुझमें आशा और आनन्दका संचार होता है। इसके कारण लोग विचारमें पड़ गये हैं। इससे किसी भी मनुष्यको अपनी अन्तरात्माके विरुद्ध काम करनेको मजबूर नहीं होना पड़ेगा। परन्तु जो लोग सुस्त हैं, उन्हें यह अपनी सुस्ती निकाल देने और तेजीसे काम करनेको बाध्य करेगा। यानी, जो लोग मेरे प्रति प्रेम रखते हैं, उन्हें यह काममें लगा रहा है।

१. देखिए पृष्ठ १५६।

ऐसी प्रवृत्तिसे मुझे अफसोस नहीं हो सकता। जो यह मानते हैं कि मैं हिन्दुओंको धर्मभ्रष्ट करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, वे मुझे गुस्सेसे भरे पत्र लिखते हैं और कहते हैं कि जल्दी-जल्दी उपवास करके शीघ्र ही मर जाओ। मैं ऐसे पत्रोंकी कोई परवाह नहीं करता। मैं ऐसे पत्रोंका आदी हो गया हूँ। यहाँ उनका जिक्र इतना ही बतानेके लिए कर रहा हूँ कि जो लोग अस्पृश्यता-निवारणके विरुद्ध हैं, उनपर मेरे उपवासका कोई असर होनेकी सम्भावना नहीं है। मेरे उपवासके केवल विचारका तो उनपर इससे भी कम असर हो, यह स्वाभाविक है। किन संयोगोंमें उपवासकी पद्धतिने मेरे जीवनमें किस तरह स्थान लिया है, इस बारेमें ज्यादा कहनेकी इच्छा होती है। मगर वह सब मैं भविष्यके लिए मुल्तवी करता हूँ। अभी तो इतना ही कहूँगा कि श्री केलप्पनको या मुझे अपनी अन्तरात्माके दिये हुए आदेशके मार्गसे कोई विचलित नहीं कर सकेगा।

मतसंग्रहके मामलेमें पूरी ईमानदारी रखनेकी भरसक कोशिश की गई है, फिर भी मतसंग्रहमें लगे आदमियोंपर जमोरिन दगाबाजीका आरोप लगते हैं, इससे मुझे दुःखके साथ आश्चर्य भी होता है। मैं जमोरिनको सज्जन समझता हूँ। वे जानते हैं कि श्री माधवन नायर, जो मतसंग्रह समितिके अध्यक्ष हैं, सारे केरलमें आदरपात्र माने जानेवाले प्रसिद्ध कानून-विशेषज्ञ हैं। श्री राजगोपालाचारी मौकेपर मौजूद हैं और वे कार्यकर्त्ताओंको मदद दे रहे हैं। मैं नहीं समझता कि वहाँ कोई ऐसा प्रमुख कार्यकर्त्ता है, जो जरा भी शंकास्पद व्यवहार होने देगा।

इसलिए दगाबाजीके बारेमें कोई बात जमोरिन या और किसी आदमीके सुननेमें आये, तो उन्हें उसके निश्चित मामले समितिके ध्यानमें लाने चाहिए। बिना किसी प्रमाणके किये गये अललटप्पू आक्षेपोंकी जाँच करना असम्भव है। यह साफ नैतिक और धार्मिक सवाल है। इसमें राग-द्वेष या पक्षपातके लिए स्थान हो ही नहीं सकता। सनातनी और सुधारक दोनों सत्यको खोज निकालनेके लिए चाहें तो एक-दूसरेके साथ मिलकर कामकर सकते हैं। मैंने समय-समयपर यह यकीन दिलाया है और फिर दिलाता हूँ कि स्थानीय लोकमत मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें होनेके बारेमें मुझे यदि अपनी भूल जान पड़ेगी, तो मैं तुरन्त अपने कदम वापस ले लूँगा। सत्यकी उपासनाके सिवाय मेरे लिये और कोई साध्य नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-१२-१९३२

२५०. पत्र : ई० ई० डॉयलको

१४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

क्या आप संलग्न पत्र अप्पासाहब पटवर्धनके[1] पास भिजवानेकी कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० १०

२५१. पत्र : सुन्दरदासको

१४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका इसी ८ तारीखका पत्र मिला। आपकी विशेष स्थिति जाने बिना, आपका भावी कार्यक्रम निर्धारित करना मेरे लिए कठिन है। इसलिए मेरा कहना यह है कि आप स्थानीय कार्यकर्त्ताओंसे मिलें और उनके साथ सलाह-मशविरा करके कार्यक्रम निश्चित करें। पर, हर हालतमें, मुझे निम्नलिखित सूचना देनेकी कृपा करें:

१. आपके जिलेमें वाल्मीक अछूतोंकी आबादी कितनी है?
२. उनका धन्धा क्या है?
३. वे वहाँ कबसे बसे हैं?
४. वे किन-किन निर्योग्यताओंके शिकार हैं?

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सुन्दरदास
मन्त्री, वाल्मीक अछूत मण्डल
कोहाट (उ० प० सी० प्रा०)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७००) से।

१. देखिए "पत्र: एस० पी० पटवर्धनको", १३-१२-१९३२।

२५२. पत्र: मोतीलाल रायको[1]

१४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मोती बाबू,

पहले आपका पत्र और अब आपका तार मिला। आशा है, मेरा तार आपको मिल गया होगा। आप जो पत्र लिखते हैं या तार भेजते हैं, उन सबमें आपका उत्साह और आशावाद मुझे साफ दिखाई देता है। मुझसे मिलने और पण्डित पंचानन तर्करत्न[2] को अपने साथ लानेका आपका फैसला अच्छी चीज है।

परन्तु मैं चाहता हूँ कि आप अपने मूल आधारके बारेमें बिलकुल निश्चित हो जायें। समस्या हिन्दू-धर्मको एक जीवन्त धर्म[3] बनानेकी है। इसलिए मूल सिद्धान्तों पर समझौतेकी इसमें कोई गुंजाइश नहीं है। यदि अभी इसी समय उसके पुनरुज्जीवनको हम अपने दैहिक नेत्रोंसे न भी देख सकें, तो भी कोई बात नहीं है। पर अपने उतावलेपनमें हमें अस्पृश्यतासे, जिस रूपमें हम उससे आज परिचित हैं, समझौता नहीं करना चाहिए। एक प्रकारकी अस्पृश्यता तो विश्व-भरमें मिलती है, पर हमारी लड़ाई उस दानवतासे है जो हमें आज दिखाई देती है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत मोतीलाल राय,
प्रवर्तक संघ, चन्दरनगर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४०) से।

१. उनके ७ दिसम्बर, १९३२ के पत्रके उत्तरमें, जिसमें बंगालमें २५ दिसम्बरको हो रहे अस्पृश्यता-निवारण सम्मेलनके लिए तारसे एक सन्देश भेजनेकी माग की गई थी (एस० एन० १८६६६)।

२. सनातन विचारधाराके एक नेता।

३. साधन-सूत्रमें 'फेज' शब्द था जो भूलसे 'फेथ' की जगह लिखा गया मालूम होता है।

२५३. पत्र : यू० गोपाल मेननको

१४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

आपका पत्र मिला। सफाईकी शर्त्तोंके बारेमें आपने जो कहा, वह मैं समझा नहीं। मुझे जो फार्म भेजे गये थे, उनमें मेरा उसपर ध्यान गया था। पर मैंने उसकी वही व्याख्या की थी जो तुमने की है कि वह एक ऐसी शर्त्त है जो विश्वमें सब कहीं लागू है। स्वाभाविक रूपसे हरिजन उन आम शर्त्तोंके अधीन आते हैं।

गाँवके लोग टेढ़ी खीर साबित हो रहे हैं, इसकी मुझे खुशी है। यह उनके लिए और हमारे लिए अच्छी शिक्षा है। कार्यकर्त्ताओंको न तो आत्मविश्वास खोना चाहिए और न गाँववालोंके साथ उतावलापन ही दिखाना चाहिए।

उर्मिला देवी और बा का स्वास्थ्य अच्छा है, यह मेरे लिए खुशीकी बात है।

आपको यह पत्र लिखवानेके बाद मेरे सामने माधवन नैयरका पत्र आया। इसलिए यह पत्र उन्हें भी देना और इसे संयुक्त पत्र मानना। जितना कठोर श्रम आप कर रहे हैं, उसमें मैं आपसे होड़ तो नहीं कर सकता, पर मैंने अपने लिए काम निश्चित कर लिया है, और नित्य बढ़ते पत्र-व्यवहार तथा मुलाकातोंकी बढ़ती हुई संख्यासे पार पानेके लिए मुझे समयकी किफायत करनी है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७०५) से।

२५४. पत्र : भगवानदासको

१४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय बाबू भगवानदास,[१]

आपका १० तारीखका बहुत ही मार्मिक पत्र[२] मिला। पता नहीं किस सिलसिलेमें मैं देवीप्रसादजीसे यह कह गया कि आपको और परमार्थ बाबूको गुरुवायुर जाना चाहिए। आपके स्वास्थ्यकी स्थिति मैं जानता था। वह बातचीत अब मुझे याद

१. वाराणसीके डॉ० भगवानदास, दार्शनिक और संस्कृतके विद्वान।

२. उन्होंने गांधीजी को लिखा था कि 'अस्वस्थताके बावजूद' वे २० या २१ तारीखको चल देंगे और २२ को पूना पहुँच जायेंगे और २३ को ध्रुवजी के साथ गांधीजी से मिलेंगे तथा उसके बाद उनके साथ गुरुवायुर चले जायेंगे (एस० एन० १८६८५)।

नहीं आ रही। पर मैं किसीको दोष नहीं दे सकता, देवीप्रसादजी को तो कतई नहीं। किन्तु ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए कि उस भूलको सुधारनेका वक्त अभी गुजरा नहीं है।

ध्रुवजीके पत्रके उत्तरमें मैंने एक तार इस आशयका भेजा था कि आपका और परमार्थ बाबूका पूना आना या गुरुवायुर जाना आवश्यक नहीं है। यदि आपकी उपस्थिति आवश्यक होती तो मैं आपके स्वास्थ्यको क्षति पहुँचानेकी जोखिम उठाते भी झिझकता नहीं। पर ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है। ध्रुवजी को मैं केवल इसलिए नहीं चाहता था कि वे संस्कृतके विद्वान हैं, बल्कि इसलिए भी चाहता था कि वे मालवीयजी के अधिकृत प्रतिनिधि हैं, और केरलके मित्रोंसे मैं बहुत पहले यह कह चुका था कि वे मालवीयजी को तार दे दें कि वे केरल आनेका कष्ट न करें। हम गुरुवायुरपर हल्ला बोलना नहीं चाहते हैं। यदि गुरुवायुरके आसपासके सवर्ण हिन्दू बहिष्कृतोंको उस मन्दिरमें जाने देनेको तैयार हैं, तो उनके प्रवेशको कोई रोक नहीं सकता। यदि वे तैयार नहीं हैं, तो हमें उनके मत-परिवर्तनकी प्रतीक्षा करनी होगी। मैं चाहता था कि कोई व्यक्ति, जिसे शास्त्रोंका अच्छा ज्ञान हो, मलाबारके शास्त्रियोंसे आमने-सामने बात करे, और यदि वह व्यक्ति मालवीयजी के प्राधिकारके साथ वहाँ जाये तो काफी है। पर अब शायद वह भी आवश्यक नहीं है। फिर भी मैं चाहता हूँ कि ध्रुवजी यहाँके सनातनियोंसे, कम-से-कम उनके सन्तोषके लिए ही, मिल लें। उनमें से कुछ मेरे पास हो गये हैं। मैंने उन्हें बताया था कि यद्यपि मेरा विश्वास गहरा है और पिछले ४५ वर्षोंके आक्रमणका उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है, फिर भी क्योंकि मैं एक भूल करनेवाला नश्वर प्राणी हूँ, इसलिए कोई भी सनातनी मित्र मुझे प्रभावित करनेकी कोशिश कर सकता है। और यदि मुझे पता चला कि मैंने अन्धकारको ही प्रकाश मान लिया था, तो ४५ वर्षके अपने विश्वासको छोड़ने और सत्यका साक्षी होनेमें मुझे कोई झिझक नहीं होगी। २३ तारीख [की परिषद]के प्रति, यदि सनातनी मित्रोंने उस प्रस्तावित परिषदमें भाग लिया तो, मेरी यही भावना होगी। इस सबके बाद भी यदि यरवदा आपको आकर्षित करे तो अवश्य आइये। और यदि आप आएँ तो तुरन्त चले जानेके लिए मत आना। आपके वास्ते कुछ दिनके लिए यहाँ काफीसे भी ज्यादा काम होगा। मालवीयजी को परेशान करनेकी बात सोची भी नहीं जा सकती। मुझे मालूम है कि उनके पास पहले ही बहुत काम है।

आशा है, मेरा वह वक्तव्य[1] आपकी नजरसे छूटा नहीं होगा जिसमें आपके इस सुझावका मैंने सम्पूर्ण हृदयसे समर्थन किया है कि जन्मको लेकर जो अस्पृश्यता है वह नहीं रहनी चाहिए। पर कुछ खास तरहके कामोंको लेकर अस्पृश्यता रहनी चाहिए, जैसी कि दुनिया-भरमें हमेशा रहती आई है, और इस तरहकी अस्पृश्यता उचित सफाईके बाद सदा दूर हो सकती है।

१. देखिए पृष्ठ १६०-४।

आपके मार्मिक पत्रका अन्तिम पैरा[1] सबसे अधिक मार्मिक है। आपके प्रमाण पत्रको यदि मैं स्वीकार कर लूँ तो मैं सत्यनिष्ठ नहीं रहूँगा, क्योंकि नीरवताकी वाणीको सुनने और अहंको शून्य कर देनेका प्रयत्न तो आजीवन प्रयत्न रहा है। यह एक भीषण परन्तु उल्लासपूर्ण संघर्ष रहा है। अभी भी वह समाप्त नहीं हुआ है। अन्तिम परिणाम केवल ईश्वर ही जानता है। मेरे हालके कार्योंसे निस्सन्देह मेरे सबसे प्रिय मित्रोंतकको धक्का लगा है। पर उन सबने मेरे प्रति सद्भाव रखा है। मैं लाचार था, क्योंकि वे कार्य वस्तुतः मेरे नहीं थे। मैं तो उसके द्वारा शासित था जो हम सबका रचयिता है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७०६) से।

२५५. पत्र: कमलकुमार बनर्जीको

१४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

तुम्हारा पत्र[2] मिला। मेरे दिमागमें यह चीज बिलकुल साफ है कि उस लड़कीको, चाहे वह शूद्र कहलाती हो या कुछ और, अपना वचन और हृदय दे देनेके बाद, और क्योंकि वह तुमसे गहरा लगाव रखती है, तुम उस पवित्र वचनसे छूट नहीं सकते, चाहे तुमपर कुछ भी क्यों न बीते। मैं यह माने लेता हूँ कि लड़की स्वयं निष्कलंक है और यही बात तुम्हारे विषयमें भी कही जा सकती है। दूसरे शब्दोंमें, यह तुम दोनोंके पवित्र प्रेमका मामला है। दूसरी ओर, यदि तुम्हारी स्थितिमें जरा भी अनियमितता या दोष हो, तो तुम्हें अपने माता-पिताकी आज्ञा माननी चाहिए। यदि लड़की और तुम सचमुच निष्कलंक हो और आदर्श गृहस्थ बनना चाहते हो, तो

१. यह इस प्रकार था: "भारतीय जनताकी भारी बहुसंख्याकी तरह, मेरी भी आपके पवित्र हृदयके आदेशोंमें, उनके कारणोंको कभी-कभी न समझ पाते हुए भी, बड़ी आस्था है। क्योंकि एक प्रार्थना-भरा हृदय निश्चय ही सदा किसी भी मस्तिष्कसे अधिक दूरतक और अधिक गहराईतक देख सकता है। मुझे ऐसा लगता है कि इस बड़ी आपकी छोटी-से-छोटी इच्छाओंका भी मुझे पालन करना चाहिए और यह भरोसा रखना चाहिए कि आवश्यक स्वास्थ्य मुझे आपकी शुभकामनाओंसे प्राप्त हो जायेगा। ध्रुवजी और प्रेमनाथजी, निस्सन्देह, संस्कृतका उतना ज्ञान और शास्त्रार्थकी उतनी क्षमता रखते हैं जितनी कि आवश्यक हो सकती है और उनके साथ काम करना मेरे लिए आनन्ददायक और सौभाग्य ही होगा।"

२. दिनांक ६ दिसम्बर, १९३२ का; पत्र-लेखकने उसमें लिखा था कि कुछ साल पहले मैंने एक शूद्र लड़कीको विवाहका वचन दे दिया था। परन्तु हम ब्राह्मण हैं, इसलिए माता-पिता इस तरहके विवाहके विरुद्ध हैं; इसलिए समझमें नहीं आता कि क्या किया जाये। (एस० एन० १८६६६)

तुम्हारे माता-पिता जाति-भेदको क्षमा कर देंगे और तुम दोनोंको अपना आशीर्वाद देंगे।

तुम्हारा,

श्रीयुत कमलकुमार बनर्जी
सेंण्ट्रल होटल
कलकत्ता

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७०७) से।

२५६. पत्र : एक बंगाली बालकको[1]

१४ दिसम्बर, १९३२

मुझे स्पष्ट लगता है कि तुम्हें अपनी सब बात अपने माँ-बापसे दिल खोलकर कह देनी चाहिए। शर्म तो तुम जिन पापोंको स्वीकार करते हो, उन पापोंके करनेमें थी। माँ-बापके सामने उनका साफ इकरार करनेमें कोई शर्म नहीं है। साफ दिलसे ऐसा करोगे, तो तुम अपनेमें नई शक्तिका संचार देखोगे और ऐसा बल अनुभव करोगे जैसा तुममें पहले कभी नहीं था।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३३५।

२५७. पत्र : मणिबहनको

१४ दिसम्बर, १९३२

जिसका स्वास्थ्य अच्छा है, उसके मुँहमें स्वाभाविक भोजनसे रस तो पैदा होने ही चाहिए और उनकी पहचान है स्वाद। यह तो बड़े संयमीको भी अनुभव होता रहेगा और होते रहना चाहिए, परन्तु इस स्वादके प्रति राग नहीं होना चाहिए। किसी भी कारणसे अनुचित वस्तुका त्याग अच्छा लगे तब शरीरके लाभके साथ-साथ आत्माको भी लाभ होता है; क्योंकि उस पदार्थकी लालसा नहीं रहती है। पूरे या अधूरे उपवासका असर अलग-अलग प्रकृतियोंपर और एक ही प्रकृतिपर अलग-अलग समयमें अलग-अलग होता है। उसमें शरीर और मन दोनों या दोनोंमेंसे एक कारण होता है। ऐसे दृष्टान्त तो अनेक अनुभवोंसे तू इकट्ठे कर सकेगी। मुझे मौन

१. बंगाली बालकके पत्रके जवावमें, जो इस प्रकार था : "मैं एक पापकर्मी हूँ, किस तरह अपनेको पापोंसे मुक्त करूँ? आपने अपने पाप पिताके सामने स्वीकार किये थे; वैसा ही करनेकी शक्ति मैं कैसे अपनेमें लाऊँ? मैंने आपकी 'आत्मकथा' पढ़ी है। मैं अपने पापोंके स्वीकारकी शक्ति कैसे हासिल कर सकता हूँ?"

कठिन नहीं लगता। इतना ही नहीं, बल्कि हर हफ्ते रविवारको एक बजनेकी राह देखता हूँ। बात यह है कि जिस चीजके लिए हमारा मन तैयार नहीं होता, उसे करनेमें मुश्किल होती है। जिस कामके लिए मन तैयार होता है या तैयार किया जा सकता है, वह सहज हो जाता है। मौनमें ही जिसका ध्यान लग जाता है, उसे आसपासकी गपशप नहीं सुनाई देती। किशोरलालभाईके लिए एकान्तमें झोपड़ी बनाई थी, तुझे याद होगा। वहाँ तो मौन और शान्ति ही हो सकती है। वहाँ दो-तीन दिन उन्हें गुजरनेवाली रेलगाड़ियोंकी खड़खड़ाहट असह्य जान पड़ी। मैंने कानमें रूईके फोये रखनेकी सलाह दी थी। उसके बाद दूसरे दिन सुबह जब मैं उनके पास गया, तो उन्होंने मुझसे कहा: "आज मैंने न तो गाड़ियोंकी सीटी सुनी और न उनकी खड़खड़ाहट ही।" ये दोनों क्रियाएँ तो होती ही थीं, मगर उन्होंने उनकी ओरसे ध्यान खींच लिया था, यानी मौन सध गया था। फोया-सम्बन्धी मेरे सुझावने उन्हें जाग्रत कर दिया, क्योंकि स्वेच्छासे एकान्त और मौन खोजनेवालेको ऐसी कृत्रिम सहायता अरुचिकर ही होगी। जिसे मौन भा गया है, वह अन्तमें दिव्य संगीत सुनने लगता है और उसमें इतना अधिक मग्न हो जाता है कि आसपास जो आवाजें होती हैं, वे उसे सुनाई नहीं देतीं।

हमारे बिल्ली-परिवारमें तीन व्यक्ति हैं। रोज खानेके समय दोनों बार बिना घंटी और बिना बुलाये हाजिर हो जाते हैं। जिस नियमसे ये तीनों साथी समयका पालन करते हैं उसी तरह हम सब करने लगें, तो करोड़ों घंटे बच जायें और हमने सीखा तो है ही कि समय ही धन है। बात भी बिलकुल सच है; इसलिए जो समय बचाते हैं वे धन बचाते हैं, और बचाया हुआ धन कमाये हुएके बराबर है। इसलिए जिन्हें समयका मूल्य नहीं, वे दुनियाका कितना धन खो देते होंगे, इसका हिसाब कौन लगा सकता है?

अस्पृश्यताके लिए काम करनेवालोंकी संख्या कृत्रिम ढँगसे बढ़े, यह मैं बिलकुल नहीं चाहता। जिनके लिए अपना कर्त्तव्य स्पष्ट है, वे अस्पृश्य-सेवाका काम प्रिय होनेपर भी अपना कर्त्तव्य छोड़ें, यह मैं कभी चाहूँगा ही नहीं।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३३४-५।

२५८. पत्र: शिवप्रसाद गुप्तको

१४ दिसम्बर, १९३२

मन्दिर किसीकी निजी सम्पत्ति हो और उसे खुलवानेकी इच्छा की जाये, तो यह सही है कि वह जबर्दस्ती ही है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३३८।

२५९. पत्र : नारणदास गांधीको

१४ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

साप्ताहिक डाक मिल गई। आनन्दीके पत्रके आधारपर यह लिख रहा हूँ।

तीन वार खानेका नियम बीमार और कमजोर लोगोंपर लागू नहीं होता। बच्चोंपर भी नहीं होता। जो नियम सवपर लागू होता है वह यह है:

खाना औषधिकी तरह खायें, उसी मात्रामें और उसी तरह समयपर। हो सकता है कि किसी-किसीको हर घंटे दो चम्मच खिलानेकी जरुरत हो; पर फिर उसे हर आधे घंटेके वाद न खिलायें।

अर्थात् चाहे जब बीचमें कुछ-न-कुछ खाते रहनेकी आदत खराब है, यह अस्वाद व्रतका उल्लंघन है। इमलीका एक टुकड़ातक इस तरह न खाया जाये। किन्तु आनन्दी जैसी लड़कीको तीनसे ज्यादा बार खानेकी आवश्यकता हो सकती है। वह मनमाना न खाये; फिर भी स्वास्थ्यकी दृष्टिसे जितनी वार खाना ठीक हो उतनी बार खाये। बावलाकी आयुके बच्चे चार बार खायें। चार बारका खाना कोई तीन वारमें ही ठूंस लेनेका प्रयत्न न करे। तीन वारके भोजनके चार भागकर लेना ठीक है। चार भागोंको तीन वारमें खा लेना खराब है।

बुखारमें अन्न नहीं खाना चाहिए। यहाँ अन्नका अर्थ है गेहूँ, ज्वार, बाजरा, चावल, दालें, कन्द, अर्थात् वे पदार्थ जिनमें स्टार्च और प्रोटीन है। पर भूख लगे, पाखाना ठीक आता हो तो थोड़ा-थोड़ा दूध पी सकते हैं। फलका रस तो हर हालतमें ले सकते हैं। किन्तु इच्छा न हो तो वह भी न लें।

जिन्हें ज्वार-बाजरा हजम न होता हो वे ज्वार-बाजरा न खायें। जिनका शरीर—जीभ नहीं—भातकी माँग करता है, वे भात लें। कई बीमारोंके लिए चावल का पानी बहुत अच्छी खुराक साबित होता है। साधारण तौरपर चावल लेना अनावश्यक है; उससे कई वार नुकसान भी होता है। भात खानेवालोंका शरीर फूला हुआ होता है, उनका पेट वढ़ जाता है। विहार और मद्रासमें तो यह एक आम बात है। अब मेरा कहना ठीक तरहसे समझमें आ गया होगा।

छाराओंके बारेमें क्या लिखूं? हमारी तपश्चर्या अधूरी है। हमें ईश्वरपर पूर्ण श्रद्धा नहीं है। हम उन्हें अपने ही भाई-बहन नहीं मानते। हम उनसे डरते हैं। इन आरोपोंका सबसे पहला पात्र तो मैं ही हूँ। मुझमें जो त्रुटियाँ हैं वे समीप रहने वाले इन लोगोंके रूपमें प्रकट हो गई हैं। उन्हें सहन करना। यह याद रखना कि कलेक्टरको दैन्यपूर्ण पत्र लिखनेका सुझाव मैंने नहीं दिया है। यह मसविदा मैंने बहुत ध्यानसे तैयार किया था इसलिए भाई मावलंकरने क्या कदम उठाया है यह जाननेकी

इच्छा जरूर है। तुम्हें तो समझमें आ गया था न? मुझे तो इसमें अपने धर्मकी भारी कसौटी दिखाई देती है। यहाँ बैठे हुए मुझे तो अपना धर्म साफ दिखाई देता है। जिसमें हिम्मत हो, जिसे ईश्वरमें विश्वास हो वह—चाहे पुरुष, स्त्री, जवान या वृद्ध कोई भी क्यों न हो—उनमें जाकर रहे, उनसे विनंती करे, मार खानी पड़े तो मार खाये और उन्हें समझाये और उनकी स्थिति समझ ले। किन्तु यदि यह करनेकी शक्ति न हो तो विचार कर लेना चाहिए कि हम लड़कर अपना बचाव करनेके लिए तैयार हैं या नहीं। यदि हैं तो उसमें सरकारकी मदद लेनी है कि नहीं। नहीं लेनी है तो स्वयं हमें वेतनपर किसीको नियुक्त करना है या नहीं, करना हो तो किस जातिके और किस वर्गके लोगोंको। और यदि नहीं नियुक्त करना है तो यथाशक्ति लड़नेमें हमारा छुटकारा है या हम अपना जो धर्म नहीं छोड़ सकते, अपने भीतर उसके पालनकी शक्तिका अभाव महसूस करते हुए भी उस दिशामें जितना प्रयत्न कर सकें उतना करके हमें सन्तुष्ट रहना है? इतना लिखना काफी है। कोई भी घबराये नहीं। मैंने तो सिर्फ विचार कर लेनेके लिए यह सब लिखा है।

प्रेमाका ऑपरेशन हो गया होगा।

बापू

[पुनश्च:]

मावलंकरने क्या किया, लिखना। इस सम्बन्धमें क्या हो सकता है, इसपर विचार कर रहा हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२८१ भी से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

२६०. पत्र: नारायण मोरेश्वर खरेको

[१४ दिसम्बर, १९३२][1]

चि० पण्डितजी,

तुम्हारा पत्र मिला। 'सुबोध पत्रिका' मैं तो समझ गया हूँ। क्या तुम्हें कोई शंका है? यदि हो तो लिखना। उसका स्पष्टीकरण कर दूंगा। 'भजनावली'के लिए समय निकालना बहुत कठिन है।[2]

मैंने छारा लोगोंके सम्बन्धमें लिखा है। हममें इससे निवटनेकी शक्ति होनी चाहिए।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २५६) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१. छारा लोगोंके उल्लेखसे; देखिए पिछला शीर्षक।

२. गांधीजी आश्रम भजनावलीके नये संस्करणके लिए कुछ सुझाव देना चाहते थे। देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ७७।

२६१. धर्मदेवको लिखे पत्रका अंश[1]

१४ दिसम्बर, १९३२

यद्यपि जातिके विषयमें आपने जो लिखा है वह तथ्य है तथापि आज जो कार्य हो रहा है उसके साथ जाति-सुधारको नहीं मिला सकते हैं। इस वार मैं अपने विचारोंको व्यक्त करनेका अभी मेरे पास समय नहीं है। समय मिलनेपर मैं अवश्य लिखूंगा।

विश्वज्योति, अक्तूबर, १९५९

२६२. भेंट : आर्य समाज, बम्बईके प्रतिनिधि-मण्डल[2] को

१४ दिसम्बर, १९३२

प्रतिनिधि मण्डलकी "नमस्ते" के उत्तरमें गांधीजीने उनका मुस्कुराते हुए स्वागत किया। डेढ़ घंटेतक वे उनके साथ अस्पृश्यताके प्रश्नपर शास्त्रीय दृष्टिकोणसे विचार-विमर्श करते रहे। उन्होंने बताया कि इस दिशामें आर्य समाजकी गतिविधियोंसे वे परिचित हैं और यह आशा प्रकट की कि आर्य समाज उन्हें और भी उत्साहके साथ जारी रखेगा। उन्होंने सलाह दी कि आर्य समाजको भाषणों और साहित्य द्वारा प्रचार-कार्य करना चाहिए और अस्पृश्योंमें अपना रचनात्मक कार्य और अधिक उत्साह से चलाना चाहिए।

१. "रैमिनिसैंसेज ऑफ गांधीजी" में उल्लिखित। धर्मदेवने लिखा था कि जबतक जन्मके आधार पर लोगोंको ऊँच-नीच माना जायेगा और जाति-प्रथाको समाप्त करनेका प्रयास नहीं किया जायेगा, अछूत प्रथाके उन्मूलनके प्रचारसे कोई लाभ नहीं होगा।

२. प्रतिनिधि-मण्डलमें थे : द्विजेन्द्रनाथ, शिवदास चापसी, विजयशंकरजी, प्रभुभाई शर्मा, वल्लभदास आर० मेहता, जम्मूभाईजी और श्रीयुत शंकरराव। उन्होंने महात्माजी को समझाया कि अस्पृश्यता-निवारण कार्यके विरुद्ध तथाकथित सनातनियों द्वारा शुरू किये गये प्रचारका प्रतिकार आवश्यक है। वेदों और हिन्दुओंके अन्य प्राचीन धर्मग्रन्थोंमें तथाकथित अस्पृश्यताका कोई उल्लेख या विधान नहीं है। मनुस्मृति और अन्य स्मृतियोंमें चाण्डाल आदिके निर्णयके लिए जो कसौटियाँ दी गई हैं, वे आजके तथाकथित "अस्पृश्यों" पर किसी भी तरह लागू नहीं होतीं। आर्य समाज महर्षि दयानन्द सरस्वतीके पदचिह्नोंपर चलता हुआ सभी मानव प्राणियोंकी समानताके सन्देशका प्रचार कर रहा है। महर्षि दयानन्दके ध्येयके अनुसार आर्य समाज बहुत समयसे अस्पृश्यता-निवारणका कार्य करता आ रहा है और उस महान उपवासके बाद तो वह उसे और भी उत्साहके साथ कर रहा है। प्रतिनिधि-मण्डलने बताया कि वह गुरुवायुरके ध्येयमें सहायता देनेको तैयार है और गांधीजी को इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि वे स्वामी दयानन्द सरस्वतीके कार्यको पूरा कर रहे हैं।

महात्माजी ने कहा कि कार्यकर्ताओंसे जो सूचना मिली है, उससे गुरुवायुरके मामलेकी सफलताका उन्हें पूर्ण विश्वास है। उन्होंने बताया कि सैकड़ों स्वयंसेवक मलाबार पहुँच गये हैं और कार्य सन्तोषजनक ढंगसे चल रहा है। कुछ सनातनी शास्त्री भी उनका समर्थन कर रहे हैं। मतसंग्रहका काम भी ठीक तरह चल रहा है। कुछ लोगोंने उनके लेखोंमें से, सन्दर्भका उल्लेख किये बिना, एक वाक्य इधरसे तो एक उधरसे उद्धृत कर उन्हें गलत ढंगसे पेश करते हुए जो दुष्ट प्रचार शुरू किया है, गांधीजी ने उसके प्रति अपनी उदासीनता दिखाई।

प्रतिनिधि अपने साथ पुस्तकोंका एक बड़ा बंडल लाये थे। गांधीजी ने उसमें से उनकी प्रार्थनापर तीन पुस्तकें छाँट लीं। जब उनसे ऋषि दयानन्दकी महान कृति, "सत्यार्थ प्रकाश"की भी एक प्रति रखनेको कहा गया, तो उन्होंने जवाब दिया उस पुस्तकको वे सदा अपने साथ रखते हैं।[1]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-१२-१९३२

२६३. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – १२

१५ दिसम्बर, १९३२

मेरा खयाल था कि मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनकी मर्यादाओंके बारेमें अपनी स्थिति मैंने बिलकुल स्पष्ट कर दी है। परन्तु मैं देखता हूँ कि सनातनी मित्र एक कल्पित खतरेके बारेमें, जो उनके खयालसे इस आन्दोलनके कारण सनातन धर्मके सामने आ गया है, अभी भी उत्तेजित हैं। इसलिए जो-कुछ मैंने प्रकाशित वक्तव्यों और अपने पत्रोंमें कहा है, उसका सार नीचे दे रहा हूँ:

१. उपवासका तरीका अभी इस समय केवल गुरुवायुरतक ही सीमित है। सुधारकके दृष्टिकोणसे इस उपवासके लिए ऐतिहासिक कारण हैं। इससे बचा नहीं जा सकता था। मैं जानता हूँ कि सुधारके विरोधी या मन्दिर-प्रवेशमें विश्वासतक रखनेवाले तमाम लोग उन कारणोंको उसके औचित्यके रूपमें स्वीकार नहीं करेंगे। मेरा उद्देश्य तो उसके उल्लेखसे उपवासकी मात्र मर्यादाएँ बताना ही है।

२. जो उपवास सोचा गया है, वह यदि मतसंग्रह सुधारकोंके विरुद्ध निकला तो शुरू नहीं किया जायेगा। यदि यह पता चलता है कि मौजूदा कानून सुधारकोंके विरुद्ध है और आवश्यक कानूनके लिए हर तरहकी कोशिश की जा रही है और एक अनुज्ञात्मक विधेयक पेश करनेके लिए वाइसरायकी अनुमति मिल गई है, पर वह विधेयक धारा सभामें २ जनवरी, १९३३ तक पास नहीं हो सकता, तो उपवास स्थगित कर दिया जायेगा।

१. इस रिपोर्टके सम्बन्धमें भूल-सुधारके लिए देखिए "पत्र: मंत्री आर्यसमाज, बम्बईको", १९-१२-१९३२।

३. मन्दिरोंके अपने उपासकोंकी बहुतसंख्याकी इच्छाओंके प्रतिकूल, जोर-जबर्दस्तीके किसी भी मन्दिर-प्रवेशसे मेरा कोई वास्ता नहीं होगा, और यह आन्दोलन केवल सार्वजनिक मन्दिरोंतक ही सीमित रहेगा। इसलिए, निजी मन्दिरोंका [हरिजनोंके लिए] खुलना पूर्णतया उनके मालिकोंपर निर्भर करेगा, और जो प्रतिबन्ध सवर्ण हिन्दुओंपर लागू होते हैं वे स्वाभाविक रूपसे हरिजनोंपर लागू होंगे।

इन मर्यादाओंसे, मेरे विचारमें, किसी भी विचारशील हिन्दूको सन्तोष हो जाना चाहिए। पर मैं जानता हूँ कि कुछ लोग ऐसे हैं जिन्हें किसी भी मौजूदा हिन्दू मन्दिरका, जो शर्तें अन्य हिन्दुओंके लिए हैं उन्हींपर, हरिजनोंके लिए खुलना सहन नहीं होगा। इस तरहके हठीले विरोधियोंके विरोध-शमनका मैं नये मन्दिर बनानेके एक कार्यक्रमके सिवा, कोई और उपाय सोच नहीं सकता। और उसका अर्थ इस पहलेसे विभाजित समाजका और विभाजन होगा। परन्तु मुझे विश्वास है कि यदि सुधारक जो मर्यादाएँ मैंने बताई हैं उनका निष्ठा और ईमानदारीसे पालन करें, तो अयुक्ति-युक्त विरोध, समर्थन न मिलनेसे ही, नष्ट हो जायेगा। जिन लोगोंने सनातन धर्मके नामपर अपना दखल जमा रखा है, उन्हें यह देखकर आश्चर्य नहीं होना चाहिए और न ठेस ही लगनी चाहिए कि विपक्षी भी सुधारके पक्षमें उन्हीं धर्मशास्त्रोंके प्रमाण दे रहे हैं जिनमें वे खुद अपनी आस्था प्रकट करते हैं। संस्कृत वाङ्मयमें निष्णात ऐसे शास्त्रियोंकी संख्या बराबर बढ़ रही है जिनका यह विश्वास है कि "अस्पृश्यों"को सार्वजनिक मन्दिरोंमें जाने देनेकी हिन्दूधर्ममें केवल आज्ञा ही नहीं है, बल्कि उन्हें उन मन्दिरोंमें अन्य हिन्दुओंके साथ पूजा करनेसे रोकना गलत भी है। इन पण्डितोंका यह भी विश्वास है कि जन्मसे सम्बन्धित और किसी भी प्रायश्चित्त या शुद्धिसे दूर न होनेवाली अस्पृश्यता जैसी चीज वस्तुतः कोई है ही नहीं। कर्मों और धन्धोंसे सम्बन्ध रखनेवाली अस्पृश्यतामें उनका विश्वास है, पर यह कोई हिन्दू-धर्मकी ही विशेषता नहीं है। यह सब धर्मोंमें मिलती है और स्वच्छताके ठोस सिद्धान्तोंपर आधारित है।

मेरा यह भी विश्वास है कि प्रस्तावित कानूनको लेकर जो आतंक पैदा हो गया है वह अज्ञानपर आधारित है। जहाँतक मैं इस प्रस्तावको समझा हूँ, यह केवल इतना ही है: यदि किसी मन्दिरके उपासकोंकी दो-तिहाई बहुसंख्या, कानून द्वारा प्रकल्पित एक नियमित पद्धति द्वारा, अपनी इच्छा व्यक्त करे, तो वह मन्दिर उन्हीं शर्तोंपर जो औरोंके लिए हैं हरिजनोंके लिए खोल दिया जाना चाहिए। मेरे विचारमें यह प्रस्ताव स्वयं अन्दरसे इतना युक्तियुक्त है कि कोई भी विचारशील व्यक्ति इसके विरोधमें कुछ कह नहीं सकता।

हर हालतमें, सुधारके विरोधियोंको यह समझ लेना चाहिए कि सुधारक ठीक-ठीक क्या प्राप्त करना चाहते हैं। मुझे खेदके साथ यह कहना पड़ता है कि अभी स्थिति यह है कि तथ्योंकी परवाह न करते हुए सुधारके विरुद्ध आन्दोलन चलाया जा रहा है, और उसे सत्यसे विपरीत वक्तव्यों और निराधार वक्रोक्तियों और लांछनों द्वारा बल दिया जा रहा है। सुधार यदि अपने-आपमें स्वस्थ है, तो उसे इस तरहके

तरीकोंसे कोई हानि नहीं हो सकती। परन्तु यदि सुधारक या उनके विरोधी ऐसे तरीकोंका सहारा लेते हैं जो अच्छे और न्यायोचित नहीं हैं, तो उससे हिन्दू-धर्मको आघात अवश्य पहुँचेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-१२-१९३२

२६४. तार: सी० एफ० एन्ड्रयूजको[1]

१५ दिसम्बर, १९३२

एन्ड्रयूज
वुडब्रुक सेटिलमेंट
बरमिंघम

वहीं रहो। स्नेह।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९७८)से।

२६५. पत्र: मीराबहनको

१५ दिसम्बर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र यथासमय पहुँच गया। इस समय लगभग ४ बजकर २० मिनट हुए हैं और हमने प्रात:कालकी प्रार्थना खत्म की है। हमारे मानव परिवारमें छगनलाल जोशी चौथे सदस्य जुड़े हैं और अगर बिल्लियोंको जोड़ लें तो हमारी संख्या सात है। इतना ही है कि वे प्रार्थनामें नहीं आतीं। उनका सम्बन्ध साथ-साथ खाने तक ही सीमित है।

छगनलालके आ जानेसे काम जल्दी निपटानेमें सुविधा हो गई है, किन्तु मेरे परिश्रमके घंटोंमें कमी नहीं हुई। इसकी आशा भी नहीं रखी गई थी। जो बातें मुझीको करनी चाहिए, वे करनी ही पड़ती हैं। कम-से-कम २ जनवरीतक दबाव बना ही रहेगा।

१. उनके ८ दिसम्बरके तारके जवाबमें जो इस प्रकार था: "मेरे पत्रोंकी अति चिन्ता कम कर दीजिए। अब सब चीज साफ हैं। यदि भारतमें मेरी मददकी जरूरत हो तो तार दीजिए। अन्यथा लन्दनमें रह रहा हूँ।" (बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृष्ठ ४३१)

क्या कारण है कि हृदय बुद्धिका कहना नहीं मानता या साथ नहीं देता? क्या श्रद्धाकी कमी है? यद्यपि मैं किसी अन्तिम निर्णयपर नहीं पहुँचा हूँ, फिर भी मेरा मत उसी दिशामें जाता है। यद्यपि मेरी बुद्धि मुझे बताती है कि मुझमें प्रेम हो तो साँपको भगानेकी आवश्यकता नहीं है, फिर भी यह मेरी श्रद्धाका अभाव ही है जो मुझे उससे सम्बन्ध जोड़नेसे रोकता है। इस प्रकारके उदाहरण बहुत दिये जा सकते हैं। मैं चाहूँगा कि तुम इस दिशामें खोज करो और हृदय और बुद्धिके जो भी संघर्ष तुम्हें याद हों उन सबके कारणका पता लगानेकी कोशिश करो। ऐसा करने से तुम्हारे लिए हृदयका बुद्धिके साथ सहयोग कराना सम्भव हो सकता है। अगर मेरा उपवास करना मेरे और हरेकके लिए अच्छा है, तो हृदय खुश होनेसे क्यों इनकार करे? अगर मैं स्वस्थ हूँ तो हृदय अवश्य प्रसन्न होता है। कुछ हालतोंमें यह बेहतर है कि मैं स्वस्थ रहनेके बजाय उपवास करूँ। बुद्धि ऐसा कहती है, परन्तु हृदय बुद्धिके स्पष्ट प्रमाणको अस्वीकार करता है। क्या श्रद्धाकी कमीके कारण ऐसा करता है? या इसमें आत्मवंचना है और दरअसल बुद्धिने जैसे स्वास्थ्य-रक्षा की जरूरत महसूस कर ली है, वैसे उपवासकी आवश्यकता अनुभव नहीं की है? यहाँ मैंने निर्णय की कल्पना किये बिना केवल तुम्हारे लिए समस्या बयान कर दी है। मैं निर्णय करना भी चाहूँगा तो उसके लिए मेरे पास काफी सामग्री नहीं हो सकती, कम-से-कम अभी तो मुझे यह विषय यहीं छोड़ देना पड़ेगा।

मेरा वजन अब १०३ है। मैंने दूधकी मात्रा घटा दी है, रोटी छोड़ दी है और नारंगियोंकी संख्या ८ से बढ़ाकर १६ कर दी है। खजूर भी फिलहाल छोड़ दिये हैं। दूध मैं एक पौंड ही ले रहा हूँ। जल्दी ही दूध की मात्रा बढ़ा देनेकी उम्मीद रखता हूँ।

मैंने डॉ० गौड़की किताब, जो जानकारी उसमें हो उसके लिए, तुम्हारे पास भेजी है। ऐतिहासिक पुस्तककी दृष्टिसे जस्टिस अमीर अलीकी किताब शायद बेहतर होगी। हो सकता है कि मैं गलतीपर होऊँ।

'टाइम्स ऑफ इंडिया'से अपना वक्तव्य[1] पूराका-पूरा प्रकाशित करनेकी अपील करना व्यर्थ है। मैं किसी ऐसेको ढूँढ़नेकी कोशिश करूँगा जो तुम्हें वक्तव्योंकी प्रतियाँ भेज दे। उनको प्राप्त करनेपर कोई आपत्ति नहीं हो सकती क्योंकि जिन अखबारोंको पढ़नेकी तुम्हें इजाजत है, उनमें यदि तुम देखो तो वे मिल सकते हैं।

आशा है कि बा १६ तारीखको अपना दौरा पूरा करके पूना आ जायेगी।

अप्पा[2] मद्रासके अन्ना नहीं हैं। अप्पा महाराष्ट्रके हैं। वे विद्वान व्यक्ति हैं। तुम आई उससे पहले वे आश्रममें अध्यापक थे। वे बहुत दुबले हैं। उनके भाई श्रीयुत रावको तुमने जरूर देखा होगा। वे बिक्री-विभागके जिम्मेदार थे। पूरी घटना बड़ी रोचक और मानवतापूर्ण थी।

१. अस्पृश्यतापर।
२. आशय अप्पासाहब पटवर्धनसे है।

हम सब अच्छे हैं। डाह्याभाई दुबारा बीमार हो गये थे पर कोई उपद्रव नहीं हुआ।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

मैं सातवें और आठवेंके सिवाय पहले ९ वक्तव्य भेज रहा हूँ।[१] इन दोको ढूंढ़ना पड़ेगा। . . .[२]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५११)से; सौजन्य: मीराबहन।

२६६. पत्र : डॉक्टर विधानचन्द्र रायको

१५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डॉ० विधान,

आपके पत्र[३]से मैं तो अवसन्न रह गया। उसे पढ़नेके तुरन्त बाद ही मैंने आपको तार[४] भेजा। मैं तो समझता था कि हम दोनों एक-दूसरेके इतने निकट हैं कि मेरे मैत्रीपूर्ण पत्रके आप कभी गलत मानी नहीं लगायेंगे। पर अब देखता हूँ कि मैंने भारी भूल कर डाली। मुझे आपको वह पत्र[५] नहीं लिखना चाहिए था। अतः मैंने उसे पूर्णतः और बगैर किसी शर्त वापस ले लिया है। अब, जब कि वह पत्र वापस ले लिया है, आपको उनमें से कोई भी काम नहीं करना है जिनका आपने उल्लेख किया है। कृपया बोर्डवाला काम बदस्तूर इस तरह जारी रखिए, मानो मैंने आपको कोई पत्र लिखा ही न हो। आपके दिलको जो चोट पहुँची है उसे आप उदारहृदयताके साथ भूल जायेंगे। पर आपको मैंने वह पत्र लिखा, इसके लिए मैं अपने-आपको आसानीसे क्षमा नहीं कर सकूँगा। किसीने, याद नहीं किसने, कहा था कि मेरे पत्रके आप गलत मानी लगायेंगे। पर मैंने मूर्खतावश कहा कि मैं कुछ भी लिखूँ, आप उसके गलत मानी कभी नहीं लगायेंगे। विनाशसे पूर्व गर्व और पतनसे पूर्व मिथ्या घमण्ड होता है। इतना सब कहनेके बाद, अब तो मैं नहीं समझता कि आप हमारे पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करना जरूरी समझेंगे। परन्तु यदि आप सार्वजनिक हितके लिए उसका प्रकाशन आवश्यक समझते हों तो जहाँतक प्रकाशित करना आवश्यक हो, आप अवश्य प्रकाशित कर सकते हैं।

१. ये "पत्र: मीराबहनको", २२-१२-१९३२ के साथ भेजे गये थे।
२. आगेका अंश जेलके अधिकारियोंने काट दिया था।
३. देखिए परिशिष्ट ५।
४. देखिए "पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको", १५/[१६]-१२-१९३२।
५. देखिए पृष्ठ १४८-९।

कृपया लिखिए, कमला और डॉ० आलमका स्वास्थ्य कैसा है,[1] और कमलासे कहिए, मुझे पत्र लिखे।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९०८)से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला। एस० एन० १८७१५ से भी।

२६७. पत्र : ए० रंगास्वामी अय्यंगारको

१५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय रंगास्वामी,

आपका पत्र मिला, जिसके साथ आपने वर्तमान आन्दोलनपर एक सेशनजजकी टिप्पणी भी भेजी है। मैंने उसे पढ़ा। मुझे यह देखकर दुःख हुआ कि एक जज भी सुधारपर, जो पहले ही अधिक-से-अधिक संयम और अनेक मर्यादाओंके साथ किया जा रहा है, अपने मस्तिष्कका सन्तुलन खो सकता है। यह पत्र इस बातका एक और सबूत है कि सुधार काफी पहले ही हो जाना चाहिए था। मन्दिर-प्रवेशके लिए तथा अस्पृश्यता जैसी अभी प्रचलित है उसके पूर्ण निवारणके लिए आन्दोलन, किसी-न-किसी रूपमें, कई वर्षोंसे चल रहा है, और मुझे खुशी है कि प्रस्तावित उपवासने उसमें जीवन डाल दिया है।

आशा है, आपकी पत्नी अब पूरी तरह पुनः स्वस्थ हो गई होंगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत ए० रंगास्वामी अय्यंगार
'हिन्दू' ऑफिस
माउंट रोड, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७१२)से।

१. कमला नेहरू और डॉ० मोहम्मद आलम उस समय डॉ० वि० च० रायसे इलाज करवा रहे थे।

२६८. पत्र : जमनालाल बजाजको

१५ दिसम्बर, १९३२

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। कमलनयनके बारेमें समझ गया हूँ। पूना में उसके लिए व्यवस्था नहीं हो सकती। उसके सम्बन्धमें वकीलसे बात हुई थी। इतने बड़े जवानको वहाँ नहीं रखते और न वहाँ इसकी सुविधा ही है। जब मिलूँगा तब तुमसे इसके बारेमें बात करूँगा। तुम्हें फाउन्टेन पेनकी स्याहीकी जरूरत थी और हमारे पास स्वदेशी स्याही है। यह भाई कटेलीको मालूम था इसलिए उसमें से तुम्हारे लिए दवात-भर भेजी है। हमारे पास तो भण्डार भरा हुआ है।

यहाँकी रोटीमें जो चीनी पड़ी होती है उसके स्वदेशी होनेकी सम्भावना है। क्योंकि पूनामें विदेशी चीनी बहुत कम आती है। किन्तु चीनी विलायती हो तो भी रोटीमें दोष नहीं मानता, क्योंकि वह चीनी खमीर बनानेके लिए डाली जाती है, अर्थात् खमीरके साथ मिलानेपर उसमें एक नया पदार्थ पैदा हो जाता है। जैसे दो विशेष प्रकारकी गैस निश्चित प्रमाणमें मिलानेसे पानी बन जाती है। इसलिए रोटी खानेवाला गेहूँ और चीनी दो ही पदार्थ खाता है ऐसा नहीं कह सकते। खमीर बनानेके लिए तीन चीजें इस्तेमाल होती हैं — महुआ, चीनी और नमक। महुआ देशी होता है इसलिए मेरे विचारसे विदेशी चीनीका त्याग करनेवालेके लिए भी रोटी निर्दोष मानी जायेगी। इतना जान लेनेपर भी अन्तिम निर्णय तो तुम्हींको करना है। यहाँ जो चपाती बनती है वह तुम्हें माफिक आती हो तो फिर मैं रोटीका आग्रह नहीं करूँगा।

तुमसे मिलनेके सम्बन्धमें अभी कोई जवाब[1] नहीं मिला है।

ऑपरेशनके लिए विलायत न जानेके बारेमें समझ गया हूँ। मुझे स्वयं तो डरनेकी कोई ऐसी बात लगती नहीं। हजारों व्यक्तियोंके कान बहते हैं और उन्हें कोई और तकलीफ नहीं होती। यह पूरा भाग दिमागके पास है इसलिए आत्यंतिक परिणाम निकल सकता है, ऐसा सोचकर डॉक्टर खुद डर जाते हैं और बीमारको डराते हैं। इसलिए इस देशमें जो मदद मिल सकती हो उसीसे सन्तुष्ट रहनेमें मैं किसी पसोपेशमें नहीं पड़ूँगा। और फिर अभी इसपर विचार करनेका सवाल ही नहीं उठता। शान्ति होनेपर इसका उपाय अपने-आप सूझ जायेगा।

मेरी कोहनी जैसी थी वैसी ही है। वजन १०३ है। कुल मिलाकर स्वास्थ्य अच्छा है।

१. देखिए "पत्र: बम्बई सरकारके गृह-सचिवको," २९-११-१९३२।

इसके साथ जानकीबहनका पत्र भेज रहा हूँ। इसमें कमलनयनके बारेमें जो लिखा है सो पढ़ना। मैंने उत्तरमें लिखा है कि कमलनयनके साथ मास्टर और रसोइया जाये यह तो मैं कभी स्वीकार नहीं करूँगा। ऐसा करनेसे उसे बाहर जानेका फायदा नहीं होगा। साथमें यह भी लिखा है कि इस बारेमें तुमसे बातचीत कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०८) से।

२६९. ग० वा० मावलंकरको

१५ दिसम्बर, १९३२

भाई मावलंकर,

छाराओंके उपद्रवके[1] विषयमें मैंने नारणदासको आपसे सलाह लेनेके लिए कहा था। लिखिए, आपने क्या सलाह दी। कुछ करनेके पहले यदि मुझे मालूम हो सके, तो अधिक अच्छा हो; निश्चित किया हुआ उपाय हमारे लिए शोभनीय हो, यह आवश्यक है। यदि ऐसा कोई उपाय न निकले, तो यह दुःख हम सहन करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२२९) से।

२७०. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

१५ दिसम्बर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिल गया है। तबीयत सुधरती जा रही है और आत्मविश्वास आता जा रहा है, यह तो बहुत अच्छी बात है। शरीर देवलालीमें जैसा था वैसा हो जाये तो कितना अच्छा हो। राधिका, कुसुमकी खबर तो मिलती ही रहती होगी। उनका स्वास्थ्य सन्तोषजनक नहीं माना जा सकता। कुसुमका स्वास्थ्य तो कुछ ठिकाने आता लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४८) से।

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", [४]/५-१२-१९३२।

२७१. सन्देश: अस्पृश्यता-विरोधी दिवसके लिए[1]

१६ दिसम्बर, १९३२

अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनसे जिस आशाका उदय हुआ है, उसका संचार अगले रविवारको हिन्दुस्तानके गाँव-गांवके हरिजन मुहल्लोंमें होगा, ऐसी मैं उम्मीद रखता हूँ। केन्द्रीय बोर्डने यह दिन अस्पृश्यता-निवारण दिवसके तौरपर मनाना निश्चित किया है। उस दिन हरएक हिन्दू बालक अपने हरिजन भाई-बहनोंकी कुछ-न-कुछ सेवा तो कर ही सकता है। यह आत्म-शुद्धिका सामूहिक आन्दोलन है। सनातनी मित्रोंकी दलीलें मैं आदरपूर्वक, ध्यान देकर और खुला दिमाग रखकर सुनता रहा हूँ। हिन्दू-धर्मका जो अर्थ वे करते हैं, वह मुझसे स्वीकार करानेकी जबतक वे कोशिश करते रहेंगे, तबतक मैं उनकी बात सुनता रहूँगा। पर मेरी यह मान्यता रोज दृढ़ होती जा रही है कि अस्पृश्यताका जो अर्थ किया जाता है और जिस ढँगसे आजकल उसपर अमल होता है, उसके लिए हिन्दू शास्त्रोंमें—उन्हें समग्र दृष्टिसे देखें तो और इसी तरह देखना भी चाहिए——कोई आधार नहीं है। अस्पृश्यताका आजकल जो अर्थ किया जाता है और जिस तरह उसपर अमल होता है, वह नीतिके किसी भी कानूनके बिलकुल विरुद्ध है, इसमें कोई शंका नहीं हो सकती।

इस कलंकको धो डालना सवर्ण हिन्दुओंके लिए आत्म-शुद्धिका आजके युगका सबसे बड़ा काम है। इसलिए मैं आशा रखता हूँ कि केन्द्रीय-बोर्ड जो कार्यक्रम प्रकाशित करेगा, उसपर पूरी तरह अमल होगा।

मैं सनातनी मित्रोंसे प्रार्थना करता हूँ कि वे भी इस कार्यक्रमसे केवल इसलिए दूर न रहें कि वे मन्दिर-प्रवेशसे सहमत नहीं हो सकते। किसी भी मानव बन्धुकी सेवा करना किसी भी धर्मके आदेशके विरुद्ध हो ही नहीं सकता। फिर हरिजनोंकी, जो हिन्दू समाजके अंग माने जाते हैं, सेवा करना तो हिन्दू धर्मके विरुद्ध हो ही कैसे सकता है? हरिजन सचमुच ही ईश्वरकी सन्तान हैं, क्योंकि हमने उन्हें छोड़ दिया है। सनातनी कई तरहके प्रेमपूर्ण व्यवहारोंसे उनकी सेवा कर सकते हैं।

एक भाईके, जिनका अवधूत स्वामीके रूपमें वर्णन किया गया है, उपवासकी बात मैंने अखबारमें पढ़ी है। यह सच बात है कि इन भाईने कुछ महीने पहले मुझे कुछ पत्र लिखे थे। मुझे ऐसे पत्र अकसर मिलते रहते हैं। उन्हींकी तरह ये भी लम्बे, असम्बद्ध और अप्रासंगिक थे। इन पत्रोंकी मुझपर यह छाप पड़ी थी कि इनके लिखनेवालेका दिमाग ठिकाने नहीं है। उन्होंने अपने पत्रोंमें लिखा था कि वे १९०९ में या उसके आसपास मुझसे मिले थे। मुझे उनके साथ इस तरहकी मुलाकातकी कुछ भी याद नहीं है और यही उन्हें लिखकर जतला दिया। इस बातसे उन्होंने कभी

१. १८ दिसम्बरको मनाया जानेवाला।

इनकार भी नहीं किया। वर्षों पहले मुझसे मिलनेकी बात वे कहते हैं। अखबारोंमें जैसा कहा गया है, उस वक्त उनकी तरफसे कोई नोटिस मिलनेकी बात मुझे याद नहीं है। उपवासका जिक्र तो उस समय हो ही कैसे सकता था?

अभी थोड़े दिन हुए किसीने मुझे तार दिया कि अवधूत स्वामी उपवास कर रहे हैं और जबतक मैं अस्पृश्यताके विरुद्ध अपना प्रचार छोड़ न दूँगा, तबतक वे अपना उपवास जारी रखेंगे। उस तारके भेजनेवालेको मैंने तारसे बताया कि उन्हें स्वामीको उपवास छोड़ देनेके लिए समझाना चाहिए।

जिस प्रवृत्तिको मैंने अपना जीवन्त धर्म माना है, उसे मुझसे छुड़वानेके लिए लाखों आदमी उपवास करें, तो भी मैं छोड़ नहीं सकता। हरएक आदमीको अपना जीवन्त धर्म ईश्वरसे मिलता है और ईश्वर ही उसे उससे विमुख कर सकता है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-१२-१९३२

२७२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१५/[१६] दिसम्बर, १९३२

भाई घनश्यामदास,

आज मैंने तुम्हारे पास एक तार लीगके नामके सम्बन्धमें भेजा है। एक दूसरा तार कल बंगाल प्रान्तीय संस्थाके सम्बन्धमें जायेगा।

सबसे पहले नामकी बातको लो। राजाजी का पत्र[1] साथ भेजता हूँ। मैं समझता हूँ कि उनके तर्कके बाद कोई बात बाकी नहीं रह जाती है, इसलिए उनका सुझाव अपनाना तनिक भी सम्भव हो तो तुम नाममें तदनुसार परिवर्तन कर लेना। मैं सेवाके भावमें इतना तन्मय हो गया था कि जिस अर्थकी ओर राजाजी ने मेरा ध्यान दिलाया है उसकी मैंने बाततक नहीं सोची थी।

अब बंगाल प्रान्तीय संस्थाकी बात लो। मेरा खयाल है कि मैंने भारी भूल की। मैंने डॉ० विधानके ऊपर अपने प्रभावका गलत अन्दाजा लगाया। मैंने उन्हें पीड़ा पहुँचाई, इसका मुझे दुःख है। मैंने तुम्हें ऐसी भौंडी स्थितिमें डाल दिया, इसका भी मुझे दुःख है। वह अपनी पीड़ासे निस्तार पा जायेंगे, तुम भी अपनी भौंडी स्थितिपर काबू पा लोगे पर मैं अपनी मूर्खताकी बात आसानीसे नहीं भूल सकूँगा।

मैंने डॉ० रायके पास निम्नलिखित तार भेजा है:

> आपका हस्ताक्षर-शून्य पत्र आज मिला। पत्र-व्यवहार प्रकाशनके लिए नहीं है। आपको मैंने स्पष्टतः बता दिया है कि यदि आपको अपने ऊपर

१. देखिए परिशिष्ट ११।

भरोसा हो तो आरम्भ किये हुए कार्यको जारी रखिए। मैं अब समझता हूँ कि मैंने हस्तक्षेपकी अनधिकार चेष्टा की। क्षमा कीजिए। वैसे मैंने यह सुझाव मित्रताके नाते दिया था। अपना पत्र वापस लेता हूँ।—गांधी

और उनको जो पत्र[1] मैं भेज रहा हूँ उसकी एक प्रति साथ भेजता हूँ। कुछ अधिक कहना अनावश्यक समझता हूँ और आशा करता हूँ कि अब इस मामलेको समाप्त समझा जायेगा और तुम्हें और अधिक परेशानी नहीं होगी। डॉ० विधानके उत्तर[2] की नकल भी भेजता हूँ।

तुम्हारा १२ दिसम्बरका पत्र भी मिला। ठक्कर बापाने तुम्हारे पास जो परिभाषा भेजी थी, मैंने उसमें और भी परिवर्तन कर दिया है। इस संशोधित परिभाषाकी नकल भेजता हूँ। ठक्कर बापाने तुम्हारे पास जो परिभाषा भेजी थी उसे मेरे पास पण्डित कुंजरूने भेजा था। मैंने उसमें परिवर्तन करके संशोधित प्रति उनके पास भेज दी है।[3] देखता हूँ कि जब ठक्कर बापाने आपको लिखा उस समयतक उन्हें वह संशोधित प्रति नहीं मिली थी।

आज डॉ० अम्बेडकरके लगभग सात मित्र और अनुयायी मेरे पास आये। वे शिकायत कर रहे थे या बता रहे थे (उन्होंने कहा कि वे शिकायत करने नहीं आये हैं, सिर्फ बताना चाहते हैं) कि डॉ० अम्बेडकरने स्टीमरपर ठक्कर बापाके नाम एक चिट्ठी लिखी थी जिसमें उन्होंने कई सुझाव पेश किये थे। पर बोर्डकी पूनावाली बैठकमें उसका जिक्रतक नहीं किया गया। मैंने उनसे कहा कि मुझे नहीं मालूम कि उसका जिक्र किया गया या नहीं, लेकिन बोर्डने उसपर विचार अवश्य किया होगा, उसकी उपेक्षा नहीं की होगी। तुम अब कृपया उन्हें या मुझे लिख देना कि उस पत्रके सम्बन्धमें क्या कार्रवाई की गई है।

इन मित्रोंने यह भी बताया कि हमारी संस्थाएँ हरिजनोंमें पड़ी हुई फूटको कायम रखती हैं और जहाँ कहीं सम्भव होता है राव बहादुर राजा[4] के दलका पक्ष लेती हैं। मैंने उन्हें आश्वासन दिया कि बोर्डका यह इरादा कभी नहीं हो सकता, बोर्ड दलबन्दियोंसे दूर रहेगा और बोर्ड और उसकी समस्त शाखाओंकी यही चेष्टा रहेगी कि दोनों दलोंका मन-मुटाव दूर हो जाये, क्योंकि राजनीतिक प्रश्न हल हो जानेके बाद अब दो दलोंकी कोई आवश्यकता नहीं रह गई है।

मेरे पास श्री छगनलाल जोशी आ गये हैं और एक अच्छा-सा स्टेनोग्राफर भी मिल गया है। पर इतनी सहायता प्राप्त होनेपर भी मुझे फुर्सत नहीं मिल रही है। वास्तवमें इस आवश्यक सहायताकी बदौलत ही मैं बढ़ते हुए कामको निबटानेमें समर्थ हो रहा हूँ। मुलाकातोंमें काफी समय निकल जाता है, पर वे जरूरी हैं, इसलिए मुझे कोई शिकायत नहीं है।

१. देखिए "पत्र: डॉक्टर विधानचन्द्र रायको", १५-१२-१९३२।
२. देखिए परिशिष्ट ५।
३. देखिए "पत्र: हृदयनाथ कुंजरूको", ६-१२-१९३२।
४. विधान-परिषदमें "अछूतों" के सरकार द्वारा नामजद प्रतिनिधि।

आशा है, तुम स्वस्थ होगे। तुम्हें नींदके लिए कुछ-न-कुछ अवश्य करना चाहिए। ओषधियाँ ठीक नहीं हैं, प्राकृतिक उपाय बरतने चाहिए और भोजन-सम्बन्धी परिवर्तन करना चाहिए। मैंने जिस ढंगसे बताया उस ढंगसे क्या तुम प्राणायाम कर रहे हो? कुछ आसानीसे किये जानेवाले आसनोंसे और गहरा सांस लेनेसे जैसा, कि प्राणायामका स्वास्थ्यपर असर होता है, पाचन-शक्तिको सहायता मिलती है और नींद भी आती है[1]।

हृदयसे तुम्हारा,
[१६ दिसम्बर, १९३२]

[पुनश्च :]

उपरोक्त पत्र लिखानेके बाद मुझे डॉ० विधानका यह तार मिला है:

तारके लिए धन्यवाद। सादर निवेदन है कि मैं नहीं समझा कि अपने-पर भरोसेसे आपका क्या अभिप्राय है। पत्रमें लिख ही चुका हूँ कि बंगालमें जैसा उत्साह है उसके फलस्वरूप कोई भी प्रधान और बोर्ड अस्पृश्यता-निवारण-कार्य कर सकता है। यदि आपका अभिप्राय ऐसे लोगोंका सहयोग प्राप्त करनेके भरोसेसे हो जो सहयोग प्रदान करनेके लिए तैयार न हों, तो उसे कोई प्राप्त नहीं कर सकता कितनी सफलता होती है, यह धन-संग्रह और उसके उचित उपयोगपर निर्भर है। कृपया तार दीजिए कि यदि हम लोग काम करना जारी रखें तो मुझे और बोर्डको आपका समर्थन मिलेगा। —विधान राय।

उसका मैंने निम्नलिखित उत्तर दिया है:

तारके लिए धन्यवाद। भरोसेसे मेरा मतलब आत्मविश्वाससे है। मेरी सामर्थ्यमें जितनी सहायता देना है आप उसपर निर्भर रह सकते हैं। —गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९०९) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला। एस० एन० १८७१५ से भी।

१. इस पत्रके उत्तरमें घनश्यामदास बिड़लाके पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट १३।

२७३. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

१६ दिसम्बर, १९३२

सचिव, बम्बई सरकार
होम डिपार्टमेंट

प्रिय महोदय,

जमनालाल बजाजसे उनके स्वास्थ्य तथा अस्पृश्यता-कार्य, दोनोंके सिलसिलेमें समय-समयपर मिलते रहनेकी अनुमतिके लिए मैंने २९ तारीखको[1] जो पत्र लिखा था, उसका जवाब पाकर उसका मैं कृतज्ञ होऊँगा।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(२), भाग-१, पृ० ४१७

२७४. पत्र : हरिभाऊ पाठकको

१६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय हरिभाऊ,

आपका पत्र कल मिला। मैं आपको उत्तर नहीं भेज सका, क्योंकि श्रीयुत अगाशेने आपका पत्र मुझे इतनी देरसे दिया कि मैं उनके हाथों आपको उत्तर भेज ही नहीं सकता था। मैंने यह बात नोट कर ली है कि श्रीयुत देवधर श्रीयुत नटराजन के साथ रविवारको आयेंगे। आप, श्रीयुत देवधर और अन्य मित्र यह फैसला कर सकते हैं कि डॉ० कुर्तकोटिको आमन्त्रित किया जाये या नहीं। मैं आपको सावधान करना चाहूँगा कि आप सुनी हुई खबरोंपर विश्वास न करें। उनके विचार आपको निश्चित रूपसे जानने चाहिए।

खर्चके बारेमें मेरा खयाल है कि प्रान्तीय बोर्डको अखिल भारतीय बोर्डको लिखना चाहिए। जो अतिथि कुछ दिनोंमें आनेवाले हैं उनके विषयमें सबसे अच्छा यह रहेगा कि आप उनके निवास आदिके बारेमें मुझसे मिल लें।

अन्य निमन्त्रणोंके बारेमें, जिनमें श्री वैद्य भी आ जाते हैं, आप और श्रीयुत देवधर निर्णय करें। व्यक्तिगत रूपसे मैं श्रीयुत चि० वि० वैद्यके लिए बहुत ही

१. साधन-सूत्रमें "३०" है; देखिए "पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको", २९-११-१९३२

आदरका भाव रखता हूँ। पर, साथ ही, सूची मेरी खातिर अत्यधिक लम्बी नहीं होनी चाहिए।

उस दिन मेरे लिए आप जो कृत्रिम चाय या कॉफी लाये थे उसपर मैं नहीं समझता कि मैं कोई राय दे सकता हूँ। जबतक मुझे यह न पता चले कि उसमें कितनी चीजें शामिल हैं, मैं उसे चख नहीं सकता। और यदि मैं चखूं नहीं तो कोई राय भी नहीं दे सकता। यदि निर्माता आपको उसमें शामिल चीजोंके नाम बता दें और यदि मैं उन्हें ले सकूं, तो मैं उसे आजमा कर देखनेको तैयार हो जाऊँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत हरिभाऊ पाठक
सदाशिव पेठ, पूना

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७२१) से।

२७५. पत्र : एस० नीलकण्ठ अय्यरको

१६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। मुझे खेद है कि दीवान बहादुर इस आन्दोलनको सौदेबाजीकी भावनासे देख रहे हैं। जो बात मैं अच्छी और सच मानता हूँ वह मुझे,

१. दिनांक ११ दिसम्बर, १९३२ का, जिसमें लिखा था : "... पिछले महीने मैंने दीवान बहादुर टी० आर० रामचन्द्र अय्यरसे भेंट की थी और तब इस आन्दोलनके प्रति उनका भाव मैंने काफी युक्तियुक्त पाया था। आज प्रातः मैंने उनसे फिर भेंट की और पूछा कि उन्होंने अपना विचार क्यों बदल दिया है। उन्होंने कहा कि इस मामलेमें गांधीजी के हठीले रुखने ही उन्हें भी हठीला बना दिया है। पहले जब श्री के० भाष्यम और मद्रासके अन्य नेता उनसे मिले थे तो उन लोगोंने एक सुझाव रखा था, जिसे वे एक समझौता मानते थे। वह हरिजनोंको **ध्वज-स्तम्भ** तक, अर्थात् मन्दिरके अन्दर किन्तु बाहरी परिक्रमातक जाने देनेका था। वे हरिजनोंको एक-दो बार, जैसे एकादशीके दिनोंमें, भीतरी परिक्रमामें जाने देनेको भी राजी थे।

"अब गांधीजी की इस माँगको देखते हुए, जिसे वे बहुत ही हठपूर्ण मानते हैं, कि उनके साथ बिलकुल उच्चतर जातियों-जैसा व्यवहार होना चाहिए, वे भी उतना ही हठीला रुख अपना रहे हैं, और सभी मठाधिपतियोंकी सहायतासे पुरातनपंथियोंको संगठित करनेको एक आन्दोलनका नेतृत्व कर रहे हैं।

"जिस चीजसे उनके आत्म-सम्मानको गहरी ठेस लगी वह गांधीजी का यह वक्तव्य था कि हरिजन नहीं, सवर्ण हिन्दू ही अपराधी हैं और उन्हें ही प्रायश्चित्त करना है। इस बातसे वे बहुत ही उत्तेजित हो गये कि गांधीजी ने उन-जैसे धर्मपरायण लोगोंको अपने पिछले धर्मनिष्ठ आचरणके लिए वृद्धावस्थामें प्रायश्चित्त करनेको कहा। उन्हें ऐसा लगा कि इस तरहका नादिरी हुक्म जारी कर गांधीजी ने अपनी स्वाभाविक विनम्रता बिलकुल छोड़ दी है और वे अहंकारके अवतार बन गये हैं. . ." (एस० एन० १८६९०)।

परिणामकी परवाह किये विना, अवश्य कहनी चाहिए और वैसा ही प्रत्येक जिम्मेदार हिन्दूको करना चाहिए। मैं समझता हूँ कि विनम्र मनुष्य अपने हार्दिक विचारोंको, जिन्हें वह सच मानता हो, व्यक्त करनेसे ही अविनम्र नहीं हो जाता। यह कहकर कि हिन्दू हरिजनोंके प्रति अपने व्यवहारके कारण ईश्वर और मनुष्यके सम्मुख अपराधी हैं, मैंने किसी व्यक्तिपर कोई निर्णय नहीं दिया है। ऐसे व्यक्तिको जो बहुत ही धर्मपरायण है अपनी जातिके अपराधके लिए प्रायश्चित्त करना पड़ सकता है। सत्यको कहनेमें, और यह बात मैंने १९१५में कही थी और तबसे इसे हजार मंचोंसे दोहरा चुका हूँ, मुझे कोई नादिरी हुक्म भी नजर नहीं आता।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० नीलकण्ठ अय्यर बी० ए०, एल० टी०
मंत्री, कोचीन-त्रावणकोर अस्पृश्यता-निवारण बोर्ड
त्रिचूर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७३०)से।

२७६. पत्र : अ० भा० वर्णाश्रम स्वराज्य संघके महामन्त्रीको

१६ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

१३ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपको शायद मालूम हो कि पंढरपुरके कुछ शास्त्रियोंने मेरे साथ देरतक विचार-विमर्श किया। अन्तमें हम इस पर सहमत हो गये कि इसी २३ तारीखको उनमें और जो शास्त्री मेरे विचारका आम तौरपर समर्थन करते हैं उनमें विचार-विमर्श होना चाहिए। इसलिए मेरा खयाल है कि २३ तारीखको विचार-विमर्श होगा और मेरा सुझाव यह है कि जिन शास्त्रियोंके नाम आपके मनमें हैं उन्हें भी उस विचार-विमर्शमें भाग लेना चाहिए। व्यक्तिगत रूपसे मैं ऐसा नहीं सोचता कि पहलेसे कुछ शर्तें निश्चित करनी जरूरी हैं। परन्तु यदि ऐसा जरूरी हो तो वे २३को निश्चितकी जा सकती हैं, और यदि एक अध्यक्ष आवश्यक हो, तो वह २३ को उपस्थित शास्त्रियोंमें से नियुक्त किया जा सकता है। आचार्य ध्रुव, हर हालतमें, २२की शामको पूना पहुँच जायेंगे, और विचार-विमर्श जबतक चलेगा तबतक उपलब्ध रहेंगे। इस प्रकारके विचार-विमर्शको सुननेमें मेरा अपना उद्देश्य अपने मन और हृदयको उससे प्रभावित होने देना है। और जो रुख मैंने अभीतक अपनाया है, यदि इसमें मुझे किसी दोषका पता चला तो अपनी गलती स्वीकार करने और अपने कदम पीछे हटानेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं होगी। इस विचार-विमर्शसे मेरे रुखमें चाहे कोई परिवर्तन हो या न हो, परन्तु विभिन्न दृष्टिकोणोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले शास्त्रियोंके मैत्रीपूर्ण संलापसे लाभ ही होना

है और कटुता मिटनी है। आपकी इस बातसे मैं बिलकुल सहमत हूँ कि विचार-विमर्शमें भाग लेनेवालोंकी संख्या प्रत्येक पक्षमें सातसे अधिक नहीं होनी चाहिए।

२३ तारीखसे शुरू होनेवाला विचार-विमर्श प्रत्येक दिन ३ घंटे चलकर २ या अधिक-से-अधिक ३ दिनसे आगे बढ़ सकेगा — इसकी मैं कतई कल्पना नहीं कर सकता। इसलिए फिलहाल तो अगली २ जनवरीकी बात सोचनेका अवसर है नहीं।

हृदयसे आपका,

महामंत्री
सनातन वर्णाश्रम स्वराज्य संघ
बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७२८)से।

२७७. पत्र : मंगलदास एम० पकवासाको

१६ दिसम्बर, १९३२

भाईश्री पकवासा,

धीरूभाईने बताया है कि आपको अंत्रवृद्धिका ऑपरेशन करवाना पड़ा है। इस खबरसे हम सब चिन्तित हुए हैं। धीरूभाईका कहना है कि आप काफी कमजोर हो गये हैं। पूरा समाचार लिखें। ईश्वर जल्दी शक्ति दे!

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४६७७) से; सौजन्य : मंगलदास एम० पकवासा।

२७८. पत्र : मनमोहनदास पी० गांधीको

१६ दिसम्बर, १९३२

भाई मनमोहन,

तुम्हारा पत्र और पुस्तकें मिल गई हैं। अभी तो हममें से किसीको ऐसा कुछ पढ़नेके लिए समय मिलता नहीं है।

मेरे स्वास्थ्यके विषयमें किसी तरहकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७) से।

२७९. पत्र : क० मा० मुंशीको

१६ दिसम्बर, १९३२

भाईश्री मुंशी,

धीरूभाईने कल जो बताया उससे लगता है कि जितना मैंने सोचा था दर्द उससे कहीं ज्यादा है। डॉक्टर क्या कहते हैं? पूरी बात लिखवाना, स्वयं नहीं लिखना।

क्या दर्द एक ही हाथमें है? पूरा समय रहता है? रिहा हो जानेके बाद कुछ अन्तर पड़ा है?

जीजी माँ ठीक होंगी। उन्हें मेरा प्रणाम।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५२२)से; सौजन्य : कन्हैयालाल मा० मुंशी।

२८०. पत्र : नारणदास गांधीको

१६ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला है। प्रेमाबहनको ऑपरेशनके बाद कष्ट नहीं हुआ होगा। ऑपरेशनके समय तो कष्टका भान रहता ही नहीं। पर कई बार बादमें तकलीफ होती है। ऐसा उसके मामलेमें न हुआ हो तो अच्छा है। कल मैंने मावलंकरको छाराओंके विषयमें सीधे एक पत्र लिखा था; सिर्फ एक दिन बचानेके लिए।

अभी लीलाधरके पिताका नाम पूछनेपर छगनलालने बताया है कि हमारी बहियोंमें आश्रमके सदस्योंका पूरा नाम लिखनेका रिवाज नहीं है। साधारण तौर-पर जिस नामसे बुलाते हैं वही नाम लिखा जाता है। यदि यह बात रिवाज या अपवादके रूपमें भी सही है तो इसे तुरन्त सुधारना चाहिए। क्योंकि यदि नाम पूरा न लिखा हो तो किसी दिन बहुत बड़ी समस्या उठ खड़ी होनेकी सम्भावना है। बहियोंमें जब पहली बार नाम लिखें तभी नाम, ठिकाना आदि सब-कुछ लिखें। किसी बालकका भी नाम लिखें तब भी पूरा नाम, आदि लिखना चाहिए। आश्रमवासी जहाँ कहींसे आये हों वहाँका पता कोष्ठकमें लिखा होना चाहिए। मैंने बहियाँ इसी तरह रखना सीखा है। और यदि पुरानी बहियाँ देखो तो उनमें यह सारी

सूचना लिखी होगी। इसलिए सब वहियाँ देख लो और जहाँ कहीं नाम अधूरा हो वहाँ उसे पूरा लिख डालो।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२८२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२८१. पत्र : नारणदास गांधीको

शनिवार सुबह, १७ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक मिल गई है, उसके साथ के पत्र भी मिल गये हैं। नारायणप्पा से कल मिला था। उसने बताया है कि उसने तुम्हें पत्र लिखे हैं, पर उसे उनका जवाब नहीं मिला। इस विषयमें लिखना। वह बादमें आश्रम आना चाहता है। मैंने कहा, यह तो नारणदासका काम है। वह सन्तुष्ट हो तभी जा सकते हो। अभी तो उसे छूटनेमें देरी है।

तुमने उपवास करके ठीक ही किया। पित्तके लिए यही सबसे अच्छा उपाय है। ज्वार-बाजरा हठपूर्वक मत खाना। इन्हें कम मात्रामें तो लेना ही। हो सकता है कि ये कुछ लोगोंको माफिक न आयें। प्रयोगके चक्करमें तुम अपना स्वास्थ्य न बिगाड़ लेना। आजकल तुम्हारी खुराक क्या है?

कुसुमकी नौका मझधारमें है। तलवलकर अच्छी तरह जाँच करता है न? मेरे पत्रके बारेमें कुछ कहा?

शान्ताके बारेमें समझ गया हूँ। छारा लोग अभी तो शान्त लगते हैं। गंगा-बहन आदि कहाँ हैं, क्या यह मालूम हुआ?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२८३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२८२. पत्र : एस० के० दत्तको[1]

१७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डॉ० दत्त,

आपका पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। इसने मुझे वही चीज दी जो आप मेरी वर्तमान स्थितिमें मुझे समुचित रूपसे दे सकते थे। जिप्सियोंमें भारतीय शब्दोंके चलनका पता लगाकर, प्रेजीडेंट मसरिक और आपने एक बहुत ही मूल्यवान खोज की है। कितना अच्छा हो यदि कोई परिश्रमी और सूक्ष्मदर्शी विद्वान आपकी खोजकी अनुपरीक्षा करे और यह निश्चित कर दे कि जो थोड़े-से समान शब्द आपने खोजे हैं वे मात्र एक संयोग हैं, या अर्वाचीन समान मूल या घनिष्ठ समागमके साक्ष्य हैं, या हो सकता है जिप्सी ऐसे सार्वभौमिक लोग हों जिनके लिए सारा विश्व ही अपना देश हो। वयोवृद्ध प्रेजीडेंटके बारेमें आपने जो सूचना दी है वह बहुत शिक्षाप्रद है। काश कि हम शक्ति और ओजमें उनका अनुकरण कर सकते!

महादेव मेरे साथ हैं, देवदास मुझसे प्रायः मिलता ही रहता है, और प्यारेलाल एक तरहसे मुझसे केवल उपवासके दिनोंमें ही मिल पाया था। श्रीमती दत्त और अपने पुत्रको हम सबका स्नेह दीजिए। नये पदकी आपकी कठिनाइयोंको मैं महसूस कर सकता हूँ। पर ईश्वर आपको उनसे जूझनेकी शक्ति देगा। फिर भी यह सब जिस प्रश्नकी भूमिका है वह मैं आपसे यह पूछना चाहता हूँ कि "आपके छात्र हरिजनोंके लिए क्या कर रहे हैं?"

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० के० दत्त
प्रिंसिपल, फोरमैन क्रिश्चियन कॉलेज
लाहौर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७३३) से।

१. उनके ९ दिसम्बर, १९३२ के पत्रके उत्तरमें, जिसमें लिखा था: "गत अगस्तमें मेरा पुत्र और मैं प्रेजीडेंट मसरिकके साथ दो दिन बितानेके लिए उनके यहाँ गये थे। प्रेजीडेंटने आपके बारेमें मुझसे बहुत बातें कीं। आपको याद होगा, उन्होंने आपको प्रागमें अपने यहाँ ठहरनेके लिए निमन्त्रित किया था, परन्तु आप अन्तमें वह निमन्त्रण स्वीकार नहीं कर सके थे। वे अद्भुत व्यक्ति हैं — ८५ सालके हैं और प्रतिदिन घुड़सवारी करते हैं। और वह भी वृद्धकी तरह नहीं, बल्कि एक प्रतिस्पर्धी मल्लकी तरह। उनके साथ जब मैं स्लोवाकियाके एक छोटे-से गाँवमें ठहरा हुआ था तो मुझे एक ऐसा अनुभव हुआ जो मुझे आपको अवश्य बताना है। . . . वह जिप्सियोंकी एक बस्ती थी। . . . सबसे विचित्र अनुभव उन लोगोंको बातचीत सुनकर हुआ। उसमें बीसियों शब्द ऐसे थे जो मैं समझ सकता था — लगभग शुद्ध हिन्दी शब्द, जैसे कि बहनके लिए बेहन, जलके लिए **पानी**, अग्निके लिए आग, इत्यादि। प्रेजीडेंट भवन लौटनेपर उस शाम उन्होंने और मैंने जिप्सी भाषामें लिखी बाइबिलकी कहानियाँ थोड़े ध्यानसे पढ़ीं और उनमें प्रयुक्त हिन्दी शब्दोंको मैं पहचान गया . . .।"

२८३. पत्र : दुनीचन्दको[1]

१७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय लाला दुनीचन्द,

अपने स्वभावके अनुसार आपने इस ज्वलन्त प्रश्नपर मुझे पत्र लिखकर अच्छा किया।

मेरे खयालसे आपका अन्तःप्रेरणाके साक्ष्यको अस्वीकार करना बिलकुल ठीक है। उस वक्तव्यसे मेरा सामना होना ही था, क्योंकि मैं उसे सच मानता हूँ। परन्तु जनताका यह केवल अधिकार ही नहीं बल्कि कर्त्तव्य है कि वह इस प्रश्नकी जाँच शान्त चित्तसे और सहज बुद्धिके दृष्टिकोणसे करे। इसीलिए जो कदम मैंने उठाये हैं और जो सोचे हैं, उनका औचित्य तर्कसे सिद्ध करनेकी मैंने खुद कोशिश की है। उनके औचित्यमें जो तर्क अपने वक्तव्योंमें मैं सार्वजनिक रूपसे दे चुका हूँ उसे मैं दोहराऊँ, यह तो आप चाहेंगे नहीं। फिर भी एक सवाल ऐसा है जिसकी मैंने सार्वजनिक रूपसे चर्चा नहीं की है। आपका यह कहना बिलकुल ठीक है कि मेरा शरीर मेरा अपना नहीं है, बल्कि राष्ट्रका है। परन्तु आप यह तो मानेंगे कि वह ईश्वरका भी है, या यूँ कहना चाहिए कि वह ईश्वरका है इसीलिए राष्ट्रका है। इस बारेमें मुझे यह कहना है कि ईश्वर इस शरीरसे काम ले रहा है। यदि वह इसे बड़ी या छोटी किसी सेवाके लिए प्रयुक्त करना चाहता है, तो वह इसे सारी दुनियाके खिलाफ हो जानेपर भी सही-सलामत रखेगा। और यदि ईश्वर इसे वापस लेनेका निश्चय कर लेता है, तो सारी दुनिया भी इसकी रक्षा नहीं कर सकेगी। इसलिए हमें उसीकी सेवामें प्रस्तुत रहना चाहिए और यह विश्वास रखना चाहिए कि वह जो भी करेगा वह हमारे भलेके लिए होगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत लाला दुनीचन्द, बी० ए०
कृपा निवास
अम्बाला शहर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७३५) से।

१. उनके ११ दिसम्बर, १९३२ के पत्रके उत्तरमें, जिसमें उन्होंने गांधीजी से प्रार्थना की थी कि वे २ जनवरी, १९३३ से उपवास न करें। (एस० एन० १८६८९)

२८४. पत्र : एन० सुब्रह्मण्य अय्यरको[1]

१७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[2] मिला। क्या आपको एक बुद्धिमान और विद्वान व्यक्तिकी यह उक्ति याद नहीं है कि जो बातें आप घंटे-भरमें कह नहीं सकते और बुद्धिग्राह्य ढंगसे समझा नहीं सकते, वे कहने या समझाने लायक होती ही नहीं हैं? परन्तु मैंने आपको पूरा एक घंटा देनेका वादा किया था। यदि आपको इससे सन्तोष हो तो आप वह अभी भी ले सकते हैं।

आपके प्रश्नोंके मेरे उत्तर इस प्रकार हैं:

१. हिन्दू-मन्दिर वह है जो हिन्दुओं द्वारा बनवाया गया है और इसलिए बनवाया गया है कि हिन्दू उसमें हिन्दू-धर्मकी अपेक्षाओंके अनुरूप पूजा करें।

२. हिन्दू-धर्ममें भारतीय जातिप्रथा-जैसी कोई चीज नहीं है, पर उसमें वर्णाश्रम है। और वर्ण प्रचलित जातिसे बिलकुल भिन्न है।

३. जो प्रथा नैतिक बोधके प्रतिकूल नहीं है वह न्यायालयों द्वारा मान्य होनी चाहिए।

४. जो किसी प्रथाको कानूनन लागू करना चाहते हैं उन्हें यह दिखाना होगा कि वह काफी समयसे प्रचलित है और नैतिक बोधके विरुद्ध नहीं है। परन्तु यदि किसी ऐसी प्रथाको जो पहलेसे मान्य है, चुनौती दी जाती है, तो फिर जिम्मेदारी बदल जाती है।

५. आत्मसम्मान रखनेवाला कोई भी न्यायालय आन्दोलनोंसे आतंकित होकर निर्णय नहीं देगा, बल्कि सर्वमान्य नियमों द्वारा ही शासित होगा।

६. इस प्रश्नका उत्तर संख्या १ में दे दिया गया है।

७. जहाँ धर्मशास्त्रोंमें मतभेद हो, वहाँ चलनका साक्ष्य एक निर्णायक तत्त्व होगा।

८. वैध ढंगसे अर्जित निजी सम्पत्तिकी रक्षा होनी चाहिए।

९. सामुदायिक सम्पत्तिकी भी, यदि सामुदायिक स्वामित्व सार्वजनिक कल्याणके विरुद्ध नहीं है तो रक्षा होनी चाहिए।

१०. निजी मन्दिरकी निजी सम्पत्तिकी तरह ही रक्षा होनी चाहिए।

११. मुझे किसी ऐसे आदमीकी जानकारी नहीं है जिसने मन्दिरोंको जब्त करनेके लिए आन्दोलन किया हो।

१. त्रावणकोरके वरिष्ठ दीवान पेशकार।

२. दिनांक १० दिसम्बर, १९३२ का (एस० एन० १८६८७)।

१२. जैसा कि मुझे बताया गया है, सीधी आत्महत्या वर्त्तमान कानूनके अन्तर्गत एक अपराध है।

१३. यदि गांधीने वाइसरायके दरवाजेपर धरना दिया होता और ब्रिटिश सरकारके इस देशसे न हटनेपर एक दिनके भी उपवासकी धमकी दी होती, तो सरकारको उसे गिरफ्तार करने और जबतक उसका दिमाग ठिकाने न आ जाये तब-तक जेलमें रखनेका न्यायोचित अधिकार होता।

१४. प्रस्तावित उपवास किसीको भी मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नको निर्भीकतासे और युक्तियुक्त ढंगसे सुलझानेसे रोकता नहीं है। और यह विरोधियोंको उनके उद्देश्यसे रोकता हो, इसका भी मुझे कोई लक्षण दिखाई नहीं देता। मेरे खयालसे उनका इस संकल्पित उपवासकी उपेक्षा करना बिलकुल ठीक है।

१५. मुझे खेदके साथ कहना पड़ता है कि यह प्रश्न[1] वास्तविक परिस्थितिके अज्ञानसे भरा है और मेरी सीमाओंसे बाहर है।

आपके प्रति सम्मानका भाव होनेके कारण यद्यपि मैंने आपके प्रश्नोंके उत्तर दे दिये हैं, पर मुझे यह कहना पड़ता है कि इनमें से बहुत-से प्रश्न केवल विवादके लिए हैं और मौजूदा परिस्थितिपर उनमें कतई ध्यान नहीं दिया गया है। और कुछ प्रश्न मात्र कल्पनापर आधारित हैं। मुझे यह जानकर बहुत खेद हुआ कि विद्वज्जनोंने एक विपत्तिपूर्ण परिस्थितिकी कल्पना कर ली है और वे उस कल्पित विपत्तिसे ही क्षुब्ध हो उठे हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एन० सुब्रह्मण्य अय्यर, एम० ए०,
मार्फत रेजिडेंट मेडिकल ऑफीसर
गवर्नमेंट अस्पताल, रायापेठ, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७३१) से।

१. प्रश्न यह था : "१५. यह आन्दोलन ऐसे दौरमें शुरू किया गया है जब भारत मर रहा है और धर्मका ह्रास हो रहा है, जब मन्दिरोंमें आस्था बराबर क्षीण होती जा रही है और जो लोग इस आन्दोलनके आयोजक और संचालक हैं उनमें तो वह बिलकुल ही नहीं है। उनका यह कार्य उतना धार्मिक उदारताका कदम नहीं है जितना कि स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए सरकारके खिलाफ एक राजनैतिक स्टण्ट है। तो क्या यह आन्दोलन देशमें फूटको बढ़ाने और दंगे और रक्तपाततक करानेके लिए और हम सबके समान लक्ष्य स्वराज्यकी सम्भावनाको अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर देनेके लिए नहीं खड़ा किया गया है? इसके विरुद्ध सनातनी विरोध अभी बस संगठित ही हो रहा है और वह इस सीमा तक बढ़ना है जिसकी सरकार या इस आन्दोलनके जनकोंको कल्पना भी नहीं होगी।"

२८५. पत्र : एम० एम० अनन्त रावको

१७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। इस आशासे कि जो रुख आपने अपनाया है और जिसे आप सनातनी मतका प्रतिनिधि कहते हैं, उसके लचरपनके प्रति आपकी आँखें खुल जायें, उस पत्रपर मैं कुछ खुलकर विचार करना चाहता हूँ और इसके लिए आपसे क्षमा चाहता हूँ।

लेकिन ऐसा करनेसे पहले आपसे मैं यह पूछना चाहूँगा कि आपके पत्रका कागज इतना विचित्र क्यों है? पत्र लिखनेके कागजपर, अभिनन्दन-पत्रकी तरह चारों ओर बेल- छपवानेसे सनातन धर्मका गौरव तो बढ़ नहीं सकता, उसपर अन्य आकृतियोंसे घिरा एजेण्टका चित्र रहनेसे तो उसकी सम्भावना और भी कम हो जाती है। विज्ञापक कभी-कभी पत्र लिखनेके अपने कागजपर सजावट करवाते हैं, पर जिस तरहके कागजका आप प्रयोग कर रहे हैं, उस तरहकी सर्वथा कलाहीन चीज तो मैंने कभी देखी नहीं। एक धार्मिक एजेन्सी द्वारा सजावटका, और वह भी बिलकुल कलाहीन सजावटका, प्रयोग कितना असंगत है, इसकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करनेसे मैंने अपनेको दो बार रोका।[2] परन्तु मैं सनातन धर्मका एक विनम्र प्रतिनिधि हूँ, या होनेकी कोशिश कर रहा हूँ — यद्यपि मेरा यह दावा अस्वीकार किया जा सकता है। इसलिए जब भी उस धर्मके नामपर कोई अशोभनीय चीज की जाती है तो मुझे हार्दिक दुःख होता है। यह तो हुई भूमिका।

अब अपने पत्रकी विषयवस्तुको लीजिए। आप क्योंकि यह स्वीकार करते हैं कि अस्पृश्यता जीवमात्रकी अभिन्नताकी दिव्य वास्तविकताके सर्वथा विपरीत है, इसलिए आपकी समझमें यह बात आसानीसे आ जानी चाहिए कि उस अभिन्नताकी अनुभूतिका एकमात्र उपाय भेदभावको यथासम्भव कम-से-कम करना है, और जहाँ वह है वहाँ वह एक बुराई मानी जानी चाहिए, जो पहला मौका मिलते ही समाप्त कर देनी चाहिए। जिस तरहकी अस्पृश्यता हममें आजकल प्रचलित है, उसे समाप्त करना उतना कठिन या असम्भव नहीं है। आप कहते हैं कि अस्पृश्यताका आधार "शारीरिक, नैतिक और मानसिक पवित्रता" है, और आपने यह बात इस तरह कही है मानो यह एक स्वयंसिद्ध प्रस्थापना हो। आपके इस कथनको, जो दैनिक अनुभवसे बिलकुल मेल नहीं खाता, समझना मेरे लिए बहुत ही कठिन है। अस्पृश्यताके स्थायित्वका दावा करना, जैसा कि जाहिर है आप करते हैं, अभिन्नताकी अनुभूतिको अनिश्चित कालके लिए स्थगित करना है — वैसे आप यदि यह मानते हों कि वह अनुभूति

१. दिनांक १४ दिसम्बर, १९३२ का (सी० डब्ल्यू० ९५६१)।
२. देखिए "पत्र : एम० एम० अनन्त रावको", २४-११-१९३२।

मानव जातिको वाहरी स्रोतोंसे मिलनी है तो बात दूसरी है। पर यह बात किसीके मुँहसे कभी नहीं सुनी। इसके विपरीत इसपर सव पूर्णतया सहमत हैं कि अभिन्नताकी वह अनुभूति सतत प्रयत्नसे ही प्राप्त हो सकती है। दूसरे शब्दोंमें, वह केवल तभी प्राप्त हो सकती है जब हम भेदभावोंको दिन-प्रतिदिन अधिक तेजीसे मिटायें, और शुरूआत उन भेदभावोंसे करें जो हमारे अपने पैदा किये हुए हैं और जिनका कोई नैतिक औचित्य नहीं है।

अन्य धर्मोंमें प्रचलित व्यवहारोंको भी हम भुला नहीं सकते। यदि सभी जीवोंमें अभिन्नता है, तो सभी धर्मोंमें भी अभिन्नता है। अतः अपने व्यवहारकी अन्य धर्मोंके व्यवहारसे जाँच करना यदि नितान्त आवश्यक नहीं तो शिक्षाप्रद तो है ही। और वैसा करनेपर हम देखते हैं कि जिस तरहकी अस्पृश्यतासे हमारा आज परिचय है उसका किसी भी अन्य धर्ममें अस्तित्व नहीं है। इसलिए हमें यह सिद्ध करना है कि अन्य धर्म अस्पृश्यताका प्रयोग न करनेके कारण दोषपूर्ण हैं, और समान लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए यह इतनी आवश्यक है कि जो धर्म इसका प्रयोग नहीं कर रहे हैं उन्हें, वे चाहें या न चाहें, इसका प्रयोग करना होगा। पर इस तरहका दावा करते मैंने किसीको कभी नहीं सुना।

जो लोग सनातनी होनेका दावा कर रहे हैं वे रोषकी एक आवेशपूर्ण स्थितिमें पहुँच गये हैं, मानो मैं हिन्दू-धर्ममें जो-कुछ भी अच्छा है, उस सबको भंग करने जा रहा हूँ। इस तरह वे यह समझनेके कि मैं किस चीजके लिए प्रयत्नशील हूँ और यह जाननेके कि वे किस चीजपर हमला कर रहे हैं, अयोग्य हो गये हैं। मैं बेखटके यह कह सकता हूँ कि सनातनियोंके पाससे मुझे जो ढेर-सारे पत्र मिल रहे हैं उनमें से किन्हीं भी दो पत्रोंमें अस्पृश्यताकी परिभाषापर सहमति नहीं है। वे या तो मुझे कोसते हैं या ऐसे तर्क देते हैं जिनका विषयसे कोई सम्बन्ध नहीं है। यह सब सनातन धर्मके लिए शुभ नहीं हो सकता। उनका यह पत्र-व्यवहार मुझे हिन्दू-धर्मके पतनका एक दुःखद लक्षण लगता है।

मेरा निवेदन यह है कि जो-कुछ मैंने लिखा है आप उसपर गम्भीरतासे विचार करें, और यदि आपको मेरे तर्कमें कोई बल दिखाई दे तो इस पूरे प्रश्नका शान्त चित्तसे अनुशीलन करें। और यदि आप मेरी तरह यह महसूस करें कि अस्पृश्यता एक बुराई है, तो सचाईकी साहसके साथ घोषणा करें और इस बुराईके खिलाफ लड़ें।

आपने चार शंकराचार्योंका उल्लेख किया है।[1] उन्हें मैं भला किसलिए कष्ट दूँ। अपनी स्थितिकी सचाईके वारेमें मेरे मनमें कोई सन्देह नहीं है। दोपहरकी धूपकी

१. उन्होंने गांधीजी को लिखा था : "अस्पृश्यताके विषयमें आप सच्चा सनातनी मत जाननेको उत्सुक हैं। अपनी इस इच्छाके साथ पूरा न्याय करनेके लिए आपको (१) परम पुनीत श्री शंकराचार्य स्वामी, कामकोटिपीठमको, जो इस समय मद्रासमें विराजते हैं, (२) परम पुनीत जीर, श्री अहोविलामठम्, श्रीरंगम्को, (३) परम पुनीत श्री शंकराचार्य स्वामी, शारदापीठम, श्रृंगेरीको, (४) परम पुनीत श्री सत्यज्ञानतीर्थ स्वामी उत्तराडिमठसको, जो इस समय बनारसमें विराजते हैं, तार देकर यह प्रार्थना करनी

तरह वह मेरे सामने स्पष्ट है। यदि वे यह सोचते हैं कि मैं अन्धकारमें हूँ, तो मुझे प्रकाश दिखाना उनका काम है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एम० एम० अनन्तराव,
एजेन्ट, सनातन धर्म एजेन्सी,
४० ईश्वरदास लाला स्ट्रीट, ट्रिप्लीकेन, मद्रास

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५६५) से; सौजन्य : मैसूर सरकार। एस० एन० १८७३६ से भी।

२८६. पत्र : एन० एस० वरदाचारीको

[१७ दिसम्बर, १९३२][1]

आपका पत्र मिला। तथाकथित आशीर्वादके लिए और चाहे कोई भी जिम्मेदार हो, मैं नहीं हूँ। मुझे सूचना देनेवाले आप ही प्रथम हैं कि कुम्भकोणममें कोई स्वदेशी प्रदर्शनी लगाई गई है। जेल-जीवनकी सीमाओंमें अस्पृश्यताको छोड़कर और किसी भी विषयपर सन्देश नहीं भेजता हूँ और न ही भेज सकता हूँ। इसलिए आप इस पत्रका जैसा भी चाहें उपयोग कर लें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१२-१९३२

२८७. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१७ दिसम्बर, १९३२

चि० जमना,

इस बार दमेने फिर तेरी अच्छी खबर ली जान पड़ती है। क्या इसका यह अर्थ नहीं है कि तुझे बाहर रहकर [ही] जितनी बने उतनी सेवा करनी हैं। तेरी इच्छा हो तो इस समय वर्धामें जाकर रह। वहाँ बैठे-बैठे भी बहुत सेवा हो सकती है। वहाँ आश्रममें कितनी बालिकाओंका पालन-पोषण किया जा रहा है। तुझे

चाहिए कि आप जो परिषद् आयोजित करना चाहते हैं, उसके लिए वे अपने सर्वश्रेष्ठ पण्डित मनोनीत करके भेजें। इसके बिना आपका वास्तविक उद्देश्य पूर्णतया सिद्ध नहीं हो सकता।"

१. "दैनन्दिनी, १९३२" में इस तारीखकी प्रविष्टिसे। यह "मद्रास, २१ दिसम्बर" तिथि के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

आश्रमका रंग लगा हो तो इन बालिकाओंकी देखभाल कर। फिर अभी तो पुरुषोत्तम वहाँ है। बालकृष्ण तो है ही। कृष्णाका भी आना-जाना होता रहता है। क्या कभी बीजापुरमें भी रहनेका प्रयत्न किया है? सुख-दुःख सभीमें आश्रममें ही पड़े रहनेका निश्चय किया हो तो अलग बात है। लेकिन दूसरे किसी स्थानमें स्वास्थ्यकी संभाल हो सकती हो और सेवावृत्तिकी लगन लगी हो तो जहाँ शरीर अच्छा रहता हो वहीं जाकर रहना तेरा स्पष्ट कर्त्तव्य है। जिसमें सेवावृत्ति है वह जहाँ कहीं जायेगा समा जायेगा, यह अनुभवसिद्ध बात है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६५) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२८८. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

१७ दिसम्बर, १९३२

चि० डाह्याभाई,

तुम्हारा काम अभी पूरा नहीं हुआ, परन्तु तुम हिम्मत नहीं हार सकते। रोगका दूर होना रोगीपर निर्भर रहता है, यह जानते होगे। रोगी कभी निराश न हो और अधीर भी न हो। जबतक दुःख भोगना हो तबतक भोगे; परन्तु उसके साथ जूझता रहे। सभी दवाओं और सारी खुराकोंसे रामनाममें अधिक शक्ति है, यह अनुभव न किया हो तो कर देखना। इसकी शक्ति विद्युत्-शक्तिसे अधिक है। यह तुम्हें शान्ति और उत्साह देगा। लगता है, तुम्हें पत्र लिखनेका लोभ रहता है। यह लोभ छोड़ना चाहिए। इस समय तुम्हारा कर्त्तव्य पूरी तरह आराम करना है। विनोदमें एक-दो वाक्य मित्रोंको या हमारे-जैसे बुजुर्गोंको लिखाये जा सकते हैं, परन्तु दफ्तरका काम करनेका विचार नहीं किया जा सकता। इतना मान लेना। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करेगा।

यह पत्र मैंने बायें हाथसे लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १५२-३ ।

२८९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१७ दिसम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिल गया। अस्पतालसे जबर्दस्ती आई होगी तो इसे मैं दोष मानूँगा। अस्पतालमें पड़े-पड़े भी सेवा हो सकती है, यह तो मालूम है न? कम बोलना। अभी दूध और फलोंपर ही रहना। बीमार आदमी चावल नहीं खा सकता, यह कहाँका नियम है? जल्दबाजी करके बीमार न पड़ना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१५)से। सी० डब्ल्यू० ६७५४ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

२९०. पत्र : सुशीलाबहन गांधीको

१७ दिसम्बर, १९३२

चि० सुशीला,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा अपने स्वास्थ्य या ऐसे किसी कारणसे यहाँ रुक जाना तो मैं समझ सकता हूँ। नहीं तो हमारा कर्त्तव्य स्पष्ट है कि जैसे जहाँ राम वहीं सीता, इसी तरह पति-पत्नी भी साथ ही रहें। भोगके लिए नहीं, बल्कि सेवाके लिए। इसलिए तुम्हारा मणिलालके साथ जाना ही ठीक है।

उपवास आदि मेरे जीवनका स्वाभाविक अंग बन गये हैं। उसके लिए तुम्हारा रुकना बिलकुल आवश्यक नहीं है। हो सकता है कि ऐसे किसी अवसरपर सेवाके लिए एकका उपस्थित होना आवश्यक हो और एक रुक जाये तो वह बात समझी जा सकती है; पर ऐसी तो कोई परिस्थिति है ही नहीं। किसी भी दृष्टिसे विचार करें, तुम्हारा मणिलालके साथ जाना ही ठीक लगता है। इसलिए निश्चिन्त होकर दक्षिण आफ्रिका जानेका निर्णय कर डालो।

ताराके हमलेकी राह देखूँगा। उसे किसी प्रमाणकी आवश्यकता हो तो यहाँसे भेजूँ। बादमें वह हार भी जाये तो कोई हानि नहीं। यह विजयका प्रथम पग माना जायेगा। और जीत जायेगी तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं होगी। बच्चे बड़ोंको हरा भी दें तो भी जीत बड़ोंकी ही होती है।

सीताके फोड़े दूर नहीं होते, क्या इसका अर्थ यह न हुआ कि माताके रूपमें तुम उतनी होशियार नहीं हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८०३) से।

२९१. पत्र : कीरचन्द कोठारीको

१७ दिसम्बर, १९३२

साधारण तौरपर कह सकता हूँ कि जहाँ दंगा होनेकी सम्भावना हो और राज्यसे भी मदद न मिले वहाँ सभा या जुलूस आदि न निकालें। धीरे-धीरे लोकमत तैयार करें। सेवा-कार्य तो करते ही रहना है। ऐसा करनेके लिए कई लोगोंको हरिजनोंके पास जाकर रहना भी पड़ेगा।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३४५।

२९२. पत्र : प्यारेलाल नैयरको

१७ दिसम्बर, १९३२

तुमने पत्र न लिखनेका व्रत लिया लगता है। या तो जैसे भगवान रखे वैसे रहना है या प्यारेलाल रखे वैसे। शरीर अच्छा हो और मुझे कुछ लिखनेको ही न हो, तो मुझे सन्तोष है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३४५-६।

२९३. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१७ दिसम्बर, १९३२

...बहन[1] दुधारू गाय है। उसके दोषोंका पार नहीं, पर गुण दोषोंसे भी ज्यादा हैं। तुलसीदासका पाठ याद रखकर गुणोंको ग्रहण करना और दोषोंका त्याग करना। हम सब दोषोंसे भरे हैं, यह जानकर साथीके दोष सह लें।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३४६।

१. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।

२९४. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

१७ दिसम्बर, १९३२

इन दिनों लम्बे पत्र लिखनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। तकलीकी नई रीति परशुरामजीको आती है। भाऊ-जितनी गति तो नहीं, पर शायद इस रीतिसे वे चलाना सिखा सकेंगे।

नारणदासका कहना है कि खादी-कार्य, बढ़ईका काम, खेती, चर्मालय, और दुग्धालयका काम जिसने नहीं सीखा, उसने कुछ सीखा ही नहीं। यह बिलकुल ठीक है। मालूम होता है कि अभीतक तुम आश्रमकी एक खास बात नहीं समझ पाये हो। वह यह है: खेती, बढ़ईगिरी वगैरह भी शिक्षा है और उससे भी बुद्धिका और साथ ही दूसरी कितनी ही इन्द्रियोंका विकास होता है। अगर ये धन्धे शिक्षाके अंगके रूपमें सिखाये जायें, तो उसकी कीमत अक्षरज्ञानसे ज्यादा है। यह बात मैं आश्रमको भेजे हुए किसी पत्रमें[1] बता चुका हूँ। यदि याद न हो या वह पत्र तुम्हारे हाथमें तुरन्त न आये तो पूछ लेना। मैं फिर लिखूँगा। क्योंकि यह बात सबके समझने लायक है। इसे लिखनेका मतलब यह नहीं है कि मैं अक्षरज्ञानका दर्जा गिरा देना चाहता हूँ। अक्षरज्ञानका मूल्य मैं अच्छी तरह समझता हूँ। मुझसे अधिक अच्छा उसका उपयोग करनेवाले बहुत आदमी एकाएक नजर नहीं आयेंगे। मेरा हेतु धन्धोंकी शिक्षाको अक्षरज्ञानकी बराबरीमें रख देना है। इतनी बात जो समझ लेंगे, वे धन्धोंकी शिक्षाका त्याग करके अक्षरज्ञान सीखनेका लोभ कभी नहीं करेंगे। ऐसे लोगोंका अक्षर-ज्ञान ज्यादा चमक उठेगा। इतना ही नहीं, बल्कि जनताको भी उससे अधिक लाभ होगा। यह बात अच्छी तरह समझ गये होगे तो तुम सब ढोर चरानेको तैयार रहोगे।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. देखिए खण्ड ५०, पृ० १८३-४।

२९५. पत्र : कुसुम गांधीको

१७ दिसम्बर, १९३२

हरएक बीमारके जीनेकी कुँजी, जहाँतक सम्भव है वहाँतक, उसके अपने हाथमें होती है। वह निराश होकर बैठ जाये, तो किसी भी डॉक्टरकी दवा काम नहीं आती, और वह हिम्मत न हारे तो कोई भी फंकी अमूल्य दवा बन जाती है। इसलिए तीन नियम याद रखना। एक, हिम्मत हारना ही नहीं। दूसरा, जिसके हाथमें नब्ज दे दी हो, वह जैसा कहे वैसा करना। और तीसरा, कैसा भी दुःख हो तो भी राम-नाम रटना और प्रफुल्लित रहना, रोना नहीं।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३४६-७।

२९६. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय सतीश बाबू,

आपका कोई पत्र नहीं आया। बोर्डके पुनर्गठनकी अपनी कोशिशमें मैं बुरी तरह नाकामयाब हुआ हूँ। मैंने डॉ० रायसे क्षमा-याचना की है और अपना पत्र[1] वापस ले लिया है। आपको भूल जाना चाहिए कि मैंने कभी कोशिश की थी। चीजोंको अपने ही ढँगसे चलना चाहिए। आपको जैसा भी सबसे ज्यादा उचित लगे उसी तरह काम कीजिएगा।

आप दोनोंको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६१९) से।

१. देखिए "पत्र डॉ० वि० च० रायको, १५-१२-१९३२।

२९७. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१८ दिसम्बर, १९३२

चि० जमना,

बची हुई डाकके साथ आया हुआ तुम्हारा पत्र पढ़ा। मेरी तो यही सलाह है कि किसी दूसरी जगह जाकर रहो।[1]

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६६) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२९८. पत्र : छोटूभाई त्रिवेदीको

१८ दिसम्बर, १९३२

चि० छोटूभाई,

तुमने ठीक कामकी जिम्मेदारी ली है। प्रयत्न करते-करते काम सीख जाओगे। मुझसे विशेष सलाहकी आशा न करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४७१) से।

२९९. पत्र : कोतवालको

१८ दिसम्बर, १९३२

भाई कोतवाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें जो शंका हुई है वह स्वाभाविक है।

यदि धर्मसंकट उपस्थित ही न होते तो धर्म-पालन तलवारकी धारपर चलने जैसा न कहा जाता। साधारण तौरपर जिसे त्याज्य मानते हैं, वही थोड़े फेरफारसे कर्त्तव्य हो सकता है। यह रसायनशास्त्रके मिश्रणों-जैसा है। अप्पाने अपने अधिकारके आधारपर माँग नहीं की थी, न उसकी माँग किसी स्वार्थकी दृष्टिसे की गई थी। उसने तो यह माँग अपने धर्म-पालनके लिए की थी। जो परिस्थिति सामने है वैसी परिस्थिति उत्पन्न होनेपर वह उपवास कर सकता है, यह राय मैंने हम सब जब

१. देखिए "पत्र : जमनाबहन गांधीको", १७-१२-१९३२।

छूटे हुए थे तब व्यक्त की थीं। इसलिए अप्पाका साथ देना मेरा कर्त्तव्य हो जाता है, इस विषयमें मुझे कोई सन्देह नहीं है। मैंने जो-कुछ कहा है वह बुद्धिसे समझा जा सकता है, इसलिए मेरी बातपर श्रद्धावश विश्वास करनेकी आवश्यकता नहीं है। इसे बुद्धि स्वीकार न करे तो जहाँतक उपवास-धर्मको समझ सके हो, उसीपर दृढ़ रहना। सोच-विचारके चक्करमें न पड़ना। मैंने जो समझाया है वह स्पष्ट न हुआ हो तो फिर पूछ लेना। न पूछो तो भी चलेगा। मेरे सामने जो परिस्थिति खड़ी हुई वह असाधारण थी। असाधारण चीजोंके बारेमें ज्यादा विचार करना भी निषिद्ध है।

केलप्पनको उपवास छोड़नेके लिए भी मैंने ही कहा था, इसलिए यदि अब उसके उपवास करनेका अवसर आ जाये तो मुझे उसका साथ देना ही चाहिए। मुझे अपना स्पष्ट धर्म यही लगता है। इससे सम्बन्धित कई प्रश्न हैं। उन सबको समझानेका समय नहीं है। इस विषयमें जो-कुछ लिखा है वह सब ध्यानपूर्वक पढ़ लोगे तो कुछ पूछनेके लिए नहीं रहेगा।

दो तारीखको उपवास करूँगा ही ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। अभी कई उलझनें हैं। यह तारीख आज तय नहीं की है; यह तो जब केलप्पनने उपवास मुल्तवी किया था तभी तय की थी।[1] इस आन्दोलनमें किसीका अधिकार छीन लेनेकी बात नहीं है। जिनके अधिकार छीन लिये गये हैं उन्हें उनके अधिकार लौटा देनेकी बात है। मुझे लगता है कि इसमें तुम्हारे सभी प्रश्नोंके उत्तर आ जाते हैं।

तीस दिनकी अवधिके विषयमें जो तुमने समाचारपत्रोंमें पढ़ा है, वह निराधार है। ऐसा करनेका तनिक भी इरादा नहीं है। इस समय मेरे साथ बात करनेवाले इतनी ज्यादा गलतफहमी फैला रहे हैं कि उसका कोई अन्त ही नहीं। इसलिए मेरे विषयमें जो-कुछ कहा जाये उसे कोई न माने। जो-कुछ मैं कहूँ उसीपर विश्वास करें।

दो तारीख मुकर्रर करनेके लिए जमोरिनसे पूछनेकी जरूरत नहीं थी। जमोरिन ने ही तार देकर चाहा था कि केलप्पनका उपवास मुल्तवी करा दूँ। मुझे जो तारीख सबसे ज्यादा ठीक लगी वही मैंने रखी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६०६)से।

१. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १६०-१।

३००. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

१८ दिसम्बर, १९३२

चि० नर्मदा,

तेरा पत्र मिला। तेरी तबीयत ठीक रहती है, यह बहुत अच्छी बात है। जो-कुछ काम करना हो उसे ठीक ढंगसे कर। सोचना भी ढंगसे।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७७०)से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक।

३०१. पत्र : नारणदास गांधीको

१८ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

आखिरकार तुम भी बीमार पड़ गये? इसी तरह चलता है। अनुकूल होनेपर ही तुम्हें और दूसरे लोगोंको नया प्रयोग करके देखना है। अभी तो ज्यादा दूध और फल ही लेना। सब्जी भी ले सकते हो। भातकी आवश्यकता दिखाई दे तो निस्संकोच ले लेना। भात छोड़ देनेका सुझाव तो मैंने सिर्फ शरीरकी दृष्टिसे दिया है। जिसे स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उसकी आवश्यकता लगे उसे कोई मनाही नहीं है। भात लेनेमें कोई शर्म न करे। अगर परिणाम अच्छा न दिखाई दे तो पूरा प्रयोग छोड़ सकते हो।

मैंने जमनाके लिए जो सुझाव दिया था उसीपर दृढ़ हूँ।[1]

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२८४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए "पत्र : जमनाबहन गांधीको", १७-१२-१९३२ और १८-१२-१९३२।

३०२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१८ दिसम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

बीचमें तुझे पत्र लिखे तो हैं। यह साप्ताहिक पत्रका उत्तर है।

छगनलालको तेरा पत्र न पढ़ने देनेकी तेरी निषेधाज्ञाका मैंने पालन किया है। मगर निषेधाज्ञा तो मुझे पढ़ानी ही पड़ी। मैं ऐसा मानता हूँ कि न पढ़नेके बारेमें तूने जो लिखा उसे वे न जानें, यह तो तू भी नहीं चाहती होगी। इसलिए उतना पढ़ाकर बाकी भाग न पढ़नेके लिए कहा। लेकिन तेरी आज्ञा मुझे अच्छी नहीं लगी। आश्रमका एक व्यक्ति आश्रमके ही दूसरे व्यक्तिसे कोई बात कैसे छिपा सकता है? छोटी बालिका ऐसी इच्छा रखे, बड़ी उम्रके नासमझ लोग ऐसा चाहें, यह भी समझमें आ सकता है। लेकिन तेरे पास छिपानेको क्या हो सकता है? दूसरे लोग तेरा पत्र पढ़ें, इससे उसकी पवित्रता कम नहीं होती परन्तु. बढ़ती है। तेरे विचार दुनिया जाने इसमें तुझे संकोच होना ही नहीं चाहिए। हमें छिपे विचार करनेका अधिकार नहीं है। ऐसी आदत डालनेसे हमारे विचारोंपर स्वभावतः अंकुश लग जाता है। मनुष्यमात्र ईश्वरके प्रतिनिधि हैं। ईश्वर तो हमारे सब विचार जानता ही है। लेकिन उसे हम प्रत्यक्ष नहीं देखते, इसलिए हम निश्चित रूपसे नहीं कह सकते कि वह हमारे विचार जानता है। लेकिन अगर मनुष्यको उसके प्रतिनिधि के रूपमें हम पहचानें, तो हमारे विचार वह जाने, इसमें हमें संकोच नहीं होना चाहिए। और प्रतिनिधि प्रत्यक्ष है इसलिए हम अपने विचारोंपर सहज ही नियन्त्रण रख सकते हैं। मैं चाहता हूँ कि तू ज्ञानपूर्वक अपनी निषेधाज्ञा वापस ले ले। मुझे आशा थी कि दायें हाथसे लिख सकूँगा। लेकिन देखता हूँ कि मुझे इस हाथका उपयोग नहीं करना चाहिए। इसलिए जितना सोचा है उतना शायद नहीं लिख सकूँगा। रमाबहनके लिए जो मनमें आये वह तू लिख सकती है, उसमें कोई अड़चन नहीं है। तू जो भी लिखेगी वह द्वेषभावसे नहीं लिखेगी, इतना तो वह जानती ही है। अब तू जो चाहे सो लिखना। जो लिखेगी उसपर मैं अमल करूँगा।

मालूम होता है कि तू अस्पतालसे जल्दबाजी करके आई है। डॉक्टरकी हिदायतोंका तू पूरी तरह पालन करती हो तो कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिए। ऑपरेशन का सोचा हुआ फल निकले तब तो बहुत ही अच्छा हो।

. . .का[1] किस्सा दुःखद है। . . .का[2] पक्ष जाने बिना उसका दोष निकालने के लिए मैं तैयार नहीं हूँ। . . .[3] स्वच्छ हृदयका है, निर्दयी नहीं है। वह अपना धर्म समझता है। मेरे पास ज्यादा समय होता तो ज्यादा समझाता। तुझसे जितनी

१, २ व ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

हो सके उतनी तू . . .की[1] सेवा करना। . . .[2] अगर अकेली पड़ गई है तो इसमें उसका दोष कम नहीं है। परन्तु इस दोषके कारण उसकी सेवामें कमी नहीं होनी चाहिए। . . .[3] में गुण भी बहुत हैं।

इन्दु तो बेखबर है ही। वह भोला और खिलाड़ी है। मैंने उसके पिताको लिखा है कि उसे अपने पास ही रखें।

दूध और फल तो औषधि समझकर अभी लेती रहना। काँजी वगैरह अभी मत लेना। चावलकी इच्छा हो तो खा सकती है। डॉक्टरको दिखाती रहना।

सुशीलाका पत्र[4] इसके साथ है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१६) से। सी० डब्ल्यू० ६७५५ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

३०३. पत्र : गुलाब ए० शाहको

१८ दिसम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

तेरा पत्र मिला। कागजकी बाईं ओर हमेशा थोड़ा हाशिया छोड़ देना चाहिए। यह तू इस पत्रमें देख सकती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३४)से।

३०४. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

१८ दिसम्बर, १९३२

चि० बबु उर्फ शारदा,

तूने मेरा बहिष्कार किया है क्या? हर हफ्ते सुन्दर-सा पत्र लिखनेवाली तू मौन कैसे हो गई है? यदि तू मुझपर दयाके कारण पत्र न लिखती हो तो मुझे दया नहीं चाहिए। मुझे तो तेरे सुन्दर पत्र चाहिए। मैं न लिखूं तो भी।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५९)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

१, २ व ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

४. सुशीला, प्रेमाबहन कंटककी सहेली।

३०५. पत्र : अ० भा० श्रद्धानन्द स्मारक ट्रस्टके मन्त्रीको

[१९ दिसम्बर, १९३२से पूर्व][1]

स्वामी श्रद्धानन्द[2]से बड़ा हरिजनोंका हितैषी और उनसे सच्ची सहानुभूति रखनेवाला आज हमें मिलना मुश्किल है। स्वामी श्रद्धानन्दकी स्मृति हरिजनोंकी हर सम्भव सेवा करके ही उपयुक्त ढंगसे मनाई जा सकती है, और जो साधन-सम्पन्न हैं, कम-से-कम उन्हें श्रद्धानन्द-स्मारक कोषमें चन्दा देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-१२-१९३२

३०६. पत्र : नीरद रंजन गुहाको

१९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

मैं आपके लम्बे किन्तु निर्देशात्मक, सुयुक्तियुक्त और सहानुभूतिपूर्ण पत्रके लिए धन्यवाद देता हूँ। मैंने शुरूसे आखिरतक उसे सुना। ठीक ही है कि आप अपनी दलीलके जवाबकी अपेक्षा नहीं करते। फिर भी मैं यह कहूँगा कि आपकी दी हुई दलील मेरे लिए नई नहीं थी; और यद्यपि आपने अपने पत्रमें जो-कुछ कहा है उस सबसे मैं सहमत हूँ, पर मैंने जो तरीका अख्तियार किया है उसकी बराबर हिमायत कर सकता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत नीरद रंजन गुहा
पी० २१५-ए, रूसा रोड (साउथ) पो० आ० टोलीगंज
कलकत्ता

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७४४)से।

१. यह "नई दिल्ली, १९ दिसम्बर" की तारीखके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. २३ दिसम्बर, १९२६को इनकी हत्या कर दी गई थी।

४. किसी आन्दोलनको सफल बनानेके लिए हम बहुत-से तरीके अपना सकते हैं। परन्तु कुछ तरीके ऐसे हैं जिन्हें अपनाना हमारी क्षमताके बाहर होता है। मेरी रिहाई एक ऐसा तरीका है जिसे अपनाना मेरी क्षमताके बाहर है।

५. यह चाहना कि सवर्ण हिन्दू अस्पृश्योंके साथ अस्पृश्यता मिटाएँ, इससे पहले खुद अस्पृश्योंके बीच अस्पृश्यता मिटनी चाहिए, रेतकी रस्सीको ऐंठने-जैसा ही प्रयास है, जिसकी विफलता पहलेसे निश्चित है। जब सवर्ण हिन्दू अस्पृश्यताको सचमुच मिटा देंगे, तो दूसरी अस्पृश्यता प्रायः बिना प्रयास ही चूर-चूर हो जायेगी।

६. मेरे विचारमें इस बातको दृष्टिमें रखते हुए कि जो संघ अब बना है उसे प्रायश्चित्त करना है अथवा हरिजनोंके प्रति एक दायित्व पूरा करना है, उसमें पश्चात्तापी या देनदार ही होने चाहिए। परन्तु उसके साथ एक समिति लेनदारों अर्थात् हरिजनोंकी भी होनी चाहिए जिससे कि उनकी इच्छाओंका समय-समयपर पता चलता रहे।

७. सवर्ण हिन्दू जबतक ऐसा करनेको तैयार न हों, कोई भी कानून अस्पृश्यता को मिटा नहीं सकेगा। कानून उनकी केवल तभी सहायता कर सकता है जब वे उसकी सहायता चाहें। पर वह उन्हें कभी भी बाध्य नहीं कर सकता।

८. हिन्दू-धर्ममें, और प्रत्येक धर्ममें ही, धार्मिक मनुष्यका हर कार्य उसके धर्म द्वारा शासित होता है। जो मनुष्य कुछ कार्योंमें तो अपने नैतिक और आध्यात्मिक बोध द्वारा निर्देशित हो और कुछमें न हो, वह धार्मिक नहीं हो सकता। जब किसी व्यक्तिमें धर्म-भाव होता है, तो वह उसकी पूरी सत्ताको व्याप्त कर लेता है।

९. तीनों कथन[1] एक-दूसरेसे असंगत नहीं हैं, बल्कि एक ही सचाईका प्रतिनिधित्व करते हैं। गुरुवायुरके बिना केलप्पन उपवास न करते, केलप्पनके बिना मुझे गुरुवायुरके लिए उपवास करनेकी प्रेरणा न मिलती।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० बी० तलेगाँवकर
१०३४, रविवार पेठ, पूना शहर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७२२)से।

१. यहाँ आशय विभिन्न अवसरोंपर कहे गये गांधीजी के इन कथनोंसे है कि वे उपवास गुरुवायुर मन्दिरकी खातिर करनेवाले हैं; श्री केलप्पनकी खातिर करनेवाले हैं; और ईश्वरकी इच्छाके कारण करनेवाले हैं जो उन्हें उपवासकी अग्नि-परीक्षामें से गुजरनेको प्रेरित कर रही है। (एस० एन० १८७२२)।

३०८. पत्र : मंत्री, आर्यसमाज, बम्बईको

१९ दिसम्बर, १९३२

आप भाईयोंकी मुलाकातकी जो रिपोर्ट[1] प्रकाशित हुई है, उसे देखकर मुझे दुःख हुआ है। 'सत्यार्थ प्रकाश' मैं अपने साथ लिये नहीं फिरता। मैंने यह कहा था कि आश्रममें एकसे अधिक प्रतियाँ हैं — पुस्तकें मैंने नहीं माँगी थीं, महादेवने माँगी थीं।

आपने मन्दिर-प्रवेशके काममें मदद देनेको कहा, तब मैंने आपको इसमें दखल न देनेको कहा था। आपने मेरी सलाह भी मान ली, फिर भी रिपोर्टका कुछ ऐसा अर्थ निकलता है कि मौजूदा आन्दोलनमें मैंने आपका हस्तक्षेप चाहा है। ऐसे अर्थसे कामको हानि पहुँचती है। इसलिए सत्यकी खातिर और कामकी खातिर मैं इसमें तुरन्त सुधार करनेकी जरूरत समझता हूँ। मैं चाहता हूँ आप फौरन सुधार करें। झूठी रिपोर्टसे किसी भी कामको मदद नहीं मिलती, धर्मकी तो हानि ही होती है। इसलिए सुधार करनेमें हर तरहसे लाभ ही समझें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३५४-५ ।

३०९. एक पत्र

१९ दिसम्बर, १९३२

मैंने खुद अंडे लेनेसे इनकार किया यह बात सच है। फिर भी मैं यह मानता हूँ कि मछलीका तेल निषिद्ध है, दूध उससे कम निषिद्ध है और उससे भी कम निषिद्ध निर्दोष (वाँझ) अंडे हैं। मगर मछलीके तेलकी लोगोंको आदत पड़ गई है और अंडोंकी आदत न होनेके कारण निर्दोष अंडे भी त्याज्य माने जाते हैं।

"कुर्ता माँगे उसे कोट भी दे दो[2]।" इस वाक्यमें कुर्ता माँगनेकी योग्यता अध्याहार है। इसी वाक्यका दूसरा अर्थ है कि हमसे कोई कुछ भी जबरदस्ती छीननेको आये, तब ऐसे आदमीका विरोध करना यदि धर्म न हो, तो वह जितना छीनना चाहे, उससे ज्यादा छिन जाने देना ही सरल मार्ग है। इस सबके पीछे जो स्वर्ण नियम छिपा है, वह है अपरिग्रहका। अपरिग्रहकी पूर्णतातक तो कोई पहुँच नहीं सकता। मगर यह नियम समझमें आ गया हो तो इसका पालन यथाशक्ति उत्तरोत्तर अधिक करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३६०-१ ।

१. १४ दिसम्बर, १९३२ को; देखिए पृष्ठ २०४।
२. सेंट मैथ्यू, ५-४०।

३१०. पत्र : नारणदास गांधीको

१९ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। भाई मावलंकरने जो पत्र लिखा है उसकी नकल देखनेके बाद ही कह सकता हूँ कि तुम्हें पत्र लिखना है या नहीं। इसलिए उसकी नकल प्राप्त करके मुझे भेज दो। जर्मन बहनसे[1] कहना कि उसे पत्र लिखनेकी इच्छा हो तो अवश्य लिखे। मिलनेकी अनुमति तो शायद नहीं मिलेगी। बिल्लीकी कहानी परशुरामने सिर्फ विनोदमें नहीं, बल्कि अमल करवानेके लिए भी कही हो तो हँसी आनेके साथ थोड़ा दुःख भी होगा।

तुम्हारी तबीयत बिलकुल ठीक होगी। तब भी खुराकका ध्यान रखना।

बापू

[पुनश्च :]

इसके साथ भाई उमेदरामका पत्र भेज रहा हूँ। वह एक बार अकेले आश्रममें आकर रहा था। मुझे लगता है कि जब मैंने उसके साथ यहाँ बात की भी तो तुमसे इस बातका संकेत कर दिया था कि वह अपने बच्चोंके साथ आश्रममें रहनेके लिए आ सकता है। अब मेरे पास उसका पत्र आया है। उसे आश्रममें रखो। वह आश्रमके नियम जानता है और उसने उनका पालन करनेकी बात भी की थी। मुझे सबसे ठीक यही लगता है कि वह वहाँ आकर रहे और तब एक-दूसरेका अनुभव हो जानेके बाद निर्णय किया जाये। लेकिन इसके बारेमें तुम्हीं ज्यादा जान सकते हो। इसलिए जो ठीक लगे वह करना। ऐसा न सोचना कि उसे रखनेकी मेरी इच्छा है, इसलिए तुम बँध जाते हो। भाई उमेदरामको भी ऐसा ही लिख रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२८५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. मार्गरेट स्पीगल।

३११. पत्र : गोपीकृष्ण विजयवर्गीयको

१९ दिसम्बर, १९३२

भाई गोपीकृष्ण,

आपका पत्र मिला। यदि हम हैं तो ईश्वर है, क्योंकि जीवमात्रका समूह ईश्वर है, जैसे किरणोंका समूह सूर्य है। इस ईश्वरपर श्रद्धा होनेके लिए आत्मश्रद्धा होनी चाहिए और वह श्रद्धा अनासक्तिपूर्वक सेवा करनेसे आती है। श्रद्धा रखनेका दूसरा तरीका यह है कि सारा जगत श्रद्धा रखता है तो हम भी रखें।

स्वाधीन भारतके लक्ष्यका खयालतक मैं तो नहीं करता हूँ। स्वाधीनताके साथ ही लक्ष्यका पता चल जायेगा। और तो मेरे लेखोंसे देख लेना।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[पत्रकी प्रतिलिपिसे]

मध्यप्रदेश और गांधी, पृ० १३७। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृष्ठ ३५५ भी।

३१२. पत्र : कृष्णन नायरको

१९ दिसम्बर, १९३२

मेरी कोई नई बातसे न घबरानेकी आवश्यता है और जबतक नई बात हजम न हो जाये; तबतक न उसका अमल करनेकी आशा है। अंग्रेजी शब्द Assimilation (एसिमिलेशन)का अनुवाद 'हजम करना' किया है। हमेशा बगैर हजम किये हम जब किसी बातपर अमल करते हैं, तब या तो फंस जाते हैं, या फिर दुखित होते हैं। जो चीज बुद्धिगम्य है उसको श्रद्धासे माननेकी कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसा करना मानसिक आलस्य की निशानी है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३६१।

३१३. पत्र : सोहनलाल शर्माको

१९ दिसम्बर, १९३२

भाई सोहनलाल,

तुमारा पत्र मिला। शांति से जो कुछ हो सके किया करो।[1] मुझे लिखा करो।

मोहनदास गांधी

भाई सोहनलाल शर्मा
सभापति, हिंदु सभा, पुष्कर, अजमेर

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २८२८) से।

३१४. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१९ दिसम्बर, १९३२

भाई कृष्णचन्द्र,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला है। रजिष्टर्ड खत भी मिल गया था। उसमें नई बात कोई न थी। और मेरे पास बिलकुल समय नहीं रहेता है इसलिये मैंने उत्तर नहीं दिया। अब तक जितने उत्तर मैंने दिये हैं उनमें से और प्रश्न ध्यान से पढ़ने से हल हो सकते हैं।

मोहनदास गांधीके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२६६) से।

३१५. पत्र : सी० वाई० चिन्तामणिको

१९ दिसम्बर, १९३२

मैं अपने मित्रोंका न्याय करने नहीं बैठता। मैं केवल अपना अभिप्राय उन्हें बताता हूँ। वह उन्हें जँचे तो अपनी गलतियाँ दुरुस्त करनेकी मैं उन्हें छूट देता हूँ। बम्बई में आपने जो-कुछ किया, उससे आपकी विवेकबुद्धिको कोई ठेस न लगी हो तो मुझे कुछ कहना नहीं है। किन्तु मुझे आपसे एक वचन चाहिए। आप प्रकट रूपसे मेरा

१. उस समय सोहनलाल शर्मा हरिजनोंके लिए मन्दिर-प्रवेशका हक सुलभ करानेके काममें लगे थे।

विरोध न भी करें तब भी मुझे निजी तौरपर चेतावनी दे दिया करें। हो सकता है कि उस चेतावनीका कोई तत्काल परिणाम न दिखाई दे। लेकिन मैं बहुत संवेदनशील व्यक्ति हूँ। इस तरहकी चेतावनियोंने मेरी हमेशा मदद की है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३६०।

३१६. पत्र: आर० शंकरनारायण अय्यरको[1]

[२० दिसम्बर, १९३२ से पूर्व][2]

आपका पत्र मिला। आपका तार मैंने कालीकट भेज दिया। उससे ज्यादा कुछ और मैं नहीं कर सकता था। अवर्णोंका मत सर्वथा अनावश्यक है। अवर्ण क्या चाहते हैं इसके जवाबमें यह आह्वान नहीं है, बल्कि यह आह्वान आत्मशुद्धिके लिए, तपस्या और बहुत दिनोंके पुराने कर्जको चुकानेके लिए है। और जब व्यक्ति अपना कर्ज चुकाता है तो उसपर इस बातसे असर नहीं पड़ता कि ऋणदाता भुगतान माँगता है या नहीं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१२-१९३२

३१७. तार: अ० भा० वर्णाश्रम स्वराज्य संघके मन्त्रीको

२० दिसम्बर, १९३२

मन्त्री
वर्णाश्रम स्वराज्य संघ
रामबाग
बम्बई

आपका पत्र मिला।[3] खेद है कि २३ के अलावा दूसरा दिन रखा नहीं जा सकता, क्योंकि अन्य शास्त्रियोंको २३ को ही आमन्त्रित किया गया है। आपकी ओरसे आनेवाले शास्त्रियोंसे मैं खुशीसे और दिन मिल लूंगा और जो-कुछ वे कहेंगे सादर सुनूंगा। परन्तु मैं चाहूँगा कि यदि सम्भव हो तो वे २३ की परिषदमें भाग लें। आपके पत्रमें जो और

१. गुरुवायुर मतसंग्रह-सम्बन्धी उनके पत्रके जवाबमें।
२. तिथि-पंक्ति "कोयम्बटूर, २० दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित।
३. १९ दिसम्बर, १९३२ का; देखिए परिशिष्ट १५।

बातें हैं उनपर मतभेद है। परन्तु यदि आप अपने प्रतिनिधियोंको विचार-विमर्शके लिए भेज दें, तो २३को या उससे पहले वह खूब अच्छी तरह दूर किया जा सकता है।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७५४) से।

३१८. पत्र : रामगोपाल शास्त्रीको

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपका पूना आनेकी तकलीफ उठाना सर्वथा अनावश्यक है, और हर हालतमें एक आर्यसमाजीकी व्याख्या सनातनी शास्त्री अस्वीकार करेंगे।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत रामगोपाल शास्त्री
सचिव, पंजाब दलित सेवा मिशन, लाहौर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७५५)से।

३१९. पत्र : जी० एम० जोशीको

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

मुझे इसका विश्वास नहीं कि २३ तारीखकी सभा वास्तवमें नहीं होनेवाली है। परन्तु यदि वह होने जा रही है तो मेरे लिए वह एक बहुत पवित्र धार्मिक प्रसंग होगा और उसमें सिवाय उन पण्डितोंके जो उसमें भाग लेनेवाले हैं और कोई नहीं होना चाहिए। इसलिए आप कृपया मुझे क्षमा करें।

श्रीयुत जी० एम० जोशी
१७१-ए, बुधवार, पूना सिटी

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७५८)से।

३२०. पत्र : वक्कायिल अच्युतन नायरको

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

गुरुवायुरके मामलेमें वादपत्रकी एक नकल भेजनेके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। क्या फैसला आपके पास नहीं है, और क्या आप मुझे मन्दिरका और अधिक विस्तृत इतिहास तथा उसका ब्योरेवार नक्शा नहीं भेज सकते?

हृदयसे आपका,

श्रीयुत वक्कायिल अच्युतन नायर
गुरुवायुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७५९) से।

३२१. पत्र : के० रामभद्र रावको

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपने जिनका विवरण दिया है ऐसे नितान्त निजी मामलोंमें अपने कर्त्तव्यका निर्णय आपको खुद ही करना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० रामभद्र राव
पोडरी हाउस, इन्नेसपेटा, राजमुन्द्री

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७५७) से।

३२२. पत्र : जी० एच० पटवर्धनको[1]

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। कुछ ऐसे लोग हैं जो जान-बूझकर मेरे बारेमें गलतबयानी करते हैं। जान-बूझकर दिये गये ऐसे गलत बयानोंको मैं कैसे निबटाऊँ सिवाय इसके कि इस बातपर विश्वास रखूँ कि मुझमें जो सचाई है वह वक्त आनेपर स्वयं प्रकट हो जायेगी? मैंने बार-बार कहा है कि गुरुवायुर मन्दिर मेरी मर्जीसे नहीं चुना गया था। यह मुझपर थोप दिया गया। यदि इसी तरह डाकोरजी मुझपर थोप दिया गया होता तो भी मैंने प्रसन्नतासे अनशनकी घोषणा कर दी होती। कुम्हारके हाथमें मिट्टीकी जो स्थिति होती है वही स्थिति ईश्वरके हाथोंमें मेरी है। और यदि मुझे वैसा करना पड़ता तो लोग देखते कि मैं मलाबारके लोगोंसे जितना संघर्ष कर रहा हूँ उससे ज्यादा शक्तिसे मैं गुजरातियोंसे जूझता। मैं मलाबारके लोगों पर कुछ नहीं फेंक सकता क्योंकि वे मुझसे काफी दूरीपर हैं, लेकिन गुजराती बहुत नजदीक हैं। परन्तु जैसी कि कहावत है, "हम सचमुच सोये हुए व्यक्तिको उसके कानोंमें एक बार धीमी-सी आवाज करके जगा सकते हैं, परन्तु जो केवल सोनेका बहाना कर रहा है ऐसे व्यक्तिको हजार बार आवाज लगाकर भी नहीं जगा सकते।"

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जी० एच० पटवर्धन
धुलिया

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७५६)से।

१. यह उनके १४ दिसम्बर, १९३२ के पत्रके उत्तरमें भेजा गया था, जिसमें लिखा था: "आपके यह घोषणा करनेपर कि यदि गुरुवायुरका मन्दिर हरिजनोंके लिए १ जनवरी, १९३३ तक नहीं खोला गया तो आप आमरण अनशन शुरू कर देंगे, एक मराठी समाचारपत्रने अपने स्तम्भोंमें कटाक्ष किया है कि आपने दूरस्थ गुरुवायुर मन्दिरको इसलिए चुना क्योंकि आप यह जानते थे कि यदि आप इस उद्देश्यके लिए डाकोरजीके मन्दिरको चुनते तो गुजराती समाजके लोग, जो राजनीतिमें आपके पक्के अनुयायी हैं, आपपर बुरी तरह आक्षेप करते। सम्भवतः यही कारण है कि आपने गुरुवायुरका मन्दिर चुना। मेरा निवेदन है कि यदि आप इस मुद्देको स्पष्ट कर दें तो इसके बारेमें जो इस तरहकी चर्चा हो रही है, उसका खण्डन करनेमें बड़ी सहायता मिलेगी (एस० एन० १८७०३)।

३२३. पत्र : आर० वी० पटवर्धनको[1]

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। उसके एक भागके उत्तरमें मैं केवल यही कह सकता हूँ कि मेरे पास ऐसे हस्ताक्षरयुक्त पत्र आये हैं जिनमें मुझसे दो तारीखको अभीसे मान लेने और इस तरह अपना पार्थिव जीवन समाप्त कर देनेके लिए कहा गया है। इन पत्रोंकी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। मैं तो केवल तथ्य बता रहा हूँ।

आपके पत्रके शेष भागके बारेमें मैं आपको केवल यही आश्वासन दे सकता हूँ कि हर कदम जो मैं उठाता हूँ और हर शब्द जो मैं कहता हूँ, उसके पीछे बहुत अधिक प्रार्थनापूर्ण चिन्तन होता है। सनातनी मित्रोंसे मेरा यह कहना है कि वे मुझे विचार और कार्यकी वही स्वतन्त्रता दें जिसकी कि वे अपने लिए माँग कर रहे हैं। इस तरहकी पारस्परिक सहनशीलताके बिना कोई भी सुधार सम्भव नहीं है।

मैं आपको यह भी बता दूं कि किसी व्यावहारिक समझौतेपर पहुँचनेके लिए अपनी ओरसे मैं भरसक कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु मुझे खेदके साथ यह स्वीकार करना पड़ता है कि मैं इसमें अभीतक असफल रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७६०)से।

३२४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय घनश्यामदास,

आपका इसी महीनेकी १४ तारीखका[2] पत्र मिला। मुझे आशा है कि मैंने अपनी धृष्टताके लिए काफी प्रायश्चित्त कर लिया है और कहीं कोई जख्म बाकी

१. आर० वी० पटवर्धनने १६ दिसम्बर, १९३२ के अपने पत्रमें गांधीजीके १६ नवम्बरके वक्तव्य पर आपत्ति करते हुए उसे मन्दिर-प्रवेश और-उपवासका विरोध करनेवाले सनातनियोंके विरुद्ध एक बहुत ही क्रूर और आपत्तिजनक आरोप बताया था। उन्होंने यह भी लिखा था: "...यदि जमोरिन और ट्रस्टी आपकी उपवासकी धमकीके आगे झुक जाते हैं, तो आपके विचारसे क्या उसका कारण सच्चा हृदय-परिवर्तन होगा, उनके वास्तविक विश्वासोंका दमन नहीं होगा?... इस प्रकारका दमन अत्याचारका सबसे निकृष्ट रूप है; वह शस्त्रबलसे किये गये अत्याचारसे भी अधिक निन्दनीय है" (एस० एन० १८७२६)।

२. देखिए परिशिष्ट १६।

नहीं रहा है।[1] यदि आप समझते हैं कि मेरे लिए कुछ और करना वाकी है तो कृपया मुझे वताइए। मुझे उम्मीद है कि मैं गलतीको दोहराऊँगा नहीं।

हृदयसे आपका,
बापू

श्रीयुत घनश्यामदास विड़ला
अल्वूकर्क रोड, नई दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८७६२) से। सी० डब्ल्यू० ७९१० से भी; सौजन्य : घनश्यामदास विड़ला।

३२५. पत्र : एम० आई० डेविडको[2]

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय श्री डेविड,

आपके पत्रके लिए और उससे भी ज्यादा जिस धैर्यसे आप योजना चला रहे हैं उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। चूँकि आपने स्वेच्छासे मुझे अँगुली पकड़ाई है इसलिए यदि मैं पहुँचा पकड़ानेके लिए कहूँ तो आप हैरान न हों। आप कृपया सारी योजना जैसे आपको ठीक लगे तैयार करें और उसमें अपने नवीनतम सुझाव शामिल कर लें। उसके वाद श्रीयुत मथुरादास और जयसुखलाल मेहतासे उसपर विचार-विनिमय कर लें, और यदि वे उसका अनुमोदन कर दें तो उसे मेरे पास भेज दें। मैं उसपर समाचारपत्रोंके लिए एक वक्तव्य दूँगा, परन्तु मैं उसके जनकके रूपमें आपके नामका उपयोग जरूर करूँगा। आखिरकार श्रीयुत विड़लाके मुखसे यह वात पहले ही निकल चुकी है।

इससे पहले कि आप मेरे पास योजना भेजें, मैं चाहूँगा कि आप कुछ प्रचार करें और जितनी ज्यादा छात्रवृत्तियाँ प्राप्त कर सकें कर लें। मैं जानता हूँ कि इसका मतलव होगा आपके समय और शक्तिपर काफी वोझ; परन्तु आप स्वेच्छासे काम करनेवाले कार्यकर्त्ता हैं। स्वेच्छापूर्वक काम करनेवाले कार्यकर्त्ता अनुभवसे जानते हैं कि मैं उनसे कितना कठोर काम ले सकता हूँ। तथ्य यह है कि जैसे-जैसे मेरी शारीरिक क्षमता क्षीण होती जा रही है, मैं रोजमर्राके कामको कठिनाईसे निवटा पा रहा हूँ। इसलिए जव कभी कोई व्यक्ति मुझे किसी अच्छी चीजका सुझाव देता

१. देखिए "पत्र : डॉ० वि० चं० रायको", ७-१२-१९३२ और १५-१२-१९३२; "पत्र : घनश्यामदास विड़लाको", १५/[१६]-१२-१९३२ भी।

२. यह उनके १५ दिसम्बर, १९३२ के पत्र (एस० एन० १८७१८) के उत्तरमें लिखा गया था जिसमें उन्होंने चुने हुए हरिजनोंके लिए उच्चतर शिक्षाके बारेमें अपनी योजनामें कुछ-एक अतिरिक्त मुद्दे जोड़े थे। इस योजनाके सम्बन्धमें उन्होंने गांधीजीको २ दिसम्बर, १९३२ को पत्र लिखा था।

है तो मैं सीधा उसे ही उसे बिलकुल तैयार करके पेश करनेके लिए कहता हूँ, जिससे कि मुझे उसमें अपने हस्ताक्षर करनेके सिवाय और कुछ न करना पड़े।

हृदयसे आपका,

एम० आई० डेविड महोदय
४ क्वीन्स रोड
फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७४८) से।

३२६. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रथूजको

२० दिसम्बर, १९३२

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र,[1] जो लिखनेके कई दिन बाद डाकमें डाला गया था, मिला और तुम्हारे दो प्यारे तार भी मिले। मैं सोचता था कि अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनकी बादकी घटनाएँ, जिनमें सम्भावित उपवास भी शामिल है, पता नहीं तुमने पूरी तरह समझी भी हैं या नहीं। तुम्हारे तारोंसे पता चलता है कि तुमने उन्हें पूरी तरह समझा है, और मुझे इसकी बहुत खुशी है। क्योंकि जहाँ ब्रिटिश निर्णयसे सम्बन्धित उपवासकी बहुतोंने सराहना की थी, वहाँ अगली २ जनवरीसे होनेवाले संकल्पित उपवासको बहुतोंने गलत समझा है और मुझे डर था कि तुम शायद उसे बिल्कुल ही समझ न सको, जबकि मुझे उसकी जरूरत उस समयसे भी अधिक स्पष्ट लगती है जब मैंने ब्रिटिश निर्णयके बारेमें उपवास किया था। ब्रिटिश निर्णय एक राजनीतिक प्रश्न था, यद्यपि मेरे लिए उसका बहुत अधिक धार्मिक महत्त्व था। वर्तमान स्थितिमें, यह विशुद्ध धार्मिक प्रश्न है। इसकी हिमायतमें मैंने बहुत-से स्पष्टीकरण दिये हैं। वे सब मिलकर भी जो-कुछ मैं इसके बारेमें महसूस करता हूँ, पर जिसे व्यक्त करनेको मेरे पास पर्याप्त शब्द नहीं हैं, उससे बहुत कम बैठते हैं। निस्सन्देह, व्यक्तिगत रूपसे मेरे लिए, यह तर्कसे बाहरकी चीज है, क्योंकि मुझे यह ईश्वरका स्पष्ट आदेश लगता है। मेरी स्थिति यह है कि अभी इस समय अपनी खुदकी इच्छासे मैं कुछ भी नहीं कर रहा हूँ। प्रतिक्षण वही मेरा मार्गदर्शन करता है। यह एक ऐसी चीज है जिसका किसीको विश्वास नहीं दिलाया जा सकता, और इस तरहके साक्ष्यको अस्वीकार करना उनके लिए बिलकुल उचित होगा। ऐसा इससे पहले भी हुआ है। जिसके लिए ईश्वरकी आवाज होनेका दावा किया गया, वह शैतानकी प्रेरणा सिद्ध हुई। मेरे मामलेमें वह क्या है, इसका निर्णय कुछ तो परिणामोंसे होगा और कुछ मेरी

१. यहाँ आशय सम्भवत: श्री एन्ड्रयूजके १० नवम्बर, १९३२ के पत्रसे है, देखिए परिशिष्ट १७।

मृत्युके बाद होगा। हर हालतमें, पूरा निर्णय तो कभी भी ईश्वरके सिवा कोई और कर नहीं सकेगा। किसी कार्यकी अन्तिम कसौटी आखिर उसके पीछे रहनेवाला उद्देश्य ही होता है और उसे केवल ईश्वर ही जान सकता है, उस उद्देश्यको लेकर चलनेवाला व्यक्तितक उसे नहीं जान सकता।

पता नहीं, उपवास २ जनवरीको करना होगा या नहीं। वह कानूनी कठिनाई पर ही निर्भर होगा।

तुम्हारी पुस्तक "व्हाट आई ओ टु क्राइस्ट" जैसे ही मुझे मिली मैंने पढ़ डाली। वल्लभभाई और महादेव दोनोंने उसे सरसरी तौरपर देखा है। महादेवके पास उसे पूरा पढ़नेका समय नहीं है। शुरूके अध्याय वाकई बहुत अच्छे हैं। सभी अध्यायोंसे एक संघर्षशील आत्माको बड़ी सहायता मिलती है। वे तुम्हें जिस तरह उद्घाटित करते हैं उस तरह तुम्हारी लिखी और कोई चीज नहीं कर सकती। लेकिन उसमें एक अध्याय ऐसा है जिसकी मैंने पढ़ते समय आलोचना की थी। मेरा खयाल था कि उसके बारेमें मैंने तुम्हें लिखा है, पर जाहिर है मैंने वैसा किया नहीं है। उस अध्याय और विषयको याद करनेके लिए मुझे वह पुस्तक फिर देखनी होगी। बिना किसी विशेष कष्टके मैं वैसा कर सकता हूँ; और यदि मुझे कुछ मिनटकी फुर्सत मिली तो मैं उसे देखूँगा और तुम्हें अपनी आलोचना भेजूँगा। तुम्हारी पुस्तक पर गुरुदेवके विचारोंकी, जिनकी नकल भेजनेका तुमने वायदा किया है, मुझे प्रतीक्षा रहेगी।

बर्मिघमसे आये तुम्हारे तारके उत्तरमें मेरा तार, आशा है, तुम्हें मिल गया होगा।

मेरा दिमाग इस बारेमें बिलकुल साफ है कि तुम्हारी उपस्थिति वहाँ बहुत ही उपयोगी है। मैं यदि उपवास करूँ तो तुम्हें चिन्तित नहीं होना है। कम-से-कम तुम्हें यह विश्वास करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी कि यदि मैं उपवास करूँगा तो वह ईश्वरकी इच्छा होगी, और यदि उसे इस शरीरसे और सेवा लेनी है तो वह मुझे सही-सलामत रखेगा।

हम सबकी ओरसे प्यार और अभिनन्दन।

तुम्हारा,

[पुनश्च:]

परिवारके दोनों अर्थोंमें, उसके सभी अन्य सदस्योंको मेरा प्यार। जिन्हें मेरा पत्र नहीं मिलता, उनसे कृपया कहना कि मुझे अपने सभी पत्रोंके उत्तर देनेका समय नहीं मिलता है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९५) से।

३२७. पत्र : यू० गोपाल मेननको

[२०][1] दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

आपका पत्र मिला। कार्यकर्ता जिस उत्साहसे काम कर रहे हैं, उसके लिए वे निस्सन्देह धन्यवादके पात्र हैं। कृपया उन सबको मेरा प्यार कहिये। यदि आप अपनी पत्नीसे ईर्ष्या न करें तो मैं आपको बताऊँ कि कालीकटसे लौटनेवाला हर व्यक्ति यही बताता है कि जहाँ आप अच्छे रहे हैं वहाँ आपकी पत्नी आपसे कहीं ज्यादा अच्छी रही है। वे पूर्ण आत्मत्यागकी भावनासे अथक कार्य कर रही हैं, और यदि मलाबारकी सभी स्त्रियाँ इतनी ही अच्छी हैं तो मलाबार रहनेके लिए बहुत ही अच्छी जगह होनी चाहिए। इस सारी गवाहीको मैं अतिरंजित मानता हूँ। श्रीमती गोपाल मेनन निश्चय ही असाधारण महिला हैं, क्योंकि यदि मलाबारकी सभी स्त्रियाँ इतनी अच्छी होतीं जितनी कि वे हैं, तो मलाबार अस्पृश्यताकी दृष्टिसे भारतका सबसे निकृष्ट स्थान न होता। यह सब आपसे अधिक उनके लिए लिखा गया है, इसलिए यह पत्र उन्हें भी दिखाइये और उन्हें मेरी हार्दिक बधाई दीजिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत गोपाल मेनन
कालीकट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७६७) से।

३२८. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

२० दिसम्बर, १९३२

चि० डाह्याभाई,

लम्बा पत्र लिखना था, परन्तु समय नहीं रहा। अब तो जल्दी अच्छे हो जाना है। बा, बेलाबहन[2] और बाल मेरे पास बैठे हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने, पृ० १५३।

१. देखिए "पत्र: यू० गोपाल मेननको", २१-१२-१९३२ और २२-१२-१९३२। डाक-मुहरमें पता नहीं कैसे "२१" है।

२. लक्ष्मीदास पी० आसरकी पत्नी।

३२९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्र्यूजको

[२१ दिसम्बर, १९३२][1]

यह पत्र[2] लिखवानेके बाद तुम्हारा ९ तारीखका अनमोल पत्र मिला। तुम्हारे भाईके बारेमें मेरा हृदय तुम्हारे प्रति सहानुभूतिसे द्रवित है। किसी विक्षिप्त मस्तिष्क वाले व्यक्तिका भार अपने ऊपर होनेका अर्थ क्या है, मैं जानता हूँ। शायद तुम्हें मालूम है कि डॉ० मेहताका पुत्र रतिलाल, जो ठीक उसी तरहका है, मेरे आश्रममें है। परन्तु मुझे आशा है कि हालात यहाँ दूरसे मुझे जितने लगते हैं उतने खराब नहीं होंगे। मेरी प्रार्थनाएँ तुम्हारे और उसके लिए हैं। तुम अमियोसे खबर पाकर हिन्दुस्तान दौड़े नहीं आये, इसकी मुझे खुशी है। मेरे दिमागमें यह चीज बिलकुल साफ है कि अस्पृश्यताकी यह समस्या तुमसे अलग हम लोगोंको सुलझानी है। हमें पश्चात्ताप करना होगा। जहाँतक जमोरिनका सवाल है, वे अधिक-से-अधिक दयाके पात्र हैं। यदि तुम यहाँ होते तो भी मैं तुम्हारे उनके पास जानेकी बात नहीं सोचता। उसे मैं अनुचित दबाव ही कहूँगा। केवल ईश्वर ही यदि चाहे तो उनपर प्रभाव डाल सकता है। इसलिए सब बातोंको सोचनेपर तुम्हारी यहाँ उपस्थिति आवश्यक नहीं है।

यह उस पत्रके पुनश्चके रूपमें जाना चाहिए था जो तुम्हें कल लिखवाया और भेजा गया है।

तुम्हारा[3],

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९५) से।

३३०. पत्र : यू० गोपाल मेननको

२१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

कल अपना पत्र[4] लिखवा चुकनेके बाद, मैंने श्रीयुत एम० के० आचार्यका नोटिस या घोषणापत्र पढ़ा जिसकी एक प्रति उन्होंने मुझे भेजी है। मैं आपको पुस्तिका और श्रीयुत आचार्यका नोटिस दोनों भेज रहा हूँ। यदि नोटिस पुस्तिकाके आशयको सही तौरपर रखता है, तो यह चिन्ताकी बात है, और श्रीयुत आचार्यकी टीका-टिप्पणियाँ बिलकुल न्यायोचित हैं। पोन्नानी ताल्लुकेके लोगोंसे यह नहीं पूछा जा रहा

१. इसी पत्रके अन्तिम अनुच्छेदसे।
२. देखिए "पत्र: सी० एफ० एन्ड्र्यूजको", २०-१२-१९३२।
३. यहाँ "बापूकी ओरसे" महादेव देसाईने हस्ताक्षर किये थे।
४. देखिए "पत्र: यू० गोपाल मेननको", [२०]-१२-१९३२।

है कि वे मेरा जीवन बचायेंगे या मुझे मरने देंगे, बल्कि यह पूछा जा रहा है कि वे मन्दिरोंको हिन्दू-धर्मका अभिन्न अंग मानते हुए मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए खुलवानेको तैयार हैं या नहीं। अंग्रेजीके नोटिसके अनुसार, आपने विवादके विषयको धुँधला कर दिया है, और यही आरोप सनातनियोंने हमपर, विशेषकर मुझपर लगाया है। जैसा कि आपको मालूम है, वे कहते हैं कि संकल्पित उपवास लोगोंसे मन्दिर-प्रवेशकी अच्छाइयों या बुराइयोंका फैसला करवानेके बजाय, उनके ध्यानको मन्दिर-प्रवेश [के प्रश्न] से हटा देगा और उनसे उनके मत, उनकी इच्छाके विरुद्ध, इस तरह दिलवायेगा जिससे कि मैं बच जाऊँ। मेरे उपवासका यदि इस तरहका परिणाम निकलता है तो वह एक दुःखद घटना होगी। इसलिए साथी कार्यकर्त्ताओंसे मैं यह अपेक्षा रखता हूँ कि वे लोगोंको बताएँ कि उन्हें उपवाससे प्रभावित नहीं होना है, बल्कि अपने अन्तःकरणके अनुसार मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें या विपक्षमें मत देना है। आप मुझे अब कृपया एक तो नोटिसके बारेमें और दूसरे इस बारेमें कि आम तौरपर क्या किया गया है विस्तारसे लिखें, और यदि आपको यह पता चले कि लोगोंको गुमराह किया गया है तो मुझे वह बतानेमें संकोच न करें। गलतीको स्वीकार करने, अपने कदम पीछे हटाने और उपवासको स्थगित करनेमें मुझे कोई पछतावा नहीं होगा। यदि लोगोंके आगे एक बिलकुल गलत प्रश्न रखकर उन्हें पहले ही गुमराह कर दिया गया है, तो फिरसे मतसंग्रह करना एक तमाशा ही होगा और यदि श्री आचार्यका आरोप सिद्ध न हो सके, तो कृपया मुझे अपने वक्तव्यके समर्थनमें अध्याय और श्लोकका हवाला देना। वह मुझे नई शक्ति और आशा देगा।

आप माधवन और केलप्पनके साथ परामर्श करें। पता नहीं, इस पत्रके आपको मिलनेतक राजाजी या सदाशिवराव वहाँ होंगे या नहीं। आप जो उत्तर दें उसका सार तारसे मुझे बता दें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७६५) से।

३३१. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

२१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय च० रा०,

गोपाल मेननको लिखा अपना पत्र[1] इसके साथ भेज रहा हूँ। श्रीयुत आचार्यके नोटिसको देखनेकी आपको जरूरत नहीं पड़ेगी। मेरे पत्रसे उसके कथ्यका भाव आपको काफी स्पष्ट हो जायेगा। यदि यह पता चला कि श्रीयुत आचार्यका आरोप सही है, तो मालूम नहीं आप मेरे निष्कर्षसे सहमत होंगे या नहीं।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

इस विषयमें कानूनकी स्थिति क्या है, यह न तो आपने मुझे बताया है और न मैंने ही इसके बारेमें आपको परेशान किया है। विधेयकका[1] क्या हो रहा है? मुझे बताया गया है कि किसी धार्मिक विधेयकको पेश करनेके लिए वाइसरायकी अनुमति प्राप्त करनेको उन्हें पूरे दो महीनेका समय मिलना चाहिए। यदि स्थिति यह है और कानून, जैसा इस समय है, निश्चित रूपसे हमारे विरुद्ध है, तो उपवास अपने-आप स्थगित करना होगा। परन्तु यदि अनुमति न मिलने या उसमें विलम्ब होनेका कारण केवल उसपर जनमतकी सार्वजनिक अभिव्यक्तिका अभाव हो, तो उपवास तबतक चलाना होगा जबतक कि जनमत, यदि यह सम्भव हो तो, इतना संगठित न हो जाय कि वह वाइसरायकी अनुमति प्राप्त कर सके। यदि जनमत इस तरहके कानूनके विरुद्ध है, तो उपवास स्थगित होना ही चाहिए। इसलिए मैं चाहूँगा कि आप मुझे कानूनके बारेमें सलाह दें। बा ने मुझे बताया है कि यदि आपके लिए और पहले आना सम्भव न हुआ, तो लगभग २८ तक तो आप यहाँ आनेवाले हैं ही।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (एस० एन० १८७६६) से।

३३२. पत्र : कोंडा वेंकटप्पैयाको

२१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय वेंकटप्पैया,

चुपचाप कालीकट चले जाना और मुझसे कुछ नहीं कहना, ऐसी चीज थी जिसकी अपेक्षा बस आपसे ही की जा सकती थी। आपका क्या हाल है और आपकी पत्नी तथा बेटी कैसी हैं?

हृदयसे आपका,

श्रीयुत वेंकटप्पैया
मार्फत श्रीयुत गोपाल मेनन
कालीकट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९७६८) से।

१. देखिए "भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको", ५-१२-१९३२।

३३३. पत्र : सदाशिव राव कर्नाडको

२१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय सदाशिवराव,

आप कार्यकी प्रगतिसे मुझे भली प्रकार सूचित करते रहते हैं, मुझे इसकी प्रसन्नता है। आक्रमणकी उपेक्षा करना अच्छा ही था। इस तरहकी चीज़ोंके लिए हमें तैयार रहना चाहिए और बिना प्रतिकार किये उन्हें सह लेना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सदाशिव राव कर्नाड
मार्फत श्रीयुत गोपाल मेनन, कालीकट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७६९) से।

३३४. पत्र : के० रामुन्नी मेननको

२१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

पत्र मिला, उसके लिए धन्यवाद। पत्रमें इतने सारे व्यंग्य और आरोप हैं कि उन सबका उत्तर देना मेरे लिए बहुत ही कठिन है। सामान्यत: मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि आपके जो कथन हैं, वे तथ्योंसे, जैसे कि वे मुझे मालूम हैं, संगति नहीं रखते। मिथ्या कथनों पर आधारित तर्क, स्वभावत:, प्रभावित नहीं कर पाते हैं। मेरी अपनी स्थिति समाचारपत्रोंमें निकले वक्तव्योंमें खूब स्पष्ट हो चुकी है। यदि आप सबसे पहले मेरी स्थिति जाननेके लिए मुझसे कुछ प्रश्न पूछते, तो मैं खुशीसे उनका जवाब देता, और आप तब मेरे विरुद्ध अपना केस खड़ा कर सकते थे। मैं आपको केवल यही आश्वासन दे सकता हूँ कि मैं अपने-आपको हिन्दू-धर्मका एक विनम्र अनुयायी मानता हूँ और सदा उसके आदेशोंके अनुसार काम करनेकी कोशिश करता हूँ।

एक बातमें मैं आपके साथ सम्पूर्ण हृदयसे सहमत हो सकता हूँ। आपका यह कहना बिलकुल ठीक है कि आप और सनातन हिन्दू सभाके सदस्य मेरे किसी भी उपवासके कारण उस मार्गको नही छोड़ेंगे जिसे आप सही मार्ग मानते हैं। मेरे उपवासका प्रयोजन कभी भी आपके निर्णय या किसी भी निर्णयपर प्रभाव डालना नहीं रहा है। मेरे उपवासका उद्देश्य तो हिन्दुओंको सक्रिय होनेके लिए जागृत करना है

और मुझे यह कहते खुशी होती है कि यह दिन-प्रतिदिन हो रहा है, यद्यपि उपवास अभी शुरू होना है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० रामुन्नी मेनन
व्यवस्थापक, सनातन हिन्दू सभा, गुरुवायुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७७२) से।

३३५. पत्र : जयसुखलाल के० मेहताको

२१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय जयसुखलाल,

आपका पत्र मिला। जिन शास्त्रीजी का आपने जिक्र किया है उन्हें या डॉ० कुर्तकोटीको इतनी दूर पूना आनेका कष्ट देना मैं नहीं चाहता हूँ। पर मैं मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर उनके मतकी स्पष्ट अभिव्यक्ति चाहूँगा। वे इन तीन प्रश्नोंका उत्तर दें :

१. अस्पृश्य कौन हैं?

२. अस्पृश्यता क्या इस जीवनमें दूर हो सकती है?

३. जिन अस्पृश्योंको हिन्दू-मन्दिरमें प्रवेशका अधिकार नहीं है, उनकी निर्योग्यताएँ क्या-क्या हैं?

हृदयसे आपका

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७७३) से।

३३६. पत्र : प्रज्ञानेश्वर यतिको

२१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र और उसके साथ भेजी गई तीनों चीजें मिलीं। समर्पण पत्र और स्वामी केवलानन्दका पत्र मैंने पढ़ लिया है। परन्तु पुनर्जन्मपर आपकी पुस्तकके सारको इसी समय पढ़नेकी आप मुझसे अपेक्षा न करें। मेरे लिए यह एक आकर्षक विषय है, पर अभी इतनी आकर्षक चीजें हैं कि मैं इसे उठाकर रखनेको बाध्य हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत परमहंस प्रज्ञानेश्वर यति
३२९, सदाशिव पेठ, पूना शहर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७७४) से।

३३७. पत्र : कीरचन्द कोठारीको

२१ दिसम्बर, १९३२

भाई कीरचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। दोनों पुस्तिकाएँ मिलीं। तुम्हें मालूम ही होगा कि इस समय यहाँ हम चार जने एकसाथ हैं। तुम्हारी पुस्तिकाओंको पढ़कर या तो हँस सकते थे या रो सकते थे। साधारण तौरपर मैं पत्र नहीं पढ़ता, सुनता हूँ। किन्तु अनायास तुम्हारी पुस्तिका मैंने ही पढ़ी। मेरी छाती पत्थर-जैसी हो गई है, इसलिए रो तो नहीं सका; पर पहला ही वाक्य पढ़कर खूब जोरसे हँस पड़ा और अन्ततक हँसता ही रहा। लेकिन उसमें हँसनेकी कोई बात न थी, दुःखकी थी। भाषामें तनिक भी अहिंसा नहीं थी; उसमें विनय भी नहीं थी। तुमने तो विशुद्ध अहिंसा और शान्ति-पालनकी प्रतिज्ञा की है। इस पुस्तिकामें सनातनी भाइयोंको प्रेमपूर्वक जीतनेका कोई प्रयत्न ही नहीं है। एक-एक शब्द भड़कानेवाला है। तुमने सनातनियोंको मार डालनेके लिए ललकारा है। भाषा नाटकीय है। इससे युवक वर्गको न तो शान्तिका पाठ मिलता है न विनयका। सत्य तो एक ओर ही रह गया है। इसमें आत्मप्रशंसाकी भी कोई सीमा नहीं है। किन्तु मुझे भय है कि मैं अपनी बात शायद ही किसीको समझा सकूँगा। जहाँ ऐसी भाषाके प्रयोगकी आदत पड़ गई हो, वहाँ एकदम परिवर्तन कैसे किया जा सकता है?

तुम्हारे पिछले पत्रका मैंने जवाब दिया है। वह तुम्हें मिल गया होगा। तुमने देखा ही होगा कि जो-कुछ हुआ है, मेरी सलाह उससे बिलकुल विपरीत थी। तुम्हें सभामें लोग जमा करने थे तो तुम कर सकते थे, लेकिन हिंसक पुस्तिका निकाल कर नहीं। उससे पहले तुम्हारा धर्म यही था कि किसी अच्छे सनातनीसे मिलते। यदि तुम्हें ऐसा कोई व्यक्ति दिखाई न देता तो राज्यकी मदद लेते; मिल जानेपर सभा करते। तुम सभा न भी करते तो उससे हरिजन-सेवासे तो वंचित नहीं रहते। तुम्हारी सभाको भंग करनेके लिए सनातनी नहीं आये। इसमें मुझे किसी प्रकारकी विजय नहीं दिखाई देती। वे मनमें तो झुँझलाये ही होंगे। तुम्हारे संख्या-बलसे डर गये होंगे। ये सब हिंसाके लक्षण हैं। तुम्हारी यह अहिंसा मेरी अहिंसाको लज्जित करती है और सनातनियोंके जहरी लेखोंमें थोड़ा-बहुत सत्य दिखाई देता है। धर्मकी रक्षा इस ढंगसे नहीं हो सकती; और हरिजन-सेवा कार्य तो सिर्फ धर्मार्थ ही है। इससे ज्यादा और क्या लिखूं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८६१) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

३३८. पत्र : नानालाल कालिदास जसानीको

२१ दिसम्बर, १९३२

भाईश्री नानालाल,

आज छगनलाल और मगनलालसे जी भरकर बातें कीं। अब तुम, रतुभाई और ये दोनों भाई बैठकर विचार कर लेना। मैंने तो सलाह दी है कि मणिलाल भी साथ रहे। किन्तु ये दोनों शायद इसके लिए उत्सुक न हों। उन्होंने यह कहा था कि मणिलालकी इच्छा नहीं है। मैंने उन्हें इस वाक्यका अर्थ समझाया। तब उन्होंने कहा कि आवश्यक हुआ तो उसे बुला लेंगे। मैंने उन्हें निम्न सलाह दी है और ऐसा लगा कि वे उससे सहमत हैं। मैंने कहा है, जहाँतक हो सके डॉक्टरके वसीयतनामेको पूरी तरह माना जाये, अर्थात् बहनोंको पैसा दे देना चाहिए। फौरन न दे तो उसकी फिक्र नहीं। पैसा जमा रहे और उसका ठीक ब्याज मिलता रहे इतना ही काफी है। रतिलालके सम्बन्धमें डॉक्टरकी इच्छाको पूरा करें। और तीन भाग करनेपर यदि रतिलालके हिस्सेमें ज्यादा[1] आये तो उतना उसके खातेमें जमाकर दें। सम्भव है कि माणेकबाईके लिए डॉक्टरने जो रकम निर्धारित की है उसके ब्याजसे उसका खर्च न चले। इसलिए उसका अलग मासिक खर्च बाँध दो और उतना उसे मिलता रहे इसका प्रबन्ध कर दो। किन्तु यदि वह डॉक्टर द्वारा निर्धारित रकमको ही लेनेका आग्रह करे तो वह रकम दे देनेका फैसला कर दिया जाये। फिर बादमें वह और कुछ नहीं ले सकेगी। यदि उसने डॉक्टरके स्वर्गवासके बाद कुछ लिया हो तो वह धन उसमें से काट लिया जाये। तीनों भाइयोंका हिस्सा अलग कर दिया जाये। रतिलालके लिए ट्रस्टी नियुक्त कर उसका खर्च बाँध दें। बाकी दोनों भाइयोंकी इच्छा हो तो तुम्हारे साथ सलाह करके धन्धेका जो भाग सँभालना चाहें सँभाल लें। यदि वे न मानें तो हीरों और खेतीके [भी] हिस्से कर डालो; और पूरी व्यवस्था ट्रस्टी या मैनेजर करे और माँकी तरह भाइयोंको भी जो मासिक खर्च देना हो वह तय कर दिया जाये। उससे ज्यादा कोई नहीं ले सकेगा। ट्रस्टी या मैनेजरके काममें कोई दखल न दे। जब दोनोंका काम-धन्धेमें कुछ नाम हो जाये तब यदि वे काम हाथमें लेना चाहें तो लें। पर जबतक काम चल न निकले, कोई ठीक व्यवस्था न बन जाये तबतक दखल न दें। फिलहाल छगनलाल राजकोटमें या भारतके किसी दूसरे स्थानमें रहे और लड़कोंकी शिक्षाका प्रबन्ध राजकोटकी राष्ट्रीय शालामें या किसी दूसरी जगह किया जाये। छगनलालको एक बुरी लत है, ऐसा मालूम हुआ है। किसी समय थी, ऐसा तो छगनलालने भी स्वीकार किया है। मैं मानता हूँ कि अब भी है। मेरे साथ बातचीतमें दोनोंका रुख अनुकूल था। इसी तरह तुम्हारे साथ

१. वसीयतमें उल्लिखित रकमसे।

भी बात करें तो कुछ घंटोंमें निर्णय कर सकोगे। इतना करनेके बाद प्रभाशंकरको बुलाना हो और चम्पाको भी बुलाना हो तो बुला लेना। यह सही है कि चम्पाको बुलानेसे रतिलाल परेशान हो सकता है, इसलिए उसे बुलाये बिना काम चले तो चलाना। सारा फैसला दो तारीखसे पहले हो जाये यह मैं अत्यन्त आवश्यक मानता हूँ। मेरे पास आनेकी जरूरत दिखाई दे तो काम छोड़कर चाहे जब आ जाना। अन्तिम निर्णय करनेके बाद तो तुम सब या जिन्हें आनेकी आवश्यकता लगेगी वे सब आयेंगे ही, ऐसा मैं मान लेता हूँ।

आश्रमको मिलनेवाली रकमके विषयमें मेरी यह सलाह है कि ट्रस्टमें रखी गई सम्पत्तिमें से जो देना है वह सब देनेके बाद पर्याप्त बचे तो आश्रमकी पूरी रकम दे दें या जितना बचे उतना दे दें। न बचे तो कुछ न दें। दूसरे जो दान दिये जाते रहे हैं, वे पूरे-पूरे चुका देने चाहिए। यदि इस सम्पत्तिमें से इन सबके लिए पर्याप्त धन न बच पाये तो प्रत्येकके हिस्सेमें आनेवाले धनको कुछ कम कर दिया जाये। मेरे हिसाबसे हर महीने ८००–९०० रुपये दिये जाते रहे हैं। मगनलालका विचार है कि आजकल कर आदि भर देनेके बाद उपजसे ५०० रुपयेसे ज्यादा नहीं मिलते। यदि ऐसा हो तो आश्रमको १००-२०० रुपये ही मिल पायेंगे। अन्य दानोंको पूरा-पूरा निबटा देने लायक आमदनी होती दिखाई देती है। अब कुछ लिखनेकी बात रह गई है, ऐसा नहीं लगता। पूछना हो तो जरूर पूछना।

यह पत्र तुम्हारे और रतुभाईके लिए है; इसलिए रतुभाईको भी पढ़ा देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७१) से।

३३९. पत्र: नारणदास गांधीको

२१ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी साप्ताहिक डाक मिल गई है। प्रेमाने अस्पतालसे आनेमें उतावली की है। और आश्रममें आकर काममें जुट गई यह भी बहुत अधैर्यकी बात हुई। यदि अब भी न समझी तो ज्यादा दुःखी होगी। वह जिस सेवाके लिए अधीर है, उसीसे वंचित रह जायेगी। इसके साथ माधवलालको[1] लिखा पत्र है; उसे पढ़ना। उसमें श्रेय और प्रेयके बारेमें जो लिखा है वह प्रेमापर पूरी तरह लागू करना। इस समय उसकी भलाई पूरी तरह मौनका पालन करने और परिश्रम न करनेमें है। और सेवा करनेका आग्रह उसे प्रिय है तो भी वह दुराग्रह है और मोह है, इसीलिए त्याज्य है। मुझे मावलंकरका पत्र अभी नहीं मिला। उसने क्या किया है यह जाननेके बाद ही मुझे कुछ सूझेगा। छारा लोगोंसे[2] मुलाकातका जो भी परिणाम हुआ हो वह मुझे लिखना।

१. माधवलाल शाह।
२. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", १४-१२-१९३२।

मुझे अपनी खुराक भी लिखना। नवीनकी खुराक लिखना। धीरू पत्र बिलकुल नहीं लिखता। जिसका पत्र लिखनेको मन करे उसे न रोकना। वह चाहे तो मुझे लिखे। अभी मुझसे उत्तरकी आशा न करे इतना ही काफी है। पत्र तो जब भी चाहूँ पढ़ सकता हूँ, परन्तु जब चाहूँ लिख या लिखवा नहीं सकता।[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२८६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३४०. पत्र : रतिलाल सेठको

२१ दिसम्बर, १९३२

भाई रतिलाल,

भाई नानालालको लम्बा पत्र[2] लिखा है; तुम पढ़ लेना। छगनलालसे उसके व्यसनके सम्बन्धमें पूरी बातचीत की है। लीलावतीने पत्र लिखा है, यह भी उसे बता दिया है। मुझे लगा कि ऐसा करना अत्यावश्यक था। पहले ऐसा था, इतना तो उसने भी कबूल किया है। लेकिन उसके चेहरेसे मुझे लगा कि वह अभी भी उससे छुटकारा नहीं पा सका है। उसे लीलावती पर गुस्सा नहीं करना चाहिए, बल्कि मानना चाहिए कि उसने उसकी बहुत भलाई ही की है। यह भी उसके मनमें बैठा देनेकी कोशिश की है। उसने सुधर जानेका वादा तो किया ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१७०) से। सी० डब्ल्यू० ४६६४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३४१. पत्र : वनमाला न० परीखको

२१ दिसम्बर, १९३२

चि० वनमाला,

तू अब अक्षर बिगाड़ने लगी है। इस बार मुझे दायें हाथसे पत्र लिखना। एक बार दायें हाथसे एक बार बायें हाथसे लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८०) से। सी० डब्ल्यू० ३००३ से भी; सौजन्य : वनमाला म० देसाई

१. यहाँ "बापूकी ओरसे" महादेव देसाईने हस्ताक्षर किये थे।
२. देखिए, "पत्र: नानालाल कालिदास जसानीको", २१-१२-१९३२।

३४२. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

२१ दिसम्बर, १९३२

चि० प्रेमी,[1]

तेरा हिंदी खत बहुत ही अच्छा है। अक्षर [भी][2] बहुत अच्छे हैं। मैंने नहीं लिखा क्योंकि तेरा कोई खत नहीं था ऐसा ख्याल है। पिताजी को जब लिखे तब कह देना कि हम सब अच्छे है। जमनालालजी भी अ[च्छे][3] हैं, उनको मैं आज ही मिला था।

ये अक्षर महादेवभाईके हैं

बापूके आशीर्वाद

प्रेमी जयरामदास दौलतराम
मार्केट रोड, हैदराबाद, सिन्ध

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९२४९) से; सौजन्य : जयरामदास दौलतराम।

३४३. पत्र : मीराबहनको

२२ दिसम्बर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा नियमित रूपसे आनेवाला पत्र यथासमय मिल गया। परन्तु उसमें जो पुस्तक तुम पढ़ रही हो उसकी टिप्पणियाँ अभी भी नहीं आईं। शायद पहली बार मैंने तुम्हारे पत्रको कटा-फटा पाया। क्या यह याद दिलानेके लिए है कि तुम और मैं कैदी हैं? मगर मुझे परवाह नहीं और तुम भी परवाह न करना। वे धन्य हैं जो कोई आशा नहीं रखते।

तुम कहती हो कि हमारे भयका कारण ईश्वरपर विश्वास न होना नहीं बल्कि अपनेपर विश्वास न होना है।[4] लेकिन ये दोनों एक ही चीज है। ईश्वरपर

१. जयरामदास दौलतरामकी बेटी।

२. व ३. फोटो-नकलमें ये अक्षर छूट गये हैं।

४. "अब ठीक-ठीक याद नहीं आता कि मेरा तब क्या सिद्धान्त था। खोज यदि तेजीसे जारी रहे तो सत्यकी अव्यक्त किन्तु निश्चित रूपसे प्राप्ति होती है। आज मैं यह जानती हूँ कि भयका अर्थ ईश्वरमें विश्वासका अभाव है।" —मीराबहन

विश्वास न होनेसे ही आत्मविश्वासका अभाव होता है। इससे ईश्वर क्या है इसका अज्ञान प्रकट होता है। फिर तुम यह भी कहती हो कि विश्वासका अभाव हमारे असंयमसे पैदा होता है। यह सच है, परन्तु इसका अर्थ भी वही है। गीताके दूसरे अध्यायका ५९ वाँ श्लोक पढ़ो। इन्द्रियोंके विषय ईश्वरके प्रत्यक्ष दर्शनसे या दूसरे शब्दोंमें ईश्वरपर विश्वास होनेसे ही नष्ट होते हैं। ईश्वरपर पूर्ण विश्वास होना ही उसे देखना है। चौथे आयामका अस्तित्व मान लेनेसे भी बात नहीं बनती। अन्तमें वह भी उसी तरफ ले जाता है। "पहले ईश्वरका राज्य खोजो, फिर सब-कुछ अपने-आप मिल जायेगा।"[1] जब हमारा उससे मिलन होगा, तब हम उसे देख-कर खुशीसे नाच उठेंगे। फिर न साँपोंका डर रहेगा और न प्रियजनोंकी मृत्युका। कारण, उसकी मौजूदगीमें न मृत्यु होती है न साँप काटते हैं। तथ्य यह है कि अत्यन्त जीवन्त विश्वास भी पूर्ण विश्वाससे कम रहता है। इसलिए शरीरधारी अर्थात् कारा-बद्ध आत्माके लिए भयके पूर्ण अभाव-जैसी कोई चीज नहीं है। शरीरका होना ही सीमा है। यह जुदाईकी दीवार है। इसलिए हम अपना भय छोड़ने अर्थात् अपने विश्वासको बढ़ानेका प्रयत्न ही कर सकते हैं।

मेरा वजन अब १०३$\frac{१}{२}$ पौंड है। अभी मैंने रोटी और सब्जीतक छोड़ रखी है। इसलिए नमक भी छोड़ रखा है। दूधकी मात्रा २ पौंडसे जरा कम है। कामका भारी बोझ हो तो मेरी खुराक दूध और फल ही होती है। बा और बाल यहीं हैं। जमनालालजी की तबीयत ठीक होती जा रही है। उनका वजन भी बढ़ रहा है।

जो वक्तव्य रह गये थे[2] वे इस पत्रके साथ हैं।

हमारी बिल्लियोंको जलील होना पड़ा। माँ बिना पूछे खाती हुई और रातको दरियाँ और कागज खराब करती पाई गई। इसलिए वल्लभभाईने उन्हें खाना देना बन्द कर दिया है। इस प्रकार सहभोज बन्द हो गये हैं। वल्लभभाई और क्या-क्या अध्यादेश जारी करेंगे, पता नहीं। बेचारी बिल्लियोंके लिए भी अध्यादेश राज्यका बोलबाला है।

सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[पुनश्च:]

अभी सुबहके ५.३० ही बजे हैं।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५१२) से; सौजन्य : मीराबहन।

१. सेंट मैथ्यू, ६-३३।

२. देखिए "पत्र: मीराबहनको", १५-१२-१९३२।

३४४. पत्र : कौता सूर्यनारायण रावको[1]

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। अपने पत्रमें इस विषयको आपने जिस ढंगसे रखा है उसमें ऐसा कुछ नहीं है जिससे मेरी असहमति हो। एक तरहकी अस्पृश्यता तो केवल हमारे शास्त्रोंमें ही नहीं, विश्वमें सर्वत्र मिलती है। परन्तु उस अस्पृश्यताका सम्बन्ध जन्मसे नहीं कर्म या धन्धेसे है। इस तरहकी अस्पृश्यता केवल अस्थायी ही हो सकती है और वह सदा आसानीसे दूर हो सकती है। आप अन्य सनातनी मित्रोंको इस दृष्टिकोणपर ला सकें और यह मनवा सकें कि व्यवहारमें हम शास्त्रोंसे बहुत दूर चले गये हैं और ऐसा करके हमने अपने धर्म, तथाकथित अस्पृश्यों और मानवताके प्रति पाप किया है, तो मैं समझता हूँ कि मन्दिर-प्रवेशके बारेमें बिना किसी कठिनाईके एक बीचका रास्ता खोजा जा सकता है। किसी भी सनातनीकी नैतिक दुविधाओंके साथ जोर-जबर्दस्ती करनेकी मेरी कतई इच्छा नहीं है। जहाँतक संकल्पित उपवासका सम्बन्ध है, मैं आपकी इस बातसे भी सहमत हूँ कि धार्मिक दृष्टिकोणसे उपवास केवल एक आध्यात्मिक कार्य ही हो सकता है और इसलिए लौकिक या स्वार्थपूर्ण उद्देश्योंके लिए उसका कदापि उपयोग नहीं हो सकता। जैसा कि मैंने आपको बताया है, मैं अपने उपवासको आशय और लक्ष्य दोनोंमें आध्यात्मिक मानता हूँ। आशय है, हिन्दू-धर्मको शुद्ध करना और लक्ष्य है, जिन हिन्दुओंके साथ अभीतक न्याय नहीं किया गया है उनके लिए धार्मिक न्याय प्राप्त करना।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत कौता सूर्यनारायण राव
९५ ब्रॉडवे, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७८२) से। स्वराज्य २५-१-१९३३ से भी।

१. उनके १७ दिसम्बरके पत्र (एस० एन० १८७३९) के उत्तरमें ,जिसमें उन्होंने गांधीजी से संकल्पित उपवासको छोड़ने या स्थगित करनेकी प्रार्थना की थी।

३४५. पत्र : डॉ० मुहम्मद आलमको

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डॉ० आलम,

आपका पत्र मिला और उसने हम सबको उल्लाससे भर दिया। आपको मैंने जो पत्र[1] लाहौर भेजा था, वह पता नहीं आपको मिला या नहीं। फिर मैंने बेगम आलमको उनके भेजे पते – ५७, लेंसडाउन रोडपर पत्र[2] लिखा। आशा है वह उन्हें मिल गया होगा। यदि आपपर प्रतिबन्ध लगा हो तो बेहतर यही है कि आप मुझ तकको पत्र न लिखें। बेगम आलम आपके साथ हैं, जो एक साथ नर्स, साथी, सचिव और भी बहुत-कुछ हैं। इसलिए, आप उन्हें बोलकर लिखवायें और उर्दूमें लिखवायें। वे बहुत ही सावधानीसे लिखती हैं और उनकी लिखावटको पढ़नेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं होती। इसके अलावा, मुझे मुफ्तमें उर्दूका सबक मिलता रहेगा। उन्हें चाहिए कि वे मुझे नियमित रूपसे सूचना देती रहें। आपकी तबीयत वैसे अच्छी है इसकी मुझे खुशी है। मैं जानता हूँ कि डॉ० रायसे अच्छी आपके लिए और किसीकी चिकित्सा नहीं हो सकती थी। हम सब अच्छी तरह हैं। आप दोनोंको हम सबका प्यार और आपके शीघ्र स्वास्थ्य लाभके लिए ईश्वरसे हमारी सम्मिलित प्रार्थनाएँ।

हम सबकी ओरसे प्यार।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० शेख मुहम्मद आलम
मार्फत डॉ० वि० चं० राय, ३६, विलिंग्टन स्ट्रीट, कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०) से।

१. देखिए पृष्ठ ७७-८।
२. देखिए पृष्ठ १८६।

३४६. पत्र : पी० के० मैथ्यूको

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्र[1] के लिए धन्यवाद। 'पुलया' और अन्य लोगोंको मैं आदिवासी नहीं मानता, और जहाँतक मुझे मालूम है हिन्दू-धर्म उन्हें हिन्दू ही मानता है। हिन्दू होते हुए भी वे जो एक अलग जातिके लगते हैं, यह हिन्दूधर्मका दुर्भाग्य है। आप यह सिद्ध करनेके लिए कि वे हिन्दू नहीं हैं, स्कूली इतिहास-पुस्तकों या इतिहासकी पाठ्यपुस्तकोंसे उद्धरण न दें, बल्कि कृपया उस सूत्रको समझें जिसके अधीन मन्दिर-प्रवेश आन्दोलन चलाया जा रहा है। सवर्ण हिन्दुओंको ही हिन्दू मन्दिरोंके द्वार उन लोगोंके लिए खोलकर जो हिन्दू समाजका अंग होते हुए भी अस्पृश्य समझे जाते हैं, क्षतिपूर्ति करनी है। यदि 'पुलया' हिन्दू नहीं हैं तो वे हिन्दू मन्दिरोंमें कभी नहीं जायेंगे। मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि आवश्यकता सवर्ण हिन्दुओंके हृदय-परिवर्तनकी है। मन्दिर-प्रवेश उस हृदय-परिवर्तनका एक संकेत होगा। यदि, जैसा कि आप कहते हैं, यह बिलकुल सम्भव है कि "इन सुधारकोंको धर्म और मन्दिरोंकी कोई चिन्ता न हो," तो क्या उससे कुछ अधिक सचाईसे यह नहीं कहा जा सकता कि उतना ही सम्भव यह भी है कि इन सुधारकोंको हिन्दू-धर्म और मन्दिरोंकी चिन्ता हो? इस बातको देखते हुए कि वे मन्दिर-प्रवेशके लिए काम कर रहे हैं, जबतक प्रतिकूल बात सिद्ध न हो जाये, क्या अनुमान उनके पक्षमें नहीं जाएगा? यह कहना ठीक होगा कि जो इस आन्दोलनमें, पक्ष या विपक्ष किधर भी भाग नहीं ले रहे हैं, उन्हें धर्म या मन्दिरोंकी कोई चिन्ता नहीं है। यदि सुधारक मन्दिर-प्रवेशकी वकालत करते हुए अपने दैनिक जीवनमें छुआछूतका रुख अपनाते हैं, तो उनकी वह वकालत निश्चय ही पाखण्ड है। परन्तु यहाँ भी, "आजकलके बहुत-से सुधारकों" के रुखके बारेमें, आपका जो खयाल है, प्रमाण उसके विरुद्ध जाता है। आप मेरी इस बातपर यकीन करें कि मैं "किसी नकली चीजकी प्राप्तिके लिए" अपनी जान जोखिममें नहीं डालूँगा। इसके विपरीत, हरिजनोंकी ओरसे मैं ऐसी चीजकी प्राप्तिके लिए प्रयत्नशील हूँ जो धार्मिक दृष्टिसे बहुत ही ठोस है।

हृदयसे आपका,

पी० के० मैथ्यू महोदय
क्रिस्टव महिलालयम, अलवई (त्रावणकोर)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७७७) से।

१. दिनांक १७ दिसम्बर, १९३२का जिसमें श्री मैथ्यूने गांधीजी को उपवास न करनेके लिए समझाते हुए कहा था कि पुलया और अन्य लोग आदिवासी हैं "जो आर्योंके आक्रमणसे बहुत पहलेसे भारतमें थे और वे हिन्दू-धर्म या समाजके साथ कभी भी एकाकार नहीं हुए थे।"

३४७. पत्र : जे० आर० घारपुरेको

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

मुझे खेद है कि मेरे तारके कारण आपको कष्ट हुआ। हम दोनोंके मित्र, हरिभाऊ, ने मुझे बताया था कि उन्होंने आपको तथा दो-तीन मित्रोंको लिख दिया है और पत्रको और बल देनेके लिए मुझे तार दे देना चाहिए। और कारण यह रहा था कि आप, स्वामी केवलानन्द और अन्य विद्वान मित्र पूनामें इकट्ठे हों जिससे कि मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर शान्तिसे विचार-विमर्श किया जा सके और यदि सम्भव हो तो आप लोग २३ तारीखके सुधारवादी शास्त्रियों और सुधार-विरोधी शास्त्रियोंके वाद-विवादमें भाग ले सकें। चूँकि २३ तारीखकी सभाके बारेमें अभी कुछ भी निश्चित नहीं है,[1] इसलिए मैं आपको या स्वामी केवलानन्दको यहाँ आनेका कम-से-कम इस समय तो कष्ट नहीं दूँगा। परन्तु यदि आप इस सारे प्रश्नपर अपनी संयुक्त सम्मति भेज सकें तो वह मेरे लिए अमूल्य होगी।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जे० आर० घारपुरे
गिरगाँव, बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७७८) से।

३४८. पत्र : एन० वी० थडानीको

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय थडानी,

अपने पत्रके साथ आपने अपने कालेजके अध्यापकों और विद्यार्थियों द्वारा पास किये गये प्रस्ताव और जमोरिनको लिखे गये पत्रकी जो नकलें भेजी हैं, उनके लिए धन्यवाद।

आपके प्रस्ताव और जामोरिनको लिखे पत्रको मैं हरिजनोंके ध्येयमें आपका अन्तिम योगदान नहीं मानता हूँ, बल्कि उन्हें आगामी अनेक सेवाओंकी साई समझता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एन० वी० थडानी
प्रधानाचार्य, रामजस कालेज, दिल्ली

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७७९) से।

१. देखिए "पत्र: एच० डी० नानावटीको", २२-१२-१९३२। अन्ततोगत्वा यह सभा हुई, देखिए "पत्र: एम० जी० भण्डारीको", २४-१२-१९३२।

३४९. पत्र : यू० गोपाल मेननको

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

२० तारीखको अपना पत्र[1] लिखवानेके बाद मैंने श्रीयुत एम० के० आचार्य द्वारा जारी किये गये घोषणा पत्र या नोटिसकी एक नकल देखी। उन्होंने उसके साथ एक इश्तिहारकी नकल भेजी है जो कहते हैं, आपके द्वारा जारी किया गया है। क्या आप उसपर अपने विचार मुझे बतानेकी कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,[2]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७८०) से।

३५०. पत्र : दीवानचन्दको

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपका यह सोचना गलत है कि गुरुवायुर अकेला ऐसा मन्दिर है जो अभी खुलना है। पर वह चाहे अकेला हो या उन बहुतोंमें से एक जो अभी खुलने हैं, उपवासका कर्ता मैं नहीं हूँ।[3] इसलिए अगर वह होता है तो मैं उसे टाल नहीं सकूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत दीवानचन्द
गोजरा (जिला लायलपुर)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७८१) से।

१. देखिए २५९।

२. यहाँ "बापूकी ओरसे" महादेव देसाईने हस्ताक्षर किये थे।

३. देखिए "पत्र: रामदास गांधीको", ६-१२-१९३२ और "पत्र: सी० एफ० एण्ड्रयूजको", २०-१२-१९३२ भी।

३५१. पत्र : एच० डी० नानावटीको

२२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके २१ तारीखके तारके लिए धन्यवाद। आप बीमार हैं यह जानकर दुःख हुआ। मैं चाहता हूँ कि आप पूर्ण स्वस्थ हो जायें। आपके और अन्य सनातनी मित्रोंके साथ अपने समझौतेके अनुसार ही मैं एक परिषदके आयोजनमें भागीदार हुआ था। जो पण्डित इस परिषदके लिए विशेष रूपसे आये हैं या आ रहे हैं उन्हें फिरसे एकत्रित करना मेरे लिए सम्भव नहीं होगा। साथ ही, आपके पण्डितोंसे किसी दिन जो भी तय हो जाये, मिलकर मुझे खुशी होगी और मैं कोशिश करूँगा कि मेरे विचारका आम तौरपर समर्थन करनेवाले कुछ पण्डित उपस्थित रहें। परिषदके बारेमें आपके मनमें कुछ विस्तृत धारणा है। उसके क्या-क्या परिणाम हो सकते हैं, मैं समझ नहीं सका हूँ। मेरी तो बहुत ही सीधी-सादी धारणा है। सत्यके एक विनम्र अन्वेषकके नाते, मैं उन सबकी बात सुनता हूँ जो वस्तुतः मुझे कुछ प्रकाश दे सकते हैं। सत्यके विशदीकरणको छोड़ मेरी इस परिषदमें और कोई रुचि नहीं है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एच० नानावटी
मन्त्री, अ० भा० वर्णाश्रम स्वराज्य संघ
बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७८३) से।

३५२. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

२२ दिसम्बर, १९३२

चि० डाह्याभाई,

तुम्हारे विषयमें अब तो ऐसे समाचार आने लगे हैं कि मेरे लिखनेकी कोई बात रहती नहीं। फिर भी इतना तो लिखता ही हूँ कि न बीमारीका विचार करना, न दफ्तरका। हो सके तो केवल ईश्वरको ही याद रखो और जीवन उसके हाथमें सौंप दो। वह भजन[1] याद है? "मेरी डोर तुम्हारे हाथ है प्रभु रक्षा करो।"

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने पृ० १५४

१. केशवलाल भट्ट द्वारा लिखित।

३५३. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

२२ दिसम्बर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र समय पर मिल गया था। धीरे-धीरे ही सही पर तू पूर्णतया स्वस्थ हो जाये तो कितना अच्छा हो। क्या कोई समाचारपत्र पढ़ती है? या पढ़ सकने लायक फुरसत भी नहीं मिलती? और यदि समाचारपत्र पढ़ती है तो कौन-कौनसे पढ़ती है? वहाँ तो खूब हिन्दी बोलनी पड़ती होगी? कोई और चीज पढ़ती है? किसीके यहाँ आना-जाना है? किसीसे मित्रता है?

हम सब मजेमें हैं। आजकल तो मेरा सारा दिन ही हरिजन सम्बन्धी कार्यमें लग जाता है।

तुम दोनोंको
बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४९) से।

३५४. प्रश्न : शास्त्री परिषदके लिए

[२३ दिसम्बर, १९३२ या उससे पूर्व][1]

१. शास्त्रोंके अनुसार अस्पृश्यताकी परिभाषा क्या है?

२. शास्त्रोंमें दी गई अस्पृश्योंकी परिभाषाको क्या आजकलके तथाकथित अस्पृश्यों पर लागू किया जा सकता है?

३. शास्त्रोंमें अस्पृश्यों पर क्या-क्या प्रतिबन्ध लगाये गये हैं?

४. क्या कोई व्यक्ति अपने जीवन-कालमें अस्पृश्यतासे मुक्त हो सकता है?

५. अस्पृश्योंके प्रति स्पृश्योंके व्यवहारके बारेमें शास्त्रोंके आदेश क्या हैं?

६. शास्त्र किन परिस्थितियोंमें अस्पृश्योंको मन्दिर-प्रवेशकी अनुमति देते हैं?

७. शास्त्र किन्हें कहना चाहिए?

८. शास्त्रोंकी प्रामाणिकता कैसे सिद्ध की जाये?

९. शास्त्रोंकी परिभाषाओं या व्याख्याओंके बारेमें विभिन्न मत हैं, ऐसी स्थितिमें किसी निर्णयपर कैसे पहुँचा जाये?

१०. आपके निष्कर्ष क्या हैं?

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २७-१२-१९३२

१. शास्त्रियोंको गांधीजी से २३ दिसम्बर, १९३२ को मिलना था।

३५५. तार : कालीकटके जमोरिनको

२३ दिसम्बर, १९३२

मैं समझता हूँ कि गुरुवायुर सालमें तीन दिन हरिजनों समेत सभी हिन्दुओंके लिए खुला रहता है। कृपया तारसे सूचित करें कि क्या यह सूचना सही है।[1]

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-१-१९३३

३५६. पत्र : एस० सेनको

२३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका १७ तारीखका पत्र और उसके साथ आपके कालेजके विद्यार्थियों और अध्यापकोंका प्रस्ताव मिला। उसके लिए कृपया उन्हें मेरा धन्यवाद दें और आप स्वयं भी धन्यवाद स्वीकार करें। इस प्रस्तावको मैं आपके कालेजका अन्तिम योग-दान समझूं यह तो आप चाहेंगे नहीं। मैं इसे हरिजनोंके ध्येयकी ठोस सेवाओंका एक वचन मानता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० सेन
प्रधानाचार्य, कमर्श्यल कॉलेज
८, दरियागंज, दिल्ली

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७८८) से।

१. जमोरिनका उत्तर इस प्रकार था : "आपका २३ तारीखका तार मुझे आज सुबह ही मिला, क्योंकि मैं १४ तारीखको कोट्टक्कल चला गया था। मैंने यह तार भेजा है : "२३ तारीखका तार मिला। सूचना सही नहीं है। पत्र भेजा जा रहा है।" (एम० एम० यू०/२२, और हिन्दू, ३-१-१९३३)

३५७. पत्र : मणीन्द्रनाथ मित्तरको

२३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

१६ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैंने वह मोतीबाबूको,[1] जो इस समय पूनामें हैं, दिखाया था। मुझे पूरा यकीन है कि मोतीबाबू जान-बूझकर न तो किसी छल-कपटमें शामिल होंगे और न किसीको आघात पहुँचानेवाली कोई बात कहेंगे। मोतीबाबू स्वयं एक पुराने सुधारक हैं। उन्होंने अस्पृश्यता खत्म की है, पर्दा खत्म किया है और चन्दरनगरमें उनके आश्रममें पूर्ण स्वतन्त्रता है। आप यह मानेंगे कि सनातनियोंको सुधारकी ओर खींचनेकी उनकी सूझ अपने-आपमें काफी प्रशंसनीय थी। वे यहाँ सुधारकी प्रगतिको रोकने या खतरेमें डालनेके लिए नहीं, बल्कि आगे बढ़ानेके लिए आये हैं। इसलिए आपसे मेरा यही कहना है कि मोतीबाबू और उनके संघकी सेवाओंको, जहाँतक भी वे उपलब्ध हो सकें, आप काममें लायें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत मणीन्द्रनाथ मित्तर
मन्त्री, हिन्दू मिशन
३२-बी, हरीश चटर्जी स्ट्रीट
कालीघाट, कलकत्ता

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७८९) से।

३५८. पत्र : मोहनलालको

२३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय लाला मोहनलाल,[2]

इतनी मुद्दतके बाद आपका पत्र[3] पाकर खुशी हुई। पंजाबमें अस्पृश्यता जितनी भी बची-खुची रह गई है, उसके खिलाफ संघर्ष चलना चाहिए। इसलिए किसी भी

१. मोतीलाल राय, अध्यक्ष, स्वागत समिति, एकता सम्मेलन, बंगाल।

२. मोहनलाल, एम० एल० सी०, आर्यसमाजी।

३. १५ दिसम्बरका पत्र (एस० एन० १८७०८), जिसमें उन्होंने लिखा था: "अस्पृश्यताका प्रश्न पंजाबमें भारतके अन्य भागों-जैसा तीव्र नहीं है।"

प्रान्तको यह नहीं कहना चाहिए कि "हम दूसरों जैसे नहीं हैं।" हर प्रान्तको अपने-आपको पूरी तरह स्वच्छ करना है।

हृदयसे आपका,

लाला मोहनलाल, एडवोकेट
'फिरग्रोव', शिमला

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७८७) से।

३५९. पत्र : होरेस जी० एलेक्जेण्डरको

२३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय होरेस,

पत्र मुझे जरूर लिखवाना है। हमारे छोटे-से समुदायने मेरे इस नवीनतम दु:साहसको गलत नहीं समझा और तुम्हें इसमें ईश्वरका हाथ दिखाई देता है, यह मेरे लिए बहुत ही प्रसन्नताकी बात है। तुम्हारी पुस्तिका मैंने पढ़ ली है। मेरे खयालसे अस्पृश्यताका प्रश्न इसमें युक्तियुक्त रूपमें प्रस्तुत किया गया है। डॉ० अन्सारीने तुमसे, एण्ड्रयूज और अन्य मित्रोंसे अपनी भेंटकी बात मुझे विस्तारसे लिखी है।

तुम सबको हम सबका प्यार,

बापू

प्रोफेसर होरेस एलेक्जेण्डर
१४४, ओकट्री लेन, सेल्ली ओक
बर्मिंघम (इंग्लैंड)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१७) से।

३६०. पत्र : अब्बास तैयबजीको

२३ दिसम्बर, १९३२

प्रिय सफेद दढ़ियल,

काठियावाड़के तुम्हारे दौरेके बाद मैं तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा ही कर रहा था। कम-से-कम मनको यह सन्तोष तो दिया ही जा सकता है कि यदि तुम नहीं गये होते तो १७ रुपये भी इकट्ठे नहीं होते। आम मन्दीके इन दिनोंमें काठियावाड़से अस्पृश्यता-निवारण कार्यके लिए रुपया इकट्ठा करना स्वस्थ दाँतको निकालने जैसा ही कठिन है। परन्तु मुझे इस बातकी खुशी है कि यह दौरा स्वास्थ्यकी दृष्टिसे

सफल रहा। तुम्हें घरेलू जीवनकी नीरसतासे परिवर्तनकी जरूरत थी। तुम्हारे सामने जबतक करनेको कोई सेवा-कार्य न हो तुम प्रसन्न नहीं रह सकते। और मैं जानता हूँ कि सबसे निम्न स्थितिके लोगोंकी सेवा तुम्हें जितना आनन्द दे सकती है उतना और कोई चीज नहीं दे सकती। सालों पहले जब हम गोध्रामें हरिजन बस्तीमें गये थे और वहाँ हमने सच्ची सुधार सभा की थी, तो तुम्हारा चेहरा किस तरह दमक रहा था, क्या मुझे याद नहीं है? तुम्हारे पत्रसे पहले मुझे हमीदाका एक पत्र मिला था। मैंने उन्हें जवाब दे दिया था, जो आशा है उन्हें मिल गया होगा।

कृपया मुझे यथासम्भव शीघ्र ही वढवान्‌की सभाका, जिसमें हुल्लड़बाजी हुई, विवरण भेजना। क्या वे सचमुच तुमपर हमलातक करनेको तैयार थे? उपद्रव-कारियोंने वस्तुतः किया क्या? मुझे जो खबरें मिली हैं वे रोंगटे खड़े कर देनेवाली हैं। क्या हुल्लड़बाज वाकई इतने भीषण थे? मैं तो सोचता था कि तुम्हारी चम-चमाती रुपहली दाढ़ी सारी हुल्लड़बाजीको झाड़-बुहारकर साफ कर देगी।

हम सबकी तरफसे तुम सबको प्यार,

हृदयसे तुम्हारा,
भुर्ररर

श्रीयुत अब्बास तैयबजी साहब
कैम्प बड़ौदा

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८२) से।

३६१. खुर्शीद नौरोजीको लिखे पत्रका अंश

२३ दिसम्बर, १९३२

तुम यह क्यों मानती हो कि मेरा उपवास निराशाके कारण था? इसके विप-रीत वह तो अमर आशासे उत्पन्न हुआ था। जीनेके लिए खाना जितना जरूरी है, उतना ही उपवास भी जरूरी है। प्रार्थनाका वह एक आवश्यक अंग हैं। हम जीकर जितनी सेवा करते हैं, उतनी ही मरकर भी करते हैं। मगर उपवास करनेका अधिकार बहुत थोड़ोंको होता है। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि यहाँ मैं आध्यात्मिक उपवासकी ही बात कर रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि मनुष्य निराशासे भी उपवास कर सकता है। वह साफ आत्मघात कहा जायेगा। मुझपर कोई ऐसा आक्षेप करे, तो मैं उसका प्रतिवाद करूँगा। मेरे लिए तो वह सदा तपस्या और आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया रही हैं। १९२१ का उपवास निराशाके कारण नहीं हुआ था। तपस्याके रूपमें किये गये उपवासका आधार हमेशा मानव-जातिपर, ईश्वरपर और अपने-आपपर आस्था होती है। उससे आन्तरिक आनन्द मिलता है, जो आदमीको कायम रखता है। इसलिए मैं तुम्हारा इस आनन्दमें शरीक होना चाहता हूँ। आशा है कि मेरी

दलील तुम समझ गई होगी। तुम यह तो जानती ही हो कि २ जनवरीका उपवास निश्चित नहीं है। वह स्थगित भी हो सकता है।[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी – भाग २, पृष्ठ ३६६-७

३६२. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२३ दिसम्बर, १९३२

आजकल तो सनातनी शास्त्रियोंसे मुलाकात हुआ करती है। उनकी स्थिति दुःखद है। उनसे ज्ञानकी प्राप्ति एक कठिन काम ही हो गया है। उनके पास कुछ हो भी, तो वे उसे देनेमें असमर्थ हो गये हैं। इतना अधिक राग-द्वेष उनमें देखता हूँ। मगर यह करुण कथा कहाँ लिखने बैठूँ?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी – २, पृष्ठ ३६७-८

३६३. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

२३ दिसम्बर, १९३२

भाईश्री मावलंकर,

इसके साथका पत्र तुम्हारी जानकारीके लिए है। मैंने तो जवाब दिया है कि मुझे पूरी बात नहीं मालूम है। और मैं यह मानता हूँ कि तुमसे अन्याय नहीं हो सकता। केशवजीको तुमसे मिल लेना चाहिए। यदि मुझे पत्र लिखना हो तो लिख देना।

छारा लोगोंके[2] सम्बन्धमें तुम्हारे पत्रकी राह देख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२३०) से।

१. महादेव देसाईने स्थिति स्पष्ट करते हुए लिखा है: "कल खुर्शीदका विषाद-भरा पत्र मिला: 'क्या आप इसलिए उपवास कर रहे हैं कि आप निराश हो गये हैं। क्या आप हमसे निराश हो गये हैं? अपनी कलात्मक अभिरुचिकी मैंने केवल आपके लिए और आपके ध्येयके लिए सेवाकी वेदीपर आहुति दे दी। आप फिर भी निराश क्यों हैं?'

"बापूने उन्हें तार दिया। पर मेजर [भण्डारी] ने बताया कि तार केवल सरकारके माध्यमसे ही भेजा जा सकता है। इसपर बापूने कहा कि वह न भेजा जाये और [उन्हें] वापस दे दिया जाये और तब उसकी बजाय उन्होंने यह पत्र लिखा।"

२. देखिए "पत्र : ग० वा० मावलंकरको", १५-१२-१९३२।

३६४. पत्र : जी० वी० नरसिंहचारको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपके उत्साहकी मैं सराहना करता हूँ, परन्तु आपके कार्यका मैं समर्थन नहीं कर सकता। मेरा यह पक्का विश्वास है कि जबतक गुरुवायुरका प्रश्न न सुलझे, मन्दिर-प्रवेशके सिलसिलेमें किसीको भी उपवास नहीं करना चाहिए। सुधारके विरोधियोंको यह समझानेकी ओर ज्यादा कोशिश कीजिए कि यदि हिन्दू-धर्मको जिन्दा रहना है, तो यह जरूरी है। अपने सोचे हुए उपवासको स्थगित करनेके लिए आप इस पत्रका उपयोग कर सकते हैं। इस बातको ध्यानमें रखते हुए कि उपवासका तरीका पहले-पहल मैंने प्रयुक्त किया था, मैं यह कहूँगा कि आप मेरी सलाह मानें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जी० वी० नरसिंहचार
"माधव विलास", ब्राह्मण स्ट्रीट, बेल्लरी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९८) से।

३६५. पत्र : टी० बी० केशव रावको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मेरे दिमागमें यह चीज बिलकुल साफ है कि गुरुवायुरका प्रश्न जबतक अन्तिम रूपसे सुलझ न जाये, मन्दिर-प्रवेशके सिलसिलेमें किसी भी व्यक्तिको कहीं भी उपवास नहीं करना चाहिए। इस बीच पुरातनपंथियोंको समझाने-बुझानेके लिए निरन्तर किन्तु नम्र प्रचार चलता रहे। मैंने श्रीयुत जी० वी० नरसिंहचार[1] को उपवासका विचार छोड़ देनेको लिखा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत टी० बी० केशव राव
मन्त्री, जिला अस्पृश्यता-निवारक संघ
ब्राह्मण स्ट्रीट, बेल्लरी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६०) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३६६. पत्र : आर० वेंकटरमणको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

एस० पोन्नम्मल[1] के बारेमें जो विवरण आपने दिया है उसके लिए धन्यवाद। आपका पत्र मुझे श्रीमती गांधीके यहाँ आनेके दो-तीन दिन बाद मिला। उसे मुझे देनेमें क्यों और कैसे देरी हुई, बताना मुश्किल है। आपका पत्र यदि मुझे समयपर मिल जाता तो मैं निश्चय ही उनसे श्रीमती पोन्नम्मलसे मिलनेको कह देता।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० वेंकटरमण
कालीकट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९१) से।

३६७. पत्र : एस० राजगोपालाचारीको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। अस्पृश्यता-निवारण यदि आवश्यक कार्य है, तो जिन कष्टोंका आपने वर्णन किया वे अब सहने ही होंगे। आन्दोलन, निस्सन्देह विनम्रतासे चलाना चाहिए। सुधारके विरोधियोंको अनावश्यक रूपसे क्षुब्ध नहीं करना चाहिए। परन्तु यह सम्भव है कि पुरातनपन्थियोंकी भावनाओंको आघात न पहुँचानेकी सारी सावधानियोंके बावजूद, पुरातनपन्थको थोड़ा धक्का लगना अनिवार्य हो जाये। यह ऐसी कीमत है जो हर सुधारने वसूल की है।

हृदयसे आपका

श्रीयुत एस० राजगोपालाचारी
७१३, नॉर्थ अदयावलंजन स्ट्रीट, श्रीरंगम

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९२) से।

१. देखिए "पत्र : एस० पोन्नम्मलको", १०-१-१९३३।

३६८. पत्र : डॉ० टी० एस० एस० राजनको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डॉ० राजन,

इसके साथ एक पत्र संलग्न है जो श्रीरंगम्से मिला है।[1] कृपया मुझे बताइये कि इसमें स्थितिका जो वर्णन है वह कहाँतक सही है।

हृदयसे आपका,

डॉ० टी० एस० एस० राजन
त्रिचिनापल्ली

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९३) से।

३६९. पत्र : वैदिक धर्मवर्धिनी सभाके मन्त्रीको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

अपने पत्रमें आपने पोन्नी ताल्लुकेकी आबादीके जो आँकड़े दिये हैं उनके लिए धन्यवाद। मतसंग्रहका परिणाम मिलनेपर इनसे मुझे काफी सहायता मिलेगी।

हृदयसे आपका,

मन्त्री
वैदिक धर्मवर्धिनी सभा, बजवाड़ा

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९४) से।

१. सम्भवतः एस० राजगोपालाचारीसे; देखिए पिछला शीर्षक।

३७०. पत्र : डब्ल्यू० ई० एस० हॉलेंडको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय केनन,

पत्रके लिए धन्यवाद। चमारों और अन्य हरिजनोंके लिए आपने एक रात्रि-पाठशाला खोली है, यह अच्छी बात है। आपने बताया है कि कुल ४५० व्यक्तियोंमें से केवल ३० अपना समय हरिजन सेवामें लगा रहे हैं। पर मैं चाहता हूँ कि सभी, जो इस योग्य हैं, स्वयंसेवकोंके इस दलमें शामिल हो जाएँ। और मैं यह भी चाहूँगा कि जो अपना नाम लिखाएँ, वे अपना वचन बहुत ही कड़ाईसे पूरा करें। मैंने यह अनेक बार देखा है कि जो सनक आनेपर यदा-कदा सेवा करते हैं और जिन पर समयकी पाबन्दीका कभी भरोसा नहीं किया जा सकता, वे जिस आन्दोलनके लिए अपनी सेवाएँ देनेका वचन देते हैं उसमें प्रायः सहायक होनेकी बजाय बाधक ही सिद्ध होते हैं।

हृदयसे आपका,

रेवरेंड केनन डब्ल्यू० ई० एस० हॉलेंड, एम० ए०,
सेंट जॉन्स कालेज, आगरा

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९९) से।

३७१. पत्र : एन० वेंकटकृष्णैयाको[1]

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। आपके संस्थानमें अपना जाना मुझे याद है। पुरातन-पन्थियों और सुधारकोंके टकरावको रोकनेकी मैं भरसक कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु सुधारक सभी मौकोंपर अपनेको लोगोंकी कोमल भावनाओंको ठेस पहुँचानेसे रोक सकें, यह कठिन होता है।

आप अपने प्रतिनिधिको भेज सकते हैं। मैं यदि उपवास नहीं कर रहा हूँगा तो ३ या ४ जनवरीके बाद कभी भी उन्हें खुशीसे एक घंटे तकका समय दे सकूँगा।

१. यह उनके १८ दिसम्बर, १९३२ के पत्रके उत्तरमें था, जिसमें लिखा था: "... हम आशा करते हैं कि आप गुरुवायुर मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नको सुलझानेका कोई-न-कोई उपाय निकालनेमें सफल हो जायेंगे और हिन्दू-समाजमें फिरसे वैसी ही उदार भावना जागेगी जैसी कि पूना समझौतेके समय थी। गुरुवायुरका प्रश्न हिन्दू-समाजके पुरातनपंथी वर्गमें एक तरहका कड़ा रुख पैदा कर रहा है और जो भावना हमें पूना समझौते पर ले गई थी वह अब कमजोर पड़ती जा रही है" (एस० एन० १८७४१)।

उपवास-दिवससे पहलेका मेरा कार्यक्रम बहुत व्यस्त है। समझदारी और किफायतशारी तो इसीमें है कि आप अपने सुझाव लिखकर मुझे भेज दें। पर इसका फैसला मैं आप पर ही छोड़ता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एन० वेंकटकृष्णैया
खद्दर संस्थानम
हाउस नं० २१/१९१ गवर्नरपेट, वेजवाड़ा

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९६) से।

३७२. पत्र : मुकन्दीलालको[1]

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

१६ तारीखके आपके दिलचस्प पत्रके लिए धन्यवाद। मैं यह बात पूरी तरह समझता हूँ कि यह बुराई, जिसकी जड़ें बहुत गहरी हैं, केवल निरन्तर और विनम्र प्रयत्नसे ही दूर की जा सकती हैं।

जहाँतक प्रस्तावित छात्रवृत्तियोंका सवाल है, मेरी सलाह यह है कि आप अपनी योजनापर नव-स्थापित संघकी यू० पी० शाखाके अध्यक्ष पण्डित कुँजरूके साथ विचार-विमर्श करें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत मुकन्दीलाल
बैरिस्टर एट-लॉ
लैंसडाउन (यू० पी०)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८००) से।

३७३. पत्र : राधाकान्त मालवीयको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय राधाकान्त,

आपका पत्र इससे पहले मुझे मिलना सम्भव ही न था। इस बीच मुझे श्रीयुत माधवन नैयरका एक लम्बा पत्र मिला है। मैंने उन्हें सलाह दी है कि वे अपने पत्रका सार समाचारपत्रोंको दे दें। श्रीयुत राजगोपालाचारीने मुझे तार से सूचित

१. यू० पी० कौंसिलके भूतपूर्व उपाध्यक्ष। इन्होंने गढ़वालके अस्पृश्यता-निवारण कार्यका विवरण देते हुए लिखा था: "... यहाँ आवश्यकता आर्थिक सहायता की है, जिससे कि दलित वर्गोंके बच्चोंको बड़ी संख्यामें छात्रवृत्तियाँ दी जा सकें और एक ऐसा अनाथालय खोला जा सके जिसमें सभी जातियोंके बच्चे रखे जा सकें। यदि हम ऐसा कर सकें तो उनके लिए बहुत-कुछ किया जा सकता है" (एस० एन० १८७१९)।

किया है कि [मतसंग्रहकी] विशुद्धताके लिए जो-कुछ उन्होंने किया है उससे अधिक असम्भव था। आप देखेंगे कि यदि मतसंग्रह बनावटी या अन्यथा अयुक्त हुआ तो मुझे उपवास स्थगित करनेमें कोई झिझक नहीं होगी।[1] मतसंग्रह आखिर उपवासके बारेमें मुझे किसी निर्णयपर पहुँचनेमें सहायता देनेको ही किया गया है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत राधाकान्त मालवीय
२०७, कालवादेवी रोड, बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८०१) से।

३७४. पत्र : यू० गोपाल मेननको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

क्या आप इसके साथ भेजे जा रहे पत्रको पढ़ने और जिस महिलाका उसमें उल्लेख है उसके बारेमें मुझे सब-कुछ बताने तथा इस चीजपर प्रकाश डालनेकी कृपा करेंगे कि पत्रमें जो-कुछ कहा गया है क्या वह सच है?

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८०२)से।

३७५. पत्र : वी० वरदराजुलुको[2]

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय वरदराजुलु,

आपके स्कूलके छात्र हरिजन बच्चोंके साथ भाईचारा कायम कर सकते हैं, खेल सकते हैं, सैर-सपाटेके लिए जा सकते हैं, वे गन्दे हों तो उन्हें साफ कर सकते हैं, वे भूखे हों तो उन्हें अपने भोजनमें भागीदार बना सकते हैं, और उनके पास कपड़े न हों तो उन्हें अपने कपड़े दे सकते हैं। आदर्श शिक्षक वह है जिसका चरित्र निष्कलंक है और जो अपने छात्रोंसे अपने खुदके बच्चोंकी तरह प्यार करता है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत वी० वरदराजुलु
२६ पेपर मिल्स रोड, पेराम्बुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७९७)से।

१. देखिए "पत्र : यू० गोपाल मेननको", १४-१२-१९३२ और २१-१२-१९३२ भी।
२. उनके २० दिसम्बर, १९३२ के पत्र (एस० एन० १८७६४) के उत्तरमें।

३७६. पत्र : आर० शंकरनारायण अय्यरको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके १५[1] और १९[2] तारीखके दोनों पत्रोंके लिए धन्यवाद। मुझे खेद है कि आपने जिस साहित्यका उल्लेख किया है[3] वह मेरे लिए सुलभ नहीं है। यदि होता, तो भी मैं उसके अध्ययनके लिए समय नहीं निकाल सकता था। इस पूरे प्रश्नको मैं जिस दृष्टिसे देखता हूँ उसमें वह जरूरी भी नहीं है।

मेरा जहाँ सभी हिन्दू-शास्त्रोंमें विश्वास है, वहाँ मैं व्याख्याके एक सर्वोच्च नियमसे निर्देशित हूँ, जो स्वयं शास्त्रोंमें ही दिया हुआ है। वह यह है। ऐसा हर नियम और उसकी ऐसी हर व्याख्या जिसकी सत्य और सदाचारसे (जो एक ही चीज है) संगति न बैठती हो, छोड़ देनी चाहिए। इस तरहके किसी नियम बिना, साधारण आदमी असंख्य पाठों और व्याख्याओंके बीच अपनेको बिलकुल असहाय

१. इसमें लिखा था: "... अपने शास्त्रोंके अनुसार, उनका (सवर्णोंका) यह विश्वास है कि, प्रत्येक अन्य व्यक्तिकी तरह, अस्पृश्यको पिछले जन्मके अपने निजी कर्मके कारण ही इस लोकमें जातियोंकी वर्गीकृत श्रेणीमें इस तरहका जन्म मिला है, सवर्णोंने उन्हें वैसा कदापि नहीं बनाया है। इसलिए सवर्णोंको इस विषयमें कोई भी अनुबन्धित, स्वयं अंगीकृत या आरोपित दायित्व पूरा नहीं करना है" (एस० एन० १८७१०)।

२. इसमें लिखा था: "... आप हिन्दू-धर्मके किन सिद्धान्तोंको मानते हैं, कृपया साफ-साफ बताइये... क्या आप अध्याय और श्लोक उद्धृत करते हुए किसी ऐसे प्रामाणिक धर्म ग्रन्थका उल्लेख कर सकते हैं जिसमें यह कहा गया हो कि अस्पृश्य मन्दिरमें प्रवेश कर सकता है? आगम शास्त्रोंके अनुसार, यदि कोई अस्पृश्य मन्दिरमें प्रवेश करता है, तो प्रतिमा अपवित्र हो जाती है और अपवित्रताको दूर करनेके लिए शुद्धि-संस्कार करना चाहिए। क्या आप जाति-भेदको हिन्दू-धर्मके मूल सिद्धान्तके रूपमें मानते हैं? यदि आप मुझे उपरोक्तके सीधे स्पष्ट और विश्वासोत्पादक उत्तर देनेकी कृपा करें, तो मैं आपका आभारी हूँगा। अन्तमें मुझे यह हार्दिक अपील करनेकी अनुमति दीजिए... आपके कार्यका मूल सिद्धान्त मानव-जातिके प्रति प्रेम है, और सनातनी ही, आजके इन सामाजिक सुधारकोंसे कहीं ज्यादा सचाईके साथ, उसकी शक्तिको समझेंगे और व्यवहारमें हरिजनोंकी भौतिक भलाई करेंगे। मनुष्यका आन्तरिक धार्मिक संस्कार ही उसे एक बन्धु मानवकी भलाई करनेको प्रेरित करता है और दूसरेको क्षति पहुँचानेसे रोकता है। कोई भी मनुष्य, चाहे वह कितना ही ऊँचा क्यों न हो, और मनुष्यके बनाये कैसे भी नियम व्यक्तिके कार्यको इस तरह न्यायके मार्गपर नहीं रख सकते जिस तरह धर्मकी पुकार रखती है" (एस० एन० १८७४५)।

३. "श्री अय्यरने निम्नलिखित सूची दी थी: (१) **मद्रास लॉ जरनल** २७, पृष्ठ २५३-८ (२) **इंडियन लॉ रिपोर्टर ३१, मद्रास,** पृष्ठ २३६ (३) **इंडियन लॉ रिपोर्टर १३, मद्रास,** पृष्ठ २९३ (४) **हिन्दू एण्ड मोहम्मडन एंडोमेण्ट्स,** लेखक पी० आर० गणपति अय्यर (द्वितीय संस्करण), पृष्ठ २०३-१०।"

अनुभव करेगा। मन्दिरोंकी आवश्यकतामें पक्का विश्वास रखनेके कारण, मेरा यह मत रहा है कि सार्वजनिक मन्दिर, जबतक कि वे केवल किसी विशिष्ट सम्प्रदायके लिए ही बने न हों, सभी हिन्दुओंके लिए, और इसलिए हरिजनोंके लिए भी, खुले होने चाहिए। कर्मके सिद्धान्तको आप जिस ढंगसे लागू करते हैं यदि वह ठीक हो, तो यज्ञ शब्दका कोई अर्थ ही नहीं रहता और एक व्यक्ति द्वारा दूसरेको दी गई सहायता केवल एक दण्डनीय कार्य हो जाता है। यदि किसी अस्पृश्यकी अपनी गिरी हुई स्थितिसे ऊपर उठनेमें सहायता यह मानकर नहीं की जा सकती कि वह वैसा अपने पिछले कर्मोंके कारण ही है, तो कष्ट भोगते अन्य लोगोंकी ही सहायता क्यों की जानी चाहिए? सत्यसे संगति न रखनेवाले नियमोंको क्योंकि मैं ईश्वरीय वचन नहीं मानता हूँ, इसलिए मैं आसानीसे इस निष्कर्षपर पहुँच जाता हूँ कि हरिजन आज जिन निर्योग्यताओंसे कष्ट पा रहे हैं वे उनपर सवर्ण हिन्दुओं द्वारा थोपी गई थीं। इसलिए सवर्ण हिन्दुओंको मैं ऋणी मानता हूँ।

आप पूछते हैं कि क्या मैं जातियोंको मानता हूँ। मेरा उत्तर है "नहीं", पर मैं वर्णाश्रमको मानता हूँ — जो आधुनिक जातियोंसे बिलकुल भिन्न व्यवस्था है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० शंकरनारायण अय्यर
टिम्बर मर्चेंट
कोयम्बटूर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८०३)से।

३७७. पत्र : टी० एस० कल्याणराम अय्यरको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

१६ तारीखका आपका पत्र[1] मिला। साथी कार्यकर्ताओंसे मैंने सुना है और मुझे पता चला है कि जो लोग सचमुच मन्दिर जाते हैं उन्हींका मतसंग्रह हो, इसके लिए कायदेसे जो भी सावधानियाँ बरती जानी चाहिए थीं वे सब बरती गई हैं। इस तरह प्रश्न यही रह गया कि सचमुच मन्दिर जानेवालों और मन्दिर जानेमें

१. इसमें कहा गया था: "...इस समय जो मतसंग्रह हो रहा है वह उस तरह का नहीं है जैसा कि आप चाहते थे। सुधारक इस मामलेमें क्योंकि परिवर्तन-विरोधीकी भावनाओंको समझ नहीं सकता, इसलिए मेरी विनम्र प्रार्थना है कि आप यह कड़ा आदेश दें कि केवल उन्हींके मत लिये जायें जो सचमुच मन्दिर जाते हैं। मेरे खयालसे मत लेनेका सबसे अच्छा और आसान तरीका यह होगा कि मत मन्दिरके दरवाजोंपर लिये जायें। मत अचानक कभी भी तीन-चार दिन लिये जा सकते हैं" (एस० एन० १८७२३)। देखिए "टी० एस० कल्याणराम अय्यरको लिखे पत्रका अंश", ९-१२-१९३२ भी।

विश्वास न रखनेवालोंके बीच भेद कैसे किया जाये। श्रीयुत राजगोपालाचारीके इस कथनसे मैं सहमत हूँ कि "आस्थाकी जाँच कराना या स्वीकृति लेना" सम्भव न था। मतसंग्रह जब पूरी हो जायेगा और सारी रिपोर्ट मेरे सामने आ जायेगी, तो मैं मतसंग्रहका मूल्यांकन ज्यादा अच्छी तरह कर सकूँगा। मतसंग्रह, आखिर, खुद तो गुरुवायुर मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नका निर्णय करेगा नहीं, पर वह एक ऐसा भौतिक हेतु होगा जिससे मुझे यह निर्णय करनेमें सहायता मिलेगी कि प्रस्तावित उपवास किया जाये या स्थगित कर दिया जाये।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८०४) से।

३७८. पत्र : श्रीयुत सी० नारायण मेननको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि किसी भी पुरुष या स्त्रीको एकसे अधिक कागजपर हस्ताक्षर नहीं करने चाहिए। गुरुवायुर मतसंग्रहका मुख्य प्रयोजन मेरे अपने अन्तःकरणकी सन्तुष्टि है। मैं यह स्पष्ट जानना चाहता हूँ कि गुरुवायुरके आसपास जो लोग रहते हैं उनकी बहुसंख्या हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें है या नहीं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सी० नारायण मेनन
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८०५) से।

३७९. पत्र : नारायणराव कुलकर्णीको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। जहाँ गाँववाले इतने निर्दय हों कि सार्वजनिक कुंओं या तालावोंका उपयोग करनेवाले हरिजनोंका पूर्ण वहिष्कार करनेकी धमकी दें, वहाँ हरिजनोंके लिए आदर्श मार्ग यही होगा कि वे ऐसे गाँवको छोड़ कर चले जायें। कार्यकर्ताओंका वहिष्कार उससे आसान मामला है। सुधार कार्य करनेसे जो खतरे आएँ, उन सबका सामना करनेकी उनमें हिम्मत होनी चाहिए। यदि वे बिना प्रतिकार किये अपनी सेवा जारी रखेंगे, तो विरोध समाप्त हो जायेगा। दूसरा उपाय बेशक यही है कि गाँववालोंके विचार बदलनेतक प्रतीक्षा की जाये।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत नारायणराव कुलकर्णी
डाकखाना अष्टा (सतारा)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८०६)।

३८०. पत्र : पूर्णचन्द्र डेको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला,[2] और तार भी। आप यह क्यों सोचते हैं कि प्रवर्तक संघके तत्त्वावधानमें आयोजित सभाकी कार्रवाई मोती बाबूकी कारस्तानी थी? वे यहाँ हैं और अपने ढंगसे आन्दोलनमें अड़ंगा लगानेकी नहीं बल्कि सहायता देनेकी भरसक कोशिश कर रहे हैं। वे एक परखे हुए कार्यकर्त्ता और एक पुरानी जिम्मेदार संस्थाके प्रधान हैं। मेरे खयालसे अच्छा यह होगा कि उनका दृष्टिकोण समझा जाये।

१. दिनांक १७ दिसम्बर, १९३२ का (एस० एन० १८७३८)।
१. दिनांक २० दिसम्बर, १९३२ का (एस० एन० १८७४७)।

आप उससे सहमत हों यह आवश्यक नहीं है, पर उन्हें अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनकी प्रगतिमें बाधक मानना गलत होगा।[1]

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पूर्ण चन्द्र डे
मन्त्री, हिन्दू जन सभा, चंदरनगर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८०८) से।

३८१. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

२४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

कलकी भीड़के बारेमें आपने जो-कुछ महसूस किया, वह सब महादेवने मुझे बता दिया है। मैंने इस बातकी पूरी कोशिश की कि संख्या २५ के अन्दर ही रहे, आसपासके जिलोंसे जो शास्त्री आये थे उन्हें रोकना सम्भव न था। वे क्योंकि सनातनी पक्षके थे, इसलिए मुझे सावधानी बरतनी पड़ी। मैं आशा कर रहा था कि *आजका दिन बस अन्तिम होगा, पर मैं देख रहा हूँ कि मुझे अवधि बढ़ानी होगी।* वे सोमवारको आनेवाले हैं। अपने वायदेके मुताबिक उनकी संख्या २५ के अन्दर ही रखनेके लिए मैंने अपनी सारी शक्ति और अक्ल लगा दी थी। सोमवारको और उसके बाद भी मैं उसे वहीं तक रखनेकी कोशिश करूँगा। पर मैं कोई वायदा नहीं कर सकता। मैं यह बात अच्छी तरह जानता हूँ कि आपको हिदायतोंके मुताबिक काम करना होता है। परन्तु वे भारत सरकारके आदेशों से बेमेल नहीं होनी चाहिए। उन आदेशोंको जहाँतक मैंने पढ़ा है, मुलाकातियोंकी संख्या मुक्त रखी गई है, उसे नियमित मुझे करना है। अपनी योग्यतानुसार मेरी कोशिश ज्यादा-से-ज्यादा यही रही है कि संख्या और समय दोनोंमें आपकी सुविधाका ध्यान रखा जाये। परन्तु ऐसे मौके आ जाते हैं जब मेरे लिए आपकी इच्छानुसार संख्यापर नियन्त्रण रखना असम्भव हो जाता है। अतः यदि आपके लिए यह मामला उच्च अधिकारियोंके आगे रखना आवश्यक हो, तो कृपया ऐसा कीजिए और सोमवार और उसके बादकी मुलाकातोंके बारेमें हिदायतें प्राप्त कर लीजिए। २ जनवरी जैसे-जैसे निकट आती है, मुझे मालूम है, [कामका] दबाव बढ़ना है। इसलिए मैं चाहूँगा कि मेरा हाथ खासा खुला रहे और हमेशा यह महसूस करनेकी बात कि मैं एक कैदी हूँ और इसलिए इस ढंगसे काम नहीं कर सकता मानो मुझपर कोई नियन्त्रण ही न हो, मुझपर ही छोड़ दी जाये। परन्तु आपको और सरकारको मेरी यह भावना समझ लेनी चाहिए कि

१. देखिए "पत्र : मणीन्द्रनाथ मित्तरको", २३-१२-१९३२ भी।
२. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ ३५६-७ पर पाद-टिप्पणी।

प्रशासनकी सुविधाका मैं केवल वहींतक खयाल रख सकता हूँ जहाँतक कि वह उस आन्दोलनकी प्रगतिमें बाधक न हो जिसके लिए मुझे असाधारण सुविधाएँ दी गई हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(४), भाग–२, पृष्ठ ११५ से। जी० एन० ३८७५ भी।

३८२. पत्र : नारणदास गांधीको

२४ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक मिल गई है। नारायण अप्पाके बारेमें समझ गया हूँ। भाई मावलंकरका पत्र मिलनेसे पहले छारा लोगोंके विषयमें यहाँसे जो-कुछ करना चाहता हूँ, वह नहीं कर सकता।[1]

रामदासके किन विचारोंके बारेमें सुरेन्द्रने लिखा है, यह समझमें नहीं आता।

तारा और वसुमती थानामें हैं, इससे अनुमान लगाता हूँ कि महालक्ष्मी भी वहीं होगी। गंगाबहनका कुछ समाचार मिलता है क्या?

प्रेमा विस्तर छोड़कर घूमने लगी है, इस सम्बन्धमें मुझे थोड़ा भय है। उसकी खुराकके बारेमें नहीं। किन्तु यदि वह बोलनेपर अंकुश नहीं लगायेगी तो अवश्य नुकसान होगा। उसके पत्रोंपर अंकुश कैसे लगाऊँ, यह समझमें नहीं आता। एक उपाय तो यह है कि उसके आवेशमें लिखे पत्र तुम भेजने बन्द कर दो। इस बारके लम्बे पत्रमें छगनलालकी कटुता-भरी आलोचनाके अतिरिक्त कुछ नहीं है।[2] इस तरहके पत्र मैं छगनलालसे कभी छिपाऊँगा नहीं। इसलिए पूरा उसे सुना दिया। पत्रका उसपर कुछ असर नहीं हुआ, क्योंकि प्रेमाने जो-जो आरोप लगाये हैं उनका उसे कुछ ज्ञान नहीं। इसलिए सिर्फ सहन कर लेनेके अतिरिक्त उसके पास और कोई जवाब भी नहीं है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२८७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", [४]/५-१२-१९३२ और "पत्र : ग० वा० मावलंकरको", १५-१२-१९३२।

२. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको", २५-१२-१९३२।

३८३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय सतीशबाबू,

तुम्हारा पत्र मिला जिसकी मुझे अबतक बराबर प्रतीक्षा थी। आशा है तुमने किर्लोस्कर चक्रकी अपनी जाँचका परिणाम शंकरलालको भिजवा दिया होगा। डॉ० विधान और मेरे बीच जो बातचीत हुई वह मैं तुम्हें पहले ही बता चुका हूँ।[1] मैंने देखा कि, आशाके विपरीत, उन्हें वह चीज, जिसे वह मेरा हस्तक्षेप मानते हैं, बुरी लगी। इसलिए मैंने बिना झिझक अपना पत्र वापस ले लिया और क्षमा माँग ली।[2] मैं केवल यही कर सकता था। यदि मेरी यह धारणा न होती कि जो-कुछ मैं कहूँगा उसका मैत्रीपूर्ण सुझाव मानकर स्वागत किया जायेगा, तो मुझे हस्तक्षेप करनेकी कोई जरूरत ही नहीं थी। इसलिए जब वैसा नहीं हुआ तो मुझे क्षमा माँगनी पड़ी और पत्र वापस लेना पड़ा। अब तुम जैसा तुम्हारी अन्तरात्मा कहे वैसा करो। इस तरहके नाजुक मामलेमें इतनी दूरसे मुझे तुम्हारा मार्गदर्शन नहीं करना चाहिए।

तुम्हारे चरम त्यागपर भी मुझे आपत्ति नहीं है, पर वह पूरी तरह आत्मसात होना चाहिए और आत्मसात होनेकी कसौटी यह है कि उससे तुम्हें सदा आनन्द मिलेगा, तुम्हारे चेहरेपर, और इसलिए तुम्हारे मनपर भी चिन्ताका चिह्नतक न होगा। इसके अलावा हेमप्रभाको तन-मनसे तुम्हारे साथ जाना चाहिए। और इस तरहके जीवनका परिणाम रोगसे मुक्ति होना चाहिए। रोग तुम दोनोंके लिए मिथ्या आहारका परिणाम तो हो नहीं सकता। वह केवल यदि चेतन नहीं तो अचेतन चिन्ताका ही परिणाम होना चाहिए। मानसिक चिन्ता और परेशानी मनुष्यके रोगके लिए उतनी ही जिम्मेदार होती है जितनी कि दूषित वायु, दूषित जल और दूषित आहार। परन्तु यह देखा गया है कि स्वाभाविक आनन्दपूर्ण त्याग वायु, जल और आहारकी अनिवार्य सीमाओंतक पर काबू पा लेता है। भगवानके भक्त घोर दरिद्रतामें, सांघातिक वायुवाले दलदलोंमें गन्दे जल और रद्दी खुराकसे जीवन-निर्वाह करते देखे गये हैं, और वे फिर भी दीर्घ कालतक स्वस्थ रहे हैं और अपना काम करते रहे हैं। मुहम्मदके बारेमें यह कहा जाता है कि उनके एक शिष्यने उनसे जब पूछा कि आप खुद तो लम्बे-लम्बे उपवास रखते हैं फिर अपने अनुयायियोंको नियमित उपवासोंसे अधिक करनेसे क्यों रोकते हैं, तो उन्होंने कहा था कि वे जब उपवास करते होते हैं तो खुदा उन्हें खिलाता है, इसलिए उन्हें तकलीफ भी महसूस नहीं होती, लेकिन

१. देखिए "पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको", १८-१२-१९३२।

२. देखिए "पत्र : विधान चन्द्र रायको", १५-१२-१९३२।

अनुयायिओंके साथ तो यह बात नहीं है। इस अनुश्रुतिका चाहे कोई ऐतिहासिक आधार हो या न हो, पर जो-कुछ कहा गया है वह एक अटल सत्य है, जिसकी सचाईकी जाँच—यदि निर्धारित शर्तें पूरी होती हो तो—कोई भी कर सकता है। इस तरहके चरम त्यागकी क्षमता मुझमें नहीं है और अपने स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए मैं अभी भी शुद्ध वायु, शुद्ध जल और उपयुक्त आहारपर निर्भर हूँ। इसलिए तुम्हें सलाह देनेके योग्य नहीं हूँ। मैं तुम्हें केवल इस चीजसे सावधान कर सकता हूँ कि जल्दबाजीमें अँधेरेमें छलाँग मत लगाना। मैं यह मान लेता हूँ कि यदि समयपर और बिना दर-दर माँगे हुए आर्थिक सहायता मिले तो तुम उसे अस्वीकार नहीं करोगे। क्या अच्छा नहीं होगा कि जो-कुछ तुम्हारे लिए किया गया वही हेमप्रभाके लिए भी किया जाये और वह पूना आ जाये, और यदि आवश्यक हो और जलवायु उसके स्वास्थ्यके अनुकूल रहे तो पूरे एक महीनेतक आराम करे। मुझे डर है कि कहीं उसे बेरी-बेरी रोग न हो जाये। यह सोचकर कि तुम वहाँ हो उसे मुझे पत्र लिखना बन्द नहीं करना चाहिए।

सस्नेह,

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२०) से।

३८४. पत्र : श्रीयुत पी० पी० शेनाइको[1]

२५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

मेरा उपवास शुद्धीकरण और प्रायश्चित्तकी प्रक्रिया है। अन्य सब-कुछ उसी मूल तथ्यसे उद्भूत है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पी० पी० शेनाइ
२०, अण्डियप्पा ग्रामनी स्ट्रीट, रायपुरम्, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८१३) से।

१. यह उनके २२ दिसम्बरके पत्रके उत्तरमें था जिसमें गांधीजी से यह प्रार्थना की गई थी कि वे अपने उपवासको "समस्याको सुलझानेके एक साधन" के रूपमें रखें।

३८५. पत्र : के० एल० साहूको

२५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। फूलोंके उपहारके लिए कृपया हरिजनोंको मेरा धन्यवाद दें। उपहार जिस प्रेमका प्रतीक मात्र है उसकी मैं हृदयसे सराहना करता हूँ। मेरा उनसे यह निवेदन है कि इस उपहारके बाद वे अपने जीवनमें आवश्यक परिवर्तन लाएँ जो बदली हुई परिस्थितियोंमें अत्यावश्यक हैं। वे यह न सोचें कि अभीतक चली आ रही परिस्थितियोंमें जब वे अपनी आँखों परिवर्तन देख लेंगे तभी वे भी परिवर्तन करेंगे।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० एल० साहू
भण्डारा (सी० पी०)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८१४)से।

३८६. पत्र : टी० एस० कल्याणराम अय्यरको

२५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके लम्बे पत्रके लिए धन्यवाद। आप अपना पत्र और यह उत्तर छापनेको स्वतन्त्र हैं।

पहली बात यह कि मुझे लगता है कि आपने प्रस्तावित विधेयकको ठीकसे समझा नहीं है। वह अल्पसंख्याके विचारोंको बहुसंख्यापर थोपनेकी कोशिश नहीं है, बल्कि वह उस स्थितिको बहाल करनेकी कोशिश है जो अदालतोंके फैसलों द्वारा एक प्रथाको स्थायी कानूनका रूप दिये जानेसे पहले मौजूद थी। जब कोई विशेष प्रथा, किसी अदालतके फैसलों या कानून द्वारा किसी भी अवस्थामें स्थायी बने बिना, प्रचलित रहती है तो वह प्रवाहहीन हो जाती है और उसमें क्रमिक और अलक्ष्य परिवर्तन नहीं होता जो हर स्वस्थ प्रथामें समयके साथ-साथ और उस विशेष प्रथा द्वारा शासित लोगोंकी माँगके दबावसे होता रहता है। प्रस्तावित विधेयक अदालतके बनाये कानूनमें इस प्रकारका परिवर्तन करेगा कि सम्बन्धित लोग, बहुमत द्वारा, उस

१. दिनांक २० दिसम्बर, १९३२ का (एस० एन० १८७४६)।

समय प्रचलित प्रथामें परिवर्तन कर सकेंगे। हिन्दू-धर्ममें ऐसे उदाहरणोंकी कमी नहीं है जो यह सिद्ध करते हैं कि सर्वमान्य शास्त्रोंकी व्याख्याओंतक का विकास होता रहा है, यहाँतक कि कई बार तो मूल अर्थका चलन बिल्कुल बन्द ही हो गया है। आपने अपने पत्रमें जो आशंकाएँ व्यक्त की हैं वे उपरोक्त कारणोंसे मेरी रायमें निराधार हैं।

आप यह स्वीकार करेंगे कि आगमोंकी परस्पर-विरोधी व्याख्याएँ करनेवाले सम्प्रदाय हैं और ऐसे भी शास्त्री हैं जो-कुछ आगमोंकी प्रामाणिकतापर सन्देह करते हैं। हिन्दू-धर्म यदि ह्रासकी स्थितिमें न होता, तो वैदिक साहित्यके विद्वान यह देखते हुए भी निष्क्रिय न रहते कि घोर अन्धविश्वास एक ऐसे धर्मको गन्दा कर रहा है जो कभी शुद्ध था और गन्दगियोंको बाहर फेंकते रहने और युगकी पुकारका उत्तर देनेकी सहज क्षमता रखता था। मैं आपको केवल यही आश्वासन दे सकता हूँ कि हिन्दू जन-साधारणकी भावनाको आघात पहुँचाने या उन शास्त्रोंकी उपेक्षा करनेकी जिन पर कि हिन्दू-धर्म आधारित है, मेरी कतई इच्छा नहीं है। परन्तु विभिन्न व्याख्याओंमें से अपनी बुद्धिके अनुसार किसीको भी चुननेका या कुछ बिरले अवसरोंपर, जहाँ मुझे अपनेमें ऐसी क्षमता लगे, पूरी विनम्रताके साथ नई व्याख्यातक करनेका अपना अधिकार मैंने सुरक्षित रखा है। यह आचरण हिन्दू-धर्मकी भावनाके सर्वथा अनुरूप है। हम बहुत तरहकी व्याख्याओंको हिन्दुओंकी बड़ी संख्यासे, जो शास्त्रोंसे सदा अनभिज्ञ नहीं होती है, मनवा नहीं सकेंगे।

आप कहते हैं कि प्रतिमा जब अपवित्र हो जाती है तो उसे पुनः पवित्र करनेके लिए प्रामाणिक शुद्धि-संस्कार आवश्यक होता है[1]। प्रतिमाको किसी अस्पृश्य या अन्य ऐसे लोगोंके गुप्त प्रवेशसे जिनका किसी विशेष मन्दिरमें प्रवेश निषिद्ध है, अपवित्र होनेसे बचानेकी कोई विधि नहीं है, और कोई ऐसी अचूक विधि भी नहीं है जिससे अनधिकार प्रवेश करनेवालोंका, प्रतिमा जहाँसे अपवित्र हो जाती है उस स्थानतक जानेसे पहले ही पता लगाया जा सके। इससे क्या यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि प्रतिमाकी प्रभावकारी शक्तिको कायम रखनेके लिए शुद्धि-संस्कार नित्य होना चाहिए?

और आप उन तथाकथित अस्पृश्योंसे उसे कैसे बचायेंगे जो इस तरहके अपने वर्गीकरणको अस्वीकार करते हैं और इस बातपर जोर दे रहे हैं कि अगली जनगणनामें उनका वर्गीकरण सवर्ण हिन्दुओंमें किया जाये। हजारों-लाखों हिन्दुओंकी जन्म-सम्बन्धी स्थिति निश्चित करनेके लिए क्या आप अदालती जाँचकी बात सोचते हैं? यदि आगम या कहना चाहिए आगमोंके संरक्षक, अपने दायित्वके प्रति जरा भी सचेत हैं तो वे युगकी भावनाको समझेंगे और उन्हीं शास्त्रोंसे उसके अनुरूप अर्थ निकालेंगे।

अंग्रेजीकी प्रति (एस० एन० १८८१५) से।

१. देखिए पृष्ठ २८६ पर पाद-टिप्पणी २ भी।

३८७. एक पत्र

२५ दिसम्बर, १९३२

तू 'गीता'का मनन करनेवाला है। तू देखेगा कि शुद्ध चित्तवालेको सदा ही प्रसन्न रहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३७१

३८८. एक पत्र[1]

२५ दिसम्बर, १९३२

जो दोष हो चुके हैं उनसे शिक्षा लेना। . . .[2] के साथ एकान्त सेवन नहीं होना चाहिए। सूक्ष्म नियमोंका भी सख्तीसे पालन करना। इन्द्रासन मिलता हो, तो भी झूठ न बोलना। अनशन कर मरना मंजूर करना, मगर स्त्री-संग मत करना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३७०

३८९. एक पत्र

२५ दिसम्बर, १९३२

तू चिन्ता छोड़ सके तो मैं तुरन्त छोड़ दूँ। यह तू जानती है न कि इस वक्त तेरी 'गीता'की परीक्षा हो रही है? तुझे अर्थ-सहित उच्चारण आ जाये और तू उसे कंठस्थ कर ले, तो भी इससे तू सचमुच पास हो गई ऐसा मैं नहीं मानूंगा। 'गीता' पर अमल करेगी, उसके अनुसार अंक मिलेंगे। चरखा शास्त्रको जो मुँहसे चटपट बोल जाये, वह उसका सच्चा जाननेवाला नहीं, मगर उसपर अमल करनेवाला यानी पींजने और कातनेवाला ही असली जानकार है। यही बात 'गीता'की भी है। सब रोगोंकी यह एक सही दवा है। यह दवा तू बराबर काममें ले, तो मुझे तेरे बारेमें बहुत चिन्ता न रहे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३७१

१. पत्र-लेखक ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते थे।

२. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया है।

३९०. पत्र : भाऊ पानसेको

२५ दिसम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि वहाँ तबीयत ठीक नहीं रहती तो तुरन्त राजकोट जाकर वहाँकी जलवायु आजमाकर देखो। वहाँ दूध मिलेगा। 'स्वधर्म' का अर्थ है, इस समय तो तकली-प्रचार कार्य तथा अध्ययन तुम्हें करना है। वहाँ यदि सहज ही गो-सेवा आदि कुछ कार्य मिले तो उसे कर सकते हो। अभी तुम्हारा अपने खाद्याखाद्य-सम्बन्धी विचारोंपर अमल करनेका समय नहीं है। फिलहाल तुम्हारे पास ऐसा करनेकी योग्यता भी नहीं है, और संस्थासे सम्बन्धित होनेके कारण तुम्हें यह ध्यान रखकर कि संस्था धर्म-विरुद्ध कुछ नहीं करती, अपना काम करते रहना चाहिए। बात समझमें न आई हो तो मुझे लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७४७) से। सी० डब्ल्यू० ४४९० से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे।

३९१. पत्र : गंगाबहन बी० झवेरीको

२५ दिसम्बर, १९३२

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे पत्र लिखना बन्द न करना। तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर रहा है, यह शुभ समाचार है।

नवीन, महेशके वहाँ पहुँच जानेके बारेमें नानीबहनने लिखा था।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५१) से।

३९२ पत्र : जमनाबहन गांधीको

२५ दिसम्बर, १९३२

चि० जमना,

पुरुषोत्तमके लिए कोई इलाज सोचता रहता हूँ। मुझे अलग-अलग स्थानोंको आजमानेके अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता। अलमोड़ा तकका विचार किया है। हजीरा सूरतके पास ही है। वह प्रसिद्ध स्थान है। मेरी समझमें वहीं जमकर रहने और अपने स्वास्थ्यको सुधारनेकी जरूरत तो है ही। फिर लोनावला है और वह उसके ध्यानमें भी है। इस बातपर विचार कर लो।

तुम्हारा क्या हाल है?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६७) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३९३. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

२५ दिसम्बर, १९३२

चि० पंडितजी,

खुराक सम्बन्धी प्रयोगके विषयमें मुझे अवश्य लिखना।[1]

छारा लोगोंके बारेमें भाई मावलंकरका पत्र आया है। फिलहाल यहाँसे मुझे कुछ करनेकी जरूरत नहीं दिखाई देती।

सफाईका वर्णन मुझे अच्छा लगा है। भजनावलीकी बात मनमें बैठी हुई तो है, पर विवश हो गया हूँ।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २३९) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको" ३०-११/१-१२-३२।

३९४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२५ दिसम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

तू मिलने आने ही वाली है, इसलिए इस बार पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। तूने शुक्रवारसे पहले जवाब माँगा, लेकिन तेरे लगाये हुए प्रतिबन्धके कारण तेरा पत्र मैं तुरन्त पढ़ ही नहीं सका। छगनलाल उसे पढ़ नहीं सकता था, इसलिए घूमते समय उसे सुनना सम्भव नहीं था। बादमें मैं काममें लग जाता था। तूने खुद ही असुविधा मोल ली है और मुझे असुविधामें डाला है। छगनलालके बारेमें लिखा तेरा पुराण उसे पढ़ाया है।[1] उसे तो तू छिपाना नहीं चाहती न? मैं तो हरगिज नहीं छिपा सकता। लेकिन उसमें कितना जहर है! छगनलालको इन दोषोंका ज्ञान ही नहीं है। तेरे लगाये हुए दोष अगर उसमें होते, तो वह कभी आश्रममें रह ही नहीं सकता था। और सुरेन्द्र?[2] उसके-जैसा स्वच्छ मनुष्य आश्रममें शायद ही कोई होगा। साधुभावसे कही हुई बातको तू आजतक संग्रह करके रख सकी! ऐसे जहरकी तेरे भीतर मैंने कभी कल्पना नहीं की थी। अपने हृदयके उद्‌गार तू लिखे यह मुझे प्रिय है। लेकिन ऐसे विचार तू किसीके बारेमें भी अपने मनमें संग्रह करके रख सकती है, यह मेरे लिए अत्यन्त दुःखदायी है। तेरा धर्म इस महादोषके लिए भगवानसे क्षमा माँगकर शुद्ध होना है। तू शुद्ध होना और मेरा दुःख दूर करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१७)से। सी० डब्ल्यू० ६७५६ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", २४-१२-१९३२।

२. एक आश्रमवासी, जो अपने कठोर ब्रह्मचर्य-पालनके कारण प्रख्यात थे।

३९५. पत्र : शान्ता शं० पटेलको

२५ दिसम्बर, १९३२

चि० शान्ता,

तेरा पत्र मिला। तुझे जो मार्ग श्रेयस्कर लगे उसीको अपना ले।

मुझे जो पसन्द नहीं आया वह है :

१. तेरा घूमना-फिरना,

२. अपनी जिम्मेदारीका भान न होना,

३. मंगला[1] और पुष्पा[2]को रास्ता दिखाना तेरा धर्म था। तूने उसका पालन नहीं किया।

४. तेरा अनिश्चय।

शायद इन सबके लिए तेरे पास कोई कारण होगा। यदि है तो मुझे पहलेसे नहीं बताया, यह मेरे असन्तोषका पाँचवाँ कारण है। मेरा असन्तोष दूर करना।

मंगला, पुष्पाको आश्रम क्यों नहीं अच्छा लगा? क्या आश्रम-त्यागके साथ इन लड़कियोंने मुझे भी त्याग दिया है?

क्या कमला सुखी है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६९) से। सी० डब्ल्यू० २० से भी; सौजन्य : शान्ताबहन पटेल

३९६. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ दिसम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

आज थोड़ेमें ही निबटाता हूँ।

राधा तथा प्रेमाको लिखे पत्र पढ़ लेना। गीताका जो अर्थ बताया है वह सबको समझाना।

मुझे लगता है कि यदि अमतुस्सलाम अपने स्वास्थ्यके कारण बाहर जाना चाहे तो उसे जाने दो। उसका हृदय बहुत निर्मल है। बाहर जाकर अगर स्वास्थ्य कुछ सुधर जाये तो बहुत अच्छा है। उसके हिस्सेका पैसा मिल सके और वह चाहे तो

१ और २. शान्ता पटेलकी बहनें।

लेनेका प्रयत्न करे। हो सकता है मेरी यह राय अधूरे तथ्योंपर आधारित हो। सही राय तो तुम्हारी ही है।

छारा लोगोंके बारेमें भाई मावलंकरका पत्र आया है। अभी तो मैं यहाँसे कुछ नहीं करूँगा। तुम्हें भी नहीं करना है। हमें स्वयं कुछ उपाय करना हो तो कर सकते हैं।

तुम्हारा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो गया होगा। पुरुषोत्तमके[1] सम्बन्धमें जमनाके पत्रमें जो लिखा है, उसपर विचार करना।

बापू

[पुनश्च :]

सब मिलाकर २९ पत्र हैं और साथ नत्थी कर दिये हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२८८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३९७. पत्र : नरदेव शास्त्रीको

२५ दिसम्बर, १९३२

मेरा बंदी बना रहना और हरिजनोंका काम करना, इसीमें सब शंकाओंका समाधान हो जाता है। अधिक लिखना मर्यादाके बाहर होगा। कोई कांग्रेसका आदमी इस काममें जुत जानेके लिए बाध्य नहीं है। कोई इस कार्यके लिए स्वधर्म न छोड़े।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३७०

३९८. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

२५ दिसम्बर, १९३२

भाई मूलचंदजी,

एक वर्तुल बना लो। और किसीको पूछो उसका आदि कहां अंत कहां। यदि वर्तुल सहि बना होगा कोई बता नहि सकेगा। यदि मनुष्य कृतिके लिये यह सहि है तो ईश्वर कृतिका क्या कहा जाय? मैं तो तुमारे प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिये असमर्थ हुं, क्योंकि कोई उत्तर संपूर्ण नहि होगा। ऐसे प्रश्नको छोड़ो।

बापू

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३२) से।

१. देखिए पृष्ठ २९८।

३९९. पत्र : अमतुस्सलामको

२५ दिसम्बर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला। बवासीरकी बात पढ़कर रंज हुआ। बाजरेकी रोटी ऐसी हालतमें न खाना। डबल-रोटी मक्खनके साथ खाओ; दूध और फल खाओ। डाक्टरको बताना भी अच्छा हो सकता है। नारणदास कहें सो किया जाये। अगर सेहतके लिए बाहर जाना मुनासिब समझा जाये तो जाना ठीक लगता है। लेकिन इस बातमें भी नारणदास कहें वही करो। जर्मन बहन मुझे मिल गई। उसने सब बात सुनाई। कुदसिया कुछ ठीक चल रही लगती है।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६८) से।

४००. पत्र : रैहाना तैयबजीको

२५ दिसम्बर, १९३२

प्यारी बेटी रैहाना,

तू आई और चली गई। तुझसे बात करनेका मौका तक न मिला। हाँ, तेरे और पद्मजाके 'किस' मिल गये। और किसीने देखा ही नहीं। लेकिन मैं तो दुनियासे कह दूंगा कि दो लड़कियोंने मुझे डाकसे फिर 'किस' भेज दिये। आज कागजात देखता था। तेरे दो भजन देखे। कैसा अच्छा होता अगर उन्हें मैं तेरे मुँहसे सुन पाता। क्या करूँ वक्त ही नहीं रहता। अब्बाजान और अम्माजानको हम सबकी तरफसे आदाब। हमीदासे कहो और कापर प्लेट भेजे।

बापूकी दुआ

[पुनश्चः]

तूने पूनाकी हवाका पूरा लाभ उठाया नहीं लगता। वहाँसे बहुत जल्दी भाग गयी।[1]

बापूके आशीर्वाद

बाबी रैहाना
मार्फत अब्बास साहेब तैयबजी
कैम्प बड़ौदा

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६३) से।

१. यह अंश गुजरातीमें है।

४०१. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

२६ दिसम्बर, १९३२

भाईश्री मावलंकर,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो कदम उठाया है उसमें मुझे कोई भूल नहीं दिखाई देती। भूलका सवाल ही नहीं था। मुझे डर था कि मैंने अपनी बात संक्षेपमें कही है, इससे कहीं गलतफहमी न हुई हो। बाकी तुम्हारी सलाह लेनेका सुझाव मैंने ही दिया था। बीमारके पास वैद्यकी भूल निकालनेका कोई उपाय नहीं होता, ऐसा करनेका उसे अधिकार भी नहीं होता। 'समरथको नहिं दोष गुसाईं' वाक्य हमेशा सत्य है। तुम्हारा लिखा हुआ पत्र तो मैंने नहीं पढ़ा। अब जरूरत भी नहीं है। मैंने यहींसे कुछ उचित कार्यवाही करनेका विचार किया था, अब बदल दिया है। तुम्हारे पत्रका प्रभाव देखूंगा।

तुम बहुत काम कर रहे हो, यह हम सब अच्छी तरह जानते हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२३३) से।

४०२. पत्र : क० मा० मुंशीको

२६ दिसम्बर, १९३२

भाई मुंशी,

तुम्हारे अन्तिम पत्रका जवाब फौरन देना जरूरी नहीं था। इस बीच आनन्दशंकरभाईने तुम्हारे समाचार दिये। उन्होंने तुम्हारी बीमारीका, जितना मैंने सोचा था उससे भी ज्यादा बुरा वर्णन किया है। इससे मुझे नीम हकीमको कुछ सुझाव देनेकी इच्छा हुई। मदन प्राकृतिक उपचार करता है। डा० गिल्डरसे अनुमति प्राप्त करके और सोच-समझकर वह उपचार अपनाओ तो शायद लाभ हो जाये।

जीजीमाँ तो बच गई लगती हैं। उन्हें मेरी बधाइयाँ। कामना है वे पूरे सौ साल सलामत रहें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५२३) से; सौजन्य : कन्हैयालाल मा० मुंशी।

४०३. पत्र : रुक्मिणीदेवी और बनारसीलाल बजाजको

२६ दिसम्बर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरे पत्र नियमपूर्वक आते जरूर हैं, परन्तु उनमें तुझे रंग भरना पड़ेगा। सूखा-सा पत्र भेज देगी तो काम नहीं चलेगा। रंग कैसे भरे यह तो तुझे सीखनेकी जरूरत ही नहीं है।

चि० बनारसी,

तुम हमेशा रुक्मिणीके पत्रमें थोड़ा-सा लिख देते हो; यह मुझे अच्छा लगता है। जमनालालजी को देने लायक कुछ खबर हो तो मुझे लिखना। क्या व्यापारमें काफी पैसे बन जाते हैं?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४५०) से; सौजन्य: बनारसीलाल बजाज।

४०४. सन्देश : हरिकीर्तन महासम्मेलन, मेरठको[1]

[२७ दिसम्बर, १९३२ से पूर्व][2]

आशा है कि आपके इस सम्मेलनके अवसरपर हरिजन आपके साथ भजन-कीर्तनमें भाग लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २९-१२-१९३२

१ और २. यह स्वागत समितिको भेजे गये पत्रमें था, तथा "मेरठ, २७ दिसम्बर" तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

४०५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२७ दिसम्बर, १९३२[1]

प्रिय घनश्यामदास,

तुम्हारा पत्र मिला।[2] अपने व्यक्तित्वकी चकाचौंध तुम्हारे-जैसे मित्रोंकी अपेक्षा खुद मुझे अधिक परेशान करनेवाली है, क्योंकि मैं चाहता हूँ कि हम समान भावसे मिलजुल कर काम और विचार-विनिमय कर सकें। मुझे यह बिलकुल अच्छा नहीं लगता कि मैं कोई बात कहूँ तो उसके लिए मुझे वैसी ही बात कहनेवाले किसी अन्य व्यक्तिकी अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया जाये। इस भूमिकाके बाद मेरा कहना यह है कि व्याधिका जो निदान तुमने किया है मैं उससे बिलकुल सहमत नहीं हूँ। यदि मैं वैसा ही पत्र,[3] फर्ज करो, तुम्हें लिखता तो तुम, मेरा खयाल है, बुरा न मानते। दूसरे शब्दोंमें, मैं तुम्हारे ऊपर अपने प्रभावका गलत अन्दाजा नहीं लगाता। जब मैं जानता था कि सतीश बाबू और सुरेश बाबूके लिए डॉ॰ रायको सहयोग प्रदान करना असम्भव है, तो मैं उनके लिए वह सहयोग उनसे कैसे प्राप्त कर सकता था? हाँ, यदि मैं उन्हें यन्त्रवत् सहयोग करनेको बाध्य करता तो बात दूसरी थी। पर मैं वैसे सहयोगकी बात तो सुरेश बाबू और सतीश बाबूतक के बीचमें नहीं सोच सकता। आश्रममें मेरा प्रभाव सबपर एक-समान समझा जाता है। पर वहाँ भी भिन्न-भिन्न प्रकृतियोंके व्यक्ति रहते हैं जिनके बीच सहयोगकी मैं बाततक नहीं सोच सकता, उसे थोपना तो दर-किनार रहा। मैंने सोचा था कि सुरेश बाबू और सतीश बाबू परिश्रमी आदमी हैं इसलिए यह काम उनके हाथों अधिक अच्छी तरह होगा, और मेरी धारणा थी कि डॉ॰ रायको भी मेरा सुझाव रुचेगा। यदि किसीके कन्धोंसे भार उठाकर किसी औरके कन्धोंपर रखा जाये जो उसे वहन करनेमें अधिक समर्थ समझा जाता हो, तो इसमें बुरा माननेकी क्या बात है? जैसा कि अब पता चला, मेरी यह धारणा गलत थी कि डॉ॰ विधान मेरे पत्रके गलत मानी नहीं लगायेंगे, उसे सद्भावनामें लेंगे, उसकी मूल कल्पनाका खण्डन करना चाहेंगे तो करेंगे, पर बुरा कभी न मानेंगे। और तुम यह कैसे कहते हो कि मैंने डॉ॰ रायको दूसरे पत्रमें डाँटा है? मेरा खयाल है कि मैंने वस्तुस्थिति ठीक तरह सामने रख दी है। पर

१. **इन द शैडो ऑफ महात्मा**के अनुसार, यह पत्र २९ दिसम्बर, १९३२ का है, पर यह बात गलत लगती है क्योंकि श्री बिड़ला २ जनवरी, १९३३ के अपने उत्तरमें कहते हैं: "आपका २७ और २८ तारीखका पत्र मिला", २८ तारीखके पत्रके लिए देखिए पृष्ठ ३०९।

२. २१ दिसम्बर, १९३२ का; देखिए परिशिष्ट १३।

३. यहाँ आशय गांधीजी द्वारा विधान चन्द्र रायको लिखे गये पत्रसे है, देखिए पृष्ठ १४८-९।

यदि तुम उसे ठीक तरह नहीं समझे हो तो अपना संशय और दूर कर सकते हो। मैं चाहता हूँ कि तुम पहले पत्रकी नीयतको समझो। मैं तुम्हारे लिए किसी ऐसे सेक्रेटरीकी तलाश करूँगा जो कामकी खातिर काम करे।

जबतक अंग्रेजी संस्करणकी सज्जा ठीक न हो, उसमें पढ़ने लायक अंग्रेजी न हो और उसमें दिये जानेवाले सभी अनुवाद सही न हों, तबतक मैं उसे निकालनेकी सलाह नहीं दूँगा। असावधानीसे सम्पादित अंग्रेजी साप्ताहिककी अपेक्षा हिन्दी संस्करणसे ही सन्तोष कर लेना ठीक होगा।

मैं जानता हूँ कि पक्षपातका कोई प्रश्न नहीं है, पर यह बात भी ध्यानमें रखनी चाहिए कि हम जो-कुछ करते हैं उसके सम्बन्धमें डॉ० अम्बेडकरके दलवालोंकी क्या धारणा है।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८८२५) से। इन द शैडो ऑफ महात्मा, पृष्ठ ८५-६ से भी।

४०६. पत्र : एल० एन० भार्गवको

२७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। टोकरियोंके[2] मामलेकी मैं अपने किसी वक्तव्यमें चर्चा करूँगा।

मन्दिरोंका जहाँतक सवाल है, यद्यपि वे गोसाइयोंके हाथमें हैं, परन्तु यदि वस्तुतः मन्दिर जानेवाले लोगोंकी राय मन्दिरोंमें हरिजन-प्रवेशके पक्षमें हो, तो वे उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। आपको गोसाइयोंसे मिलने और इस बारेमें उनसे विचार-विमर्श करनेकी भी कोशिश करनी चाहिए। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि उनके प्रति हमारा रुख विनम्र और सहानुभूतिपूर्ण होना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एल० एन० भार्गव
प्रधान, हरिजन सेवक संघ, मथुरा

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८२८) से।

१. २१ दिसम्बर, १९३२ का (एस० एन० १८७७६)।
२. मैला साफ करनेके काम आनेवाली।

४०७. पत्र : श्यामलालको

२७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय श्यामलाल,

'दलित सेवक' के लिए लिखा गया अंग्रेजी लेख मैंने कुछ दिन पहले श्रीयुत विड़लाको भेजा था। अवतक वह आपको जरूर मिल गया होगा। इस वातका ध्यान रखें कि अंग्रेजी संस्करणमें व्याकरण या हिज्जेकी कोई गलती न हो। हिन्दी लेखका अनुवाद करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। किसी लेखका यदि अनुवाद आवश्यक हुआ तो मैं हिन्दीमें लिख सकता हूँ। मैं उसे यहाँसे भेजनेकी व्यवस्था करूँगा या आपको वह वहाँ करा लेनेके लिए कहूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८२१) से।

४०८. पत्र : एम० आर० रामस्वामीको

२७ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

पत्र मिला, उसके लिए धन्यवाद। आपके पत्रकी विषय-वस्तुपर मैं निश्चय ही सार्वजनिक रूपसे विचार करूँगा।[1] पर उसमें कुछ देर हो सकती है। इसलिए मैं आपको यह आश्वासन दे सकता हूँ कि जिनकी मन्दिरकी पूजामें आस्था नहीं है उन्हें मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनमें शामिल होनेका अधिकार नहीं है और यदि मन्दिरकी पूजामें विश्वास न रखनेवाला कोई व्यक्ति, केवल मन्दिरोंके प्रति श्रद्धा खत्म करनेके लिए, इस आन्दोलनमें शामिल होता है तो मुझे निश्चय ही वहुत दुःख होगा। और यदि सुधारक सनातनियोंको गाली-गलौज देते पाये जाते हैं, तो भी मुझे वहुत दुःख होगा। मैं चाहूँगा कि आप मुझे विशिष्ट उदाहरण दें। उस हालतमें मैं गाली-गलौजके मामलोंसे ज्यादा कारगर ढँगसे निपट सकूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एम० आर० रामस्वामी, वी० ए०, वी० एल०
विवेकोदयम, त्रिचुर (कोचीन स्टेट)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८२४) से।

१. देखिए "वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – १३", ३०-१२-१९३२।

४०९. पत्र: सीताराम कृष्णजी नलावडेको

२७ दिसम्बर, १९३२

भाइ सीताराम,

तुम्हारा पत्र मिला है।

सात तारिखको १ वजे आना। मेरी पाससे . . .[1] लेना।

मोहनदास गांधी

[पुनश्च :]

आध घंटेसे जादा नहीं लेना।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८००) से।

४१०. पत्र: ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२७ दिसम्बर, १९३२

चि० ब्रजकिसन,

कितना मोह? इतना धैर्य तो रखो कि यदि देह पड़ गया तो धर्म रक्षाके कारण हि होगा। उसमें क्या दुःख? युं तो कुछ-न-कुछ निमित्तसे उसे पड़ना है हि। दो तारीखका उपवास रुक जायगा ऐसा आज तो लगता है। दो दिनमें ज्यादा पता चलेगा।

मंदिरके हालके वारेमें मैं कुछ अखबारमें लिखुंगा। मंदिर तो आवश्यक है। हरिजन प्रवेश प्रथम वात है भीतरी सुधारणा दूसरी।

बापू

पत्रकी फोटो-नकल (२३९७) से।

१. मूलमें कुछ अंश कट-फट गये हैं।

४११. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय घनश्यामदास,

फ्रैंड्स ऑफ इंडिया सोसाइटी, लन्दनकी मन्त्रीने मुझे लिखा है कि उन्होंने आपको पौंड ४२–०–३ का एक चैक या ड्राफ्ट भेजा है। यह रकम उपवास-सप्ताहमें प्राप्त हुई थी।[1] कृपया बताइए कि क्या यह रकम आपको मिल गई।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९११) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

४१२. पत्र : टी० एस० कल्याणराम अय्यरको

२८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपको विस्तारसे उत्तर देनेकी यद्यपि मैंने लाख कोशिश की, पर मैं देख रहा हूँ कि ऐसा करना अभी तो मेरे बसका है नहीं। इसलिए मुझे यह कहना पड़ रहा है कि आप कृपया उन वक्तव्योंकी प्रतीक्षा करें जो मैं समय-समयपर जारी करता हूँ और जिनका उद्देश्य अनेक पत्र-लेखकों द्वारा उठाये गये मुद्दोंकी चर्चा करना होता है। कृपया यह समझ लें कि आपको विस्तारसे उत्तर न दे सकनेका कारण इच्छाकी कमी नहीं, बल्कि सामर्थ्यकी कमी है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८३१) से।

१. देखिए "पत्र : श्रीमती हंटरको", ६-१-१९३३ भी।

४१३. पत्र : श्रीयुत टी० ए० वी० नाथनको

२८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

१६ तारीखके आपके पत्र और इस महान सुधार आन्दोलनमें सहायता देनेके आपके आश्वासनके लिए धन्यवाद।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत टी० ए० वी० नाथन,
सम्पादक "जस्टिस", १४ माउंट रोड, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८३३) से।

४१४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय चार्ली,

तुम्हारे कई प्रेम-पत्र मिले। इरादा रद्द करनेके अपने तारसे तुमने मुझे उनके लिए पहले ही तैयार कर दिया था और मैंने — जाहिर है — यह सोचा था कि जब तुम्हें प्रकाश मिला तब तुम लिखना समाप्त कर चुके होगे। तुम्हारी यह इच्छा तो नहीं होगी कि मैं तुम्हारे साथ किसी तरहकी बहस करूँ। मैं केवल वही बात दोहराना चाहता हूँ जो मैं पहले भी कह चुका हूँ कि तुम्हारा मेरे साथ एक होना मुझे बहुत प्रसन्नता देता है। जैसा कि मैं बहुत-से मित्रोंसे, जो मुझे जानते हैं, कहता आया हूँ, इन सब मामलोंमें मैं कर्त्ता नहीं हूँ। मैं तो केवल ईश्वरके हाथोंमें एक अप्रतिरोधी और तत्पर साधन मात्र हूँ। बेशक, यह व्यामोह भी हो सकता है। व्यामोहको कोई भी तर्क मिटा नहीं सकता। उसके लिए ईश्वरके प्रकाशकी जरूरत होती है। परन्तु अभीतक एक भी अवसर ऐसा नहीं रहा है जब मैंने ईश्वरके निर्देशका दावा किया हो और वह अन्यथा निकला हो।

तुम्हारी पुस्तकके तेजीसे एकके बाद एक संस्करण निकल रहे हैं, यह मेरे लिए कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। वुडब्रुकमें बस जानेका तुम्हारा विचार मुझे बहुत पसन्द आया।

तुम सबको हम सबका प्यार।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३०५) से।

४१५. पत्र : एक अंग्रेज महिलाको

२८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय बहन,

यदि कुछ लिखना है तो वह मुझे बोलकर ही लिखवाना होगा। तुम अपने प्रेमसे मुझे केवल भिगो ही नहीं रही हो बल्कि सराबोर कर रही हो। मुझे तुम्हारी अच्छी तरह चिह्नित पुस्तक, तुम्हारा तार और तुम्हारे पत्र पवित्र कार्डों-सहित मिले, जिनमें-से हरेकपर तुम्हारे हाथसे लिखी कोई कविता या सूक्ति थी। और हरिजनोंके लिए ६ पौंडका उपहार भी मिला। इन सबके लिए ईश्वर तुम्हें सुखी रखे।

तुम मुझसे लम्बे पत्रोंकी अपेक्षा मत करो। मैं तो तुम्हें केवल एक-दो पंक्ति ही यह बतानेके लिए भेज सकता हूँ कि तुम कभी भी मेरे मनसे जुदा नहीं होती हो।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८३४) से।

४१६. पत्र : एम० स्वामीनाथनको

२८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं चाहूँगा कि आप परिचयपत्रों-सहित अपने प्रमाणपत्र देते हुए प्रान्तीय बोर्डके मन्त्रीको स्वयं लिखें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एम० स्वामीनाथन
सम्पादक, "सुतन्दिर मुरासु", २ अजीज मुल्क लेन
कैथड्रल पोस्ट, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८८३०) से।

४१७. पत्र : मीराबहनको

प्रातः प्रार्थनाके बाद, [२९ दिसम्बर, १९३२][1]

चि० मीरा,

टिप्पणियाँ आखिर मिल गईं। तुम्हारा पत्र यथासमय मिल गया था।

किसी विपत्तिका (अर्थात्, किसी घटनाका जिसे हम विपत्ति मान लें, पर जो वस्तुतः वरदान हो सकती है) पहलेसे ही अभिनय करना और हमारी जो भावनाएँ होनेवाली हों उन्हें पहले ही दोहराना बेजा बात है।[2] इतना काफी है कि हम बुरे-से-बुरेके लिए अपनेको तैयार रखें। यह होता है ईश्वरमें दिन-प्रतिदिन श्रद्धा बढ़ानेसे — उस ईश्वरमें जो नेक, न्यायपरायण, दयालु, उदार, रोटी देनेवाला, निस्सहायोंका सहायक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सदा जागरूक और पूर्ण सत्य है।

निर्वाणका अर्थ है अहंकारका बिलकुल मिट जाना। उसका भावात्मक स्वरूप अनुभव किया जा सकता है, परन्तु उसका वर्णन नहीं हो सकता। लेकिन अनुमानसे हम जानते हैं कि इस संसारमें हमें जो भी आनन्द अनुभव हो सकता है उससे वह कहीं श्रेष्ठ है।

जरूरत हो तो डॉ० गौड़की पुस्तक तुम अभी और रख सकती हो।

नमक-रहित भोजन जारी है। उसका कोहनीपर कोई असर नहीं पड़ा। कामका भार बहुत होनेके कारण दूध घटाना पड़ा है और उससे फिलहाल वजन घटकर १०२ पौंड रह गया है। वैसे चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

२ जनवरीको उपवास नहीं होगा। कारण अखबारोंमें तुम देख ही लोगी।[3] अब और समय नहीं है।

सस्नेह,

बापू

१. "तारीख नहीं है, शायद २९-१२-१९३२ हो। डाककी मुहरपर ३०-१२-१९३२ तारीख है।" — मीराबहन। पत्रके ऊपरी सिरेपर संक्षिप्त हस्ताक्षर हैं, जो शायद बम्बईके जेल-अधिकारीके हैं, जिनपर ३१ दिसम्बर, १९३२ तारीख पड़ी है।

२. "इस पत्रकी और इसी तरह ५-१-१९३३ और १९-१-१९३३ के पत्रोंकी शिक्षा उन चीजोंमें से है जो मेरे अन्तरमें गहरी उतर गई हैं। और अब तो मेरी यह आदत हो गई है कि ज्यों ही मेरा मन अटकलबाजी और कल्पनाके घोड़े दौड़ाने लगता है, त्यों ही मैं उसे रोक देती हूँ। आनेवाली घटनाओंकी, चाहे वे अच्छी हों या बुरी, मानसिक कल्पनाओंका बन्द होना भीतरी शान्तिके लिए एक जरूरी शर्त है।" — मीराबहन

३. देखिए "भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको", २९-१२-१९३२ तथा "वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – १३", ३०-१२-१९३२।

[पुनश्च:]

दन्त-चिकित्सक हैं डॉ० डी० एम० देसाई, व्हाइटवे, लेडलॉ बिल्डिंग्स। क्या इस सिलसिलेमें मेरा कुछ करना जरूरी है?

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५१३) से; सौजन्य: मीराबहन।

४१८. पत्र : भगवानजी ए० मेहताको

२९ दिसम्बर, १९३२

भाई भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिला। भाई खीमचन्दके मामलेमें भाई मणिलालका कुछ हाथ है, इसकी खबर मुझे अभी दो-तीन दिन पहले, जब ही भाई खेमचन्दका पत्र आया तब मिली। इस सम्बन्धमें मुझे कुछ भी नहीं मालूम। यहाँ बैठे-बैठे मुझे ऐसे काममें दखल देनेका कोई अधिकार नहीं है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१५) से। सी० डब्ल्यू० ३०३८ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४१९. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२९ दिसम्बर, १९३२

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिल गया। मुझे वह बहुत पसन्द आया। जिस स्वतन्त्रता और निष्कपटतासे वह लिखा गया है यदि तुम्हारा आचरण भी उसके अनुरूप हो जाये तो मैं यह मानूँगा कि तुम्हें जो-कुछ सिखाना था, वह सब मैंने सिखा दिया है। बम्बईकी जलवायु तो माफिक आ ही गई है। बोरीवलीमें गंगाबहनके घरको अपना ही घर समझना। वहाँ जगह हो, तो रह सकती हो। जैसा तुम चाहती हो, घर समुद्र-तटपर है।

बीजापुर भी आजमा कर देखना चाहिए। स्वास्थ्य ठीक रहे तभी वहाँ रहना है न? इसलिए काशीके सिर पड़नेका सवाल ही नहीं उठता। सारा साल आश्रमसे बाहर रहनेकी आवश्यकता भी नहीं है। दस महीने आश्रमसे बाहर रहकर अपना स्वास्थ्य सुधार लो; फिर दो महीनेके लिए आश्रम आ जाओ।

यदि पत्नीका धर्म पतिके साथ रहनेका है, तो पतिका भी वही धर्म है। किन्तु जिस तरह संयोगवश अथवा कर्त्तव्यके लिए पति पत्नीका वियोग सहन करता है, उसी तरह पत्नीको भी करना चाहिए। एक बीमार हो तो उस समय दूसरा पास रहे, ऐसा

धर्म नहीं है। किस समय क्या धर्म है, यह तो अवसर देखकर ही कहा जा सकता है। इतना सच है कि दोनोंको एक-सा अधिकार होना चाहिए। मैं तो इतना भी कहूँगा कि जबतक पत्नी अपने-आपको अबला माने या अपंग रहे तबतक उसका अधिकार ज्यादा है।

अब तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक हो गया होगा। बाहर जानेके विचारपर ध्यान देना। पुरुषोत्तमके हजीरा जानेके बारेमें तो लिख ही चुका हूँ[1]।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६८) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४२०. पत्र : मंगला शं० पटेलको

२९ दिसम्बर, १९३२

चि० मंगला,

हमारे नियम पालन करनेसे किसीको बुरा लगे तो उसकी चिन्ता न करें। रोटी बेलनेका काम समाप्त हो जानेपर बेलनेवालीको रोक रखना तो ठीक नहीं कहा जायेगा। यह जानते हुए, जो तलने बैठी हो, उसे क्यों दुःख हो? किन्तु यदि बेलनेका काम जल्दी ही निबट जाता है तो उसका अर्थ यह हुआ कि बेलनेवाली ज्यादा हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८६) से। सी० डब्ल्यू० ५० से भी; सौजन्य : मंगलाबहन बी० देसाई

४२१. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

२९ दिसम्बर, १९३२

धूपमें खाटपर आधे लेटे हुए आज तीसरे पहर गांधीजी ने दो मिनट एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके संवाददातासे बातें कीं। उन्होंने कहा :

डॉ० सुब्बारायनके विधेयकके लिए वाइसरायकी अनुमतिके सिलसिलेमें जो-कुछ हुआ है और उसमें जो अनिवार्य विलम्ब हो रहा है[2] उसे ध्यानमें रखते हुए, मैंने श्री केलप्पन[3], श्री राजगोपालाचारी और श्री माधवनके साथ पूरी तरह सलाह-

१. देखिए "पत्र : जमनाबहन गांधीको", २५-१२-१९३२।

२. परिषदमें विधेयकको प्रस्तुत करनेके लिए वाइसरायकी अनुमति-सम्बन्धी निर्णय १५ जनवरीतक नहीं हो सका।

३. देखिए परिशिष्ट १८।

मशविरा करनेके बाद, अपने प्रस्तावित उपवासको अनिश्चित कालके लिए स्थगित करनेका निश्चय किया है। मैं इस सिलसिलेमें एक विस्तृत वक्तव्य तैयार करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, पर कामके जबर्दस्त दबावके कारण उसे पूरा नहीं कर सका हूँ। आशा है मैं उसे बहुत ही शीघ्र समाचारपत्रोंको दे दूँगा।[1]

इससे अधिक अभी वे कुछ कहना नहीं चाहते थे। परन्तु मजाकमें उन्होंने इतना और कहा :

सूर्यकी किरणें मुझे शक्ति दे रही हैं और ये मुझे प्यारी लगती हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-१२-१९३२

४२२. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – १३

३० दिसम्बर, १९३२

श्री च० राजगोपालाचारी, श्री के० माधवन नायर और श्री केलप्पन[2] मुझसे सलाह-मशविरा करने पूना आये हैं। उनसे मेरी खूब चर्चा हुई। उन्होंने गुरुवायुरके मतसंग्रहके परिणाम मेरे सामने रखे। मतसंग्रह पोन्नानी ताल्लुकेमें, जहाँ मन्दिर है, किया गया था।

इतनी सावधानीसे और इतनी वैज्ञानिक बारीकीके साथ मतसंग्रह पहले कभी नहीं किया गया होगा। मतदानका अधिकार रखनेवालोंमें से ७३ फीसदी मत दें, ऐसा मेरी जानकारीमें शायद ही कभी हुआ है।

सत्यकी खोजके लिए, जो मन्दिरमें सचमुच जानेवाले थे उन्हींके मत लिये गये थे। यानी जिन्हें गुरुवायुर मन्दिरमें जानेका हक नहीं और इसी तरह जो वहाँ जाना नहीं चाहते – जैसे आर्यसमाजी – उन्हें मतदाताओंकी सूचीसे अलग रखा गया था। उसकी सारी उलझनोंपर पूरा विचार किये बिना, मेरा इरादा किसी-न-किसी पद्धतिसे यह मालूम करना था कि सचमुच मन्दिर जानेवाले कौन हैं। लेकिन मुझे पता चल गया कि ऐसा करना बिलकुल असम्भव है। इसलिए सिर्फ यह घोषणा की गई कि जो मन्दिर जानेमें विश्वास रखते हों, जिन्हें यह श्रद्धा हो कि देवदर्शन करना हिन्दू धर्मका अविभाज्य अंग है और जिन्हें गुरुवायुर मन्दिरमें जानेका अधिकार हो, सिर्फ वे ही मत दें।

मन्दिर-प्रवेशका अधिकार रखनेवालोंकी कुल आबादी लगभग ६५,००० है। उनमें से बालिगोंकी संख्या करीब ३०,००० मानी जा सकती है। वस्तुतः २७,४६५ बालिग स्त्री-पुरुषोंसे उनके मत लेनेके लिए मुलाकात की गई। उनमें से ५६ फीसदीने

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. देखिए परिशिष्ट १८।

मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें मत दिये, ९ फीसदीने विरुद्ध मत दिये, ८ फीसदी तटस्थ रहे और २७ फीसदीने मत नहीं दिया।

यह याद रखना चाहिए कि मतसंग्रहका काम प्रतिकूल वातावरणमें किया गया था। जमोरिनने सहयोग नहीं दिया। इतना ही नहीं, बल्कि मुझे कहते अफसोस होता है कि उन्होंने कार्यकर्त्ताओं और उनके द्वारा अपनाई गई पद्धतिके खिलाफ कीचड़ उछाली। पोन्नानी ताल्लुका सनातनियोंका गढ़ है। फिर भी वहाँका जो मन्दिर आज देशके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक मशहूर हो गया है, उसमें 'अछूतों' के प्रवेशके पक्षमें निर्णायक बहुमत मिला।

ये आँकड़े इस दृष्टिसे भी शिक्षाप्रद हैं कि उपवासकी बात होनेपर भी स्त्री और पुरुष दोनों अपना विरुद्ध मत देनेमें नहीं हिचकिचाये। तटस्थ रहनेवालों और मतसंग्रहमें भाग न लेनेवालोंमें से भी मैं एक खासी संख्या निकालूँगा। उन्होंने मत देना पसन्द किया होता तो वे सभी हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध ही मत नहीं देते। अगर मैं यह सुझाऊँ कि उनमें से कम-से-कम एक-चौथाई लोग सम्भवतः मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें होंगे, तो यह अटकल गलत या अनुचित नहीं मानी जायेगी। यों गिनें तो मताधिकार रखनेवाले कुल लोगोंमें से ६५ फीसदी मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हैं। अगर उन्हें मतदाताओंमें से बिलकुल निकाल दिया जाये, तो बहुमत ७७ फीसदी हो जाता है।

आँकड़ोंका हिसाब किसी भी तरह लगाइए, निर्विवाद परिणाम यह निकलता है कि अधिकार रखनेवाले मतदाताओंका निर्णायक बहुमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें है।

यह तथ्य यह दिखाता है कि श्री केलप्पनका यह बयान कि गुरुवायुरके आस-पासके मन्दिर जानेवाले लोगोंका बहुमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें है, सही था।

सरकारकी तरफसे यह घोषणा की गई है कि डॉ० सुब्बारायनके मन्दिर-प्रवेश की छूट देनेवाले विधेयकको मद्रास धारासभामें पेश करनेकी मंजूरी देनेका वाइसरायका निर्णय १५ जनवरीसे पहले घोषित नहीं किया जा सकेगा। यह देखते हुए जो उपवास नये सालकी २ तारीखसे करनेका विचार था, वह अनिश्चित कालके लिए, या कुछ नहीं तो वाइसरायका निर्णय घोषित होनेकी तारीखतक, स्थगित रखा जायेगा। इस बातसे श्री केलप्पन सहमत हैं। प्रस्तावित उपवास क्योंकि सर्वसाधारणको ध्यानमें रखकर होनेवाला था, इसलिए जो-कुछ मैं पहले कह चुका हूँ उसकी पुनरुक्तिके दोषका भागी होते हुए भी मुझे अपनी स्थिति स्पष्ट कर देनी चाहिए। मैं अपने उपवासको शुद्ध आध्यात्मिक कार्य मानता हूँ। इसलिए उसे पूरी तरह समझाना सम्भव नहीं। फिर भी जिस हदतक समझाया जा सकता है, मैं कहूँगा कि उसका उद्देश्य लोगोंकी अन्तरात्माको सतेज करना है।

हिन्दू-धर्म सिखाता है कि जब ऐसी बुराइयाँ और गंदगी फैल जायें जिनका उपाय साधारण साधनोंसे न हो सकता हो, तब मनुष्यके प्रयत्नमें तपस्या जोड़ी जाती है। इस तपस्याका चरम रूप शर्त-सहित या शर्त-रहित उपवास है। इसलिए मेरा उपवास कोई नई चीज नहीं है। आम जनतामें मेरा कल्पित या सच्चा असर यदि न होता, तो इसपर शायद ध्यान भी नहीं दिया जाता। मुझे यह यकीन हो गया है कि हिन्दू

धर्ममें किसी समय जो शुद्धता और जीवनी शक्ति थी, वह अब नहीं रही है। समय-समयपर पैदा होनेवाली परिस्थितियोंसे तालमेल बैठाना और सतत प्रगति करना हिन्दू-धर्मकी विशेषता है। इसका सबूत उसके शास्त्रोंसे ही मिलता है। शास्त्रोंके ईश्वरप्रेरित होनेके दावेको आम तौरपर अक्षुण्ण रखकर भी, उनमें नये सुधार और परिवर्तन करनेमें उसने कभी हिचक महसूस नहीं की। इसीलिए हिन्दू-धर्ममें सिर्फ वेदोंको ही नहीं, बल्कि बादके शास्त्रोंको भी प्रमाण माना जाता है। परन्तु एक ऐसा समय आया, जब यह आरोग्यप्रद वृद्धि और विकास रुक गया और शास्त्र-वचनोंका उपयोग आन्तरिक प्रकाशके लिए करनेके बजाय, उन्हीं को सब-कुछ मान लिया गया, फिर भले ही वे अन्तरात्माकी अभिलाषाओं और प्रयत्नोंके साथ सुसंगत हों या न हों। हमारे पूर्वजोंने स्वयं ईश्वरसे मल्लयुद्ध करके उससे वेदों और बादके ग्रन्थोंमें मिलनेवाली अमर वस्तुएँ प्राप्त कीं। परन्तु उन्हींके वंशज इतने हतवीर्य हो गये कि पुराने श्लोकों और मन्त्रोंके नये अर्थ निकालने या नये मन्त्रोंकी रचना करनेके लिए और पुरुषार्थ करनेको वे तैयार नहीं थे। उन्होंने मान लिया कि अब ईश्वरके साथ उनका कोई वास्ता नहीं रहा। ईश्वर सबसे अन्तिम शास्त्रके सबसे अन्तिम श्लोककी प्रेरणा देनेके बाद अपना काम समाप्त कर चुका है। इसीलिए व्याख्याकारोंकी मण्डलियाँ परस्पर असंगत शास्त्र-वचनोंकी संगति बैठानेकी कोशिश कर रही हैं। उन्हें यह होश नहीं है कि वे इस युगकी अत्यन्त आवश्यक जरूरतें पूरी कर सकते हैं या नहीं, या वे सूक्ष्म परीक्षाका प्रकाश बर्दाश्त कर सकते हैं या नहीं। तपस्याएँ भी अत्यन्त पीड़ाकर अन्तर्मन्थनकी अभिव्यक्ति होनेके बजाय केवल बाह्य आडम्बरवाली होती हैं। सम्भव है मेरा यह निदान गलत हो। मगर मुझे तो यही लगता है कि हिन्दू-धर्मका जो प्रधान आदेश है कि जीवमात्रकी एकताका उत्तरोत्तर साक्षात्कार किया जाये – कोरी सैद्धान्तिक चर्चाके रूपमें नहीं, बल्कि जीवनके ठोस सत्यके रूपमें – उसका हिन्दू समाज अनुसरण नहीं कर रहा है। मुझे लगा कि मैं स्वधर्मको जैसा समझता हूँ उसी ढंगसे जीनेका सतत प्रयत्न करते रहनेके कारण मुझमें उपवास द्वारा तपस्या करनेकी योग्यता है, और वैसा करनेका मुझे आन्तरिक आदेश मिला है।

मैं आशा करता हूँ कि पाठक आसानीसे यह समझ सकेंगे कि इस तरह सोचे हुए उपवासमें जोर-जबर्दस्ती नहीं होती है। मेरा उपवास जब बिना शर्त है, तो यह स्पष्ट है कि उसमें जोर-जबर्दस्ती हो ही नहीं सकती। क्योंकि लोगोंके कोई काम करने या न करनेसे मेरा उपवास बन्द नहीं हो सकता। सशर्त उपवासको जोर-जबर्दस्ती माना जाता है, तो शर्तके ही कारण माना जाता है। मेरा अनुभव ऐसा है कि उपवास मनुष्यको अपने सिद्धान्तों या अपनी प्रवृत्तियोंसे विचलित नहीं करता। गुरुवायूरके मतसंग्रहमें यही पाया गया है।

लोग अब समझ जायेंगे कि उपवास स्थगित करनेका क्या अर्थ है। उपवासका उद्देश्य 'अस्पृश्यों' को गुरुवायुर मन्दिरमें प्रवेश दिलाना था। अगर वह प्रवेश न्यायपूर्ण ढंगसे दिलानेके लिए फिर उपवास करना जरूरी हो गया, तो मैं जरूर उपवास करूँगा। उदाहरणके लिए, अदालतोंके फैसलोंसे और ट्रस्ट-सम्बन्धी कानून या मद्रास

धर्मस्व कानूनसे — जो खुद ही धर्मपर असर डालनेवाला है — जो बाधा खड़ी हो गई है, उसे दूर करनेके लिए आवश्यक कानूनकी माँग करनेवाला लोकमत यदि केवल सुधारकोंके प्रमादके कारण और परिणामस्वरूप व्यक्त न हो सका, तो मुझे उपवास करना पड़ेगा। इसका अर्थ यह है कि यदि मूल प्रतिज्ञा पूरी करनी है, तो वह अवश्य शुरू करना होगा। जो गुरुवायुर मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेके पक्षमें माने जाते हैं, उनके अपने कर्तव्य न करनेपर, या अकर्तव्य काम करनेपर, उपवास अवश्य शुरू करना होगा।

यरवदा-समझौता सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनोंके प्रतिनिधियोंके बीच हुआ था। बम्बईकी स्मरणीय परिषदमें उस समझौतेका समर्थन करते हुए सवर्ण हिन्दुओंने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया था :

> **यह परिषद निश्चय करती है कि अबसे हिन्दुओंमें किसीको भी जन्मके कारण अस्पृश्य नहीं माना जायेगा और अबतक जिनको अस्पृश्य समझा गया है, उनके सार्वजनिक कुओं, सार्वजनिक विद्यालयों, सार्वजनिक रास्तों और सार्वजनिक संस्थाओंके उपयोग-सम्बन्धी अधिकार दूसरे हिन्दुओंके बराबर ही होंगे। इन अधिकारोंको पहला अवसर मिलते ही कानूनी मंजूरी दी जायेगी; और अगर वह मंजूरी पहले ही न मिल चुकी होगी, तो इस तरहका कानून स्वराज्य पार्लियामेंटके सबसे पहले कानूनोंमें होगा। यह भी निश्चय किया जाता है कि तथाकथित अस्पृश्य जातियोंपर आजकल सवर्ण हिन्दुओंने जो सामाजिक निर्योग्यताएँ लादी हुई हैं, जिनमें मन्दिर-प्रवेशका प्रतिबन्ध भी शामिल है, वे न्यायपूर्ण और शांतिमय उपायोंसे जल्द-से-जल्द दूर हों यह देखना तमाम हिन्दू नेताओंका फर्ज होगा।**[1]

जिन प्रतिष्ठित सवर्ण हिन्दुओंने यह प्रस्ताव पास किया है, वे अपने दावेके मुताबिक, यदि भारतीय राष्ट्रके हिन्दू भागके प्रतिनिधि हैं तो उन्हें सार्वजनिक मन्दिर और दूसरी सार्वजनिक संस्थाएँ हरिजनोंके लिए खुलवाकर और उनके साथ दिन-दिन बढ़नेवाला भाईचारा पैदा करके अपना दावा सच्चा साबित करना चाहिए।

जब इस समझौतेकी चर्चा हो रही थी, तब गुरुवायुर मन्दिर हरिजनोंके लिए खुलवानेको श्री केलप्पनका उपवास चल रहा था। मैंने उन्हें, खासकर कालीकटके जमोरिनके सुझावपर, वह उपवास स्थगित करनेको कहा। इसके अलावा, जैसा मैं पहले कह चुका हूँ, जब ब्रिटिश सरकारने समझौतेका अपनेसे सम्बन्धित भाग स्वीकार कर लिया और मैंने अपना उपवास तोड़ा, तब मैंने डॉ० अम्बेडकरको विश्वास दिलाया था और मन-ही-मन ईश्वरके सामने यह प्रण किया था कि उपरोक्त प्रस्तावके पालनके लिए और समझौतेका सवर्ण हिन्दू भली-भांति पालन करें, इसके लिए मैं अपनेको जामिन समझूँगा। अस्पृश्यता-निवारणके सिलसिलेमें अपनी कोशिशमें मैं यदि

१. इस प्रस्तावका मसौदा गांधीजीने तैयार किया था और यह २५ सितम्बरको परिषद द्वारा पास किया गया था जिसके अध्यक्ष मालवीयजी थे; देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १४८।

किसी भी तरहकी ढिलाई आने दूँ या उपवास करनेका अपना विचार बिलकुल छोड़ दूँ, तो वह विश्वासघात और हरिजनोंके साथ धोखा होगा।

मैं चाहता हूँ कि मूक और असहाय हरिजनोंके दिलमें यह बात जम जाये कि हजारों हिन्दू-सुधारक, जो हिन्दू-धर्म और उसके आधारभूत शास्त्रोंके लिए उतने ही आग्रही हैं जितना कि अपनेको सनातनी कहनेवाला कोई भी व्यक्ति हो सकता है, अस्पृश्यताका जड़मूलसे नाश करनेके लिए जरूरत पड़े तो अपने प्राणतक न्यौछावर करनेको मेरी तरह ही तैयार हैं।

अतः मेरे लिए या जिन्होंने अपनी जबानसे या हाथ उठाकर प्रस्तावका समर्थन किया है, उनके लिए जबतक अस्पृश्यता नामशेष नहीं रह जाती, चैनसे बैठनेका सवाल ही पैदा नहीं होता। अस्पृश्यताकी भस्ममें से ही हिन्दू-धर्म पनपेगा और इस तरह शुद्ध होकर वह दुनियामें एक जीवन्त और जीवनप्रद शक्ति बन सकेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-१२-१९३२; **हिन्दू** ३१-१२-१९३२ भी।

४२३. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

३० दिसम्बर, १९३२

पण्डितजी बंगीय प्रवर्तक संघके निदेशक बाबू मोतीलाल रायके साथ आये थे। बाबू मोतीलाल राय यह कोशिश कर रहे हैं कि अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनको लेकर हिन्दुओंमें फूट न हो, और उनकी यह बड़ी इच्छा थी कि जब वे सारी स्थितिपर विचार-विमर्श करने और उसे मेरे दृष्टिकोणसे समझनेके लिए मुझसे मिलने आयें तो पण्डित पंचानन तर्करत्न उनके साथ हों। जब मुझे बाबू मोतीलाल रायसे इस बातका पता चला तो मैंने उन्हें तार दिया कि मैं उनका और पण्डित तर्करत्नका स्वागत करूँगा। इसलिए पण्डितजी जब आये तो मुझे प्रसन्नता हुई। हममें दो बार मैत्रीपूर्ण वार्तालाप हुआ, जिसके फलस्वरुप, मेरा खयाल है, हम एक-दूसरेके और निकट आ गये हैं और मुझे आशा बंधने लगी है। यद्यपि वे आम पुरातनपंथी सनातनी रुखका प्रतिनिधित्व करते हैं, परन्तु उन्होंने मेरा दृष्टिकोण भी समझा है और मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नको सुलझानेका कोई उपाय खोजा ही न जा सकता हो — ऐसी निराशा नहीं दिखाई है। मैंने उनके आगे एक निश्चित सुझाव रखा है जिससे कड़े-से-कड़े सनातनीको भी सन्तुष्ट हो जाना चाहिए। वे इस समय गुरुवायुरमें हैं, और मुझे आशा है कि कोई ऐसी व्यवस्था निकल आयेगी जो परिवर्तन-पक्षी और परिवर्तन-विरोधी सनातनियोंको स्वीकार हो सकेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३१-१२-१९३२

४२४. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

३० दिसम्बर, १९३२

वाइसरायका कैम्प

डा० सुब्बारायन द्वारा तैयार किये गये और शायद मद्रास सरकार द्वारा वाइसरायकी अनुमतिके लिए आगे भेजे गये प्रस्तावित विधेयकके बारेमें सरकारसे कुछ कहनेकी मेरी इच्छा तो नहीं है। पर महामहिम मुझसे यह अपेक्षा करते हैं कि मैं उसपर अपने विचार भेजूं जिससे उन्हें सही निर्णयमें सहायता मिले। विधेयक हिन्दू-धर्ममें कोई नई रीति चलाना नहीं चाहता है। इसके विपरीत, यह ऐसे पण्डितोंकी सम्मतिके अनुरूप जो संस्कृत धार्मिक वाङ्मयके प्रकाण्ड विद्वान माने जाते हैं, हिन्दू शास्त्रोंकी अपेक्षाओंको पूरा करनेकी कोशिश करता है। यह उस यथास्थितिको पुन: स्थापित करना चाहता है जो ब्रिटिश अदालतों द्वारा जारी की गई प्रथासे पहले थी। वह प्रथा, कुछकी रायमें, मलाबारकी प्राचीन प्रथा थी और उसे उन्होंने इस तरह कानूनी जामा पहनाया था। विधेयक ऐसा मद्रासके धर्मस्व अधिनियममें, जो स्वयं उस समय प्रचलित प्रथामें विशेष हस्तक्षेप था, संशोधन करके करता है। विधेयक मद्रास धारा सभाकी उस इच्छाको जो उसने हाल ही में अपने प्रस्तावमें सर्वसम्मतिसे व्यक्त की है, मूर्त रूप देता है। यह हिन्दुओंकी ही एक बड़ी संख्याके साथ, जो मनमाने ढंगसे धार्मिक सान्त्वनाके अधिकारसे वंचित कर दी गई है, अन्य हिन्दुओंके समान ही, न्याय करना चाहता है—ऐसा न्याय जो बहुत पहले हो जाना चाहिए था। सम्राटकी सरकारने अस्पृश्योंकी रक्षा करनेकी जो बार-बार घोषणाएँ की हैं, यह उन्हें पूरा करनेके लिए सर्वश्रेष्ठ प्रतीत होता है। अनुमति न देनेका कदम उन घोषणाओंका प्रतिवाद करने और प्रतिक्रियाकी शक्तियोंको प्रोत्साहन देने जैसा ही होगा। इस बातको दृष्टिमें रखते हुए कि यह विधेयक उस आन्दोलनके उत्तरमें आया है जो यरवदा समझौतेके सीधे परिणामके रूपमें चला है, मेरे खयालसे, सरकारका यह नैतिक कर्त्तव्य हो जाता है कि वह उस आन्दोलनमें किसी भी तरहकी बाधा न डाले। यदि वह विधेयकको रोकती है तो वह साफ-साफ बाधा डालना ही होगा। विधेयक मात्र एक अनुज्ञात्मक कदम है, क्योंकि किसी भी मन्दिरका हरिजनोंके लिए, खुलना, इसके

अनुसार, उन लोगोंकी बहुसंख्याकी इच्छापर निर्भर है जो इस समय उस विशिष्ट मन्दिरमें पूजा करनेका अधिकार रखते हैं। इन विचारणीय बातोंके साथ, मैं यह बहुत ही ठोस तथ्य भी रखना चाहूँगा कि यदि पुरातनपंथियोंकी रायका कुछ वजन होना चाहिए, तो उन चार करोड़ हरिजनोंकी रायका, जो इस विधेयकके पक्षमें माने जाने चाहिए, उससे ज्यादा वजन होना चाहिए – सुधारकोंकी उत्तरोत्तर बढ़ती संख्याकी मांगका तो कहना ही क्या है। यहाँ दो शब्द उस उपवासके बारेमें भी आवश्यक हैं जो गुरुवायुर मन्दिरके अगली २ जनवरीतक [हरिजनोंके लिए] न खुलनेपर उस दिनसे शुरू होना था। यदि उपवास उस तारीखसे शुरू होता, तो उससे सरकार को परेशानी हुए बिना नहीं रहती। इसलिए, केलप्पनसे सलाह-मशविरा करनेके बाद, मैंने यह घोषणा की है कि वह अनिश्चित कालके लिए स्थगित रहेगा। किन्तु जनमतकी निर्णायक अभिव्यक्ति न होनेसे यदि अनुमति रोक ली जाती है या कोई ऐसा अप्रत्याशित किन्तु रोका जा सकनेवाला कारण पैदा हो जाता है जिससे गुरुवायुर मन्दिरका खुलना रुक जाये, तो वह शुरू करना होगा। मैं यह कह सकता हूँ कि सार्वजनिक आन्दोलन जान-बूझकर यह मानकर स्थगित रखा गया है कि वाइसरायकी अनुमतिके लिए जो दावा है वह अखण्डनीय है। परन्तु, इस चीजको दृष्टिमें रखते हुए कि सनातनियोंका आन्दोलन बढ़ता जा रहा है, मैंने विधेयकके समर्थनमें जनमतकी अभिव्यक्तिके लिए सभाएँ आदि संगठित करनेका सुझाव दिया है। फिर भी, मैं यही महसूस करता हूँ कि मात्र वाइसरायकी अनुमतिके प्रश्नपर यदि हर तरहका आन्दोलन रोका जा सके, तो वह ज्यादा अच्छा होगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि डॉ० सुब्बारायनका विधेयक मद्रास धारा सभामें पेश करनेके लिए वाइसरायकी अनुमतिकी शीघ्र घोषणा कर दी जायेगी। इस तारको मैं प्रकाशनके लिए नहीं भेज रहा हूँ। परन्तु यदि महामहिम वैसा चाहें तो इसके प्रकाशनमें निस्सन्देह मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५५५) से; सौजन्य: इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स: होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (७), पृ० ७९ से भी।

४२५. पत्र: विधानचन्द्र रायको

३० [दिसम्बर][1], १९३२

प्रिय डॉ० विधान,

आपका बिलकुल आप ही के अनुरूप, उदार और अच्छा पत्र मिला। मैं आपकी भूल-सुधारको प्यार करता हूँ और उसे स्वीकार करता हूँ और आपके साथ होकर कहता हूँ कि हम एक-दूसरेके नजदीक हैं; और चूँकि हम एक-दूसरेके नजदीक हैं, मैं कहना चाहता हूँ कि मेरे पत्र[2] के पीछे कोई शिकायत नहीं थी। वह तो सलाहके रूपमें लिखा गया था और उसका उद्देश्य संस्थाको – मेरे मनमें संस्थाके सुचारु संचालनकी जो कल्पना है उसके अनुसार – ज्यादा अच्छी तरह चलाना ही था। और मैं आपसे मित्रके रूपमें यह आशा करता था कि यदि मेरी सलाहकी आपके मनमें अनुकूल प्रतिक्रिया न हो तो आप मुझे साफ कह दें कि "आप परिस्थितिको नहीं जानते, इसलिए मैं आपकी सलाह नहीं मानता।" निस्सन्देह, आपने पत्रमें यही कहा है परन्तु एक बहुत भिन्न और अप्रत्याशित ढंगसे। परन्तु वह तो अब एक पुरानी बात हो गई। आपसे क्षमा मांग लेने[3] के बाद मैंने वह घटना अपने मनसे निकाल दी थी। परन्तु आपने अब स्मृति ताजा कर दी है और अपने उदारतापूर्ण पत्रसे उसे पवित्र बना दिया है।

आपने अपने ख्यातनाम रोगियोंका[4] जो समाचार दिया है उससे मुझे प्रसन्नता हुई है। अपना मकान कमलाके सुपुर्द कर देना बेबीके बिलकुल अनुरूप है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८४९३) से।

१. विषयवस्तुके आधारपर निर्णीत; साधन-सूत्रमें 'जनवरी' है जो चूक हो सकती है।

२. देखिए पृष्ठ १९०-१।

३. तारमें; देखिए "पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको", १५/[१६]-१२-१९३२; और "पत्र: विधानचन्द्र रायको", १५-१२-१९३२।

४. कमला नेहरू और डॉ० मुहम्मद आलम।

४२६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय जवाहरलाल,

सरूप[1] उस दिन अस्पृश्यता-सम्बन्धी अपनी योजनापर चर्चा करने मेरे पास आई थी। उसने बताया कि तुमने उसे श्रीलंका जाकर आराम करनेकी सलाह दी है। मैं इसे अनावश्यक समझता हूँ। वह थोड़ा काम कर सकती है और कुछ अस्पृश्यताका काम करनेको राजी भी है। मेरे खयालसे उसे जबतक वह काम करना चाहे करने देना चाहिए।

उसने मुझे बताया कि तुमने कुछ दाँत और निकलवा दिये हैं। उधर वह अपने बाल सफेद करनेपर तुली है। पर देखनेवालोंने बताया है कि वैसे तुम्हारा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक है। मालूम होता है कि तुम अब भी मिलने आनेवालोंसे मुलाकातें नहीं कर रहे हो। मैं चाहता हूँ कि यदि सम्भव हो तो तुम मुलाकातें करो। इससे उन्हें सन्तोष मिलेगा।

छगनलाल जोशीके आ जानेसे हमारी अब चारकी सुखद टोली बन गई है। पता नहीं तुम हरिजन-कार्यमें दिलचस्पी ले रहे हो या नहीं। शास्त्रियोंके साथ अच्छा समय बीत रहा है। शास्त्रोंका अक्षर-ज्ञान मेरा पहलेसे अच्छा हो गया है, परन्तु सच्चे धर्मका ज्ञान वे मुझे थोड़ा ही दे सकते हैं।

सबकी तरफसे प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृष्ठ १०८

४२७. पत्र : मोतीलाल रायको

३१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मोतीबाबू,

यह मेरे लिए बड़ी प्रसन्नताका विषय था कि आप और आपके शिष्य मेरे पास इतने दिन रहे। अस्पृश्यता-निवारणके लिए काम करनेके आपके दृढ़ निश्चयको मैं समझ गया हूँ। मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि जहाँ हम अपनी प्राणप्रिय वस्तुको न्योछावर न करें, वहाँ इतना तो अवश्य करें कि यदि सम्भव हो तो पुराणपन्थी

१. विजय लक्ष्मी पण्डित।

लोगोंको अपने मतके अनुकूल बना लें। किसी भी हालतमें, हम ऐसा कोई काम न करें जिससे किसीकी भावनाओंको ठेस पहुँचे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४१) से।

४२८. पत्र : के० रामचन्द्रको

३१ [दिसम्बर][1], १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। वहाँ मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नको लेकर जो झंझट पैदा हो गया है[2], उसके बारेमें मुझे खेद है। मुझे इसमें किसी भी तरहका सन्देह नहीं है कि एक अहिन्दू इस सुधार आन्दोलनसे सहानुभूति तो रख सकता है परन्तु वह सीधी कार्यवाहीमें कोई भाग नहीं ले सकता; उसे ऐसा करना भी नहीं चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० रामचन्द्र
श्री विक्रम
विल्लावट्टे
कोलम्बो

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८४९४) से।

४२९. पत्र : यू० गोपाल मेननको

३१ [दिसम्बर][3], १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

इस महीनेकी २६ तारीखका आपका पत्र मिला। चूँकि उपवास फिलहाल स्थगित हो गया है,[4] इसलिए अब मैं देखूँगा कि केरल क्या काम करता है।

आशा है ज्ञापनके लिए दस्तखत लेनेका काम[5] गतिके साथ बढ़ रहा होगा। जो दस्तखत रोज-रोज लिये जाते हैं, आपको चाहिए कि उनकी संख्या सूचित करते रहें। आपने समयकी सीमा तो निर्धारित की ही होगी।

१. विषयवस्तुके आधारपर निर्णीत; साधन-सूत्रमें 'जनवरी' है जो चूक हो सकती है।
२. देखिए खण्ड ५३, "पत्र : के० रामचन्द्रको", २८-१-१९३३ भी।
३. विषयवस्तुके आधारपर निर्णीत; साधन-सूत्रमें 'जनवरी' है जो चूक हो सकती है।
४. गांधीजी ने २९ दिसम्बरको उपवास स्थगित कर दिया था; देखिए पृष्ठ ३२०-१।
५. सम्भवत : वाइसरायके नाम, जिसमें डॉ० सुब्बारायनके विधेयकको पेश करनेकी अनुमतिकी माँग थी।

हरिजनोंके बीच रचनात्मक कार्यके साथ-साथ जनमतको उद्‌बुद्ध करनेका काम भी चलते रहना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८४९५) से।

४३०. पत्र : भूलाभाई जे० देसाईको

३१ दिसम्बर, १९३२

भाई भूलाभाई,

आपका पत्र आनेसे हम बहुत प्रसन्न हुए। मैं चाहता हूँ कि मेरे कोहनीके दर्दको लेकर कोई परेशान न हो। आवश्यक उपचार हो रहा है। बाहरकी मददकी जरूरत हुई तो ये लोग ही उसका प्रबन्ध करेंगे। मुझे जरूरत जान पड़ी तो मैं खुद इसकी माँग करूँगा। दर्द कोई खास नहीं है।

आप सबकी गाड़ी ठीक चल रही है यह जानकर हम सब खुश हुए। तुम्हारे जैसा पठन-पाठन यहाँ नहीं हो सकता।

वहाँ सबको हमारे यथायोग्य। धीरूभाई फिर आयेंगे।

मोहनदास

एडवोकेट भूलाभाई देसाई
कैदी
सेन्ट्रल-जेल
नासिक रोड

[गुजरातीसे]

भूलाभाई देसाई पेपर्स, फाइल नं० १; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४३१. पत्र : अमतुस्सलामको

[दिसम्बर, १९३२][1]

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा खत मिला। मेरी फिकर मत करो। हाथमें ऐसी कोई बात नहीं जिससे फिकरका कुछ सबब हो सकता है। तुमको लिखनेसे मुझे आराम रहता है। रोजे[2]के बारेमें समझा। खुशीसे रखो। आज और नहीं लिखूंगा, क्योंकि वक्त नहीं रहा। हरिजनोंकी सेवा कर रही हो सो बहुत अच्छा है।[3]

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६३) से।

४३२. पत्र : रमाबहन जोशीको

१९३२

चि० रमा,

तुम्हारे विषयमें मुझे थोड़ी निराशा हुई है। तुम्हें मालूम है कि मैं सभीके पत्रोंका भूखा हूँ। मेरा समय बचानेके लिए और स्वयं राजी-खुशी हों इसलिए कोई जान-बूझकर पत्र न लिखे यह अलग बात है। लेकिन तुम्हारा ऐसा न करनेका कारण लापरवाही और आलस्य है। है न? और यह बात सच हो तो इसे असह्य मानना चाहिए।

छगनलालका वजन बढ़ रहा है। ११५ हो गया है।

बापू

[गुजरातीसे]
बापूना पत्रो-७ : श्री छगनलाल जोशीने, पृष्ठ २८५

१. **बापूके पत्र – ८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम**में यह पत्र ६ नवम्बरके पत्रके बाद रखा गया है। लेकिन रोज़ेके उल्लेखसे लगता है कि यह रमज़ानके दिनोंमें या उससे कुछ ही पहले लिखा गया होगा। रमज़ान दिसम्बरमें शुरू होना था।

२. रमज़ानके महीनेमें श्रद्धालु मुसलमानोंका व्रत, जिसमें वे सुबहसे शामतक कुछ भी खाते-पीते नहीं है।

३. अमतुस्सलाम साबरमती आश्रमके नजदीक वाड़ज नामक देहातमें कार्य कर रही थी।

४३३. दैनन्दिनी १९३२[1]

१६ नवम्बर, बुधवार, यरवदा मन्दिर[2]

तकलीपर ४३ तार। डाक: परचुरे शास्त्री, मोहनलाल भट्ट, केशवलाल मन्छा-रामको। तार: जमनालाल, कुमाऊँ सोशल कॉन्फ्रेंसको। अस्पृश्यताके बारेमें – विनोबा, कौता सूर्यनारायण राव, मार्तण्ड उपाध्यायको। नरगिसबहन, गोसीबहन, शीरीनबहन और जमनाबहन मिलने आईं। कोदण्ड रावको सातवाँ वक्तव्य दिया।

१७ नवम्बर, गुरुवार

तकलीपर ४८ तार। डाक: मीरा, गंगा गिडवानीको। मार्तण्ड [उपाध्याय]को 'गांधी विचार दोहन' का पैकेट। अस्पृश्यताके बारेमें – चमन, नटराजन, मथुरादास वसनजी, हंसा मेहता, सातवलेकर, माइकेल, बसन्तराम शास्त्री, युगुदुर रामचन्द्र राव, अवन्तिकाबहन, नरसिंहाचार्य, सतीश बाबू, जीवनलाल, प्यारेलाल, चन्द्रशंकरको। हीरालाल मिलने आया। कोदण्ड रावको आठवाँ वक्तव्य दिया।

१८ नवम्बर, शुक्रवार

तकलीपर ५२ तार। डाक: डा० अग्रवाल, नीडू, रस्तोगी, डॉयल (मणिबहन और जमनालालके बारेमें), पद्मजाको। अस्पृश्यताके बारेमें – हरिभाऊ पाठक, रामचन्द्र, गद्रे, लक्ष्मण कुमठाकर, आनन्दतीर्थ, शं [करलाल] बैंकरको। तार: गोविन्द, गौड़ गोपाल, मधुसूदनदास, जगन्नाथ, दोड्डामेतीको (अस्पृश्यताके बारेमें)। लेडी ठाकरसी, और भावे शंकरलाल, देवदास, प्यारेलाल, सतीशबाबू, गिरधारी, राजासे मिला। शंकर, पुरुषोत्तम और भावे तीन कैदी भाइयोंसे मिला।

१९ नवम्बर, शनिवार

तकलीपर ४३ तार। डाक: शंकरराव गोडसे, मुहम्मद अली हबीब, वझे, जोलिंगर, रामेश्वर बजाज, रामसिंहासन, शं [करराव] गोडसे, हबीब, घनश्यामदासको। अस्पृश्यताके बारेमें – प्रियनाथ चटर्जी, श्रीकृष्ण गौतम, हकीम, जैनकिंस, लाहिड़ी, शालीवती, स्वरूप रानी, फरामजी मोगल, भानजी राठोड़, आनन्दशंकरको। मथुरादास, जयसुखलाल मेहता, चुनीलाल, देवधर, हंसाबहन, जयश्री, करसनदास चितालिया, सूरजबहन, शान्ता, कस्तूर, कानिटकर, देवदास, कमलनयन, गिरधारी, मदालसा, जानकीबहन मिलने आये।

१. गांधीजी के स्वाक्षरोंमें गुजरातीमें लिखी इस दैनन्दिनीके पहले भागके लिए देखिए खण्ड ५१।
२. स्थानका उल्लेख इसके बाद नहीं किया जायेगा।

२० नवम्बर, रविवार

तकलीपर ५१ तार। डाक: भक्तिवहन, मणिवहन, कान्तिलाल देसाई, वासुदेव नायडूको। अस्पृश्यताके बारेमें — पी० ए० विनायक, देवनन्दन संन्यासी, सीताराम नलावड़े, गोपालकृष्णमूर्ति, के० गणेशन, अनन्त जयवन्त सोन [व]णे, शारदाबहन, के० विश्वनाथन, जयसुखलाल मेहताको।

२१ नवम्बर, सोमवार

तकलीपर ४८ तार। डाक: नारणदास (४२), छगनलाल जोशी, रुखी, प्रभावती, चैतन्यलालजी, आंध्र कला परिषद, प्यारेलाल, थॉर्नबर्गको। अस्पृश्यताके बारेमें–लाभशंकर मेहता, धीरूभाई भूलाभाई, मणिलाल, कृष्णाचार्य शर्मा, आदर अरदेशर देसाई, भारत धर्म कार्यालयको। सदाशिव राव, मैकरे, सतीशबाबू, हरिभाऊ, भावे, मिलने आये।

२२ नवम्बर, मंगलवार

तकलीपर ४८ तार। डाक: जोहरा, रामानुजचारी, हिम्मतलाल, हरजीवन, गुडेल (२), भटनागर, कर्नल डॉयल, डाह्याभाई, मणिवहन पटेल, अभय, भार्गव, शंकरलाल, मथुरादास, ज [मनालाल] बजाज, कुमारी विलीको। अस्पृश्यताके बारेमें — आचार्य ध्रुव, नागिनी, फूलचन्द गुजराल, वसन्त चटर्जी, कृष्णराव, काशीनाथ केलकर, साकत, भरुचा, टामस, कानिटकर, हरिभाऊ, गगननारायण, ईश्वरन, चमन, मेढेकर, चौकसी, बबन गोखले, अवन्तिकाबाई, रतनबहन, देवदास, धीरूभाई, रामजीभाई, पद्मजाको। कुम्भकोणमके शंकराचार्य[1] का सन्देश लानेवाले वेंकटाचारी वकील और दूसरे दो व्यक्ति मिलने आये। प्रोफेसर पुरन्दरे अस्पृश्यता-सम्बन्धी अपने भाषणोंकी हस्तलिखित प्रति दे गये।

२३ नवम्बर, बुधवार

[डाक:] कुम्भकोणमके शंकराचार्य, हीरालाल अमृतलाल, देवदास, नारणदासभाई, दुर्गा प्रसाद, मणिवहन कारा, सर लल्लूभाई, जे० के० मेहता, भट्ट, हीरालाल शाह, देवदास, डाह्याभाई, मणिको। तार: बेगम आलम, देशमुखको। देवदासके बारेमें मेजरको मीठा उलाहना दिया। आज उपवासवाले वृक्षके नीचे मुलाकातें हुईं। श्रीमती कजिन्स, सरलादेवी, शारदाबहन, विद्याबहन, नन्दूबहन मिलने आईं। उर्मिला और *जीतेन मिलने आये। सतीश बाबू, शान्ति चीनी मिल गये। आजसे बुधवारतक तकली* बन्द रखनेकी डॉक्टर मेहतासे कही है।

२४ नवम्बर, गुरुवार

तकली ० (कलसे बन्द)। डॉक्टरकी सलाहसे एक सप्ताहतक हाथको आराम देनेका निश्चय किया है। डाक: प्यारेलाल, मीराबहन, कुसुम, धारशी, हरिदास मजमूदार, चिन्तामणि, तारामती, एफी, कुमारी अप्टन, गिलीगन, हैन्ड्रिक्सको। अस्पृ-

१. अपनी डायरीमें महादेव देसाईने उन्हें कांचीके शंकराचार्य कहा है। देखिए भाग २, पृष्ठ २६९।

श्यताके बारेमें — लक्ष्मी, विद्या गौरी, गोपाल मेनन (केलप्पनके पत्रके साथ), शास्त्री, गुरुदेव, रेवाशंकर, गोखले, जयन्तीप्रसाद, मणिलाल व्यास, शिव रतन मोहता, घनश्यामदास, पाटडे, नाथन, सत्यानन्द, मणिभाई मोरारजी, नरगिसबहन, शीरीनबहन, गाड़ोदिया, उसकी पत्नी, उर्मिलादेवी, सतीश बाबू और बाई के नलवड़े (एक हरिजन और एक गुजराती व्यापारीके साथ) आर० तथा जेढे भी।

२५ नवम्बर, शुक्रवार

तकली ०। डाक: नवले, हरिदास मजमूदार, लेनर्ड, एस्थर, नटराजन, होरेस, देवी वेस्ट, हॉलेंड, राघवेन्द्र प्रताप, श्रीमती एलविन, गोल्डबर्ग, कुमारी हॉवर्ड, श्रीमती हॉवर्ड, पोलकको। अस्पृश्यताके बारेमें — वेस्ट, सिस्टर एमेटा, शालीवती, नारायण मेनन, चटर्जी, चिमनलाल नर्खी, प्रतापसिंह मंत्री, श्यामजी कुवाड़िया, देवकरण जोशी, हरिभाऊको। मथुरादास, जयसुखलाल (एक मित्रके साथ), नानाभाई, परीक्षितलाल, वियोगी हरि, एक सतीश बाबू, उर्मिलादेवी मिलने आये।

२६ नवम्बर, शनिवार

तकली ०। डाक: कन्हैयालाल मुंशी, रूक्मिणी, मणिलाल, रमणीक शाह, अम्बाराम, बाबा नरसिंहदास, डॉक्टर देशमुख, मणि, गणपतराव गोडसे, नरदेव शास्त्री, डॉक्टर आलमको। अस्पृश्यताके बारेमें–पी० ए० विनायक, देवरुखकर, प्यारेलाल, वसन्तलाल, नाडकर्णी, अब्बास तैयबजी, स्वामीनाथन, ईश्वरलाल मोदी, सेतु पांडीअन पिल्ले, रामकुमार, अमिय चक्रवर्ती, आनन्दस्वरूप, अवधेश प्रसाद, काशीनाथ, केलकर, सुन्दरलाल पोद्दार, ऋषिराम, हबिबुर रहमान, भगत, वालजीको। डॉ० नवले और उनकी मण्डली, 'शिक्षकांचे कैवरी' के सम्पादक साठे, कानिटकर (अपने चार मित्रोंके साथ), उर्मिलादेवी, उनका पुत्र और सतीश बाबू मिलने आये। उर्मिलादेवीको यात्राके लिए २५० रु० दिलवाये।

२७ नवम्बर, रविवार

तकली ०। डाक: मणि, डाह्याभाई, कुसुम, ए० कृष्ण मेनन, वासुदेवन नम्बूद्रिपाद, जगन्नाथ, प्यारेलालको। अस्पृश्यताके बारेमें – आनन्दशंकर, आत्माराम भट्ट, कौता सूर्यनारायण, बापी नीडू, रामचन्द्र, हरिभाऊको।

२८ नवम्बर, सोमवार

डाक: नारणदास (४५), मोहनलाल भट्ट, भक्तिबहन, रामदासको ब्रह्मचर्य सम्बन्धी पुस्तक, खेमचन्द, वालजी देसाई, गीता प्रेस, बैंकर, माधवन, ईश्वरदास, वीरभद्र, चमन कवि, निरन्तर, उपासकको। सतीशबाबू, कोदण्ड राव, हरिभाऊ, पुरन्दरे और कोदण्ड रावका मित्र नायनार मिलने आये।

२९ नवम्बर, मंगलवार

डाक: शिवराव, सुदरीसनम, हीरजी परमार, प्रभावती, डॉक्टर घीया, गुणवन्ताबहन, भक्तिबहनको। अस्पृश्यताके बारेमें – नीला नागिनी, पटवर्धन, वसन्तराम शास्त्री,

जैनकिन्स, नवले, लल्लूभाई करमचन्द, महादेव शास्त्री, श्रीनाथ भार्गव, मोतीलाल राय, तलेगाँवकर, भोले, नरगिसवहनको। शीरीन, सतीश वावू, लाड, कालीगुड्डु, जगन्नाथ कुँवर कोटवा[के], छगनलाल मालवीसे मिला। प्रोफेसर दाँडेकर और उनके मित्रोंसे हरिजनोंके बारेमें भेंट की। जमनालालसे निजी भेंट।

३० नवम्बर, वुधवार

डाक: मणिलालको आनेके लिए तार, लक्ष्मीदास गोरधनदासको पिंजरापोल [के वारेमें] तार। जमनालालके वारेमें वम्बई सरकारको पत्र। कर्नल डॉयलको पत्र (अप्पा साहवके वारेमें), नथुभाई, सर हरिसिंह, नरसिंहन, वीरराघवन, जे० पी० त्रिवेदी, काका कालेलकर, अग्रवाल, निर्मलचन्द्र घोष, कुलकर्णी, राधा, कुसुमको। अस्पृश्यताके वारेमें – आनन्दशंकर, गुंडुराव, पुरन्दरे, चित्रे, वापूभाई वशी, वसन्तराम शास्त्री, जे० पी० भाईशंकर द्विवेदी, नारायण मेनन, जयसुखलाल मेहता, माधवन नायर, ब्रह्मचारी रामतीर्थ, क्षेत्रपाल सिंह, एस० सी० सेन, लल्लूभाई, नलिन, अनसूयावहन, रामानुजाचारी, तेजूमल, भगवानदास लल्लूभाई, कुमारी वार, राजगोपालाचारी (चित्तूर), चिन्नैयाको। मुलाकात — प्रेमलीला, उसकी सहेली, सतीशवावू, दोड्डामेती और उसके सचिवसे, कैदियोंमें छोटूभाई, खांडवाला, यशवन्त से।

१ दिसम्बर, गुरुवार

तकली ०। (डॉक्टरने अभी कुछ दिन और तकली न चलानेकी सलाह दी है) डाक: गंगाधर प्रसाद, पाशाभाई, नारणदास, मीरा, मगनलाल, दयालवाग, आगराके मन्त्रीको। अस्पृश्यताके वारेमें – चन्द्रशंकर, चन्द्रसिंह ठाकुर, लेले, गोपाल मेनन, सत्यनारायण शेट्टी, हरिभाऊ, विनायक, अय्यर, राजभोज, शामजी मारवाड़ीको। गोपाल मेननको तार। आज निजी मुलाकातके लिए मणिलाल, देवदास, हरजीवन और शारदा आये। आम मुलाकातके लिए भोले, जादव, भोंसले, सतीशवावू थे। नरगिस और शीरीनवहन फल और गद्दी लाई। डॉक्टर मेहताके सम्बन्धमें जो नाम भेजे थे[1] उनकी मंजूरी आ गई। छगनलाल जोशी यहीं आयेगा।

२ दिसम्बर, शुक्रवार

डाक: बनारसीदास, रैहाना वहन, मोहनलाल भट्ट, नानालाल, सी० मेहता, रेनॉल्डस, एन्ड्रयूज, डोरोथी न्यूमैन, रेचल प्राइस, जयकुँवर, वेचरदास, हेमप्रभाको। अस्पृश्यताके वारेमें – डी० वी० जोशी, दफ्तरी, नरसिंहाचारी, ताम्हणकर, वन्नू करीमको। तार: चारु भट्टाचारी, (डॉक्टर रायके वारेमें), नानालाल, आर्य (रंगून) को। आज सुवह आठसे साढ़े दस वजेतक विड़ला, खेतान और उनके दो मित्र मुलाकातके लिए आये। दोपहर वाद रामजीभाई, हरिलालभाई और दो अन्य सज्जन अमरेलीसे आये। नागेश्वर राव और वापी नीडू आन्ध्रसे, कीकाभाई वाघेला, दूधाभाई और अन्य चार हरिजन भाई अहमदावादसे। बंगालसे सातकौड़ी वावू, एक सज्जन विहारसे और विड़लाकी सुवहवाली मण्डली तथा सतीश वावू मिलने आये।

१. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ ४५६।

३ दिसम्बर, शनिवार

अप्पासाहबके अल्पाहार सत्याग्रहके सिलसिलेमें उपवास शुरू किया। मेजर मेहतासे सरकारका जवाब सवा सात बजे सुना कि मुझे भंगीका काम करना हो तो करूँ लेकिन कैदी अप्पा पटवर्धनके मामलेमें हस्तक्षेप करूँ, यह सरकार स्वीकार नहीं कर सकती। तुरन्त जवाब लिख दिया। डाक: पोवालकर, डॉक्टर चन्दूलाल, प्यारेलाल, तारामती, कान्तिचन्द्रजी,[1] महेन्द्र, जोहराको। अस्पृश्यताके बारेमें – कॉनिकल लान्ड्री, मामद रजाभाई, साधक सिद्धानन्द, देशमाने, सी० वी० वैद्य, लाखाभाई सागठिया, एम० एस० कन्नमवार, नानासाहब, कानिटकरको। तार: माधवन नायर, राजा कालाकाँकर, कौता सूर्यनारायण, रामचन्द्र, लल्लूभाई, वैकुण्ठ, उसकी पत्नी, अम्बालाल-भाई, देवधर, माटे, हरिभाऊ आदिको। फ्री प्रेसका प्रतिनिधि, नरगिसबहन, शीरीनबहन, सतीशबाबू, देवदास मिल गये। ये सब शामको मुलाकातके लिए आये। सुबह बिड़लाकी मण्डली, ठक्कर बापा, परीक्षितलाल, हरचन्द आदि आये।

४ दिसम्बर, रविवार

उपवासका दूसरा दिन। डाक: नरसिंहराव भोलानाथ, रामप्रसाद बक्षी, एल्विनको, डॉयलको दो पत्र लिखे। अप्पाको पत्र। अस्पृश्यताके बारेमें – शम्भुशंकर, लल्लूभाई शा[मलदास], नवले, केलकर (आइस डॉक्टर), उर्मिलादेवी, सिंहनारायणको। इस बार उपवासका बहुत ज्यादा असर हुआ है। बहुत कमजोरी लगती है। वजन एकदम छ: रतल कम हो गया है। हाथ-पैर अकड़ जाते हैं। डॉयल ११ बजे के बाद आया और बुधवार सुबहतक की मुहलत माँगी। मैंने तुरन्त बात मान ली और उपवास छोड़ दिया। यदि प्रस्ताव सन्तोषजनक नहीं होगा तो उपवास फिर करना होगा। सन्तरे और मौसम्बी खाई और उनका रस भी पिया। अनारका रस, अंगूर लिये।

५ दिसम्बर, सोमवार

डाक: मणिलाल, मीराबहन, नारणदासको (२३ पत्र)। अस्पृश्यताके बारेमें – गोपाल मेनन (बा और उर्मिलादेवीके पत्रोंके साथ), रैहाना बहनको। अस्पृश्यता-विरोधी समितिके सदस्य आ गये। उनकी संख्या बारहसे ज्यादा होनेके कारण मिलनेमें आपत्ति की गई। परन्तु मिलने दिया गया। रैहाना, पद्मजा, 'हिन्दू' और 'टाइम्स' [ऑफ इंडिया]के संवाददाता, लेडी रमाबाई पट्टणी और अनन्त पट्टणी और उपासक।

६ दिसम्बर, मंगलवार

डाक: मेढ, नारणदास, रामदास, राघवेन्द्र, चन्द्रप्रभाको। अस्पृश्यताके बारेमें – उपासक, आत्माराम भट्ट, नानाभाई, केलप्पन, वालिया, नीला नागिनी, गोपाल मेनन (बा, बाल और बलीके पत्रोंके साथ), रामचन्द्र, पुट्टन्ना चेट्टीको। ३ तार: काला काँकर [के राजा], सोनीराम, केलप्पनको। कल मुलाकातके लिए आनेवाले – बिड़लाकी मण्डली, ठक्कर, कुँजरू, तीन विद्यार्थी, रामचन्द्र, सतीश बाबू और देवदास।

१. मूलमें यह शब्द स्पष्ट नहीं है।

७ दिसम्बर, बुधवार

डाक : नारणदास, जेठालाल, विट्ठलको। अस्पृश्यताके बारेमें – तिरुकुटसुन्दरम, कजरोलकर, नारायण मेनन, सोमजी सोनवणे, यू० सुब्बाराव, हीरालाल नानावटी, गोपाल मेनन, मेवाड़े, शिवदत्त शास्त्री, लेडी लक्ष्मीबाई, धुरन्धरको। शास्त्री टाइप करनेके लिए जल्दी आया। पद्मा, देवदास और सरोजिनीसे मुलाकात। पूना, पंढरपुर, जलगाँव आदिके शास्त्रियोंसे दो घंटे चर्चा। वे कुल १४ व्यक्ति थे।

८ दिसम्बर, गुरुवार

डाक : मीराबहन, नारणदास (लीलाधर और छगनलाल गांधीके पत्रोंके साथ) नानालाल श्रॉफ, मुंशीको। अस्पृश्यताके बारेमें – धायगुड़े, नवले, तुमल बसवैया, टेंबेकर, मणिभाई देसाई, देवदास, अरकटे, राजभोज, लेलेको। तार : बेलगाँववालाको, तार रतुभाईको बुलानेके बारेमें। पूनाकी सनातन धर्म सभाके लिए आये हुए पंढरपुर और जलगाँवके शास्त्री तथा अन्य व्यक्ति (कुल मिलाकर १५) मिलने आये। अभी और कल आयेंगे। हरिभाऊ सेवासदनकी ३ बहनोंके साथ मिलने आये।

९ दिसम्बर, शुक्रवार

डाक : एन्ड्रयूज, ज्यो० एन्ड्रयूजको। तार : सुब्रामयनको, तार नारायण चेट्टीको (दोनों तार अस्पृश्यताके बारेमें)। [पत्र] नारणदासको (कुसुम, पुरातन और राघवनके साथ)। अस्पृश्यताके बारेमें – सुब्रामन्यम, व्रजकृष्ण, जे० के० महेता, पंढरीनाथ बीडकर, अम्बालाल, प्रकाशनारायण शिरोमणि, शिवभक्त गांधी, लेडी लक्ष्मीबाई, राधाकान्त और सनातनी, ओतुरकर, देवदास मिलने आये।

१० दिसम्बर, शनिवार

डाक : खीमचन्द, मार्गरेट कजिन्स, डालमिया, रा० चौधरी, दामोद[र], सुन्दरदास, पांडेको। अस्पृश्यताके बारेमें – मथुरा मोहन देव, लच्छन राय, साठे, कन्हैयालाल मिश्र, नरसिंहाचारी, तुलसीराम लोधी, अमृतलाल देसाई, खलदकरको। तार : आचार्य ध्रुव, अमृतलाल ठक्कर, दफ्तरी (सत्रको अस्पृश्यताके बारेमें)। उपासक और उसके मित्र, नटराजन (अपने बेटा-बेटीके साथ), लेडी विट्ठलदास अपनी देवरानीके साथ, हरिभाऊ और दिवाकर शास्त्री और डावरे, सोनवणे (नगरपालिकाका एक मांग[1] सदस्य) नगरपालिकाके अन्य सदस्योंके साथ और रतुभाई मिलने आये।

११ दिसम्बर, रविवार

डाक : वासुकाका, लालवानी, ठाकुर, बलवन्त सिंहको। अस्पृश्यताके बारेमें – गोपाल मेनन, नानासाहब, मेरी जिलेट, कणाकर मेनन, प्रज्ञानेश्वर यति, रामजी, जोजेफ, शिवचिदम्बरम, नवीनचन्द्र, आनन्दतीर्थ, रामुन्नी मेनन, पीकॉक, पटवर्धन, सुखाभाऊ, सुमनको।

१. एक जाति जो मृत पशुको हटानेका का काम बहुत समयसे करती आ रही थी।

१२ दिसम्बर, सोमवार

डाक : भक्तिबहन, बेगम आलम, कुमारी कोरा फ्राइ, नारणदासको (२५)। तार : मोतीलाल रायको। [पत्र :] हमीदा, प्रभुदास, रामनाथ सुमन, कमलनयनको। अस्पृश्यताके बारेमें गोपाल मेनन, वर्णाश्रम स्वराज्य संघके मंत्री, तलेगाँवकर, बम्बई आर्य समाज, विजयकुमार, सुखाभाऊ (बा, उर्मिलादेवी और राजाके साथ), गु० बहन चौया, कीकीबहन, लालवानी, गोदावरीबहन, पुरुषोत्तमदास हरिकिसन दास, हरि-इच्छा, नानाभाई, साठेको। आज हरिभाऊ, महादेव शास्त्री और सताराका एक जमींदार तथा 'टाइम्स' [ऑफ इंडिया] का संवाददाता और व्रजलाल नामक एक व्यापारी, पोरबन्दरके एक शास्त्रीके साथ मिलने आये। रामचन्द्र राव और उसका साथी [भी]।

१३ दिसम्बर, मंगलवार

डाक : कन्हैयालाल मुंशी, श्रीमती ब्रूनर, प्रोफेसर वाडिया, नारणदास (सोमन, दामोदर दास, सन्तोकबहनके साथ)। अस्पृश्यताके बारेमें — अनैय्या, वैद्य, डावरे, वैंकट-रामनय्या, रामरतन मुखर्जी, तलेगाँवकर, नरसिंहाचारी, नाडकर्णी, मुंशीलाल गुप्त, चिदानन्द दास, ग० चेट्टी, विनायक लागू, कुलकर्णी, नाथन, सदाशिव राव, नागेश्वर रावको। नागपुरसे लक्ष्मण शास्त्री, दफ्तरी आये। प्रोफेसर पुरन्दरे मिलने आये। पाशंकर और उसकी मण्डली, शोलापुर मिलवाला साठे मिलने आये। रामचन्द्र राव और उसका साथी [भी]।

१४ दिसम्बर, बुधवार

डाक : मीठूबहन, नारणदास, शंकरलाल व्यास, मणि, कमल कुमार बनर्जीको। अस्पृश्यताके बारेमें — चन्दूलाल देसाई, आनन्दशंकर ध्रुव, विश्वनाथ मिश्र। पनिक्कर, नागिनी, गद्रे, अमूल्य सेन मेता, वरदाचारी, भगवान शास्त्री, धारूरकर, सुन्दरदास, ठाकुर, मिश्रको। तार : आनन्दशंकर ध्रुव, खलदकर, मोतीलाल राय, नायक (कुर्ला) को। बम्बई आर्य समाज मण्डल (सात व्यक्ति), हरिभाऊ, दफ्तरी, तलेगाँवकर, निजाम राज्यके पाँच विद्यार्थी, कुमारी कोरा फ्राई (एक अस्पृश्य बालिकाके साथ) मिलने आये। तार शामजीभाईको।

१५ दिसम्बर, गुरुवार

डाक : रुखी, मावलंकर, शकराभाई, कुँवरजी, गोरधनदास, धर्मदेव, शिवप्रसाद, मीराबहनको। अस्पृश्यताके बारेमें — भगवानदास, गोपाल मेनन, मोतीलाल राय, देवराज, शिवदास चांपशी, केशवदत्त महाराज, राजेश्वर शास्त्री, नानालाल गणात्रा, लक्ष्मणाचारी, रंगस्वामी, प्रियनाथ चटर्जी, धर्मानन्दरामको। तार : राजा, बिड़ला, धीरूभाई और उसकी पत्नी, रैहाना, पद्मजा, अम्बेडकरका सचिव चित्रे, 'जनता' का सम्पादक और एक अन्य संस्थाके पाँच व्यक्ति, प्रज्ञानेश्वर यति, मगनभाई नायक, अगाशे मिलने आये। श्रीमती सरोजिनी देवीसे दफ्तरमें मिला।

१६ दिसम्बर, शुक्रवार

डाक: जमनालालजी, जमनादास, पकवासा, मुंशी, जैकीबहन, छोटालालजी, जानकीबहन, नारणदास (प्रेमा, विट्ठलके साथ), लीलाधर, मनमोहन गांधी, जानकीबहन, अखिल भारतीय स्वराज्य संघको। अस्पृश्यताके बारेमें – रामेश्वर ओझा, सुखाभाऊ, विष्णुदत्त, मिश्र, हनुमानप्रसाद, सालुंकेको। तार: विधानचन्द्र राय, बिड़ला, राजगोपालाचारी, बिड़लाको (२)। मुलाकातियोंमें तलेगाँवकर और जोशी अन्य सात व्यक्तियोंके साथ थे।

१७ दिसम्बर, शनिवार

डाक: नारणदास कुसुम, राधा, परशुराम, जमनाबहन, प्रेमाबहन, [आश्रमके] बालकों, सन्तोक, प्यारेलाल, मणिलाल गांधी, छगनलाल गांधी, डॉक्टर दत्त, वरदाचारी, योगेश चटर्जी, गिरधारी लालको। अस्पृश्यताके बारेमें – नानाभाई, कीरचन्द कोठारी, रतनशी जेठा, डावरे, धारूरकर, सुब्र[ह्मण्यन], आचार्य, रामचन्द्र, विद्यार्थी, रघुनाथ बैंकर, महादेवन, प्रज्ञानेश्वर यति, नीलकण्ठ आयर, दुनीचन्दको। बाबा साहब पोद्दार, हरिभाऊ, बापट शास्त्री, धुलियासे खलदकर और अन्य चार व्यक्ति मिलने आये।

१८ दिसम्बर, रविवार

डाक: मोहनलाल भट्ट, फूलचन्द, कौसल्या रामको। अस्पृश्यताके बारेमें – नृसिंह प्रसाद भट्ट, मणिलाल द्विवेदी, छोटूभाई त्रिवेदी, विष्णुप्रसाद त्रिवेदी, छोटेलाल, प्राणलाल अम्बालाल, सुब्र[ह्मण्य], अय्यर, अनन्त राव, चन्द्रशंकर, कोतवाल, नटराजन[1], देवधर[2], कुमारी बारको।

१९ दिसम्बर, सोमवार

डाक: लक्ष्मी, नारणदास (२४), गोपीकृष्ण, केशू (राधा, सन्तोकबहनके साथ), सीतला सहाय (सरोजिनी, पद्माके साथ), जोहरा, सुरबाला, [इन्दुमती], मधुमतीको। अस्पृश्यताके बारेमें – आर्य समाजके मन्त्री, सतीशदास गुप्त, सोहनलाल, जीवराज सोलंकीको। तार: कस्तूरभाई, गिडवानी, जयसुखलाल मेहताको मोतीबाबू और उनके दो शिष्य, शास्त्री-मण्डल (श्रीधर शास्त्री, कोकजे शास्त्री, लक्ष्मण, चित्राव), हरिभाऊ, पोद्दार, प्रोफेसर पुरन्दरे मिलने आये। कुमारी बार और क्राइस्ट सेवा संघके एक भाई मिलने आये।

२० दिसम्बर, मंगलवार

डाक: विनोद घोषाल, नारणदास (चम्पाके साथ), उमेदराम, जयसुखलाल मेहता, चिन्तामणि, बाबूभाई पटेल, तारामती, कु० अग्रवाल, जमनादास, कमला नेहरू, कु० नायरको। अस्पृश्यताके बारेमें – नीरेन्द्र, सुबा, जयसुखलाल मेहता, ध्रुव, दामोदरदास, रघु[नाथ] स्वामी, टंडन, धूत, हरिभाऊ फाटक, तलेगाँवकरको। बा, वेलाबहन, बाल

१. और २. उनके साथ गांधीजी के वार्तालापके लिए देखिए परिशिष्ट १४।

मिलने आये। जमनालालजीको जब चाहे मिलनेकी अनुमति मिल गई है और वह मिले। छगनलाल, मगनलालसे पहली बार मुलाकात हुई। पंचानन तर्करत्नके साथ मोतीबाबूकी मण्डली आई। डॉ० मैत्र, कुमारी बार, सातवलेकर, वाई[कि] लक्ष्मण शास्त्री कोकजे शास्त्री, दफ्तरी, दवे आदि मिलने आये। गोपाल मेननको तार।

२१ दिसम्बर, बुधवार

डाक: प्रेमी, नानालाल, एन्ड्रयूज, नारणदासको (माधवलाल, राधिकाके साथ)। अस्पृश्यताके बारेमें – वकायिल नायर, जोशी, रामभद्र राव, प्रभाकर, गोपालदास, लक्ष्मीदास दानी, कुँजरू, रामगोपाल शास्त्री, जी० एच० पटवर्धन, डेविड, बिड़ला, आर० वी० पटवर्धन नाथ नायक, कीकाभाई वाघेला, मंगलभाई बाघजीभाई, वनमाली पारेख, अल्तेकर, भाम्भानियाको। कुमारी स्पीगल, दो अमरीकी महिलाएँ (जो आईं और भूलसे २७० रु० दे गईं)। चिन्तामणराव वैद्य, वासुकाका जोशी, शं० बँकर और मूलजी सिक्का, कुमारी जिलेट और पोचाबहनें, कुमारी बार, मोतीबाबू और उनकी मण्डली (दो महिलाओंके साथ) व्रजलाल सेठ और हिम्मतशंकर शास्त्री, राजा कालाकाँकर, राघवेन्द्र [मिलने आये]।

२२ दिसम्बर, गुरुवार

डाक: मीरा, भक्तिबहन, गोपाल नारायण, प्यारे अली, वनिता गलियारा, रामप्रसाद, रुखीको। अस्पृश्यताके बारेमें – कीरचन्द, प्रतापसिंह, ताराचन्द, धुरन्धर, वियोगी हरि, प्रज्ञानेश्वर यति, हृदयनाथ कुँजरू, जयसुखलाल, रामुन्नी मेनन, वेंकटप्पैया, गोपाल मेनन, सदाशिव राव, सुखाभाऊ, जयसुखलाल, रामुन्नी मेनन, गो० मेननको। तार: कृष्णन नायरको। स्वरूप, राजा कालाकाँकर, राघवेन्द्र, स्पीगल, पंचानन तर्करत्न, और मोतीबाबूकी मण्डली, भगवानदासजी, हरिभाऊ, खानदेशके कार्यकर्ता – छोटूभाई, दीघे [मिलने आये]।

२३ दिसम्बर, शुक्रवार

तार: माधवन नायर, श्रीकृष्ण अय्यर, खुर्शीदबहनको। डाक: मोहनलाल भट्ट, अन्सारी, नारणदासको। अस्पृश्यताके बारेमें – गोपाल मेनन, सदाशिव राव, माधवन नायरको। सनातनी — धारूरकर, नीलमेघाचारी (शोलापुरके), श्रीधर शास्त्री वड़े, नानासाहब खासगीवाले, भाऊसाहब लवाटे, नासिक [के] चन्दराम शास्त्री, सुधारक शास्त्री — आनन्दशंकर, वैद्य, भगवानदास, कोकजे शास्त्री, लक्ष्मण शास्त्री जोशी, चित्राव शास्त्री, पोद्दार आदि [आये]।

२४ दिसम्बर, शनिवार

डाक: मगनलाल (जैंकीके साथ), छगनलाल, वालजी, मावलंकर, मथुरादास, भगवती देवी, नारणदास (भाऊ, इन्दुके साथ), ओल्सन, मणीन्द्रनाथ मित्र, एलेक्जेंडर, सेन, गिडवानी, म्यूरियल, मोहनलाल, अब्बास साहबको। अस्पृश्यताके बारेमें – के० वाघेला, हरिलाल परीख, विश्वानन गिरि, नरगिस (खुर्शीदका पत्र), वसन्तकुमार चटर्जी

(बिड़लाको सौ रु० का बीमा किया हुआ पैकेट)। कलवाले सभी सनातनी और सुधारक शास्त्री [फिर आये]।

२५ दिसम्बर, रविवार

डाक: शिवराव, रैहाना, रुस्तम धोंडी, शिवप्रसाद गुप्त, लक्ष्मीदेवीको। अस्पृश्यताके बारेमें – राने, वेंकटरमन, पोन्नम्मल, गोपाल मेनन, पूर्णचन्द्र डे, शा० ना० अय्यर, भटनागर, वैदिक धर्मवर्धिनी सभा, राजन, एस० राजगोपालाचारी, वेंकट कृष्णय्या, नरसिंहाचारी, केशवराव, भोले, वरदराजुलु, केनन हॉलेंड, नारायण मेनन, कल्याणराम अय्यर, कुलकर्णी, राधाकान्त, मुकन्दीलाल, श्यामजी मारवाड़ी, मूलचन्द पारेख, वसन्तलाल शंकरलालको।

२६ दिसम्बर, सोमवार

डाक : लक्ष्मीदास, मुंशी, मीठूबहन पेटिट, बनारसीदास बजाज, नारणदास, दास्ताने, मोहनलाल भट्ट, मावलंकर, अ० पटेलको। अस्पृश्यताके बारेमें – परीक्षितलाल, हरिलाल वकील, नरदेव शास्त्री, परशुराम खरे, वेणीराम ततवा, पू० त्रिपाठी, छो० पंडितको। सनातनी और सुधारक शास्त्री (आज कोकजे और चित्राव शास्त्री नहीं आये), शंकरलाल बैंकर, कृष्णन नायर, बड़ा रोबर्टो, मणिलाल, सुशीला मिलने आये। और जमनादास द्वारकादास होम मैम्बरसे विशेष अनुमति लेकर मिलने आया।

२७ दिसम्बर, मंगलवार

डाक : सतीश बाबू, अर्नेस्ट न्यूअल, कीकीबहनको। अस्पृश्यताके बारेमें — साहू, शेनाई, ब्रजकृष्णको। आनन्दशंकरजी, स्मृति-सुधारक शास्त्री, देवदास, प्यारेलाल, बा, नरगिस, जमनाबहन, शीरीनबहन, कमलाबहन, सोनावाला [मिलने आये]।

२८ दिसम्बर, बुधवार

डाक : जमनादास गांधी, परचुरे शास्त्री, जोजेफ (चित्तूर), जोजेफ (मदुरै)को। अस्पृश्यताके बारेमें — श्री पाठक, वासुकाका, प्रमथबाबू, दत्ताराम उपासक, गजराज कोठारी, नवले, उजगरे, नीला, जेठालालको। तार: शिवराम वैद्यको। राजाजी, केलप्पन, माधवन नायर, गिडवानी (अपने तीन मित्रोंके साथ), बा, सुधारक-शास्त्री मिलने आये। नारायण शास्त्रीने यहीं भोजन किया। देवदास मद्रास गया।

२९ दिसम्बर, गुरुवार

डाक : नारणदास, मीराबहन, साइलस, एफी, एन्ड्रयूज, हौज, रेव० कुलकर्णी, पाशाभाई, भगवानजीको। अस्पृश्यताके बारेमें – घनश्यामदास, कानन, नाथन, स्वामीनाथन, रामस्वामी, कल्याणराम अय्यर, भार्गव, जयसुखलाल मेहताको। तार: कौसल्याको। राजा, माधवन नायर, केलप्पन, वैद्य, जोशी, वासुकाका, पद्मजा, शेशु अय्यर, ब्रह्मचारी विष्णु बाबा, बा, प्यारेलाल आदि मिलने आये। मेहता भाई, नानालाल, रतुभाई [भी]।

३० दिसम्बर, शुक्रवार

डाक : दिनकर, माधवलाल पटेलको। अस्पृश्यताके बारेमें – घनश्यामदास, राजा, माधवन, केलप्पन, धारूरकर, दावड़े (तीन व्यक्तियोंको साथ) केशवदत्त महाराज, भगवानदासको। इन्दिरा रमन, जोशी शास्त्री, मेहता बंधु, प्रेमा, सुशीला, जमनादास, उर्मिलादेवी, जितेन [मिलने आये]।

३१ दिसम्बर, शनिवार

डाक : जीवराम शास्त्री, माधवलाल, शंकर, कान्ति, भूलाभाई देसाई, माणिकबाई, जवाहर, एल्विन, खेतान बालकोंको। अस्पृश्यताके बारेमें – माधवजी, वीरसुत, विधान राय, वेदप्राण, इन्दपुरकर, करसनदास, हनुमानप्रसाद, जोशीको। तार : देशबन्धु गुप्तको। मुलाकातियोंमें राजा, केलप्पन, लक्ष्मण शास्त्री, हरिभाऊ, भगवानदास, इन्दिरा रमन, उर्मिलादेवी जितेन, कैम्पसे रामदास और कर्नाटकके एक भाई, झीनाभाई जोशी थे।

[पुस्तकोंकी सूची][1]

ड्यूरेंट [**दि केस फॉर इंडिया**][2]; क्रोजियर [**ए वर्ड टु गांधी**][3]; ब्रेल्सफर्ड [**रिबेल इंडिया**][4]; [मुहम्मद अली][5]; अलहल सालीमीनकी **इमाम हुसैन और खलीफा अली**; [सर सैम्युअल][6] होरकी **फोर्थ सील**; रैम्जे मैक्डॉनल्डकी **ट्रैवॅलॉग**; **दि सर्वे ऑफ मातर तालुका**,[7] रामनाथनका खादी सम्बन्धी भाषण, [विल][8] हेसकी **इंडियन बाइबिल्स**[9]; रस्किनकी **सेंट जार्जेज गिल्ड**; शाहकी[10] **फेडरल फाइनेंस**; [रॉथेनस्टाइन की][11] **रूईन ऑफ ईजिप्ट**; [हेसकी][12] **दि बुक ऑफ दि काऊ**; [ए० ई०की][13] **कॅंडिल ऑफ दि विजन**; किनलेकी **मनी**; **शंख अने कोडी** [गुजराती]; [एन्ड्रयूजकी][14] मुंशी जकाउल्लाकी जीवनी; टैगोरको पुष्पांजलि, **साकेत**[15]; शाहकी **सिक्स्टी इयर्स ऑफ इंडियन फाइनेंस**[16]; **पंचवटी**[17];- सालवेमिनीकी **मुसोलिनी**; डिलाइल बर्न्जकी **डेमोक्रेसी**;

१. साधन-सूत्रके अन्तिम पृष्ठोंमें गांधीजी ने यरवदा जेलमें १९३२ में जो पुस्तकें पढ़ीं, उनकी सूची दी हुई है। सूची गांधीजी की लिखावटमें है।

२. से ४. "पत्र : नारणदास गांधीको", ३/८-२-१९३२ से; देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ७५-६।

५. "दैनन्दिनी, १९३२" से; देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ४९२।

६. "दैनन्दिनी, १९३२" से; देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ४९२।

७. जे० सी० कुमारप्पा द्वारा लिखित।

८ और ११ से १४. "पत्र : नारणदास गांधीको", ३/८-२-१९३२ से; देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ७५-६।

९. पूर्वोक्त "पत्र : नारणदास गांधीको", में इसकी जगह **कुसेन्स ऑफ हिन्दूइज्म** का नाम है।

१०. खुशाल टी० शाह।

१५. और १७. मैथिलीशरण गुप्तकी काव्य-कृतियाँ।

१६. "पत्र : नारणदास गांधीको", ३/८-२-१९३२ में **सिक्स्टी इयर्स ऑफ इकॉनॉमिक एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया** नाम दिया गया है।

अप्टन सिंक्लेयरकी **दि वेट परेड**; [एडवर्ड कारपेंटरकी][1] **एडम्स पीक टु एलिफेंटा**; मैथिलीशरणकी **अनघ**; स्टोक्सकी **सत्यकाम**; रस्किनकी **फोर्स [क्लेवीगेरा]**[2]; नरसिंहभाईके पत्र,[3] **समर्पण, बुद्ध और महावीर,**[4] उर्दूकी दूसरी पुस्तक; उर्दूकी तीसरी पुस्तक; इमाम साहब द्वारा और नानाभाई[5] द्वारा लिखित पैगम्बरकी जीवनी; हीथकी खगोल शास्त्रकी पुस्तक; रोलाँकी **रामकृष्ण**; मांडरकी खगोलशास्त्रकी पुस्तक; [रोलाँकी][6] **विवेकानन्द**; के० की हिन्दू खगोलशास्त्र; कीर्तिकरकी **स्टडीज इन वेदान्त**; सर जीनकी खगोलशास्त्रकी पुस्तक; लेडी रामनाथनकी **रामायण**; घनश्यामदासकी पुस्तिकाएँ; **वैदिक विनय**; लाहौर अंजुमन द्वारा प्रकाशित उर्दूकी चौथी पुस्तक; के० टी० शाहकी **इंडियन करेंसी**; [और] **एक्सचेंज बैंकिंग**; जामिया [मिलिया] द्वारा प्रकाशित उर्दू नाटक **शरीफ लड़का और खेती**; किमियागर; [गंगाका] वेदांक; [प्रेमचन्दजीकी]- **रामचर्चा**[7]; खरासकी खगोलशास्त्रकी पुस्तक; **स्वाध्याय संहिता**, अय्यरकी **फोरेन एक्सचेंज**; **दि वे ऑफ दि क्रॉस**; **दि प्रोफेट्स मेसेज टु दि वेस्ट**; **सीरत-उन-नबी**[8]; लोकेयरकी खगोलशास्त्रकी पुस्तक; नाडकर्णीकी पुस्तिका; **वेदमां अध्यात्म**; हर्शल और अन्य कमेटियोंकी रिपोर्टें; मैटरलिंककी **मैजिक ऑफ स्टार्स**; एड्रयूजकी **व्हाट आई ओ टु क्राइस्ट**; जीन्सकी **मिस्टीरियस युनिवर्स**; **गांधी विचार दोहन**; प्रो० वाड़ियाकी **सदर्न क्रॉस**; थडानीका कविता-संग्रह; और मदानकी उपवास[9] [विषयक] पुस्तक।

४३४. पत्र : कालीकटके जमोरिनको

१ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके २६ तारीखके पत्र[10] के लिए धन्यवाद। आपके पत्रसे मुझे दुःखद आश्चर्य हुआ। एक ऐसे विषयमें जो मेरे लिए शुद्ध धार्मिक है, और आपके लिए भी होना

१. २ और ६ "दैनन्दिनी, १९३२" से; देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ५०१, ५०३ और ५१२।

३. नरसिंहभाई ईश्वरभाई पटेल।

४. किशोरलाल घ० मशरूवाला द्वारा लिखित।

५. नृसिंहप्रसाद कालीदास भट्ट।

७ और ८. "दैनन्दिनी, १९३२" से; देखिए खण्ड ५०, पृष्ठ ४६७ और ४६९।

९. "दैनन्दिनी, १९३२" से; देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ ४७३।

१०. जिसमें लिखा था : "आपने पूछा है कि क्या मन्दिर वर्षमें तीन दिन अस्पृश्यों समेत सभी हिन्दुओंके लिए खुला रहता है। इसके उत्तरमें मुझे यह कहना है कि यह सूचना सही नहीं है। अस्पृश्योंको किसी भी दिन मन्दिरमें प्रवेशका अधिकार नहीं है। परन्तु क्योंकि यह मानी हुई बात है कि कार्तिकेयी एकादशीके दिन भारी भीड़ मन्दिरमें प्रवेश करती है और उस भीड़में अस्पृश्य भी हो सकते हैं और

चाहिए, मैं प्रत्येक पक्षसे अधिक स्पष्टवादिता और सद्भावनाकी अपेक्षा रखता हूँ। आपके पूर्वोक्त पत्रमें वह मुझे नहीं मिली। क्या आपने कभी कार्त्तिकेयी एकादशीके दिन किसी अस्पृश्यको बाहर निकाला है। यदि प्रत्येक एकादशीको हजारों नहीं तो सैकड़ों अस्पृश्य नर-नारी मन्दिरमें प्रवेश करते हैं, जैसा कि सिद्ध किया जा सकता है, तो उनमें से कुछको पहचान लेना कठिन नहीं हो सकता। मेरे पास जो प्रमाण हैं वे यह दिखाते हैं कि अस्पृश्योंकी भीड़ प्रतिवर्ष उस पर्वपर इस विशेषाधिकारका उपभोग करती है। आपने मुझे मद्रास उच्च न्यायालयके फैसलेका हवाला दिया है। वह फैसला, यदि मैं उसे ठीक तरह समझा हूँ तो, साफ-साफ यह दिखाता है कि अस्पृश्य एकादशीके दिन चोरी-छिपे नहीं, बल्कि खुलेआम अपने अधिकारसे, मन्दिरमें प्रवेश करते हैं।

मेरे सामने वह फैसला है और उसमें जो लिखा है वह मैं पढ़ता हूँ :

> गुरुवायुर मन्दिर कोई निजी मन्दिर नहीं है, बल्कि सार्वजनिक मन्दिर है, और प्रत्येक हिन्दूको, अति प्राचीन कालसे प्रचलित प्रथागत नियमों और विनियमोंके अधीन, उसमें पूजा करनेका अधिकार है। वस्तुतः ऊँची जातिवालोंको पूरे साल मन्दिरमें प्रवेशकी अनुमति है। इस प्रयोजनके लिए उन्हें मन्दिर जानेवाले रास्तों और उसके चारों ओरके रास्तोंके उपयोगका अधिकार है। नीची जातिवालोंको केवल एकादशी त्यौहारके दिन ही प्रवेशका अधिकार है और उस दिन उन्हें उन रास्तोंके उपयोगका भी अधिकार है। अन्य दिनोंमें उन्हें इनमें से कोई भी अधिकार नहीं है। अति प्राचीन कालसे यही स्थिति है।

उसी फैसलेमें से अब यह पढ़ता हूँ :

> नीची जातिवाले भी आखिर तो हिन्दू ही हैं, और हो सकता है इसी विचारको दृष्टिमें रखते हुए वर्षमें एक दिन मन्दिर उनके लिए खोल दिया जाता है। दिखावेको बहाना यह दिया जाता है कि उस दिन भीड़को रोकना असम्भव होता है, पर भीतरी उद्देश्य नीची जातिवालोंको उस दिन प्रवेशकी अनुमति देना होता है। सुप्रसिद्ध वैष्णव सुधारक रामानुजका यही मत था। उनके अनुसार, सभी वैष्णव मन्दिर वर्षमें एक दिन सभी जातियोंके लिए खोल देने चाहिए।

क्योंकि, हर हालतमें, यह निश्चित करना कठिन होता है कि भीड़के लोग किन-किन जातियोंके हैं, इसलिए अगले दिन (द्वादशीको) शुद्धि-संस्कार किया जाता है। इसके अतिरिक्त एकादशीके दिन अस्पृश्योंका तथाकथित प्रवेश वास्तविकता नहीं है। वे मन्दिरमें कतई प्रवेश नहीं करते हैं। और भी निश्चित विवरणोंके लिए मैं आपको मद्रास उच्च-न्यायालयके श्री जस्टिस रामेशम पंतुलुके उस फैसलेका हवाला देना चाहूँगा जो गत जूनके मध्यमें सुनाया गया था, जिसकी एक प्रति, मेरा खयाल है, आपके पास होगी।”

यदि मैं बहुत अधिक गलतीपर नहीं हूँ तो ये दोनों अनुच्छेद इस बातका निर्णायक प्रमाण लगते हैं कि उस विशेष एकादशीके दिन अस्पृश्योंको वेरोकटोक मन्दिरमें प्रवेशकी अनुमति होती है।

यह विषय क्योंकि बहुत ही सार्वजनिक महत्त्वका है, इसलिए मैं इन पत्रोंको समाचारपत्रोंको भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

राजा मानवेदन राजा
कालीकटके जमोरिन
कोट्टक्कल

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२)से।

४३५. पत्र : सी० वाई० चिन्तामणिको

१ जनवरी, १९३३

प्रिय श्री चिन्तामणि,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। उपवास मेरे लिए सोलहों आने तर्क-बुद्धिकी चीज नहीं है, क्योंकि मेरी इस बातपर विश्वास करनेमें आपको कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि इस तरहके सभी उपवास एक अदृश्य शक्ति द्वारा प्रेरित रहे हैं। "अदृश्य शक्ति" शब्द मैं जान-बूझकर प्रयुक्त कर रहा हूँ, क्योंकि उस शक्तिके अनिष्टकारी होनेकी सम्भावनाको भी मैं अस्वीकार नहीं करता हूँ। परन्तु ये उपवास मेरी तर्क-बुद्धिको अच्छे लगे हैं, जैसे कि बहुत-से बिलकुल अनासक्त मित्रोंको भी लगे हैं। सभी आध्यात्मिक कार्योंके मूक और अदृश्य प्रभाव उनके महसूस होनेवाले और दिखनेवाले प्रभावोंसे कहीं गहरे और व्यापक होते हैं। इसलिए इन उपवासोंका परिणाम यदि कहीं नैतिक बाध्यता हुआ है, तो उस नैतिक बाध्यताके अधीन काम करनेवालों की अपेक्षा हजार-गुना लोगोंको इन्होंने निस्सन्देह अव्यक्त रूपसे क्रियाशील किया है। इसलिए वह संख्या नगण्य मानी जा सकती है। आध्यात्मिक कार्योंका इस तरहका परिणाम कोई कल्पना नहीं है, बल्कि किसी भी अन्य मूर्त परिणामकी तरह विशिष्ट परिस्थितियोंमें वह सिद्ध किया जा सकता है। यहाँतक नैतिक बाध्यताकी बात हुई।

जहाँतक उपवासोंकी अनुमति देने या न देनेका सवाल है, मैं आपसे इस बातमें बिलकुल सहमत हूँ कि यदि यह कार्य ही निषिद्ध हो जाता है तो उद्देश्यकी बात अप्रासंगिक है। पहली बात तो यह है कि शर्त-सहित उपवास आत्महत्या नहीं है। परन्तु यदि हम हिन्दू-शास्त्रोंको प्रमाण मानते हैं, तो वहाँ न केवल शर्त-सहित उपवासके लिए, बल्कि कुछ असाधारण परिस्थितियोंमें शर्त-रहित उपवासतक के लिए पर्याप्त प्रमाण मिलता है। हालही में मुझे मद्रासके एडवोकेटों द्वारा जारी की

गई एक पुस्तिका मिली है, जिसमें शास्त्रोंसे मेरे-जैसे उपवासोंके उदाहरण एकत्रित किये गये हैं। यदि आप इस विषयकी छानबीन करना चाहें तो मैं उस पुस्तिकाकी अपनी वाली प्रति खुशीसे आपको भेज दूँगा।

आपको और श्री कृष्णरामको मेरा अभिवादन।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सी० वाई० चिन्तामणि
१७ हेमिल्टन रोड, इलाहाबाद

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२९) से।

४३६. पत्र : प० सुब्बारायनको

१ जनवरी, १९३३

प्रिय डॉ० सुब्बारायन,

पिछली २८ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। इन दिनों मैंने आपके साथ, श्रीयुत राजगोपालाचारीके माध्यमसे, बराबर सम्पर्क रखा है। आपके विधेयकके पूरे मजमूनकी एक नकल उन्होंने मुझे भेजी थी। उस समय मैंने उसे आलोचनात्मक दृष्टिसे तो नहीं पढ़ा, पर मुझे लगा कि वह उद्देश्य पूरा करता है। वाइसरायकी अनुमति मिल जानेपर, जो मुझे आशा है बिना किसी अनावश्यक विलम्बके आपको मिल जानी है, मैं उसपर आलोचनात्मक दृष्टिसे विचार करूँगा। उपवास अनिश्चित कालके लिए स्थगित करनेकी अपनी घोषणाके बाद मैं आपके पत्रकी आशा ही कर रहा था।

आपको और श्रीमती सुब्बारायनको अभिवादन।

हृदयसे आपका,

डॉ० प० सुब्बारायन
तिरुचेनगोडु, सलेम जिला

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१३३) से।

४३७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१ जनवरी, १९३३

प्रिय घनश्यामदास,

तुम्हारा २७ तारीखका पत्र मिला। विधेयक मैंने देखा था। जाहिर है, जिस अर्थमें तुमने उसे [मन्दिर-प्रवेशकी] अनुमति देनेवाला माना है, वह उस अर्थमें अनुमति देनेवाला नहीं है। विधेयक अनुमति देनेवाला इस अर्थमें है कि वह सारे मन्दिरोंके अस्पृश्योंके लिए अपने-आप खुलनेकी घोषणा नहीं करता पर मन्दिर उपासकोंके बहुमतसे खोले जा सकते हैं, ट्रस्टियोंकी मर्जीपर नहीं।

विधेयक पेश करनेकी अनुमति मिलनेके बारेमें तुम्हें जो भरोसा है, आशा है वह ठीक निकलेगा। राजाजी यहाँ तीन दिनतक रहे और हममें विधेयक और गुरुवायुर मन्दिरकी स्थितिपर लम्बी बातचीत हुई।

आशा है, साप्ताहिक[1] के प्रकाशनके सम्बन्धमें आवश्यक औपचारिक कार्रवाई पूरी हो गई होगी।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९१५) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला। इन दि **शैडो ऑफ दि महात्मा**, पृष्ठ ८६ से भी।

४३८. पत्र : जमनालाल बजाजको

१ जनवरी, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। वक्तव्य[2] का अन्तिम पन्ना टाइप होते ही उसकी प्रति तुम्हारे पास भेज दी थी। समाचारपत्रवालोंको तो उसी समय दे दिया था। तुम्हारे हाथमें वक्तव्य परसों पहुँचा और समाचारपत्रोंमें कल छपा। उपवास मुल्तवी कर दिया है, सिर्फ इतनी ही खबर वक्तव्यसे पहले दी गई थी। और वक्तव्य भी तैयार होते ही भेज दिया गया, इसलिए देरी नहीं मानी जायेगी। गुजराती अनुवाद होते ही फौरन भेज दूंगा।

१. **हरिजन**।

२. अस्पृश्यतापर; देखिए पृष्ठ ३१५-९।

दूसरे पत्र जैसे-जैसे तैयार होते जा रहे हैं वैसे-वैसे उन्हें भेजते जा रहे हैं। वक्तव्यकी नकल करनेकी कोई जरूरत नहीं है। जिनको नकलकी जरूरत होगी उन्हें मैं दे सकता हूँ।

राजा, बा तथा शंकरलाल आज बम्बईके लिए रवाना हो गये होंगे। राजाजी आज रातकी गाड़ीसे मद्रास जायेंगे।

मणिलाल और सुशीलाने तुमसे मिलनेका प्रयत्न तो किया था, परन्तु सफल नहीं हुए। वे बुधवारको रवाना हुए।

हम कल दस बजे मिलेंगे। मेरा तो मौन होगा इसलिए तुम्हें जो कहना हो कह देना। हम लोग घंटा-सवाघंटा बैठ सकेंगे। जिन बातोंका जवाब देना होगा उन्हें मैं लिखता जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०९)से।

४३९. पत्र : विनोबा भावेको

१ जनवरी, १९३३

चि० विनोबा,

तुम्हारी भक्ति और श्रद्धा आँखोंसे हर्षके आँसू लाती है। मैं इस सबके योग्य होऊँ या न होऊँ, परन्तु तुम्हें तो यह फलेगा ही। तुम बड़ी सेवाके निमित्त बनोगे। नालवाड़ी चले गये, यह ठीक ही है।

भविष्यके लिए अभी तो इतनी ही सलाह है: दूध-त्यागका आग्रह न रखते हुए शरीरकी रक्षा करना। अभी स्वधर्म है, अस्पृश्यता-निवारण। मैं जो लिखता रहता हूँ, उसे पढ़नेके लिए समय निकाल लेना। वह बहुत नहीं होता। मुझे पत्र लिखते रहना। सप्ताहमें एक भी लिखो तो काफी है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ, ३९२।

४४०. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

१ जनवरी, १९३३

चि० पण्डितजी,

तुमने छाराओंमें प्रवेश ठीक पा लिया है। लगे रहोगे तो अवश्य अच्छा परिणाम होगा। काशीमें तुमने ठीक काम किया होगा।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २४२) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

४४१. पत्र : विद्या रा० पटेलको

१ जनवरी, १९३३

चि० विद्या,

तूने पत्र बहुत दिनोंमें लिखा। इस तरह आलस नहीं करना चाहिए। तू डटकर काम करेगी तो दुबली जरूर हो जायेगी।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५२९)से; सौजन्य : रवीन्द्र रा० पटेल।

४४२. पत्र : केशव गांधीको

१ जनवरी, १९३३

चि० केशव (छोटा),

तेरी चिट्ठी मिली। सबको भाई समझें और जितनी बन सके, उतनी उनकी सेवा करें। मित्र तो एक ईश्वर ही है; वह किसी दिन भी धोखा नहीं देता और हमारी सभी शुभ इच्छाएँ पूरी करता है। तब फिर अन्य मित्रका काम ही क्या?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२८५) से।

४४३. पत्र : चम्पाबहन आर० मेहताको

१ जनवरी, १९३३

चि० चम्पा,[1]

तेरा नाम न्यासियोंमें शामिल कर लिया है। दूसरे नाम उन्हींमेंसे हैं जो तूने सुझाये थे। भाई नानालाल[2] तुझसे मिलेंगे और बतायेंगे, इसलिए अधिक नहीं लिखता।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७५६) से।

१. डॉ० प्राणजीवन मेहताके पुत्र रतिलालकी पत्नी।

२. नानालाल के० जसानी, डॉ० प्राणजीवन मेहताके व्यापार-प्रबन्धक और भागीदार।

४४४. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

१ जनवरी, १९३३

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। सचिव बढ़ते जा रहे हैं, मगर कामका बोझ बना ही रहता है। बा, देवदास, प्यारेलाल, बाल और राजाजी मिलकर गये। प्रेमाबहन, जमनादास और इन्दु भी मिल गये। जमनादास बहुत दुबला हो गया है। बीमार था। क्या वहाँ स्त्रियोंके लिए वाचनालय नहीं है? यदि है तो क्या तू उसकी सदस्या नहीं बन सकती? इस बार बनारसीके लिए अलग नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५०)से।

४४५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१ जनवरी, १९३३

चि० प्रेमा,

तू और सुशीला आ गईं यह अच्छा हुआ। आज तुझे लम्बा पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। तेरे अनुभवोंकी राह देखूँगा।

धुरन्धरकी तबीयतके समाचार लिखना। उसे पत्र लिखनेके लिए कहना।

अपनी कमरके दर्दका कारण ढूँढ़ निकालना। हरिभाईसे तो मिलना ही। गिल्टियाँ कट गईं इसका व्यर्थ शोक मत कर। बहुत बोलकर गला खराब मत करना। ऊँची आवाजसे बोलनेकी आदत छोड़ ही देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१८)से।

४४६. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

१ जनवरी, १९३३

चि० नर्मदा,

तेरे अक्षर सुधरते जा रहे हैं। पंक्तियाँ सीधी रखनी चाहिए। रोटी बनाना सीख रही है, यह बहुत अच्छा किया है।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७७१) से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक।

४४७. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

१ जनवरी, १९३३

बालको और बालिकाओ,

तुमने सुन्दर सेवा-कार्य हाथमें लिया है। उसे छोड़ना नहीं। थोड़ा-सा खेतीका काम आ जानेपर जो आनन्द उससे मिलता है वैसा दूसरे किसी कामसे नहीं मिलता। और पेड़-पौधोंकी पहचान हो जानेपर वे अपने सम्बन्धियों-जैसे लगते हैं।

हरिजन-सेवाका अर्थ है, धर्म-पालन। जो भी काम करो उसमें निमग्न हो जाओ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

४४८. पत्र : नारणदास गांधीको

१ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक मिलती रहती है।

अभी तो उपवासका नगाड़ा बजना बन्द हो गया है। कन्हैया जब फिर बजाना चाहेगा तब बजेगा।

आजकल तो तुमपर कामका बहुत बोझ होगा। अभी छारा लोगोंके पास कौन जाता है? कुछ शान्ति दिखाई देती है? भाई मावलंकरके पत्रमें आपत्ति-योग्य तो कुछ दिखाई नहीं देता। अभी तुम्हारे या मेरे कुछ लिखनेकी जरूरत नहीं है।

रामजी अपने घरमें प्रकाशकी कुछ व्यवस्था चाहता है। उसने वाड़ लगानेकी भी माँग की है। देखना, क्या कर सकते हैं?

तिलकमकी वात टेढ़ी है। वह अभी बेचैन है। कोई उसे हाथमें ले तभी वह आगे वढ़ेगा।

इन्दु मिल कर गया है; वह आश्रमसे वाहर नहीं रह सकता। फिलहाल वह कच्छ जायेगा। जव आये तव रख लेना। जैसा उसका और हमारा नसीव।

अभी सुना है कि रोज रात मेथीके दस-पन्द्रह दाने भूनकर चवानेसे किशोरलालका दमा चला गया। जमना भी यह इलाज करके देखे।

बापू

[पुनश्च :]

कुल सत्ताईस पत्र हैं और सव वन्धे हुए हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू/१)से।

४४९. पत्र : चन्द त्यागीको

१ जनवरी, १९३३

भाई चंद त्यागी,

तुमारा खत पाकर खुशी हुई। दूध लेनेका शरू किया सो अच्छा किया। हरिजनोंका कार्य अच्छी तरह हो रहा है। कुछ चिंता न करें। वलवीर कहां है?

बापुके आशीर्वाद

श्री चन्द त्यागी
कैदी, जेल, सहारनपुर यू० पी०

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२६०) से।

४५०. पत्र : सोहनलाल शर्माको

१ जनवरी, १९३३

भाई सोहनलाल,

तुमारे दोनों खत मिले। रामानुज चरित भेजनेकी आवश्यकता नहिं। 'मैं आचार्यजी[1] का इतिहास थोड़ा जानता हुँ।

शादीके वारेमें सलाह देनेमें असमर्थ हुँ। जो उचित लगे वह करो।

मोहनदास गांधी

श्री सोहनलाल शर्मा
हिंदु महासभा
पुष्कर, अजमेरके पास
राजपुताना

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २८२९) से।

४५१. पत्र : हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

१ जनवरी, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला है। सूर्यस्नानसे लाभ होना हि चाहिये। थोडा भी आराम ले लेगी तो वहोत अच्छा होगा। हम सव कार्य वीतरागतासे करें।

बापुके आशीर्वाद

श्री हेमप्रभादेवी
खादी प्रतिष्ठान
कॉलेज स्क्वेयर, कलकत्ता[2]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६९४) से

१. रामानुजाचार्य।

२. मूलमें पता अंग्रेजी लिपिमें है।

४५२. पत्र: अमतुस्सलामको

१ जनवरी, १९३३

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला। जब बुखार आता है तब घूम नहीं सकती है। पूरा आराम लेना चाहिए। खानेमें दूध-फल ही लेगी तो अच्छा होगा। तुमको और कोई चीज लेनेकी जरूरत नहीं है। देहातमें[1] जाकर रहनेका खयाल छोड़ दो। आश्रममें रहकर जो सेवा बन सके करो। बीमार होगी तो कुछ परवाह नहीं। खुदापर कुछ तो छोड़ो। डॉ० शर्माको [आश्रमका] कानून भेजा सो ठीक किया। अगर वह कानूनकी पाबन्दी कर सकें तो मैं उनको लिखूंगा। प्रार्थनामें आजकल नहीं जा सकती है उससे रंज क्यों? बीमारोंको हमेशा रिहाई है ही। जब उठ जाये तब खुदाका नाम लेना। बहुत काम करनेका लोभ छोड़ दो। जितना हो सके उतनेसे खुदाका शुक्रिया अदा करो। खुदा तुमको शान्ति देवे।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६९) से।

४५३. पत्र: शारदाबहन चि० शाहको

१ जनवरी, १९३३

चि० शारदा,

जो खुराक माफिक न आये सो तो किसीको नहीं लेनी चाहिए।

तूने अंग्रेजी ली, सो ठीक है। यदि व्याकरणकी कुंजी हाथ लग जाये तो तू अपने-आप अंग्रेजी पक्की कर सकती है।

मुझे लिखनेमें आलस्य न करना।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९६७) से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला।

१. अमतुस्सलामका बाड़जमें रहकर सेवा करनेका विचार था।

४५४. तार : डॉ० मुहम्मद आलमको

२ जनवरी, १९३३

डॉक्टर मुहम्मद आलम
५७ लैंसडाउन रोड
कलकत्ता

आपका तार मिला। ईश्वरको धन्यवाद कि आप ऑपरेशनसे बच गये और मोटरतक चला सकते हैं।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०) से।

४५५. पत्र : मधुसूदनन थंगलको

२ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए, जिसके साथ आपकी अध्यक्षतामें हुए केरल नम्बूद्री ब्राह्मण-सम्मेलनका प्रस्ताव भी संलग्न है, धन्यवाद।

आप जानते ही हैं कि उपवास अनिश्चित कालके लिए मुल्तवी कर दिया गया है। फिर भी, मैं आशा करता हूँ कि नम्बूद्री ब्राह्मण, स्त्री व पुरुष दोनों, इस बातका दुगुना प्रयत्न करेंगे कि हरिजनोंको न केवल मन्दिर-प्रवेशका हक मिले बल्कि वे अन्य हक भी मिलें जो बाकी सभी हिन्दुओंको प्राप्त हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीमान मधुसूदनन थंगल, एम० एल० सी०
अध्यक्ष, २५वाँ नम्बूद्री योगक्षेमम सम्मेलन
कार्लामन्ना (द० मलाबार)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१३९) से।

४५६. पत्र : ए० कालेश्वर रावको

२ जनवरी, १९३३

प्रिय कालेश्वर राव,

आपका पत्र और साथी कैदियोंके अभिवादन और दुआएँ पाकर खुशी हुई।

समाचारपत्रोंमें आपका लेख मैंने देखा है। निस्सन्देह, धार्मिक किस्मके विधेयक प्रस्तुत करनेके पूर्व-उदाहरणोंकी कमी नहीं है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत ए० कालेश्वर राव
प्लीडर, बेजवाड़ा

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१३७) से।

४५७. पत्र : जी० एस० बी० सरस्वतीको

२ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपके कार्यके विषयमें मुझे कोई निजी जानकारी नहीं है, इसलिए हरिजन सेवक समाजको मेरी सिफारिशका आपकी अपनी सिफारिशसे कुछ ज्यादा असर नहीं होगा। इसलिए मैं सलाह दूंगा कि आप समाजसे सीधा सम्पर्क कायम करें। उसका मुख्य कार्यालय दिल्लीमें है।

हृदयसे आपका,

श्री स्वामी जी० एस० बी० सरस्वती
इंदुकुरपेट, नेल्लोर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१३८) से।

४५८. पत्र : गोविन्द राघवको

२ जनवरी, १९३३

आपका स्नेहपूर्ण पत्र मिला।[1] कितना महान विचार है! "यह भारी नहीं है, यह मेरा भाई है।" भारी-से-भारी चीज भी, जब प्रेम उसका बोझ उठाता है, पंखकी तरह हल्की हो जाती है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई।

४५९. पत्र : नारणदास गांधीको

२ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। राधा और कुसुमको फिरसे बुखार कैसे आ गया? कारण मालूम कर सके हो तो लिखना।

महावीरका किस्सा दयनीय है। उससे खरी बात कह देना। जिसे साथ लेकर आया है उसके लिए आश्रम किसी कारण पैसे नहीं दे सकता। और उसने जिस किसीसे पैसे लिये हैं उसे पत्र लिखकर मालूम करना। उसे बताकर लिखना। उसे पत्र लिख रहा हूँ। पढ़ लेना। ब्रजकृष्णको तो एक पाई भी नहीं देनी चाहिए थी। ब्रजकृष्ण वहाँ हो तो उससे पूछना, न हो तो पत्र लिखना। उसने जिनके नाम बताये हैं उनका पता न मालूम हो तो सीतारामजी को लिखना। सीतारामजी का पता तो मालूम होगा। न मालूम हो तो खादी भण्डारके पतेपर लिखना। खादी भण्डार हेरिसन रोडपर है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

१. गोविन्द राघवने गांधीजी को एक पादरीकी कहानी लिखी थी कि उसे एक छह या सात सालकी लड़की अपने कंधे पर लगभग दो सालके एक बालकको लिये जाती मिली। पादरीने कहा: यह बच्चा तेरे लिए बहुत भारी है। इसपर लड़कीने जवाब दिया: "नहीं, यह भारी नहीं है, यह मेरा भाई है"।

४६०. पत्र : निर्मला बा० मशरूवालाको

२ जनवरी, १९३३

चि० निर्मला,

जितने सुशीला बताती थी, मुझे तेरे उतने पत्र नहीं मिले। तेरे पत्र नहीं आ रहे थे इसपर मुझे आश्चर्य होता था। किशोरलाल[1]को इस प्रकार लिख भेजना :

"तुम्हारा ६ दिसम्बरका पत्र सँभालकर रख लिया था। उसे आज मौनवार (२ जनवरी)को हाथमें ले पाया हूँ। फिलहाल तो उपवास मुल्तवी हो गया है क्योंकि मन्दिर खुलवानेमें कानून आड़े आता लगता है। पहले उसे बदलवाना चाहिए। उसके लिए कदम उठाये जा रहे हैं। पर तुम्हारे सारे तर्क ठीक हैं। मन्दिर-प्रवेशके लिए सीधी कार्रवाई करनेवाले लोगोंमें मन्दिरके प्रति श्रद्धा होनी चाहिए। केलप्पनमें वैसी श्रद्धा है। मतदाताओंको सम्बन्धित मन्दिरोंमें जानेका अधिकारी होना चाहिए। ऐसे ही लोगोंके मत लिये गये थे और नतीजा अच्छा हुआ था। व्यक्तिगत मन्दिरमें उसके मालिककी अनुमतिके बिना कोई नहीं जा सकता। यह सर्वसम्मत है कि गुरुवायुर सार्वजनिक मन्दिर है। मैं इस मामलेमें अपनी समझके अनुसार बड़ी सूक्ष्मताके साथ धर्मका रक्षण कर रहा हूँ। अप्पाका मामला बिलकुल साफ था, इसलिए उसका निर्णय जल्दी हो गया। इसके विषयमें अधिक लिखूँ तो सम्भव है, वह ठीक न माना जाये। आगे सभी-कुछ जाना जा सकेगा।

"जमनालालजी से समय-समयपर मिल पाता हूँ। उनका हाल ठीक है। वजन बढ़ रहा है। कान अच्छा है।

"तुम्हारे श्वासके मेथीसे अच्छे हो जानेकी बात रणछोड़भाईने बताई थी। यदि यह बात सही हो तो कह सकते हैं कि यह उपाय बहुत सस्ता था। 'गीता'के तुम्हारे शेष प्रकरण आदि पढ़नेका समय नहीं मिल रहा है। सारा समय हरिजन [कार्य] ले लेता है। छगनलाल जोशी मेरे पास हैं, यह तो तुम जानती ही होगी। विनोबा वर्धाके पास ढेड़ोंकी एक बस्तीमें जाकर बस गये हैं। काका आजकलमें मुझसे मिलने आयेंगे। जान पड़ता है, हरिजन-सेवामें लगनेकी उनकी तीव्र इच्छा है। न मैं किसीको प्रोत्साहन देता हूँ न रोकता हूँ। मणिलाल और सुशीलाका आफ्रिका जानेका बहुत मन नहीं था, किन्तु मुझे लगा कि अपने कामपर वापस जाना उनका धर्म है। इसलिए वे गये हैं। मेरी कोहनी वैसी ही है। आजसे नियमपूर्वक मालिश शुरू हुई है। चिन्ताका कारण नहीं है।"

१. किशोरलाल घ० मशरूवाला।

गोमती[1] को इस तरह लिखना :

"मेरे सब समाचार मिलते होंगे। उपवास मुल्तवी कर दिया है। इसलिए फिलहाल तो चिन्ताका कोई कारण है ही नहीं। चिन्ता तो वैसे भी नहीं होनी चाहिए। वहाँ और बहनें हैं। वे जब लिख सकें, लिखें। मुझे समाचार बराबर मिलते रहने चाहिए। जमनालालजी अच्छी तरह हैं। मैं मिलता रहता हूँ। छगनलाल जोशी मेरे साथ हैं। इन दिनों मेरा पढ़ना तो बन्द है। सारा समय हरिजन [कार्य] ले लेता है। कोहनीके कारण कातना भी बन्द है। लेकिन उसकी चिन्ता नहीं करनी है।

सबको बापूके आशीर्वाद

श्री निर्मलाबहन
मार्फत वालूभाई मशरूवाला
टोपीवाला बिल्डिंग, सैन्डहर्स्ट रोड, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १००६) से; सौजन्य : निर्मलाबहन श्रोफ

४६१. पत्र : फीरोजबहन तलयारखाँको

२ जनवरी, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारी मीठी-मीठी, पर टूटी-फूटी गुजराती पढ़कर हम सब बहुत खुश हुए और खूब हँसे। यद्यपि कभी-कभी मुझे पारसी भाइयों और बहनोंकी अशुद्ध गुजरातीपर उनसे लड़नेतक की इच्छा होती है, तथापि उनकी मीठी गुजराती मुझे भाती भी बहुत है। मैं ऐसे किसी भी व्यक्तिके लिए जो थोड़ी भी गुजराती जानता हो किन्तु मुझे अंग्रेजीमें लिखता हो, अपने पास एक छड़ी रखना चाहता हूँ। आशा है, तुम दोनों सकुशल हो। समय-समयपर मुझे लिखती रहो।

बापूके आशीर्वाद

फीरोजबहन तलयारखाँ
नझीर हाऊस
कम्बाला हिल, बम्बई

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७७७) से।

१. किशोरलालकी पत्नी।

४६२. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

२ जनवरी, १९३३

गांधीजी ने आज तीसरे पहर एक भेंटमें एसोसिएटेड प्रेसको बताया कि गुरुवायुरमें हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशका जो विरोध है उसे शान्त करने लिए उन्होंने समझौतेकी भावनासे एक सुझाव रखा है।

गांधीजी का ध्यान उनके उस वक्तव्य[2] की ओर आकर्षित किया गया था जो उन्होंने पण्डित पंचानन तर्करत्नसे अपनी मुलाकातपर दिया था और जिसमें, कहा जाता है, उन्होंने पण्डितजीके सम्मुख एक निश्चित सुझाव रखा था जिससे कट्टर-से-कट्टर सनातनियोंको भी सन्तोष हो जाना चाहिए। उनसे जब उस सुझावपर प्रकाश डालनेको कहा गया, तो गांधीजी ने कहा :[3]

मैंने जो सुझाव रखा था वह यह था : दिनमें कुछ घंटे मन्दिर हरिजनों और उन अन्य हिन्दुओंके लिए खुला रहना चाहिए जिन्हें हरिजनोंकी उपस्थितिपर कोई आपत्ति नहीं है, और कुछ घंटे वह उन लोगोंके लिए आरक्षित होना चाहिए जिन्हें हरिजनोंके प्रवेशपर आपत्ति है। इस बातको देखते हुए कि गुरुवायुरमें कार्तिकेयी एकादशी पर्वपर हरिजनोंको अन्य हिन्दुओंके साथ मन्दिरमें जाने दिया जाता है और उसके बाद मन्दिरकी प्रतिमाका शुद्धि-संस्कार होता है, इस सुझावको माननेमें किसी भी तरहकी कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

यह पूछनेपर कि क्या उनका सुझाव यह था कि मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशके बाद प्रतिदिन शुद्धि-संस्कार होना चाहिए, गांधीजी ने कहा :

व्यक्तिगत रूपसे, मैं शुद्धि-संस्कारके बिलकुल विरुद्ध हूँ। परन्तु यदि उससे विरोधियोंकी आत्माको सन्तोष मिलता है, तो मुझे व्यक्तिगत रूपसे शुद्धि-संस्कारपर कोई आपत्ति नहीं होगी। शुद्धि-संस्कारका यदि कुछ भी मूल्य है, तो विभिन्न शास्त्रोंमें निर्दिष्ट अनेक प्रकारके कारणोंसे अशुद्धिकी प्रतिदिन इतनी अधिक सम्भावनाएँ रहती हैं कि शुद्धि-संस्कार प्रतिदिन होना चाहिए, हरिजनोंको चाहे प्रवेशकी अनुमति हो या न हो।

१. गांधीजी प्रसिद्ध आमके पेड़की छायामें खाटपर सहारेसे बैठे थे। कुछ शास्त्री उनके आसपास बैठे उनके साथ बहस और तर्क कर रहे थे।

२. देखिए पृष्ठ ३१९।

३. यह पैरा *अमृतबाजार पत्रिका*, ४-१-१९३३ से लिया गया है।

यह पूछनेपर कि जो समझौता उन्होंने सुझाया है, क्या वह हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओंके बीच भेदभावको अभी भी कायम नहीं रखता है, गांधीजी ने जवाब दिया कि हरिजनका रुख यह होना चाहिए:

यदि कोई व्यक्ति ऐसा है जो मेरी उपस्थितिपर आपत्ति करता है, तो मैं उसकी आपत्तिका केवल तभीतक सम्मान करूँगा जबतक कि वह (आपत्ति करनेवाला) मुझे मेरे अपने अधिकारसे वंचित नहीं करता है। यदि मुझे ऐसे लोगोंके साथ जिन्हें मेरी उपस्थितिपर कोई आपत्ति नहीं है, पूजा करनेके लिए दिनका एक न्यायोचित भाग मिल जाता है, तो मैं सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

गांधीजी ने आगे कहा कि जहाँ लोगोंकी बहुसंख्या हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें है, वहाँ ऐसे सवर्ण हिन्दुओंकी संख्या जो मन्दिरको कुछ घंटोंके लिए केवल अपने लिए ही चाहेंगे, इतनी कम होगी कि वह नगण्य होगी।

मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके एक और पहलूको लेते हुए गांधीने इस चीजका पूरे जोरसे विरोध किया कि हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके लिए गैर-हिन्दुओंको कोई सीधी कार्रवाई करनी चाहिए। उन्होंने कहा:

यह एक गंभीर धार्मिक आन्दोलन है, और यदि गैर-हिन्दुओंने अनुचित सहानुभूतिके कारण या अन्य उद्देश्योंसे इसमें सीधी कार्रवाईके जरिए हस्तक्षेप किया तो वह बहुत ही दयनीय स्थिति होगी।

यह बात कहनेके लिए गांधीजी को जिस चीजने प्रेरित किया, वह एक पत्र था जो उन्हें कोलम्बोसे मिला था। पत्र-लेखकने उसमें बताया था कि स्थानीय मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके सिलसिलेमें गैर-हिन्दुओंने, जिनमें एक बौद्ध, एक रोमन कैथोलिक महिला, एक ईसाई और कुछ मुसलमान शामिल थे, तथाकथित सत्याग्रह किया था। मन्दिरके ट्रस्टियोंकी प्रार्थनापर उनपर मुकदमा चलाया गया और उन्हें दण्ड दिया गया। पत्र-लेखकने गांधीजी से पूछा था कि हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके लिए क्या गैर-हिन्दुओंका हस्तक्षेप न्यायोचित हो सकता है। महात्माजी ने घोषणा की:

मुझे यह कहनेमें किसी भी तरहकी कोई झिझक नहीं है कि यह किसी भी परिस्थितिमें न्यायोचित नहीं हो सकता। यदि गैर-हिन्दुओंने अपनी सहानुभूति सीधी कार्रवाईके जरिए व्यक्त की, तो वह एक बहुत ही खतरनाक हस्तक्षेप होगा। बेशक, मैं यहाँतक कह सकता हूँ कि जिस मन्दिरके बारेमें इस तरहकी कार्रवाई की गई है, उसमें प्रवेशका अधिकार रखनेवाले सवर्ण हिन्दू [ही], यदि वे [हरिजनोंके] मन्दिर-प्रवेशमें विश्वास रखते हैं तो, सीधी कार्रवाई कर सकते हैं।

यह पूछनेपर कि डॉ० सुब्बारायनके विधेयकके लिए वाइसरायकी मंजूरीके बारेमें उन्हें क्या कहना है, गांधीजी ने कहा कि उन्हें आशा है कि वाइसराय यथासम्भव शीघ्र ही मंजूरी दे देंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-१-१९३३

४६३. भेंट : सुब्बारायनके विधेयकके बारेमें

२ जनवरी, १९३३

सनातनियोंके उस आन्दोलनके बारेमें जो साम्राज्ञीकी घोषणापर आधारित था; गांधीजी ने कहा :

जो लोग डॉ० सुब्बारायनके विधेयकका विरोध करना चाहते हैं वे 'तटस्थता' शब्दका क्या अर्थ लगाते हैं, मुझे नहीं मालूम। मैं यह बात पूरे विश्वासके साथ कह सकता हूँ कि डॉ० सुब्बारायनके विधेयकका उद्देश्य ब्रिटिश न्यायालयोंके फैसलोंसे हुई बुराईको दूर करना है। मेरा आशय यह नहीं है कि बुराई जान-बूझकर की गई थी। यह बात भी याद रखनी चाहिए कि डॉ० सुब्बारायनका विधेयक मद्रास धर्मस्व अधिनियममें, जिसका स्वरूप खुद धार्मिक है और जो सनातनी व्याख्याके अनुसार तटस्थताका एक और अतिलंघन है, संशोधन करना चाहता है। इस विधेयककी विषय-वस्तुकी यदि कोई शान्त चित्तसे परीक्षा करे तो यह पता चलेगा कि यह हिन्दुओं पर कुछ भी थोपना नहीं चाहता है, बल्कि केवल उन मन्दिरोंके सिलसिलेमें, जिनमें हिन्दू जनता रुचि लेती है, उसकी इच्छाको पंजीकृत करना चाहता है – सारी हिन्दू जनताकी इच्छाको नहीं, बल्कि केवल उस जनताकी इच्छाको जो उस विशेष मन्दिरके बारेमें बोलनेका अधिकार रखती है। इस कार्यवाहीमें मुझे किसीके भी धर्ममें किसी तरहका कोई हस्तक्षेप दिखाई नहीं देता। विधेयक मन्दिर-प्रवेशके समर्थकों और विरोधियों, दोनोंका बचाव करना चाहता है।

श्री टी० आर० रामचन्द्र अय्यरके गुरुवायुरवाले भाषणपर विचार प्रकट करनेके लिए, गांधीजी ने उसकी वास्तविक प्रति चाही। उनका ध्यान जब मैंने इस तथ्यकी ओर दिलाया कि जेलके सन्तरियोंने मुझे समाचारपत्रकी वह प्रति जिसमें वह भाषण था, जेलमें ले जानेसे रोक दिया था, तो गांधीजी ने कहा कि वे सुपरिटेंडेंटसे बात करेंगे और इस चीजकी कोशिश करेंगे कि संवाददाता भविष्यमें अपने सन्दर्भ-पत्र अन्दर ला सकें।

यह पूछनेपर कि यदि वाइसरायने डॉ० सुब्बारायनके विधेयकको अपनी मंजूरी दे दी तो क्या वे उपवासका विचार छोड़ देंगे, गांधीजी ने कहा कि वे उपवासको अगली मंजिलतक के लिए और स्थगित कर देंगे। विधेयक अवश्य अधिनियम बनना चाहिए और उसके कानून बननेके लिए सरकारकी अन्तिम स्वीकृति मिलनी चाहिए। उसके बाद मतसंग्रह होना है जिसमें जमोरिनको भी भाग लेना होगा। मन्दिर जबतक हरिजनोंके लिए नहीं खुलता, उपवासकी सम्भावना बनी रहेगी। परन्तु ऊपर

बताये गये हर कदमके साथ सम्भावना घटती जायेगी। उपवासका विचार अन्तिम रूपसे केवल तभी छोड़ा जायेगा जब मन्दिर हरिजनोंके लिए खुल जायेगा।

यह पूछनेपर कि यदि वाइसरायने विधेयकको अपनी मंजूरी नहीं दी तो उनका रुख क्या होगा, गांधीजी ने कहा:

ओह, यदि वाइसरायने मंजूरी नहीं दी तो मैं अपनी स्थितिपर विचार करूँगा। तब उपवास अवश्य होना है। पर जबतक सरकार अपना रुख जाहिर करे, मुझे प्रतीक्षा करनी चाहिए। अभी मैं इस सवालपर बहस नहीं करना चाहता।

दक्षिण भारतीयोंके एक वर्गके इस सुझावकी चर्चा करते हुए कि नये मन्दिर बनाये जायें जहाँ सुधारक और हरिजन एकसाथ पूजाके लिए जा सकें और पुराने मन्दिर पुराणपन्थियोंके लिए छोड़ दिये जायें, गांधीजी ने कहा:

जबतक मुझे यह विश्वास न हो जाये कि जिन्हें पूजाका अधिकार है वे इस सुझावके पक्षमें हैं, इसका सवाल ही पैदा नहीं होता। पुराणपन्थी दृष्टिकोण यह है कि यदि हरिजनोंको भीतर जाने दिया गया, तो मन्दिरकी प्रतिष्ठा घट जायेगी। जो लोग मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हैं, उनका यह विचार है कि यदि सभी हिन्दुओंको मन्दिरमें जाने दिया जाये तो मन्दिरकी प्रतिष्ठा और बढ़ेगी। प्रतिष्ठामें वृद्धि या कमी केवल एक मानसिक प्रक्रिया है। मन्दिर जानेवालोंकी बहुसंख्या यदि इस तरहके सुझावके पक्षमें हो, तो मैं उसपर विचार करूँगा। परन्तु मुझे यकीन है कि यह सुझाव किसी भी सुधारकको स्वीकार नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-१-१९३३

४६४. तार: दामराजू लक्ष्मम्माको[1]

[३ जनवरी, १९३३ या उससे पूर्व][2]

श्रीमती लक्ष्मम्माको महात्मा गांधीका एक तार मिला जिसमें उनसे उपवास शुरू न करनेका अनुरोध किया गया था और कहा गया था कि वे [उन्हें] विस्तारसे लिख रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९३३

१. कांग्रेस कार्यकर्त्री व एल्लोर जिला-बोर्डकी सदस्या श्रीमती लक्ष्मम्माके पत्रके उत्तरमें, जिसमें उन्होंने गांधीजीको अपने इस निश्चयकी सूचना दी थी कि महात्मा गांधी गुरुवायुर मन्दिर-प्रवेशकी समस्याके सम्बन्धमें उपवास शुरू करेंगे, तो वे भी स्थानीय श्री जनार्दन स्वामी मन्दिरके सिलसिलेमें २ तारीखसे उपवास शुरू करेंगी, और ऐसा करनेके लिए गांधीजी की अनुमति माँगी थी।

२. यह "एल्लोर, ३ जनवरी" तिथिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

४६५. वक्तव्य : हिन्दूशास्त्रोंमें अस्पृश्यतापर

३ जनवरी, १९३३

जैसाकि जनता जानती है, पंढरपुरके भगवान शास्त्री धारूरकर और उनके साथ आये दूसरे लोगोंके साथ मित्रतापूर्ण चर्चाका सौभाग्य मुझे मिला। इन सज्जनोंने मुझे सफाई दी थी कि वे व्यक्तिगत हैसियतसे मेरे पास आये हैं, किसी संस्थाके प्रतिनिधिके रूपमें नहीं। उनका उद्देश्य यह समझना था कि आम तौरपर अस्पृश्यताके बारेमें और खास तौरपर हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके बारेमें मेरी स्थिति क्या है। इसमें सन्देह नहीं कि वे सनातनी दृष्टिकोण रख रहे थे और उनका इरादा उसे समझनेमें मेरी मदद करने और हो सके तो उसे मुझसे स्वीकार करानेका भी था।

उनके साथ मेरी लम्बी चर्चा हुई। सनातनी पण्डितोंका दृष्टिकोण समझनेकी मेरी कोशिशमें कोई कमी न रहे — इसलिए और भगवान शास्त्री धारूरकरके साथ हुई व्यवस्थाके अनुसार, मैंने शास्त्रोंके निष्णात और आम तौरपर मेरी स्थितिका समर्थन करनेवाले कुछ मित्रोंको निमन्त्रण दिया था, ताकि मेरे मनपर दोनों विचार-सरणियोंका असर पड़ सके।

मैं इतना कह दूँ कि उनकी दलीलों और उनके वाद-विवादको मैंने बहुत ही धीरज और आदरके साथ ध्यान देकर सुना। लगभग ५० वर्षसे जो विचार मैं रखता आया हूँ, उसमें मुझे कोई भूल दिखाई नहीं दी। मैं जानता हूँ कि भूल कितनी ही पुरानी हो, पर इससे वह भूल मिट नहीं जाती। मैं अपनेको सत्यका नम्र उपासक और दूसरे मनुष्योंकी तरह ही भूलका पात्र समझता हूँ। इसलिए अपनी भूल समझमें आ जाये, तो मैं उस भूलको माननेके लिए हमेशा तैयार रहता हूँ। मगर इन चर्चाओंके अन्तमें मेरा यह विश्वास और भी दृढ़ हुआ है कि हिन्दू-समाजमें जिस प्रकारकी अस्पृश्यता आजकल प्रचलित है, उसके लिए शास्त्रोंका कोई आधार नहीं है। अस्पृश्यताके बारेमें 'आज जैसी समझी जाती है और है' यह विशेषण मैं हमेशा काममें लाता हूँ। उसे पूरा महत्व न देनेके कारण बहुतोंने मेरे साथ बड़ा अन्याय किया है।

इस लम्बी चर्चाका मेरे मनपर जो असर पड़ा, उसे यहाँ न बताते हुए, जिन पंडितों या शास्त्रियोंने आम तौरपर मेरी बातका समर्थन किया है, अस्पृश्यता-विषयक शास्त्रार्थके बारेमें उनकी लिखित राय मैंने ले ली है, जिसे दे देना ज्यादा ठीक होगा। वह मूल हिन्दीमें है। उसे नीचे देता हूँ :

हिन्दू-धर्मशास्त्रोंमें तीन प्रकारके 'अस्पृश्य' माने गये हैं:

१. जन्मसे अस्पृश्य माने जानेवाले लोग, यानी शूद्र पुरुष और ब्राह्मण स्त्रीसे पैदा होनेवाली सन्तान।

२. पांच महापातकोंके दोषवाले या शास्त्रनिषिद्ध कृत्य करनेवाले लोग।

३. अशुद्ध दशामें रहनेवाला कोई भी मनुष्य।

यह बतानेवाला कोई आधार हमारे पास नहीं है कि आज जिन जातियोंको अस्पृश्य माना जाता है, उनमें से कोई भी पहली श्रेणीमें आती है। इसलिए पहली श्रेणीके अस्पृश्योंपर या उनके बहिष्कारपर लागू होनेवाले नियम आजकलकी किसी भी अस्पृश्य मानी जानेवाली जातिपर लागू नहीं हो सकते। पर किसी जातिको पहली श्रेणीका मान लिया जाये, तो भी शुद्ध और स्वच्छ रहन-सहनसे और शैव या वैष्णव या दूसरे ऐसे ही किसी सम्प्रदायमें शरीक हो जानेसे वे अस्पृश्यतासे मुक्त हो सकते हैं और चारों वर्णोंके लोग आम तौरपर जो अधिकार भोगते हैं, वे सब ये भी भोग सकते हैं।

यह स्पष्ट है कि दूसरे प्रकारकी अस्पृश्यता किसी भी सम्पूर्ण जाति या वर्गपर लागू नहीं हो सकती। हर जातिमें ऐसे दोषवाले व्यक्ति हो सकते हैं। आजकलके 'अस्पृश्यों' की अस्पृश्यता इस दूसरे प्रकारमें गिनाई गई पतित दशाके कारण नहीं है और न यह बताया जा सकता है कि वे ऐसे पतित माता-पिताकी सन्तान हैं। दूसरी श्रेणीमें बताये हुए महापातकोंके दोषवाले लोग उचित प्रायश्चित्त करें, तो पूरी तरह शुद्ध हो सकते हैं। जो पतित माता-पिता इस तरह शुद्ध न हुए हों, उनकी सन्तानको अस्पृश्य नहीं माना जा सकता। ऐसी सन्तानको अस्पृश्य माननेवाले कुछ स्मृतिकार हैं, किन्तु वे इनकी शुद्धिके लिए प्रायश्चित्तकी कुछ छोटी-छोटी विधियाँ बताते हैं। जिन लोगोंने ऐसे आचरणका दोष किया हो जिससे वे अस्पृश्य बन जाते हों, वे उन आचरणोंको छोड़ दें तो अस्पृश्यताके दोषसे मुक्त हो सकते हैं।

जब मनुष्य अशुद्ध दशामें हो, उस समयकी — तीसरे प्रकारकी अस्पृश्यता सब जातियोंमें होती है, वे भले ही अस्पृश्य मानी जाती हों या न मानी जाती हों। चमार, भंगी और दूसरे लोगोंको सिर्फ उनके धन्धेके कारण हमेशा अस्पृश्य माननेके लिए शास्त्रोंमें कोई आधार नहीं है। उनकी अस्पृश्यता तो उनके कामसे होनेवाली बाहरी अस्वच्छताके कारण है। यह तीसरे प्रकारकी अस्पृश्यता स्नान कर लेने और कपड़े बदल डालनेसे मिट जाती है।

इसलिए यह जरूरी है कि चारों वर्णोंको मिलनेवाले सारे हक — जैसे मन्दिर-प्रवेश, पाठशालाओंमें जाना, सार्वजनिक स्थानोंमें जाना या कुएँ, घाट, तालाब और नदी वगैरहका उपयोग करना — आजकलके कथित अस्पृश्योंको दूसरे

लोगोंके बराबर ही मिलने चाहिए। ऐसे आम हकोंसे उन्हें वंचित रखना गलत है। यह धर्मशास्त्रोंके वचनोंसे, उनके मूलभूत सिद्धान्तोंसे और उनके भावसे सिद्ध किया जा सकता है।

(ह०) स्वामी केवलानन्द
नारायण शास्त्री मराठे
लक्ष्मण शास्त्री जोशी
भगवानदास
आनन्दशंकर ध्रुव
इन्दिरारमण शास्त्री
केशव लक्ष्मण दफ्तरी
पी० एच० पुरन्दरे

इन हस्ताक्षरकर्त्ताओंका परिचय देनेकी जरा भी जरूरत नहीं है। लेकिन मैं इतना कह सकता हूँ कि जो अपनेको सनातनी कहते हैं, उनके बराबर ही इन लोगोंका सनातनधर्मका प्रतिनिधित्व करनेका दावा है। इसके अलावा, महामहोपाध्याय प्रमथनाथ तर्कभूषण, पण्डित श्रीधर शास्त्री पाठक, कृष्ण तनसुख मित्र और चिन्तामणि वी० वैद्यकी कीमती रायें भी समर्थनमें मुझे मिली हैं। इन सबके छपते ही मैं इन्हें तुरन्त लोगोंके सामने रखनेकी आशा रखता हूँ। मैं समाचारपत्रोंको मूल हिन्दी तथा उसका मराठी, गुजरातीमें अधिकृत अनुवाद भेज रहा हूँ और आशा करता हूँ, कि पत्र-पत्रिकाएँ मात्र अधिकृत पाठ ही प्रकाशित करेंगी।

इन पण्डितोंकी रायका अर्थ, लोकभाषा में कहें तो, यह होता है कि किसी भी मनुष्यपर स्थायी अस्पृश्यताकी मुहर नहीं लग सकती। यह स्पष्ट है कि आज किसी भी वर्गके लिए जन्मसे अस्पृश्यता-जैसी चीज नहीं हो सकती, और अस्पृश्यताके दोषके पात्र व्यक्तियोंको समाजमें से ढूंढ़ निकालना लगभग असम्भव है। पाँच महापातकोंके दोषवाले तो जरूर होंगे। पर सारी जातियोंमें कोई-कोई लोग ऐसे हो ही सकते हैं। आजकल समाज उनकी तरफ ध्यान नहीं देता। दूसरी श्रेणीमें जो निषिद्ध आचरण गिनाये गये हैं, वे मृत पशुका मांस और गोमांस खानेके बारेमें हैं। आजकल अस्पृश्य मानी जानेवाली जातियोंमें कुछ लोग ऐसा मांस-भक्षण करनेवाले हैं। पर सवर्ण हिन्दू अच्छी तरह कोशिश करें, तो यह चीज उनसे आसानीसे छुड़वाई जा सकती है। आज तो गोमांस या मृत पशुका मांस छोड़ देनेके लिए जो प्रोत्साहन चाहिए, उसीका अभाव है। तीसरी श्रेणीमें अस्थायी अशुद्धिका वर्णन है। उसमें कोई निन्दनीय बात नहीं है। ऐसी अशुद्धि तो खास मौकोंपर सभीके लिए अनिवार्य होती है। उन मौकोंके जाते ही यह अशुद्धि मिट जाती है।

इन हस्ताक्षरकर्त्ताओंने शास्त्रोंका सही अर्थ किया हो, तो भंगियों, चमारों और इन-जैसे दूसरे लोगोंकी स्थायी अस्पृश्योंमें गिनती करके हम बहुत वर्षोंसे उनके

साथ बड़ा अन्याय करते रहे हैं। उनके धन्धे दूसरे धन्धोंकी तरह ही इज्जतवाले हैं। और यह तो हम मानते ही हैं कि ऐसे दूसरे धन्धोंसे जिनपर हम अस्पृश्यताकी मुहर नहीं लगाते, ये धन्धे समाजके अस्तित्वके लिए ज्यादा अनिवार्य हैं।

मो० क० गांधी[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९३३

४६६. पत्र: एफ० मेरी बारको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय मेरी,

मुझे यह पत्र बोलकर लिखवाना होगा। यदि हम तुम्हें मेहमानकी निगाहसे देखनेको राजी हो जायें, तो तुम्हें हमसे मेजवान-जैसा व्यवहार करनेका हक होगा। लेकिन मुझे तुमसे वैसा व्यवहार करनेसे साफ इनकार करना होगा।

तुमने जो अनुभव लिखा है वह असामान्य नहीं है। इसीलिए यह कहावत है कि झगड़ेके लिए दो आदमी होने चाहिए। मैं समझता हूँ कि तुम्हारा दखल देना बिलकुल समयोचित और सही था।

हमारा प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८७) से। सी० डब्ल्यू० ३३४४ से भी; सौजन्य: कुमारी एफ० मेरी बार।

१. हिन्दुस्तान टाइम्स, ४-१-१९३३ से।

४६७. पत्र : के० नागेश्वर रावको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय नागेश्वर राव,

मुझे मिला एक तार साथ भेज रहा हूँ। यदि आप श्रीयुत काशी कृष्णमाचार्यको जानते हैं, तो मैं तार भेजनेवालेका सुझाव नहीं मानूँगा और उन्हें इतनी दूर पूना तक नहीं खींचूंगा। किन्तु यदि आप मेरे पूछे उसी प्रश्नपर उनकी राय भेज दें तो वह मेरे लिए मूल्यवान होगी, और यदि आपको उनकी राय मिल गई है तो कृपया मुझे संक्षेपमें यह भी बताइये कि यह काशी कृष्णमाचार्य कौन हैं।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४६) से।

४६८. पत्र : नागरदास के० भम्बानियाको[1]

३ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपका सारा तर्क मुझे यह सिद्ध करता लगता है कि जिनके शारीरिक शुद्धिके बारेमें आप-जैसे विचार हैं, उन्हें किसी भी मानव प्राणीके साथ अस्पृश्यकी तरह व्यवहार करनेकी बजाय अपने साथ ही अस्पृश्यकी तरह व्यवहार करना चाहिए। वैष्णवोंमें इसी सुविदित चलनका अनुसरण किया जाता है। जो इसका अनुसरण करते हैं वे अपने-आपको अस्पृश्य नहीं कहते, बल्कि 'मर्यादी'[2] कहलाते हैं। इस शब्दका अर्थ तुम जानते ही हो।

और धर्मशास्त्र जब आन्तरिक शुद्धिपर इतना जोर देते हैं, तो बाह्य शुद्धिपर इतना जोर क्यों? बाह्य शुद्धि निस्सन्देह आन्तरिक शुद्धिकी प्राप्तिमें सहायक होनेके कारण आवश्यक है। पर उसे हर कोई अपने लिए सुनिश्चित कर सकता है।

सनातनियोंको अपने विश्वासके विरुद्ध कुछ भी करनेको बाध्य करनेका कोई सवाल ही नहीं है। निजी मन्दिरोंको इस आन्दोलनने नहीं छुआ है। उनके मालिकोंको स्वतन्त्रता है कि वे उनका जो चाहें करें। सार्वजनिक मन्दिर जनताकी सम्पत्ति हैं, जिसे इन मन्दिरोंके उपयोगका अधिकार है। यदि किसी खास मन्दिरमें जानेवालोंकी बहुसंख्या उस मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेका निश्चय करती है, तो क्या यह

१. उनके २२ दिसम्बर, १९३२ के पत्र (एस० एन० १८७८५) के उत्तरमें।

२. पुरातन पंथकी मर्यादाओं — उसके कड़े नियमों — का पालन करनेवाले।

जोर-जवर्दस्ती है? सारा आन्दोलन हिन्दू अन्तःकरणको जागृत करनेके लिए और फिर उसे अपनी प्रेरणाओंके अनुसार कार्य करने देनेके लिए है। क्या आपको इसमें कोई त्रुटि दिखाई देती है? मैं चाहूँगा कि आप इस आन्दोलनका और इसके गूढ़ार्थोंका अध्ययन करें।

अन्तमें, मुझे आपको यह बता देना चाहिए कि अस्पृश्यता जिस रूपमें आज प्रचलित है, उसके समर्थनमें मुझे एक भी प्रमाण नहीं मिला है। यदि आपको इस प्रश्नपर शान्त चित्तसे विचार करना हो तो रेखांकित शब्दोंको उनके पूरे अर्थमें ही लें।

नागरदास के० भम्वानिया,
पूना

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४१) से।

४६९. पत्र : टी० ए० वी० नाथनको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। लेकिन आपने अपने पत्रमें 'जस्टिस' की जिस प्रतिका उल्लेख किया है, वह मुझे नहीं मिली है। यदि आप मुझे कतरन भेज दें तो वह सुरक्षित मेरे पास पहुँच जायेगी और तब मैं उसपर चर्चा कर सकूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४२) से।

४७०. पत्र : एम० बालकृष्ण तिवारीको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। लगभग हर प्रबुद्ध हिन्दू जानता है कि हमारे सन्तोंमें काफी संख्यामें हरिजन हैं। लेकिन हम इतने विचित्र स्वभावके हैं कि यद्यपि हम जातिविशेषके व्यक्तियोंकी पूजा करते हैं, फिर भी पूरी जातिका वहिष्कार करते नहीं लजाते। इसलिए आपने कृपया जिन तथ्योंका उल्लेख किया है, मैंने अपने-आपको उनपर जोर देनेसे रोका है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एम० बालकृष्ण तिवारी
रिटायर्ड म्यूनिसिपल इंजीनियर, बंगलोर सिटी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४३) से।

४७१. पत्र : रामानन्द संन्यासीको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय रामानन्दजी,[1]

आपका पत्र मिला। मेरे लिए यहाँसे बहुत कुछ कर सकना सम्भव नहीं है। लेकिन मैं आपका पत्र घनश्यामदासजी के पास भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

रामानन्द संन्यासी
न्यू सेंट्रल जेल, मुल्तान

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४७) से।

४७२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय घनश्यामदास,

इसके साथ एक पत्र है जो रामानन्द संन्यासीके पाससे आया है। अपना आशय यह स्वयं स्पष्ट कर देता है। तुम देखना कि क्या इस सिलसिलेमें कुछ किया जा सकता है।

इसके साथ एक पत्र मैं गणेशीलाल मिस्त्रीका भी तुम्हारी जानकारी और मार्ग-दर्शनके लिए भेज रहा हूँ। यह एक ऐसा पत्र है जिसके विषयकी छानबीन होनी चाहिए। सभी शिकायतोंसे स्वयं निपटना तो तुम्हारे लिए असम्भव है। पर कोई ऐसा आदमी जरूर होना चाहिए जो इस तरहके लेखकोंसे, यदि वे स्थानीय व्यक्ति हैं तो, मिलनेका कष्ट करे और हर मामलेमें यह मालूम करे कि उनकी शिकायतोंमें कितनी सचाई है, और तब उन्हें जहाँतक सम्भव हो सन्तोष प्रदान करे।

यदि तुम किसी ऐसे आदमीका नाम सुझा दो जिसे सीधा मैं लिख सकूँ, तो तुम्हें कष्टसे बचानेके लिए मैं ऐसा करूँगा, और तब वह जो आवश्यक होगा उसकी ओर तुम्हारा ध्यान आकर्षित कर दिया करेगा।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९१६) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला। एस० एन० १९१६९ से भी

१. दिल्लीके एक आर्यसमाजी, जो जेलमें थे। ऐसा लगता है कि उन्होंने अपनी संस्थाके लिए कुछ आर्थिक सहायताकी प्रार्थना की थी; देखिए अगला शीर्षक।

४७३. पत्र : धर्मवीर वेदालंकारको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय धर्मवीर,

आपका पत्र तथा श्रद्धानन्द-दिवस[1] पर हुए विविध कार्यक्रमोंके वर्णनकी कतरनें पाकर खुशी हुई।

हृदयसे आपका,

पण्डित धर्मवीर वेदालंकार
श्रद्धानन्द बाजार, दिल्ली

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४८) से।

४७४. पत्र : कोंडा वेंकटप्पैयाको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय वेंकटप्पैया,

आपका पत्र मिला। आशा है कि मेरा पत्र[2] आपको कालीकटमें मिला होगा। उसमें मैंने आपकी बेटी व धर्मपत्नीके बारेमें पूछा था। वे दोनों कैसी हैं? आशा है कि आप पुनः पूर्णतया स्वस्थ हो गये होंगे। जहाँतक अस्पृश्यताके सम्बन्धमें बात-चीतका सवाल है, जब भी इच्छा हो आ जाइए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत कोंडा वेंकटप्पैया
गुंटूर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१५३) से।

१. गांधीजी द्वारा भेजे गये सन्देशके लिए, देखिए पृष्ठ २४१।
२. देखिए पृष्ठ २५९।

४७५. पत्र : डी० नारायण राजूको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय नारायण राजू,

आपका पत्र मिला। मेरा पक्का विश्वास है कि जिस मन्दिरका आपने उल्लेख किया है उसको खुलवानेके सिलसिलेमें लक्ष्मम्माको उपवास नहीं करना चाहिए। मैंने उसे पहले ही तार दे दिया है।[1]

जबतक गुरुवायुरका मामला हल नहीं होता, केवल प्रचार-कार्य ही किया जाना चाहिए। उपवासका तरीका ऐसा है जो बहुत खास मामलोंमें ही अपनाया जाना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत डी० नारायण राजू
एल्लोर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१५२) से।

४७६. पत्र : एम० माणिकमको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मुझे खुशी है कि आपने मेरा ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलाया कि कोलम्बोमें एक मन्दिरके सिलसिलेमें गैर-हिन्दुओंने रुकावट डाली है, जिसे सत्याग्रहका गलत नाम दिया गया है। मैंने इसे इतना महत्त्वपूर्ण विषय माना है कि समाचारपत्रोंको दिये एक सन्देश[2] में इसकी चर्चा की है, जिसे निस्सन्देह आपने देखा ही होगा। मैं आशा करता हूँ कि गैर-हिन्दुओंने दुबारा फिर दखलन्दाजी नहीं की होगी।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एम० माणिकम
अध्यक्ष, नेहरू संघम,
१६५ सी स्ट्रीट, कोलम्बो

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१५१) से।

१. यह वाक्य गांधीजी के स्वाक्षरोंमें है, तारके लिए देखिए पृष्ठ ३५८।
२. देखिए पृष्ठ ३५५-६।

४७७. पत्र : जी० वेंकटरत्नमको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

अपने २३ तारीखके पत्रमें आपने जैसे कष्टका उल्लेख किया है, वह मनका खास लक्षण है और वह चिरकालतक रहेगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जी० वेंकटरत्नम
कृषि महाविद्यालय, कोयम्बटूर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१५०) से।

४७८. पत्र : एस० के० दत्तको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय डॉ० दत्त,

आपका पत्र मिला। आपके छात्र जिस तरीकेसे सहायता कर सकते हैं वह है— हरिजनोंकी नियमित और अविचलित रूपसे सेवा करना, जैसेकि रात्रि-पाठशालाएँ चलाना, हरिजन बच्चोंके लिए कम खर्चीले देशी खेल आयोजित करना जिनमें छात्र उन बच्चोंके साथ खेलें, हरिजन घरोंमें जाना और उनकी कठिनाइयोंका पता लगाना और यदि वे उन्हें दूर कर सकते हों तो उन्हें दूर करना। ये केवल कुछ तरीके हैं। निस्सन्देह, वे बहुत-से अन्य तरीके भी खोज लेंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४९) से।

४७९. पत्र : एम० एस० पारखेको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके पत्र तथा नमूनेके लिफाफोंके लिए धन्यवाद।

पत्रपर उभरा हुआ जो आवक्ष चित्र है उसके विषयमें मैं कुछ नहीं कह सकता, क्योंकि मैं ऐसी चीजोंका पारखी नहीं हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एम० एस० पारखे
द भारत एनवेलप्स कं०, पूना-२

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१४४) से।

४८०. पत्र : सी० आर० कृष्णस्वामीको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय कृष्णस्वामी,

मुझे बहुत खुशी है कि आपने मुझे लो का कार्टून भेजा। मैंने इसके बारेमें पढ़ा था। मुझे खेद है कि यह इतनी देरसे आया कि डैडी[1] इसे नहीं देख सके। मैं जानता हूँ कि वे इसका जरूर मजा लेते।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सी० आर० कृष्णस्वामी
मार्फत "हिन्दू", मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१५४) से।

१. च० राजगोपालाचारी।

४८१. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

३ जनवरी, १९३३

प्रिय च० रा०,

पण्डित पंचानन तर्करत्नको दिये अपने सुझाव[1] पर आपसे बातचीत न करना मेरी वेवकूफी थी। अब मैंने उसे समाचारपत्रोंको दे दिया है; इसलिए इस पत्रको पानेसे पहले ही आप उसे देख लेंगे। मैं उसपर आपकी राय जानना चाहूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१७०) से।

४८२. पत्र : मणिबहन पटेलको

३ जनवरी, १९३३

चि० मणि,

आजकल मुझे एक मिनटका भी अवकाश नहीं रहता। मेरा खयाल है कि अव रोज पत्र लिखना वन्द कर दिया जाये। डाह्याभाई अव विलकुल अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिवहन पटेलने, पृष्ठ ९७

४८३. सनातनियोंसे अपील

४ जनवरी, १९३३

यह अपील मैं आपसे एक सनातनी वन्धुकी हैसियतसे कर रहा हूँ जिसे आप अपनी इच्छाके बावजूद पराया माननेका प्रयत्न कर रहे हैं। आपमें से कुछ लोग मुझे खूब गालियाँ दे रहे हैं और मेरी मानहानि करनेवाले आक्षेप मुझपर लगा रहे हैं। यह मेरे लिए आपके विकृत प्रेमकी निशानी है। मेरी स्थिति उस पत्नी-जैसी है जिसके वहुत-से पति उसे अस्वीकार करनेकी वात करते हैं, क्योंकि वह

१. देखिए पृष्ठ ३१९ और ३५५-६।

बेचारी स्त्री उन सब पतिदेवोंको समान सन्तोष नहीं दे सकती। मगर इस पत्नीको अस्वीकार न कर सकनेके कारण (क्योंकि सब पति जानते हैं कि इस स्वयं-सेवक गुलामने उन सबकी सेवा करनेका पूरा प्रयत्न तो किया ही है) वे अपनी सारी कोपाग्नि उसपर बरसाते हैं और जितनी गालियाँ दे सकते हैं, उसे देते हैं। वह वफादार पत्नी पक्की नमकहलाल है, इसलिए इस आँधीको अपनेपर से शान्तिसे गुजर जाने देती है, क्योंकि वह जानती है कि उसपर लगाये गये सारे आक्षेप बिलकुल गलत हैं। आँधी शान्त हो जानेके बाद वह पत्नी सब पतियोंकी और ज्यादा प्रिय बन जाती है। उन पतियोंको अपनी कठोरतापर हँसी आती है और समझमें आ जाता है कि इस अटूट धैर्यशील पत्नीने अपना सर्वस्व उनके अर्पण कर रखा था। मैं भविष्यवाणी करनेका साहस करता हूँ कि मेरे बारेमें भी यही होनेवाला है।

'गीता'में, जो सनातन ग्रन्थ है, इस विषयपर बड़े प्रभावोत्पादक श्लोक हैं, आप सबको ऐसा लगता है कि मैंने आपका बिगाड़ किया है, और यह चीज मनमें घोटते रहनेसे आप इस समय क्रोधके आवेशमें आ गये हैं। यह श्लोक देखिए :

क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥[1]

क्रोधसे मूढ़ता पैदा होती है, मूढ़तासे स्मृति नष्ट हो जाती है और स्मृतिनाशसे ज्ञानका नाश हो जाता है और जिसका ज्ञान नष्ट हो गया, वह मरेके समान है।

अपने क्रोधावेशमें आप इतना भी नहीं जानते कि आप क्या कर रहे हैं। जिस उद्देश्यसे प्रेरित होकर मैं यह सब कर रहा हूँ, उस बारेमें आप जानकारी प्राप्त करनेकी भी परवाह नहीं करते।

मैं आपके सामने कुछ हकीकतें रखूंगा। सनातनधर्मकी प्रचलित परिभाषाके अनुसार सनातनधर्म "वैसा सदाचार है, जिसका लोग पालन कर सकें।" इसमें दुराचार और बुरी आदतोंका निषेध है, फिर भले ही वे कितनी ही प्रचलित हों। धर्म वह है, जो धारण करता है। दुराचार और बुरी आदतें धारण नहीं कर सकतीं। इसलिए वे दोनों कभी धर्म नहीं हो सकतीं। सारे मुद्दे तटस्थ भावसे लोगोंके सामने रख दिये जायें, उसके बाद वे ऐसा मार्ग पसन्द करें जो अपने-आपमें बुरा न हो, तो क्या यह सनातनधर्म नहीं? जो सिद्धान्त और सदाचारके नियम सनातनधर्मके नामसे पहचाने जाते हैं, क्या उनकी इसी तरह वृद्धि नहीं होती रही है? सनातन-धर्मका सदा विकास होते रहनेके लिए क्या यह क्रम अनिवार्य नहीं?

यहाँतक मैं अपनी बात आपको समझा सका होऊँ, तो आप इतना जान लीजिए कि मैं जो-कुछ कर रहा हूँ, उसमें जो मार्ग मुझे अच्छा लगता है, उस मार्गपर लोग मेरे साथ कहाँतक आ सकेंगे, इसे खोज निकालनेसे ज्यादा और कुछ नहीं है। इसमें कुछ पण्डित भी, जिन्होंने शास्त्रोंके मूल ग्रन्थोंका अध्ययन किया है, मेरे साथ हैं। वे कहते हैं कि उनके अर्थके अनुसार मेरे मार्गके लिए शास्त्रोंका

१. श्रीमद्भगवद्गीता २-६३।

आधार है। किन्तु आप यह आपत्ति करते हैं कि वे शास्त्रोंका गलत अर्थ करते हैं। ठीक, तो फिर ये दो अलग-अलग अर्थ हम लोगोंके सामने रखें और उनसे पूछें कि उन्हें कौन-सा अर्थ मंजूर है। यदि वे मेरा अर्थ स्वीकार करें, तो वह सनातनधर्म कहलायेगा या नहीं? मैं तो कहता हूँ कि आप इसके बाद भी मेरा अर्थ मंजूर न कीजिए। आप अपने अर्थपर कायम रहिए। पर ऐसा करेंगे तो आप उसे सनातन-धर्म नहीं कह सकेंगे। आप तो कहते हैं कि आप जो अर्थ करते हैं वही सनातन-धर्म है, क्योंकि आप यह मानकर चलते हैं कि देहातियोंका बड़ा बहुमत आपका अर्थ स्वीकार करेगा। आप मेरा सनातनी होनेका दावा नहीं मानते, क्योंकि आप मानते हैं कि लोगोंके सामने उसे रखा जाये तो लोग उसे मंजूर नहीं करेंगे। लेकिन सनातनी होनेका मेरा दावा कोई उद्धत दावा नहीं। मैं करोड़ों लोगोंके बीच वर्षोंसे भटकता रहा हूँ। उनके सामने राजनैतिक मनुष्यके रूपमें नहीं, बल्कि एक धर्मपरायण मनुष्यके रूपमें गया हूँ और उन्होंने भी मुझे धर्मपरायण मनुष्यके रूपमें ही स्वीकार किया है। आज आप इतने आवेशके साथ जो मेरी बातका खण्डन कर रहे हैं, यह बात ही साबित करती है कि आपने स्वयं मुझे अबतक राजनैतिक मनुष्य नहीं, बल्कि धार्मिक मनुष्य माना था। आप लोग इतना भी नहीं देख सके कि राजनैतिक मनुष्य तो मुझे कुछ समझते ही नहीं? वे तो मुझे अपने काममें दखल देनेवाला और अव्याव-हारिक सपने देखनेवाला मानते हैं। हाँ, धार्मिक सभाओंमें मेरा दिलसे ही स्वागत किया गया है। १९१५ में जब मुझे लगभग अजनबी होनेका सौभाग्य प्राप्त था, तब भी ऐसा हुआ था।

अगर आप शान्तिसे परिस्थितिका अध्ययन करेंगे, तो आप देखेंगे कि गुरुवायुरमें या और भी किसी जगह मैं अपने दावेकी परीक्षा करनेके सिवाय और कुछ नहीं करता। इसमें आपके दावेकी परीक्षा भी अपने-आप ही हो जाती है। सनातनधर्मके मेरे अर्थके अनुसार मुझे इस निर्णयपर पहुँचना पड़ा है कि हिन्दू लोगोंके बहुत बड़े भागको अछूत मानने और उनपर दूसरे अनेक प्रतिबन्धोंके साथ-साथ मन्दिर-प्रवेशका प्रतिबन्ध लगानेमें सवर्ण हिन्दुओंने बड़ी भूल की है। आप कहते हैं कि आपका सनातन-धर्म ही आपको मजबूर करता है कि इन हिन्दुओंको अछूत माना जाये और इसलिए जिस ढंगसे आप मन्दिरमें जाते हैं उस ढंगसे उन्हें मन्दिरमें जानेके किसी भी हालतमें योग्य न समझा जाये। मैं कहता हूँ कि सनातनधर्मके इन दो अर्थोंमें चुनाव करनेका काम मन्दिरोंमें जानेवालोंको सौंप दीजिए। पर जब इतना सीधा-सादा सुझाव मैं पेश करता हूँ, तो आप क्रोधसे उबल पड़ते हैं। आपकी यह बात उचित या साधारण समझदारीकी अथवा सहिष्णुताकी नहीं मानी जा सकती।

मुझे विश्वास है कि अहिन्दुओंको जितना हक देनेसे आपने इनकार नहीं किया, उतना हक तो आप मुझे जरूर देंगे। यानी जहाँतक मैं अनुचित, अनीतिमय या शंकास्पद ढंग अख्तियार न करूँ, वहाँतक मैं अपनी रायका प्रचार करता रहूँ। मेरे उपवासको आप एक तरहका बलात्कार कहते हैं। एक सादे उपवासको बलात्कार बताना सनातनियोंको शोभा नहीं देता, क्योंकि किसी भी धर्मके इतिहासके पन्ने उलटकर

देखेंगे, तो धर्मपर संकट आनेके समय उपवास करनेके अनेक उदाहरण आपको मिल जायेंगे। अपने इस कथनके समर्थनमें ऐसे सुविख्यात उदाहरण देकर मैं आपकी बुद्धिका अपमान नहीं करूँगा। फिलहाल तो उपवासकी बात भी बन्द है।

डॉ० सुब्बारायन जो सीधा-सादा कानून पेश करना चाहते हैं, उसके विरुद्ध आपने बड़ा शोरगुल मचाया है और यह नारा शुरू कर दिया है कि 'धर्म खतरेमें है।' पर इस कानूनके मसौदेका आप अच्छी तरह अध्ययन करेंगे, तो देखेंगे कि उसमें सम्बन्धित लोगोंकी इच्छाको जान लेने और उसे अमलमें लानेके प्रयत्नके सिवाय और कुछ नहीं है। सनातनियोंके कहनेसे ही ब्रिटिश अदालतें इसमें न पड़ी होतीं, आजके जैसी मिली-जुली विधानसभाएँ हिन्दू विधायकों कहनेसे ही एक धार्मिक स्वरूपका कानून पास न करतीं, तो यह कानून पेश करनेकी कोई जरूरत नहीं थी। इस प्रकार आप देखेंगे कि यह कानून आजकी परिस्थिति द्वारा पैदा की हुई एक रुकावट दूर करना चाहता है। हिन्दू-धर्ममें नये सुधार करवाना उसका हेतु नहीं है। आज जैसा अंग्रेजी कानून है, उसके अनुसार तो सिर्फ एक आदमी भी बड़े जनसमुदायकी इच्छाको कुचल सकता है। दस हजारमें से नौ हजार नौ सौ निन्यानवेका मत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हो, तो भी एक आदमी उसमें बाधा डाल सकता है। आज आपको यह चीज अनुकूल लगती है, लेकिन आप इसपर शान्तिसे विचार करेंगे तो जरूर इस नतीजेपर पहुँचेंगे कि आपके लिए और मेरे लिए भी यह परिस्थिति बड़ी खतरनाक है। यह ऐसी चीज है जो धार्मिक जीवनको मृतप्राय बना सकती है। सनातन-धर्म या यों कहिए कि सब धर्मोंमें न्यायकी पूरी गुंजाइश होनी चाहिए। मेरा खयाल है कि आप कपटका खेल नहीं चाहते। पर अभी जो कानून मौजूद है, उसे न बदला गया तो यही होगा।

आपमें कुछ भी न्यायवृत्ति हो तो उसे दिखानेके लिए मैंने एक और कसौटीका सुझाव दिया है। आप इससे इनकार नहीं करेंगे कि बहुमतमें न सही, पर काफी संख्यामें ऐसे प्रतिष्ठित हिन्दू हैं जो हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशको हिन्दू-धर्मके साथ सुसंगत मानते हैं। न्यायवृत्तिकी दृष्टिसे देखते हुए, मैंने एक ऐसा उपाय सुझाया है जिसमें किसी संशोधनकी गुंजाइश नहीं है। उसमें सारे पूर्वग्रह और तमाम विधि-निषेध कायम रहते हैं। गुरुवायुरके ही मन्दिरका विचार करें —और मेरा उपाय अभी तो गुरुवायुर-के मन्दिरतक ही सीमित है —तो वह थोड़े-से फेर-बदलके साथ प्रचलित प्रणालीके अनुसार है। इस मन्दिरमें परम्परासे वर्षमें पूरे एक दिन हरिजनोंको दूसरे हिन्दुओंके साथ बिना किसी रोकटोकके जाने दिया जाता है। मेरा सुझाव यह है कि उन्हें हर रोज एक निश्चित समय पर मन्दिरमें जाने दिया जाये। उक्त प्रणालीको ध्यानमें रखते हुए मेरा यह सुझाव थोड़ा भी असाधारण या अधार्मिक नहीं है। आप कहेंगे कि एकादशीके दिन तो सब जातियोंके लोग बिना किसी प्रतिबन्धके वहाँ इकट्ठे होते हैं और उसके बाद शुद्धीकरण किया जाता है। यद्यपि इस तरहके शुद्धीकरणका विचार मुझे खटकता है, फिर भी ऐसी शुद्धिसे विरोधियोंको सन्तोष होता हो तो भले ही रोज शुद्धि की जाये।

सनातनियोंकी तरफसे मुझे मिलनेवाले बहुतसे पत्रोंमें यह बताया जाता है कि सनातनी जिस अस्पृश्यताका प्रतिपादन करते हैं, उसमें जरा भी तिरस्कारकी भावना नहीं है। वे पत्रलेखक कहते हैं कि यद्यपि हरिजन भी ईश्वरकी ही सन्तान हैं और भगवानकी नजरमें दूसरे सब लोगोंकी तरह ही हैं, पर उच्च नैतिक कारणोंसे धर्म उन्हें अलग रखनेके लिए कहता है; हाँ, हमें उन्हें प्रेमके साथ अलग रखना चाहिए, तिरस्कारसे नहीं; इसलिए नागरिक हक तो उन्हें पूरे-पूरे मिलने ही चाहिए। हम इस दावेकी परीक्षा वर्तमान स्थितिके प्रकाशमें करेंगे।

१. कौन अस्पृश्य माना जाता है और किसलिए, आपने इसकी जाँच की है?

२. एक छलपूर्ण और मेरी रायमें बड़ी निर्दय व्यवस्था द्वारा उन्हें किस तरह जमीन से वंचित रखा जाता है, यह आप जानते हैं? किसीके पास जमीन हो तो भी दूसरे सवर्ण हिन्दू जमीनका जैसा उपयोग कर सकते हैं, वैसा उपयोग हरिजन नहीं कर सकते।

३. सार्वजनिक उपयोगकी बहुत-सी सुविधाओंका उपभोग, जबकि दूसरे सब लोग कर सकते हैं, हरिजन नहीं कर सकते। आपने उनके लिए ये सब सुविधाएँ अलगसे नहीं दी हैं। हरिजन प्यासे मर जायें, तो भी उन्हें बूँद-भर पानी देनेकी व्यवस्था आप नहीं करेंगे।

४. रोजगार जो आप अपना सकते हैं, उनके लिए सुलभ नहीं हैं।

५. उन्हें डॉक्टरी और धार्मिक मदद भी नहीं दी जाती।

ये सब अगर आपके हरिजनोंके प्रति प्रेमके सुफल हों, तो क्या आप इस बातमें मुझसे सहमत नहीं होंगे कि इस प्रेमसे तो तिरस्कार कहीं अच्छा है? ऊपर मैंने जो हालत बयान की है, उससे ज्यादा बुरी हालतकी मैं कल्पना नहीं कर सकता। मैं आपसे कहता हूँ कि दुनियामें किसी भी जगह ऐसी स्थिति नहीं है जैसी हमारे यहाँ है। और इसमें सबसे भद्दी बात तो यह है कि हम यह सब धर्मके नामपर करते हैं।

मैं अपनी अन्तरात्माकी वेदनासे निकलनेवाली यह आह आपतक पहुँचा रहा हूँ। इस वेदना और इस शर्ममें शरीक होने और मुझे सहयोग देनेकी मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ। सनातनधर्म फिरसे प्राणवान हो, उसका उत्थान हो और करोड़ों लोग अपने जीवनमें उसे जीता-जागता बनाएँ, इसके सिवाय और कोई उद्देश्य मुझे पूरा नहीं करना है। आजकल तो हम इस धर्मसे इनकार करते दिखाई देते हैं। आपमें जागृति आई है, इससे मुझे आनन्द होता है। किन्तु अब आपको काम करनेमें लग जाना चाहिए और मेरे साथ बिलकुल व्यर्थके झगड़े करनेमें अपना समय बरबाद न करके हिन्दू-धर्ममें कहाँ-कहाँ बुराइयाँ घुस गई हैं, यह निश्चय करने और उन बुराइयोंको दूर करनेके लिए प्रचण्ड प्रयत्न शुरू करना चाहिए। मेरे साथ आपके झगड़ेको मैं व्यर्थका इसलिए कहता हूँ कि इस झगड़ेमें मैं शरीक नहीं होऊँगा। अंग्रेजीमें एक कहावत है कि झगड़ा करनेके लिए भी दो आदमियोंकी जरूरत होती है। वह दूसरा आदमी जुटानेमें मैं आपकी मदद नहीं करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५-१-१९३३

४८४. पत्र : जमनाबहन गांधीको

४ जनवरी, १९३३

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तो पति-पत्नीके धर्मके बारेमें लिखा[1] था। उसका यह अर्थ कदापि नहीं था कि तुम लम्बे अरसेतक कहीं अन्यत्र रहो और नारणदास तुम्हारे पास पहुँचे ही नहीं। लेकिन इतना तो ठीक है न कि आश्रमके कामसे थोड़ा अवकाश मिलनेपर ही ऐसा होना चाहिए? और अगर तुम ही चार-छः महीनेके अन्तरसे कुछ दिनोंके लिए आश्रम आ जाया करो तब तो इसकी जरूरत नहीं होगी न? ऐसे किसी विषयमें तुम्हारे प्रति मेरे सख्त होनेका सवाल ही नहीं है। मैं यथासम्भव अनुकूल रहना चाहता हूँ। मेरा हमेशा प्रयत्न रहा है कि आश्रमकी कोई भी बहन अपनेको तनिक भी पराधीन न माने। और इसे तुम्हें विश्वासपूर्वक मानना चाहिए।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६९) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४८५. पत्र : नारणदास गांधीको

४ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। महावीरके सम्बन्धमें जवाब दे चुका हूँ। तुम्हें वह पत्र मिल गया होगा। मैं चाहता हूँ कि सीतलासहायके विषयमें जो-कुछ करना ठीक हो, तुम वही करो। उसे खर्चका कुछ अन्दाज नहीं रहता, यह बात मैं अच्छी तरह जानता हूँ। उसके और बाकी सबके लिए ७५ रुपयोंसे ज्यादा खर्च न हो, यदि ऐसा तय किया था तो मेरा मन है कि उतना उसे दिया जाये।

मुझे यह भी लगता है कि यात्रामें हुए खर्चको भर देनेके सिवा और कोई चारा नहीं है। लेकिन आगेसे यह सब खर्च ७५ रुपयेमें ही आ जाना चाहिए। लेकिन यहाँ बैठा हुआ मैं ठीक निर्णय नहीं कर सकता; इसलिए इतना लिख देनेपर भी अन्तिम निर्णय तुम्हींपर छोड़ता हूँ।

१. देखिए पृ० ३१३।

प्रेमा, जमनादास, सुशीला और इन्दु मुझसे मिलकर गये। मेरा विचार है कि इसके बारेमें तुम्हें लिख चुका हूँ। अब तो प्रेमा वहाँ आ गई होगी। काका अभी मिलने नहीं आया। दामोदरके सम्बन्धमें समझ गया हूँ। जैसा ठीक लगे वैसा करे। वनमाला और मोहनको क्या अब भी बीमारी है?

बापू

[पुनश्च:]

भाई लीलाधरका पत्र पढ़ना। क्या जीवरामभाई लड़कियोंका खर्च दिलवाते थे? और यदि ऐसा था तो कबसे और कितना दिलवाते थे? इतना ही पैसा शारदा मन्दिरको दे देनेकी अनुमति मिले तो मुझे लगता है कि हमें दे देना चाहिए। इस बारेमें मुझे लिखना और लीलाधर आये तो बात कर लेना।

बापू

[पुनश्च:]

जमना, अमीना, कुरैशी, लीलाधर, जैकोर, शान्ति, आनन्दी, राधा, कुसुमके पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

४८६. तार: श्यामजी मारवाड़ीको

५ जनवरी, १९३३

श्यामजी मारवाड़ी
वल्पाभादी रोड
बम्बई

जल्दी-से-जल्दी ११ को दो बजे आपसे मिल सकता हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५२०९) से।

४८७. पत्र : मीराबहनको

५ जनवरी, १९३३

चि० मीरा,

लो, 'ऐन ऑप्टिमिस्ट्स कैलेंडर' (एक आशावादीका पंचांग) की मेरी प्रति तुम्हारे लिए है। कल्पना मेरी नहीं, वल्लभभाईकी है। जैसाकि तुम देखोगी लेखकने १२ प्रतियाँ भेजी हैं। मैंने वल्लभभाईसे पूछा कि क्या वे उन्हें बाँटने लायक समझते हैं और समझते हैं तो नाम सुझायें। उन्होंने कुछ नाम सुझाये और उनमें जोड़नेको तुम्हारा नाम हम दोनोंके मुँहसे एक ही साथ निकला।

तुम्हारे लम्बे-से-लम्बे पत्र भी मेरे लिए छोटे हैं। मुझे लिखने बैठो तो मुझे बचानेका हरगिज विचार करनेकी जरूरत नहीं। असलमें तुम बिना प्रयत्नके लिख सकती हो, तो मैं तुम्हारे लम्बे पत्र चाहता हूँ। काश, मैं भी इतने ही लम्बे पत्र भेज सकता। परन्तु मैं अच्छा पत्रलेखक नहीं हूँ। और अभी तो मुझे समय मिले और लम्बे पत्र लिख सकूँ तो भी नहीं लिख सकता। गुरुवारको सुबहकी प्रार्थनाके आसपास लगभग ३० मिनट तुम्हें देकर ही मुझे सन्तोष करना पड़ेगा।

अभी तो तुम्हें उपवासका विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। जबतक कोई चीज, अच्छी या बुरी, सामने ही न आ खड़ी हो, तबतक उसकी कल्पना कभी न करो।[1] पूर्ण समर्पणका अर्थ है, सब चिन्ताओंसे मुक्त हो जाना। बच्चा कभी किसी बातकी चिन्ता नहीं करता। उसे कुदरती तौरपर मालूम रहता है कि माँ-बाप उसकी चिन्ता रखते हैं। यह बात हम बड़े लोगोंके लिए कितनी अधिक सच होनी चाहिए? इसीमें श्रद्धा या यों कह लो कि 'गीता'की अनासक्तिकी परीक्षा है।

'अछूत' शब्द इसलिए चुना गया कि दक्षिणके कुछ हरिजनोंको, नये नामपर आपत्ति हुई। उन्हें इसके पीछे किसी षड्यन्त्रका सन्देह हुआ। इसलिए यह शब्द मजबूर होकर चुनना पड़ा।

बा आश्रमके लिए रवाना हो गई, मार्गमें होगी। उर्मिलादेवी कल गईं। अब सम्भव है शास्त्रियोंके चले जानेसे कामका दबाव कुछ कम हो जाये। लेकिन मुमकिन है, मुझे इस महीनेकी १२ तारीखको एक और बहस सुननी पड़े।

मेरा वजन फिर बढ़कर १०३ हो गया। नमक-रहित भोजन जारी है। मुझे ऐसा करनेमें कोई दिक्कत नहीं होती। यही विचार है कि शरीरको इसकी आवश्यकता है या नहीं। कोहनी अभी बेहतर नहीं है। हाँ, रोटी और शाक अभीतक छोड़ रखे हैं।

१. देखिए "पत्र : मीराबहनको", २९-१२-१९३२ भी।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२५६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७२२ से भी।

४८८. पत्र: एम० एम० अनन्त रावको

५ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

इसी महीनेकी पहली तारीखका आपका पोस्टकार्ड मिला।[1] पिछली १४ तारीखके आपके पत्रका उत्तर[2] मैंने भेज दिया था। सौभाग्यसे उसकी नकल मेरे पास है। मैं आपको एक नकल भेज रहा हूँ।

१८ तारीखका आपका पत्र यथासमय मिल गया था और मेरा खयाल था कि मेरा उत्तर भी तभी आपको मिल गया होगा। मेरा उत्तर, जिसकी नकल इस पत्रके साथ जा रही है, क्योंकि विस्तृत था, इसलिए १८ तारीखके आपके पत्रका और जवाब देना जरूरी नहीं था। आशा है, यह पत्र आपको सही-सलामत मिल जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१३२) से। सी० डब्ल्यू० ९५६४ से भी; सौजन्य: मैसूर सरकार।

४८९. पत्र: होरेस जी० एलेक्जेंडरको

५ जनवरी, १९३३

प्रिय होरेस,

तुम्हारे और अन्य प्रेमपत्रोंकी प्राप्ति स्वीकार करनेमें मुझे देर हो गई। पर मेरे सामने जो काम है, उसे बाकी हर चीजसे प्राथमिकता देनी है।

तुम डॉ० अन्सारी और अन्य मित्रोंसे मिले, इसकी मुझे खुशी है और उससे भी अधिक इस बातकी खुशी है कि डॉ० अम्बेडकरके साथ तुम्हारी लम्बी बातचीत

१. श्री अनन्त रावने लिखा था कि उन्हें अपने १४ और १८ दिसम्बर, १९३२ के पत्र (सी० डब्ल्यू० ९५६३) का उत्तर नहीं मिला।

२. देखिए, पृष्ठ २२८।

हुई। निस्सन्देह, उनमें अभी भी वही अति संवेदनशीलता और जबर्दस्त सन्देह है। परन्तु मुझे उसमें कुछ भी अस्वाभाविक नहीं लगता। जैसाकि मैं लन्दनमें प्रायः कहा करता था, अस्पृश्यता या उससे किसी भी तरहका वास्ता रखनेवाले स्पृश्य हिन्दुओंके बारेमें जब भी वे बोलते हैं, तो ऐसी कटुतासे बोलते हैं जो केवल उन्हींमें मिलती है और जिसके लिए उनके पास हर तरहका कारण है। उन्होंने न केवल हिन्दू-धर्मके समाज-बहिष्कृतोंके साथ अमानवीय अन्याय होते देखा है, बल्कि अपने सारे सांस्कृतिक विकास और अर्जित सम्मानोंके बावजूद, भारतमें रहते हुए उन्हें अभी भी बहुत-से ऐसे अपमान सहने पड़ते हैं जिनके कि अस्पृश्य शिकार होते हैं। आश्चर्य तो यह है कि वे इतने सहनशील और धैर्यवान हैं, जैसाकि उन्होंने अपनेको, उदाहरणार्थ, यरवदा-समझौता तैयार होते समय दिखाया था। सारे दबावको सहन कर जाना और विद्रोही रहना उनके लिए पूर्णतया सम्भव था। परन्तु, उन्होंने अपनेको मैत्रीपूर्ण दबावसे प्रभावित होने दिया। सवर्ण हिन्दू यदि यरवदा-समझौतेकी शर्तोंको पूरी तरह अमलमें लायें, तो वे नम्र पड़ जायेंगे। यद्यपि कुल मिलाकर हालात ठीक चल रहे हैं, पर मैं दिन-प्रतिदिन नई कठिनाइयाँ महसूस कर रहा हूँ। वे मुझे भयभीत नहीं करतीं। मैं उनके लिए तैयार था। मैं जानता था कि हिन्दू-समाजके बहुत बड़े समूहको सही कार्यके लिए प्रेरित करनेको वह छोटा-सा उपवास पर्याप्त प्रायश्चित्त नहीं होगा। अस्पृश्यताके अन्तिम अवशेषके मिटनेसे पहले बहुत-सी जानें देनी पड़ सकती हैं। परन्तु एक ऐसी बुराईको मिटानेके लिए जो न केवल हिन्दू-समाजपर बल्कि उसके इर्दगिर्दके सभी लोगोंपर एक भारी लाशकी तरह पड़ी है, कोई भी त्याग बहुत बड़ा नहीं होगा। कभी-कभी मेरे पास भारतीय ईसाइयोंके, जो अस्पृश्य माता-पिताकी सन्तान होनेके कारण अपने बाकी बन्धुओंसे कट गये हैं, बहुत ही दर्द-भरे पत्र आते हैं। यह भयानक बीमारी ऐसी ही सांघातिक है।

तुम्हें और ऑलिवको हम सबका प्यार।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१८) से।

४९०. पत्र : पीटर जे० मैस्क्रीनको

५ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। यह कहनेके लिए मुझे क्षमा करें कि हिन्दू-धर्मकी मेरी धारणा आपकी धारणासे सर्वथा भिन्न है। पुनर्जन्मका सिद्धान्त किसी मनुष्यको दूसरे मनुष्यपर श्रेष्ठताका दावा करनेका अधिकार नहीं देता। हिन्दू-धर्म, जैसाकि आप सोचते हैं, रोमन कैथोलिक धर्मसे पूर्णतया भिन्न नहीं है। सभी धर्मोंके मूल सिद्धान्त एक-से हैं।

हृदयसे आपका,

पीटर जे० मैस्क्रीन महोदय
मार्फत जे० मैस्क्रीन महोदय, वेल्लीयिल परमपिल, टंगाचेरी
क्विलोन

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१७६) से।

४९१. पत्र : वीरेश्वर सेनको

५ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपने मुझे पत्र लिखकर अच्छा किया। आपने जो दृष्टान्त दिया है यदि वह सही हो, तो जो-कुछ आप कहते हैं वह बिलकुल सच होगा। पर एक सार्वजनिक मन्दिर और एक निजी घरमें कोई सादृश्य नहीं है। सार्वजनिक मन्दिर हिन्दुओं या हिन्दू सम्प्रदायोंकी साझी सम्पत्ति हैं, और उन सम्प्रदायोंके सदस्योंको प्रवेशको मर्यादित करनेका पूर्ण अधिकार है। मेरा सारा दावा यही है, और इससे अधिक कुछ नहीं है, कि मौजूदा मन्दिरोंमें जो लोग जाते हैं, हरिजन मन्दिरमें प्रवेश करें या न करें, यह निर्णय करनेका अधिकार उन्हींको है।

आपका यह सोचना भी गलत है कि मेरा उपवास आत्मघात था। आत्मघात तब होता है जब मनुष्य अपने पार्थिव अस्तित्वको समाप्त करनेके इरादेसे कोई काम करता है। मेरा ऐसा इरादा कभी नहीं था। मेरे उपवासके साथ एक शर्त जुड़ी थी।

आप फिर भी उसे गलत कहें, यह बिलकुल सम्भव है। पर जो आधार आपने रखा है, उसपर उसकी निन्दा नहीं की जा सकती।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत वीरेश्वर सेन
३, रोड ३६, अनीसाबाद, डाकखाना पटना

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१७५) से।

४९२. पत्र : गंगारामको

५ जनवरी, १९३३

प्रिय लाला गंगाराम,

आपके ३० तारीखके पत्र तथा आपने कृपाकर रिपोर्टकी जो नकल भेजी है, उसके लिए धन्यवाद। मैं आपकी रिपोर्ट पढ़नेका समय निकालनेकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,

लाला गंगाराम, बी० ए०,
एडवोकेट, स्यालकोट सिटी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१७४) से।

४९३. पत्र : कुरूर नीलकण्ठन नम्बूद्रिपादको

५ जनवरी, १९३३

प्रिय नीलकण्ठन नम्बूद्रिपाद,

आपके पत्रके लिए, जिसके साथ 'यूसेज' पर सरकारी एडवोकेटकी सुचिन्तित राय संलग्न है, धन्यवाद।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत कुरूर नीलकण्ठन नम्बूद्रिपाद
टी० सी० हाउस, त्रिचूर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१७३) से।

४९४. पत्र : बलदेवदास बाजोरियाको

५ जनवरी, १९३३

प्रिय बलदेवदासजी,

पिछली २९ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि शास्त्र अलंघनीय हैं और धर्म राजनैतिक स्वराज्यसे ऊँचा है।

अपने उपवासका अर्थ मैं पहले ही स्पष्ट कर चुका हूँ। यह किसी भी ऐसे सनातनीको जो मेरे विश्वासोंसे प्रतिकूल गहरे विश्वास रखता है, बाध्य नहीं कर सकता। आप यह क्यों कहते हैं कि मैं पुरातनपंथी हिन्दुओंकी भावनाओंको आघात पहुँचा रहा हूँ? इस सिलसिलेमें मैं चाहूँगा कि आप सनातनियोंके नाम मेरी अपील[1] को ध्यानसे पढ़ें। यदि आप उसे ध्यानसे पढ़ेंगे तो पता चलेगा कि पुरातनपंथी हिन्दुओं और अन्य लोगोंके बीच कोई संघर्ष नहीं हो सकता। जबतक आपको मेरी बातका विश्वास न हो जाये, या आप मुझे अपनी बातका विश्वास दिलानेमें सफल न हो जायें, तबतक आपको मेरे साथ कोशिश जारी रखनी चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत बलदेवदास बाजोरिया
१३० मछुआ बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता

अंग्रेजीकी माइक्रोफिलम (एस० एन० १९१७१) से।

४९५. पत्र : एक अंग्रेज लड़कीको[2]

५ जनवरी, १९३३

मेरी प्यारी बेटी,

तुम्हारा पत्र पाकर बहुत खुशी हुई। तुमने जिस तरह मुझे सम्बोधित किया है, वह बिलकुल ठीक है। मैं अपनी हजारों लड़कियाँ होनेका सुख भोग रहा हूँ। उनमें तुम्हारा शरीक होना खुशीकी बात है। एक पामर मर्त्य मनुष्यके नाते इतने बड़े कुटुम्बकी मैं देखभाल नहीं कर सकता, इसलिए मैं तुम सबको सर्वशक्तिमान परमेश्वरकी सुरक्षित गोदमें सौंप देता हूँ। इस तरह मैं बड़े परिवारकी जिम्मेदारीका बोझ कभी नहीं महसूस करता, उलटे सब मेरे हैं, इस मान्यताका आनन्द भोगता हूँ।

१. देखिए पृष्ठ ३७०।

२. सम्भवत: यह पत्र नेली बॉलको भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक और खण्ड ५३, "पत्र: नेली बॉलको", २-३-१९३३।

मैं देखता हूँ कि यद्यपि तुम बीमार हो, फिर भी तुममें दृढ़ विश्वास है और तुम्हारा दिल बड़ा है। ईश्वर करे समयके साथ-साथ तुम्हारा विश्वास बढ़े और तुम्हें हमेशा दुख-दर्दके बीच भी शान्ति मिलती रहे।

हाँ, जब मैं उपवास कर रहा था, यह जानता था कि तुम्हारी-जैसी अनेक शुद्ध आत्माओंकी दुआएँ मेरे साथ हैं और इस जानकारीने मुझे बड़ा बल दिया।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १३)से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृष्ठ १२३ से भी।

४९६. पत्र : एस्थर मेननको

५ जनवरी, १९३३

प्यारी बच्ची,

अस्पृश्यताके कार्यके साथ-साथ यदि मुझे अपने पत्र-व्यवहारसे भी पार पाना है, तो मैं पत्र अधिकतर बोलकर ही लिखवा सकता हूँ, और वे भी संक्षिप्त होने चाहिए। मुझे इस सुविधाकी अनुमति मिल गई है, यह बड़े सौभाग्यकी बात है। वल्लभभाई और महादेवसे मिलनेवाली सहायताके बावजूद, अस्पृश्यताका कार्य मेरे सामर्थ्यसे बाहर होता जा रहा है। काश कि मैं तेरे लम्बे प्रेमपत्रके साथ न्याय कर सकता। उस तरहकी कोई चीज मैं तुझे भेज नहीं सकता। मैं समझता हूँ कि एण्ड्रयूज तेरे पास वुडब्रुकमें बस गये हैं। वे इसलिए सदा तेरे निकट रहेंगे और जरूरत पड़नेपर तेरे लिए एक मजबूत सहारा सिद्ध होंगे।

शेलीकी सुन्दर कविता, जो तूने मेरे लिए उतारी है, मैंने देख ली है। आशा है कि तू अच्छी तरह होगी। मेरी प्रार्थना है कि नव-वर्ष तेरे अन्तरमें इतनी प्रसन्नता और शान्ति लाये जितनी कि पहले तुझे नहीं मिली हो।

बीमार बहनका पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। उसके पत्रका उत्तर मैं यहाँ दे रहा हूँ।[1] यद्यपि उसने मुझे अपना पता भेजा है, पर उसका नाम मैं ठीकसे पढ़ नहीं सका। इसीलिए तेरे द्वारा इसे भेज रहा हूँ।

हम दोनोंकी ओरसे प्यार और बच्चोंको चुम्बन। उनके लिए एक अलग पोस्टकार्ड भेजा जा रहा है।

१. देखिए इससे पिछला शीर्षक।

महादेवने टांगाई और नानके लिए क्रिसमस-उपहारस्वरूप एक पुस्तक भेजी थी। आशा है, वह उन्हें मिल गई होगी।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० ११७) से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृष्ठ ९७-८ से भी।

४९७. पत्र : रमाबहन जोशीको

५ जनवरी, १९३३

चि० रमा,

मुझे पत्र न लिखनेके तुम्हारे कारणको बहुत कमजोर मानता हूँ। बाहर रहते हुए तो इतनी बातें सामने आती रहती हैं कि लिखनेका कारण खोजना ही नहीं पड़ता। फिर अगर लिखना चाहो तो तुम मुझे साफ-साफ यह भी लिख सकती हो कि वहाँ आश्रममें नियम-पालन करते हुए तुम्हें क्या-क्या कठिनाइयाँ होती थीं और किन नियमोंका पालन तो सम्भव ही नहीं होता था। अन्य स्थानोंपर जाकर रहनेवाली आश्रमवासी बहनें यदि ऐसी बातोंके बारेमें अपने अनुभव दिया करें तो कितनी मदद मिले।

मेरा पत्र मिला होगा?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३४०) से।

४९८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

५ जनवरी, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरे दोनों पत्र मिले। आज मुझसे लम्बे उत्तरकी आशा मत रखना। दायाँ हाथ थक गया है। बायेंकी गति चार-गुनी तो कम है ही। इसके सिवा, अब मुझे 'हरिजन' के लिए हाथ और समय (दोनों) बचाने पड़ेंगे। फिर भी तुझसे तो मैं पूर्ण पत्रकी आशा रखूंगा ही। सब बहनोंके समाचार तो तू ही देती है।

तेरे गलेके बारेमें मैंने जो लिखा उसपर तूने अमल किया होगा।

तू कामकी चिन्ता छोड़कर शान्तिसे काम करना सीख जाये, तो शरीर दुर्बल न हो। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि यह कहना जितना सरल है, करना उतना

ही कठिन है। फिर भी कभी-कभी ऐसे वचन गले उतर जाते हैं और उनका अमल होता है, ऐसा मैंने अनुभव किया है।

लक्ष्मीके बारेमें जाँच करती रहना। नर्मदाका क्या हाल है?

धुरन्धरका शरीर कैसा रहता है?

किसनके क्या समाचार हैं?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१९)से।

४९९. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

५ जनवरी, १९३३

चि० पण्डितजी,

तुम्हारा पत्र और प्रीतमपुरका संक्षिप्त वर्णन मिला। योजना अच्छी जान पड़ती है। यदि यह सफल हो गई तो मानना चाहिए कि एक बड़ा सुधार हुआ?

गिरि-परिवारका कुछ निबटारा हो गया होगा।

क्या समझा जा सकता है कि छाराओंका उपद्रव कम हो गया है?

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २४३) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

५००. पत्र : नारणदास गांधीको

५ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

आज 'कम-से-कम लिखकर ही सन्तोष करना होगा। सबसे कह देना कि 'हरिजन' के लिए लिखना पड़ेगा, इसलिए फिलहाल मेरे कम पत्र लिखनेपर कोई आश्चर्य न करे। जिन्हें कुछ भी लिखना हो, वे लिखते ही रहें। बहनें और बालक तो अवश्य लिखें। उनके लिए इसमें थोड़ा-बहुत शिक्षण भी है। हो सकता है मैं पत्रकी पहुँच न लिख सकूँ, तो भी वे स्वयं लिखना बन्द न करें।

लगता है कि कक्षा छोड़ देनेके बाद रामभाऊका वजन एकदम खूब बढ़ गया है। आश्रम छोड़ देनेके बाद शान्ति और जैकोरके साथ भी यही हुआ लगता है। इसका कारण मालूम करना और मालूम हो जाये तो मुझे लिखना।

दो-एक पत्रोंमें शिकायत है कि आश्रममें आवारा कुत्ते भूखे मरते हैं और जूते आदि खाते हैं। यह सही हो तो इसका अर्थ यह नहीं कि उन्हें रोटी दी जाये। किन्तु जिस तरह पहले पिंजरापोलकी गाड़ी उन्हें ले जाया करती थी वैसे ही अब भी ले

जाये। पिंजरापोलके साथ हमने ऐसा बन्दोबस्त किया है, यह तो तुम्हें शायद मालूम होगा। इस सम्बन्धमें जो पत्र-व्यवहार है वह भी दफ्तरमें मिलना चाहिए।

...[1] जैसेका मामला हमारे विचार करने लायक तो है ही। आश्रममें रहनेवाले नौजवानकी विवाह करनेकी इच्छा हो तो हम उसे एकाएक निकाल नहीं सकते, ऐसा मुझे लगता है। ऐसे लोगोंकी मदद करनेकी शक्ति हममें होनी चाहिए। क्या कर सकते हैं या कुछ कर भी सकते हैं या नहीं, इसपर मैंने विचार नहीं किया। पहले तो इस बातपर विचार करना है कि ऐसे लोगोंके सम्बन्धमें हमारा कुछ कर्त्तव्य है या नहीं। यदि है तो बादमें विचार करनेपर हमें मार्ग मिल जायेगा। तुम और दूसरे बुजुर्ग विचार कर अपनी राय लिखना।

बापू

[पुनश्च :]

कुल अट्ठारह पत्र हैं; सब बंधे हुए हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से

५०१. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

५ जनवरी, १९३३

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिला। मुझे सन्तोष है; विश्वास तो है ही। 'सहयोग' से अभिप्राय द्रव्यका नहीं है। द्रव्य तो आपके पाससे कोई अपरिचित बालक भी ले जाता है। मुझे इतना सरल न मानें कि मैं आपसे पैसा मागूंगा। उसके लिए तो हुण्डी ही काट दूंगा। मुझे तो आपसे बड़ा जबर्दस्त सहयोग चाहिए। आप उसके योग्य हैं और मुझे विश्वास है कि आप वह सहयोग देंगे।

जबर्दस्ती तो मैं गायको भी कसाईके फंदेसे न छुड़वाऊँ। न जबर्दस्ती हरिजनों का मन्दिर-प्रवेश कराऊँ और न जबर्दस्ती हरिजनोंसे गो-मांसादि छुड़वाऊँ।

किन्तु हरिजनोंका कहना है: 'आप हमें मरे ढोर उठानेपर विवश करते हैं और उनके मांसके पैसे हमसे वसूल करते हैं; इसलिए हम वह माँस खा डालते हैं और अब तो वह मुँह भी लग गया है। इसलिए एक तो आप हमसे माँसके पैसे वसूल न करें, दूसरे मरे ढोरोंको उठवानेका कोई और प्रबन्ध करें जिससे हमें माँस पानेका अवसर ही न मिले।'

इसमें थोड़ी चालाकी है। आज मरे ढोरोंको उठवानेका जल्दी ही कोई दूसरा प्रबन्ध कर सकना सम्भव नहीं है। इसे वे जानते हैं और यह कहकर उसका थोड़ा लाभ उठा रहे हैं। उन्हें ऐसा करनेका अधिकार है। सभी ऐसा करते हैं।

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

मैं राज्योंको यह उपाय सुझाता हूँ। ढोर जिसका था, मरे ढोरकी मालिकी भी उसीकी है या होनी चाहिए। किन्तु वह मरे ढोरकी व्यवस्था नहीं करता और इस तरह उसपर अपना अधिकार छोड़ देता है। वह इसलिए राज्यकी वस्तु बन जाता है और राज्यको चाहिए कि वह हरिजनोंको उचित मजदूरी देकर उसे हटानेकी व्यवस्था करे। राज्य सार्वजनिक लाभके लिए मरे ढोरके शरीरसे प्राप्त सभी चीजोंका उपयोग करे। अगर यह सम्भव नहीं है तो अभी वह केवल चमड़ेका उपयोग करे। चमड़ेकी वह कोई वाजिब कीमत तय कर दे और सम्बन्धित चमार या हरिजन अपनी मजदूरी काटकर वह कीमत चुका दे। अगर मजदूरी अलगसे राज्यके द्वारा नकद दी जाये तो वह चमड़ा निकालकर राज्यको सौंप दे। राज्य अपने कर्मचारीको ताकीद कर दे कि जब चमड़ा निकाल लिया जाये तब किसी निश्चित जगहपर मांस और हड्डियाँ आदि जो बिकने योग्य न हों, गहरा गड्ढा खोदकर गाड़ दी जायें। यों इससे राज्यका अज्ञान तो सूचित होगा ही। बुद्धिमान राज्य मांस, हड्डी आदि सभी चीजोंका सदुपयोग कर सकता है। अगर आप कहें 'सो किस तरह' तो मैं अगले पत्रमें लिखूँगा। इस पत्रमें तो इस बातका सस्ता और तुरन्त अमलके योग्य रास्ता बताया है कि चमारोंसे गो-मांस या मुर्दार मांस किस तरह छुड़वाया जा सकता है। आज तो चमड़े और मांसके सिवा दूसरी चीजोंका उपयोग ही नहीं होता। वह आसानीसे हो सकता है। पर वह यहाँ प्रासंगिक है, इसलिए आपका समय न लेनेके विचारसे उसे छोड़ दिया है।

आशा है, आप मेरे अक्षर बाँच पायेंगे और अभिप्राय समझ जायेंगे। मैं अच्छी तरह हूँ।

आप बूढ़े हो गये हैं, यह आपको किसलिए लगता है? काम करते रहकर शरीरको जीर्ण हुआ क्यों मानते हैं? दूसरोंसे नियमोंका पालन करानेवाले आप यदि स्वयं स्वास्थ्यके नियमोंका पालन न करें तो आपको दण्ड देने वाला कौन है?

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९२४) से। सी० डब्ल्यू० ३२३९ से भी; सौजन्य : महेश पी० पट्टणी।

५०२. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

५ जनवरी, १९३३

भाई तोतारामजी,

गिरि-कुटुंबके बारेमें, अभिप्राय मिला। खेदकी बात है कि उनको हम अच्छे न बना सके। खेती बगीचाके हाल भी किसी समय लिखो। शारीरिक प्रकृति अच्छी रहती होगी।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५३९) से।

५०३. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

५ जनवरी, १९३३

मैं ऐसा नहीं मानता। मेरे सुझावमें इतना ही है कि मन्दिरमें जानेवालोंके जिस खास वर्गको अभीतक ऐसा महसूस होता है कि मन्दिरमें जाते समय हरिजनोंके साथ मिल जानेमें वे कोई बुरा काम करते हैं, उसके पूर्वग्रहका आदर किया जाये। सुधारकी यह प्रवृत्ति जबर्दस्तीकी नहीं, बल्कि हृदय-परिवर्तनकी होनेके कारण मैंने अपना प्रस्ताव इस इरादेसे पेश किया है कि अन्तरात्माके विरोधवाला एक भी आदमी हो तो उसके विधि-निषेधका सम्मान किया जाये। तत्वत: जो मामले धार्मिक हैं, उनमें जहाँतक हो सके बहुमतकी इच्छापर अमल नहीं करना चाहिए। मेरे समझौतेसे ऐसे विरोधवालोंको दिनके एक खास भागमें उसी तरह पूजा करने की आजादी रहती है जिस तरह इस सुधारके होनेसे पहले वे करते थे।

मेरे सुझावका आधार बेशक यह मान्यता है कि गुरुवायुर मन्दिरमें (अभी तो मेरा समझौता गुरुवायुर मन्दिरके लिए ही है) जानेवाला सवर्ण हिन्दुओंका बहुत बड़ा बहुमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें है। अगर समझौता मान लिया जाये और उसपर अमल होनेपर मेरी धारणा गलत निकले, तो मैं मान लूंगा कि उसके कारण भेदभाव स्थायी बनता है। मगर सवर्णोंका बहुमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हो, तो मेरा समझौता हरिजनोंके और साथ ही मन्दिरमें जानेवालोंके बहुमतके उदार संयमकी निशानी होगा। यदि यह मालूम पड़े कि सुधारक अल्पमतमें हैं, तो इस प्रश्नपर विचार करना होगा कि ऐसे समझौतेका लाभ हरिजनोंको उठाना चाहिए या नहीं। आखिरकार समझौतेका सार तो यह है कि चरम स्थिति रखनेवाले दो पक्षोंके बीच किसी एक पक्षके सिद्धान्तको कुरबान किये बिना आधे रास्तेमें मेलजोल किया जाये।

प्रस्तावित समझौतेमें हरिजनों और सुधारकोंका सिद्धान्त यह है कि वे दोनों समानताके हकसे मन्दिरमें जाकर पूजा करें। किस समय पूजा की जाये, यह कोई महत्त्वकी बात नहीं है। विरोध करनेवालोंका सिद्धान्त यह है कि अपनी धार्मिक भावनाको आघात पहुँचाये बिना वे हरिजनोंके साथ-साथ पूजा नहीं कर सकते। मैं इस आपत्तिका पूरी तरह आदर करनेका वायदा करता हूँ, लेकिन उनकी आपत्तिके साथ सुसंगति रखते हुए उनके पूजा करनेके समयकी सीमा बाँधता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-१-१९३३

१. सम्वाददाताने गांधीजी से गुरुवायुर मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशके सम्बन्धमें पूछा था।

५०४. तार : रणछोड़दास पटवारीको[1]

[६ जनवरी, १९३३ या उससे पूर्व][2]

श्री गांधीने श्री पटवारीको यरवदा जेल आनेके लिए आमन्त्रित करते हुए एक तार भेजा है ताकि वे श्री गांधीको यदि वह गलती कर रहे हैं तो समझा सकें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१-१९३३

५०५. पत्र : जॉन मोरिसको

६ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र जॉन मोरिस,

तुम्हारा अद्भुत पत्र और क्रिसमस कार्ड पाकर हृदय गद्गद् हो गया। वे दोनों मुझे यथासमय मिल गये थे। उस दिन बहुत सवेरे तुम्हारे अस्पतालमें जाने और तुमसे हाथ मिलानेकी स्मृति मेरे लिए सदा अमूल्य रही है। हमेशाके लिए अपाहिज[3] होते हुए भी तुम्हारा इतना उल्लसित और प्रसन्न दीखना सचमुच एक महान दृश्य था। ईश्वर करे, वह आन्तरिक सुख तुम्हारे पार्थिव जीवनके अन्ततक बना रहे। तुम्हें शायद पता ही हो कि मीरा भी जेलमें है। पर वह बिलकुल अच्छी तरह है और खूब प्रसन्न है। वह खूब कताई कर रही है और कुछ बहुत ही उपयोगी चीजें पढ़ रही है। तुम्हारा पत्र मैं उसे भेजूंगा। मेरा खयाल है, उसे इसे प्राप्त करनेकी अनुमति मिलनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी, और इसे पाकर उसे उतनी ही खुशी होगी जितनी कि मुझे हुई है।

देवदास, जिसे तुमने देखा था, इस समय अस्पृश्यता-कार्यके सिलसिलेमें भारतका दौरा कर रहा है।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ६२५७) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७२३ से भी।

१. मोरवी राज्यके भूतपूर्व दीवान रणछोड़दास पटवारीके उस पत्रके उत्तरमें जिसमें गांधीजी से ऐसी कार्यवाहियाँ न करनेका अनुरोध किया गया था जिनसे हर हिन्दू-परिवारके छिन्न-भिन्न हो जानेकी सम्भावना है। गांधीजी के तारके जवाबमें श्री पटवारी पूनाके लिए रवाना हो गये। देखिए खण्ड ५३, "पत्र: रणछोड़दास पटवारीको", ११-१-१९३३ भी।

२. "अहमदाबाद, ६ जनवरी" की तिथि-पंक्तिके अन्तगत प्रकाशित

३. जॉन मोरिस अन्धे थे।

५०६. पत्र : मेडेलीन रोलाँको[1]

६ जनवरी, १९३३

य मेडेलीन,

तुम्हारा संक्षिप्त पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई, विशेषकर इसलिए कि उसने तुम सबके साथ समागमके उन अमूल्य दिनोंकी याद दिला दी। वह अपने परिवारके लोगोंसे मिलने-जैसा ही था।

पिछले उपवास[2] के दिनोंकी घटनाएँ यदि चमत्कार थीं, और वे थीं ही, तो वह मात्र ईश्वरका कार्य था। मैं तो उसके हाथोंका एक बहुत ही तुच्छ यन्त्र था। किसी भी घड़ी मुझे ऐसा नहीं लगा कि मैं कुछ कर रहा हूँ। मैं वह कर ही नहीं सकता था। मैंने जब यह कहा कि ईश्वर ही मेरे द्वारा काम कर रहा है तो वह, जहाँ तक मुझे ज्ञान है, शब्दशः सच था।

परन्तु देवदासको भेजे गये तुम्हारे महान और साधुचरित्र भाई[3] के तारसे मुझे लगता है कि यूरोपके लोगोंने उस प्रस्तावित दूसरे उपवासको समझा ही नहीं। इस पर मुझे कोई आश्चर्य नहीं है। पूरी धारणा इतनी नई मालूम होती है, फिर भी यह मुझे सत्यकी प्रार्थनापूर्ण खोजका युक्तियुक्त परिणाम लगती है। प्रार्थना उपवास बिना नहीं होती, और उपवास यदि प्रार्थनाका अभिन्न अंग न हो तो वह शरीरकी मात्र यन्त्रणा है, जिससे किसीका कुछ लाभ नहीं होता। ऐसा उपवास तीव्र आध्यात्मिक प्रयास है, एक आध्यात्मिक संघर्ष है। वह प्रायश्चित्त और शुद्धीकरणकी प्रक्रिया है। सच्चा उपवास एक मूक और अदृश्य शक्ति पैदा करता है, जो, यदि उसमें आवश्यक बल और पवित्रता हो तो, सारी मानवजातिमें व्याप्त हो सकती है। उसके अदृश्य व्यापक प्रभावको मैंने छोटे पैमानेपर किन्तु इतनी मात्रामें देखा है कि मैं यह जान गया हूँ कि वह बलवती शक्ति है। यहाँ वह अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनको आगे बढ़ानेके लिए एक अनिवार्य कदम था। यदि मैं हिचकिचाता, तो अपने प्रति, अपने साथी केलप्पनके प्रति और हरिजनोंके ध्येयके प्रति झूठा होता। अभी वह अनिश्चित कालके लिए स्थगित हो गया है। शायद अभी भी मैं अपनी बात स्पष्ट नहीं कर पाया हूँ। वैसा करना कठिन है। परन्तु यह कहनेमें मुझे कोई झिझक नहीं है कि समय उस कदमको सही सिद्ध करेगा। हर हालतमें, मेरे लिए वह ईश्वरका आह्वान था, जिसका मैं प्रतिरोध नहीं कर सकता था। यदि और स्पष्टीकरण आवश्यक हो तो कृपया मुझे उसके लिए लिखनेमें सकुचाना नहीं।

१. इस पत्रकी एक प्रति मीराबहनको भेजी गई थी।

२. यहाँ आशय स्पष्ट ही सितम्बर, १९३२ के ऐतिहासिक उपवाससे है। देखिए खण्ड ५१।

३. रोमाँ रोलाँ।

तुम्हारे भाईके लिए मैं एक उपयुक्त विशेषण खोजनेकी कोशिश कर रहा हूँ। तुम्हारे पत्रमें उन्हें 'श्रीमान रोलाँ' या 'तुम्हारे भाई' लिखना फीका लगता है और दूरी-सी जताता है। उन्हें केवल भाई कहना अधिक घनिष्ठ हो जाता है, और मौजूदा सम्बन्धको बिलकुल ठीक व्यक्त नहीं करता। दो शब्द, जो मुझे सूझ रहे हैं, ऋषि या साधु हैं। वे लगभग पर्याय हैं, पर फिर भी उनका अर्थ बिलकुल एक नहीं है। इसलिए उनकी और तुम्हारी स्वीकृति हो तो मैं अबसे उन्हें 'ऋषि' कहा करूँगा। आशा है, वे पूर्णतया अपने सामान्य स्वास्थ्यमें होंगे। मुझे डर है कि उनके लिए पूर्ण स्वास्थ्यकी आशा करनेकी किसीको हिम्मत नहीं होगी। वे उसके लिए अवसर ही नहीं देंगे। उसका अर्थ उनके लिए अपने ध्यानको ऐतिहासिक शोधोंसे हटाकर शारीरिक स्वास्थ्यपर एकाग्र करना होगा। और ऐतिहासिक उनके लिए आध्यात्मिक भी है, अन्यथा वे ऋषि नहीं होते। कृपया ऋषिको यह बताना कि कुछ महीने पहले मुझे रामकृष्ण और विवेकानन्दपर उनकी पुस्तकें पहली बार मिली थीं। उन्हें पढ़कर मुझे बहुत आनन्द प्राप्त हुआ और भारतके प्रति उनके प्रेमका पहलेसे कहीं ज्यादा अच्छी तरह अन्दाजा हो सका।

मीरामें और मुझमें प्रति सप्ताह पत्र-व्यवहार होता है। अपने विश्रामगृहमें वह काफी प्रसन्न है। वह हिन्दी सीख रही है, 'महाभारत' और 'रामायण' पढ़ रही है, और इन दिनों बौद्धधर्मपर डॉ० गौड़की पुस्तक पढ़ रही है। स्वास्थ्य उसका ठीक है और वह आहार-सम्बन्धी प्रयोग कर रही है। उसके भोजनपर कोई प्रतिबंध नहीं है। इसलिए जो-कुछ उसे चाहिए वह प्राप्त कर सकती है। उसे एक-दो समाचारपत्र और जिनकी उसे जरूरत हो, ऐसी गैर-राजनैतिक पुस्तकें भी मिलती रहती हैं।

महादेव देसाई मेरे साथ हैं। दो और व्यक्ति हैं जिनसे तुम्हारा व्यक्तिगत परिचय नहीं है। हम दोनोंकी ओरसे तुम दोनोंको प्यार।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ६२५८) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७२४ से भी।

५०७. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

६ जनवरी, १९३३

प्रिय चार्ली,

तुम्हारे पत्र मिले। मुझे पूरा यकीन है कि तुम्हारा काम कम-से-कम कुछ समय अभी वहींपर है। जब मुझे अन्यथा लगेगा, तो सहायताके लिए अत्यावश्यक बुलावा भेजने में मुझे कोई झिझक नहीं होगी। तुम्हें यदि वुडब्रुकमें सिर्फ एक महीने शान्ति मिल जाये, तो तुम्हारे स्नायुओंको कुछ आराम मिलेगा। रेलवे यातायातके उस सारे शोरगुलमें लगातार भागादौड़ीका तुमपर क्या असर होना था, यह मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ। मुझे आशा है कि तुम्हें अपनी पुस्तक 'द सरमन ऑन द माउण्ट' समाप्त करनेको आवश्यक समय मिल जायेगा।

तुम्हारे दो तार मिले, जिनमें मुझे यह बताया गया था कि तुम डॉ० सुब्बा-रायनके विधेयककी मंजूरीके सिलसिलेमें काम कर रहे हो। हर हालतमें, कम-से-कम जबतक उसके भाग्यका पता न चले, उपवास स्थगित रहना है। मैं आशा करता हूँ कि तुमने उसके बारेमें चिन्ता करना छोड़ दिया होगा। ईश्वरके पाससे आनेवाली किसी भी चीजके बारेमें कोई चिन्ता नहीं हो सकती। क्या मैंने कभी तुम्हें उस श्लोकका अनुवाद सुनाया था जिसे हम प्रतिदिन प्रातः प्रार्थनामें पढ़ते हैं? "विपत्ति कोई विपत्ति नहीं है, समृद्धि भी सच्ची समृद्धि नहीं है। वास्तविक विपत्ति है ईश्वरकी सर्वव्यापकताको भूल जाना, और सच्ची समृद्धि है उसे निरन्तर याद रखना।"[१] इसलिए उपवास यदि ईश्वरके पाससे आता है, तो उसमें चिन्ताका रत्ती-भर भी कारण कहाँ है?

हाँ, मुझे अकसर एस्थरके बड़े सुन्दर पत्र मिलते रहे हैं। वह इस खबरसे बहुत ही उत्साहित हो उठी है कि तुम, कम-से-कम फिलहाल, वुडब्रुकमें बसनेवाले हो।

आशा है, तुम्हारे भाईकी दशामें सुधार बराबर जारी होगा। तुम्हारे अगले पत्रकी, जिसमें उसके बारेमें और भी अच्छी खबर हो, मुझे प्रतीक्षा रहेगी।

मीरा मुझे प्रति सप्ताह पत्र लिखती है और मेरे पाससे भी उसे सप्ताहमें एक पत्र जाता है। अगली बार जब मैं उसे लिखूंगा तो तुम्हारा प्रेम उसे भेजूंगा। इस तरहकी चीजें अकसर मैं भूल जाता हूँ, पर आशा है इसे मैं भूलूंगा नहीं।

हम सबकी ओरसे प्यार,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३०६) से।

१. देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३९७

५०८. पत्र : श्रीमती हंटरको[1]

६ जनवरी, १९३३

प्रिय बहन,

८ दिसम्बरके आपके पत्रके लिए और इस सूचनाके लिए कि आपने अस्पृश्यता-निवारण समितिको पौंड ४२-०-३ का एक चेक भेजा था[2], धन्यवाद।

सभी अंग्रेज और अन्य मित्रोंको कृपया मेरा धन्यवाद दें। अभी-अभी समितिसे मुझे पता चला है कि आपका चेक उसे यथासमय मिल गया था। आशा है, आपको उसकी यथोचित रसीद मिल गई होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५३२)से।

५०९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

७ जनवरी, १९३३

इन दिनों बहुत-से कांग्रेसी मेरे पास आकर मुझसे कहते हैं कि जेलके भीतरसे मैंने अस्पृश्यताके विरुद्ध आन्दोलन चलानेका जो काम शुरू किया है, उसके बारेमें कांग्रेस हल्कोंमें कानाफूसी होती रहती है और उनकी समझ में नहीं आता कि वे सविनय अवज्ञाका काम ही जारी रखें या अस्पृश्यता के विरुद्ध लड़ाईमें सक्रिय भाग लेने लग जायें? इस सवालसे मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता। यह सवाल पूछनेवालोंसे मैं इतना ही कह सकता हूँ :

'मुझे नहीं लगता कि मेरे व्यवहारमें कोई असंगति है। ईश्वरने मुझे जो-कुछ बुद्धि या शक्ति दी है, उसे काममें लानेका मौका आनेपर भी मैं उसका उपयोग न करूँ, तो इसमें पाप न हो तो भी मूर्खता तो जरूर है। सविनय अवज्ञाके लिए मैं अपनी सारी शक्तिका उपयोग कर रहा हूँ। मुझे लगा कि इसके अलावा भी हरिजनोंकी सेवा करनेकी शक्ति मुझमें मौजूद है, जिसे मैं काममें ला सकता हूँ। इसलिए मैं उसका उपयोग कर रहा हूँ। ऐसा करके मैं अपने वर्तमान धर्मसे या कर्तव्यसे

१. नाम जी० एन० रजिस्टरसे लिया गया है।
२. देखिए "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको", पृष्ठ ३०९।

जरा भी च्युत नहीं होता। हरिजनोंकी सेवा मैं अतिरिक्त कामकी तरह कर रहा हूँ। इस प्रकार मेरे सामने दोमें से एकका चुनाव करनेका सवाल नहीं था। परन्तु मैं जानता हूँ कि जो इस समय जेलकी दीवारोंके बाहर हैं, उनका मामला दूसरा है। जो सविनय अवज्ञा करनेवाले हैं, उन्हें यह फैसला करना है कि वे सविनय अवज्ञाका काम जारी रखें, या अस्पृश्यता-निवारणका काम हाथमें लें। इन लोगोंके लिए मैं इस सवालका निर्णय नहीं कर सकता। मेरे मनकी रचना ऐसी है कि जहाँ मैं एक बार जेलके दरवाजेमें घुसा कि फिर सविनय अवज्ञाका किसी भी तरहसे मार्गदर्शन करनेके लिए असमर्थ बन जाता हूँ। मैं मार्गदर्शन कर सकूँ तो भी मुझे करना नहीं चाहिए, क्योंकि अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्य करनेके लिए मुझे जो बड़ी रियायतें मिली हैं, उनका लाभ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें और छिपे या खुले तौरपर इस आन्दोलनका मार्गदर्शन करनेके लिए न उठानेके वचनसे मैं बँधा हूँ। इसलिए मुझसे पूछे बिना हरएक भाई-बहनको अपना निर्णय खुद कर लेना चाहिए।'

मेरे ऐसे विचार होनेके कारण मैंने अपनी पत्नी और अपने लड़केको भी रास्ता बतानेसे इनकार कर दिया है। अस्पृश्यता मिटानेकी मेरी अपील हरएक सवर्ण हिन्दूसे है, चाहे वह कांग्रेसी हो या और कोई हो। क्योंकि उपवासके सप्ताहके दिनोंमें बम्बईमें जो प्रस्ताव पास हुआ था, उससे हरएक हिन्दू, जहाँतक उसका निजी सम्बन्ध है वहाँतक, अस्पृश्यता दूर करने और अपने पड़ोसियोंको भी वैसा ही करनेको समझानेके वचनसे बँधा हुआ है। उसके पहले भागमें केवल एक मानसिक क्रिया करनेकी बात है और जहाँ उसके अनुसार कुछ काम करना हो, वहाँ अपने निजी व्यवहारमें उसे करके दिखानेकी बात है। उसका दूसरा भाग अस्पृश्यता-निवारणके लिए प्रचार करना है। उसमें हरएक भाई या बहनको, जहाँ दोनों काम साथ-साथ न हो सकते हों वहाँ, यह चुनाव करना है कि वह इस प्रचार-कार्यमें पड़े या अपना मौजूदा काम जारी रखे।

जो कांग्रेसी सविनय अवज्ञाकी प्रतिज्ञासे बँधे हुए हैं, उनके सामने यह पहेली जरूर खड़ी होती है। पर वह तभी खड़ी होती है जब वे यह जाननेके मिथ्या प्रयत्नमें पड़ते हैं कि इस बारेमें मेरी क्या राय है। मेरे खयालसे मैंने तो अपनी स्थिति साफ कर दी है कि इस बारेमें मेरी कोई राय है ही नहीं कि वे क्या करें। जब जेलके भीतरसे अस्पृश्यताके कामका संचालन करनेका मैंने निर्णय किया, तब मेरे सामने सविनय अवज्ञा करनेवालोंका वर्ग ही नहीं था, मेरे सामने तो सारा हिन्दू समाज था। वह सारा समाज इस काममें मुझे योग देनेमें असफल साबित हो जाये, तो अकेले सविनय अवज्ञा करनेवाले इस युगों पुरानी बुराईको मिटा नहीं सकते। पर यह हो सकता है कि सविनय अवज्ञा करनेवालोंको अस्पृश्यता-निवारणका काम करनेका खास आदेश महसूस हो, या उन्हें यह लगे कि अनुशासनपूर्ण सविनय अवज्ञा करनेकी ताकत उनमें नहीं रही, या सविनय अवज्ञाका जोश खत्म हो गया है, या सविनय अवज्ञा-जैसी चीज ही नहीं रही और जो-कुछ विरोध बाकी है उसमें विनय नहीं रह गया, या वह अविनयी बन गया है।

यह जाहिर है कि इन सब प्रश्नोंपर विचार करनेमें मैं उपयोगी मार्गदर्शन नहीं कर सकता। ये सब प्रश्न ऐसे हैं जिनके बारेमें वे ही निर्णय कर सकते हैं जो बाहर हैं। अगर अधिक मनुष्योंके दिलमें शंका हो, तो वे इकट्ठे होकर विचार करें और इस बारेमें निर्णय करें कि मौजूदा हालतमें क्या मार्ग अपनाया जाये। जिनके मनमें शंका ही नहीं है, वे उस सुविख्यात संस्कृत श्लोक[1] को याद करें, जिसका ठीक अर्थ उसीसे मिलती-जुलती उतनी ही मशहूर अंग्रेजी कहावतमें आ जाता है: 'जो है, उससे ज्यादा लेनेकी कोशिशमें पासका भी खो बैठते हैं।'[2]

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९४) से।

५१०. पत्र : बम्बई सरकारके गृह सचिवको

७ जनवरी, १९३३

सरकारके सचिव
गृह विभाग, बम्बई

प्रिय महोदय,

इसके साथ जो वक्तव्य[3] है उसे समाचारपत्रोंको देनेकी मैं आवश्यकता अनुभव कर रहा हूँ। मेरे खयालसे यह भारत सरकारके फैसलेकी मर्यादाओंके अन्दर है। परन्तु सरकार अन्यथा भी सोच सकती है। वक्तव्यको समाचारपत्रोंको देनेसे पहले, मैं यह निश्चित रूपसे जानना चाहूँगा कि इस विषयमें उसका दृष्टिकोण क्या है। यदि मुझे शीघ्र उत्तर मिल जाये तो मैं आभारी होऊँगा।

मैं यह जानता हूँ कि सर्वसाधारणके मनमें काफी भ्रांति है, इसलिए मैं उन्हें साफ-साफ बता देनेको बेचैन हूँ कि सविनय अवज्ञा और अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यमें से एकको चुननेमें उन्हें मार्गदर्शनके लिए मेरी ओर नहीं देखना चाहिए। मैं यह महसूस करता हूँ कि इतना उनके प्रति मेरा कर्त्तव्य हो जाता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (८), भाग-१, पृ० ३।

१. यो ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवं परिषेवते।
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं नष्टमेव च॥

२. मच वान्ट्स मोर, ऐंड लूज़ेज ऑल।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

५११. पत्र : भगवानदासको

७ जनवरी, १९३३

प्रिय बाबू भगवानदास,

इतने दिन आपका मेरे साथ रहना मेरे लिए कितने आनन्दकी बात थी, मैं आपको बता नहीं सकता। यह बिलकुल अप्रत्याशित था, इसलिए दुगना आनन्द मिला।

महादेवके पास जो पत्र आप छोड़ गये थे वह मुझे मिल गया। यदि और किसीलिए नहीं तो आपकी ही खातिर, मैं पुस्तकके साथ जूझ रहा हूँ। पर उसे कब समाप्त कर सकूँगा इसका मुझे कोई अन्दाजा नहीं है। अस्पृश्यताके कार्यको छोड़, किसी और कार्यके लिए जब मैं एक मिनटका भी समय निकालता हूँ, तो अपने-आपको चोर अनुभव करता हूँ, क्योंकि शायद ही कोई दिन ऐसा होता हो जब उसका कुछ-न-कुछ काम बकाया न रहता हो। इसलिए यदि कुछ समयतक आपको मुझसे पुस्तकके बारेमें कुछ सुननेको न मिले, तो मेरी खामोशीका कारण आप जान लें। यदि कभी मैं पुस्तकपर अपनी सम्मति आपको दे सका तो वह प्रकाशनार्थ नहीं होगी, क्योंकि अस्पृश्यतासे अन्य किसी भी विषयपर मैं कुछ भी सरकारकी अनुमति बिना बाहर नहीं भेज सकता।

हृदयसे आपका,

डॉ० भगवानदास
सेवाश्रम, बनारस छावनी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१८४) से।

५१२. पत्र : एस० शालीवतीको[1]

७ जनवरी, १९३३

प्रिय शालीवती,

आपका पत्र[2] मिला। हिन्दू समाजमें फूट डालनेके प्रश्नपर, जैसाकि आपने देख लिया है, मैं विचार कर चुका हूँ। श्री अय्यरका भाषण पढ़नेका मुझे अभी समय नहीं मिला है। उसे पढ़ते ही, यदि मुझे कुछ कहना हुआ तो मैं आपको कहूँगा। जिन मुद्दोंपर आपने विचार-विमर्श किया है उनपर आपको समुचित कानूनी राय ले लेनी चाहिए। सर चिमनलालकी रायका मैं निस्सन्देह कोई उपयोग नहीं करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० शालीवती
मार्फत थामस कुक एण्ड सन, बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१८९) से।

५१३. पत्र : जी० रामचन्द्र रावको

७ जनवरी, १९३३

प्रिय रामचन्द्र,

आपके दो पत्र मिले। आपकी योजना मैंने देख ली है। योजनाकी सफल पूर्तिके लिए आपको व्यवस्थापक बोर्डके सदस्योंके नाम, उनकी योग्यताओं-सहित और दे देने चाहिए। कामके जबर्दस्त दबावके बीच मैंने इसपर सिर्फ सरसरी नजर

१. हिन्दूके संवाददाता।

२. दिनांक ३ जनवरी, १९३३ का जिसपर शालीवतीश्वरमके हस्ताक्षर थे। इसमें लिखा था: "मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर आज तीसरे प्रहर सर चिमनलाल सीतलवाडके साथ मेरा दो घंटे विचार-विमर्श हुआ। पिछले शुक्रवारको मैं जब उनसे मिला था, तो वे श्री टी० आर० रामचन्द्र अय्यरसे पूर्णतया सहमत थे। आज न्यायाधीश रामेशमके फैसलेको पढ़नेके बाद उनका यह विचार है कि जमोरिनके दावेमें कोई सार नहीं है। जब चलन और रिवाजके अनुसार तीन दिन मन्दिरमें प्रवेशकी अनुमति दे दी जाती है, तो 'धर्म खतरेमें है' का नारा निरर्थक हो जाता है। उनका तर्क यह है कि यदि तीन दिन प्रवेशकी अनुमति दे दी जाती है और उससे धर्मको खतरा पैदा नहीं होता, तो ३० दिनकी ही अनुमति क्यों न दे दी जाये। ट्रस्टी यदि चाहें तो प्रत्येक दिन शुद्धि-संस्कार कर सकते हैं।" (एस० एन० १९१५७)।

ही डाली है और यह कमी मुझे नजर आ गई। पर पूरी योजनामें कोई कमी रहती है। मैं इसपर अपना मन इतना एकाग्र नहीं कर सका हूँ कि जो कमी है उसे शब्दोंमें व्यक्त कर सकूँ। योजना इस तरह तैयार की जानी चाहिए कि पहली बार पढ़नेसे ही वह विश्वास पैदा कर सके। यह ऐसा नहीं करती। व्यवसायी मित्र शायद उस चीजका, जो मुझे परेशान कर रही है, तुरन्त पता लगा सकेंगे।

मेरे लेखोंसे सनातनियोंने जो उद्धरण दिये हैं, उनके बारेमें कुछ न कहना ही ठीक होगा। उनमें से बहुतोंको तोड़ा-मरोड़ा गया है, कुछ उद्धरण अधूरे हैं, और कुछ जो-कुछ मैंने लिखा है, उसके इतने विपरीत हैं कि असत्य भाषण ही हो जाते हैं। परन्तु आप या किसी भी अन्य मित्रको, जो इन बातोंका जवाब देना चाहे, 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंको देखकर उद्धरणोंकी जाँच कर लेनी चाहिए। मैं ऐसा नहीं कर सकता था, क्योंकि मैं जानता हूँ कि वे उद्धरण क्या हैं और इसलिए मेरी वैसी इच्छा नहीं है। इच्छा हो भी, तो मेरे पास समय नहीं है। आपने जो उद्धरण भेजा है वह मूलसे कुछ मिलता-जुलता है।

आपपर लगाये गये आरोपोंका जहाँतक सवाल है, मैं समझ नहीं पाता कि आप इतने छुईमुई क्यों हैं। उन आरोपोंमें यदि कोई सचाई नहीं है, तो आप उनकी चिन्ता क्यों करते हैं? आपको यह विश्वास रखना चाहिए कि समय सारी गलत-फहमियोंको दूर कर देगा और सोचे जा सकनेवाले हर अन्यायको ठीक कर देगा। समय सदा अन्यायके विरुद्ध और न्यायके पक्षमें जाता है।

मुझे अब गायका शुद्ध घी मिल गया है और आपके उपचारकी मैंने कलसे आजमाइश शुरू कर दी है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जी० रामचन्द्र राव
मार्फत सर्वेण्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी
मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१८८) से।

५१४. पत्र : नरगिस कैप्टेनको[1]

७ जनवरी, १९३३

२६ दिसम्बरका तुम्हारा पत्र मैंने संभाल कर रखा है कि वह मुझे याद दिलाता रहे कि मुझे एक वक्तव्य तुम्हारे लिए तैयार करना है। परन्तु सनातनियोंके नाम एक अपील[1] और एक अपील[2] पहले जारी कर देनेके बाद भी, तुम्हारे खयालसे, क्या वक्तव्य देना अभी भी जरूरी रहता है? यदि तुम्हारा ऐसा खयाल हो, तो तुम्हारे नाम मुझे एक पत्र लिखना होगा, जिसे प्रकाशित करनेकी तुम्हें स्वतन्त्रता होगी। तुम्हारे पत्रके अलावा मुझे कोई ऐसा पत्र नहीं मिला है जिसमें जो कठिनाई तुमने बताई है, वह बताई गई हो। इसलिए सर्वसाधारणको जिसकी जरूरत न हो, ऐसा कोई वक्तव्य मैं देना नहीं चाहता हूँ। परन्तु मेरे समय और शक्तिकी खातिर तुम्हें उस वक्तव्यकी बात छोड़नी नहीं है। यदि वह आवश्यक ही है, तो उसके लिए शक्ति खर्च की जायेगी।

नरगिसबहन

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१८७) से।

५१५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

७ जनवरी, १९३३

प्रिय घनश्यामदास,

तुम्हारा पत्र मिला। आशा है, डॉ० रायके पत्र[3] की नकल तुम्हें मिल गई होगी। गलती से वह उस पत्रसे छूट गई[4] जिसके साथ वह जानी थी। डॉ० रायको लिखे अपने पत्र[5] में जो नीति मैंने अपनाई है, भेंट होनेपर तुम्हें उसके बारेमें मैं सन्तुष्ट करना चाहूँगा।

मेरा खयाल है कि काशी विश्वनाथके[6] बारेमें अभी कोई विशेष आन्दोलन न चलाना ही अच्छा रहेगा। जनमत तैयार करते हुए, मन्दिर-प्रवेशके लिए आम

१. देखिए पृष्ठ ३७०-४।
२. सम्भवत: "वक्तव्य: अस्पृश्यतापर" –१३; देखिए पृष्ठ ३१५।
३. देखिए परिशिष्ट ५।
४. देखिए पृष्ठ २१४-७।
५. देखिए पृष्ठ २१०-११।
६. बनारसका सुप्रसिद्ध मन्दिर।

कोशिश जरूर चलती रहनी चाहिए। पर किसी विशेष मन्दिरके लिए विशेष प्रयत्न अभी नहीं होना चाहिए।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१८५) से।

५१६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

७ जनवरी, १९३३

चि० प्रेमा,

तू जैसी क्रोधी है वैसी ही रूठनेवाली भी है। पर पिताके साथ पुत्री कितने दिन रूठ सकती है? पिताका प्रेम उसका गर्व उतार देता है। तू कबतक रूठी रहेगी? शायद तू पत्र लिखकर ही पछताई होगी।[1] तू जानती है कि अपनी चिट्ठीसे तूने जलेपर नमक छिड़का है? लेकिन तू अपने-आपको जितना पहचानती है, उसकी बनिस्वत मैं तुझे शायद ज्यादा पहचानता हूँ। मुझे पहले तो बहुत दुःख हुआ। फिर तुरन्त हँसा। अपने पत्रमें[2] तू जितनी बुरी दिखती है उतनी बुरी तू है नहीं। मैंने तुरन्त निश्चय किया कि जैसे पहले तू रूठकर दुःखी हुई थी वैसे ही अब भी पछता कर माफी माँगेगी। लेकिन मेरा अनुमान गलत हो तो अब माफी माँग और तेरे जी में आवे वैसे पत्र लिख। मेरा उलाहना तो मनमें जहर रखनेके बारेमें है। जबतक तेरे मनमें जहर हो तबतक उसे मेरे सामने नहीं उँड़ेलेगी तो कहाँ उँड़ेलेगी? मैं तेरे कान न पकड़ूँ तो और कौन पकड़ेगा? जहर है, तबतक तो मुझे पीने ही देना। तेरी दृष्टिमें शायद वह जहर न हो। अपने स्वभावको कोई शायद ही पहचानता है। तू पहचान और जाग।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३२०) से।

५१७. एक पत्र

७ जनवरी, १९३३

इस भागदौड़के पीछे एक और चीज भी रही है। आश्रमवासियोंमें भी गरीबीके शुद्ध दर्शनका अभाव है। यह दोष तुम्हारा अकेलेका ही नहीं है। तुमसे पुराने कुछ आश्रमवासी भी इससे मुक्त नहीं हैं। इतनेपर भी जो समझना चाहते हैं, उन्हें मैं जरूर समझाना चाहता हूँ कि गरीबसे भी गरीब बनकर रहना हमारा धर्म है। एक पैसेसे काम चले तो दो न खर्च करें और ऐसा करते हुए जो खतरे उठाने पड़ें तो

१. गांधीजी के २५ दिसम्बरके पत्रसे नाराज होकर प्रेमाबहनने क्रोधमें लिखा था कि वह फिर कभी पत्र नहीं लिखेगी।

२. सम्भवतः वह पत्र जिसका उत्तर गांधीजी ने २५-१२-१९३२ को दिया था।

उठा लें। इसलिए विना सफर किये जितना काम चल सके, उतना चलायें। जितनी सुविधाओंके विना काम चल सके, उतनी सुविधाएँ छोड़ दें। और यह गरीबी सिर्फ रुपयेकी ही नहीं, प्रवृत्तिकी भी होनी चाहिए। हम शब्द भी कंजूसीसे काममें लें, विचार भी कंजूसीसे काममें लें। ऐसा करें तो ही सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य आदिका पालन हो सकता है। 'मुझसे ज्यादा खर्चीले तो आश्रममें अ, व और क हैं', यह कमी तुम अपनेमें से निकाल सको तो निकाल दो; और यह वात मुझसे तो कभी मत कहना। अपने मनमें भी ऐसा विचार नहीं रखना चाहिए। धर्म तो जो पालन करे, उसके लिए है।

अव तुम्हारी शंकाके वारेमें। हम अपने विकारोंसे अपने वच्चोंकी तुलना करेंगे तो जरूर वाजी हार जायेंगे। जो परिस्थितियाँ हमने वच्चोंके लिए अनुभव प्राप्त करके पैदा की हैं, वे हमारे पास नहीं थीं। हमें विश्वास रखना चाहिए कि इन परिस्थितियोंका प्रभाव वच्चोंपर पड़ेगा ही। इसकी चिन्ता न करें कि तात्कालिक प्रभाव हमें ऐसा कुछ भी दिखाई नहीं देता। यह प्रयोग करते हुए जिन्हें हम अपने वालक समझते हैं, उन्हें कुर्वान करना पड़े तो भी हम आत्मविश्वास न खोयें। और जवतक अपनी भूल न मालूम हो तवतक प्रयोग जारी रखें; सफलतादेवी के दर्शन तभी होंगे। यह रास्ता स्वीकार करना आगकी ज्वालामें प्रवेश करना है, इसलिए हम खुद और हमारे वच्चे हँसते-हँसते वलिदान हो जायें। सव क्षेत्रोंमें इस तरह किये विना शुद्ध सत्य, शुद्ध अहिंसा या शुद्ध ब्रह्मचर्यकी झाँकी हमें नहीं मिलेगी। या हम इस नतीजेपर पहुँचेंगे कि इन तीनोंमें से एक या दो चीजें गलत हैं। अहिंसा गलत चीज है, यह माननेवाले पंथ तो दुनियामें वहुत मौजूद हैं और ब्रह्मचर्यको पाप माननेवाला सम्प्रदाय वढ़ता जा रहा है, यह हम अपनी आँखोंके सामने देख रहे हैं। इस सम्प्रदायकी वृद्धि होती देखकर भी यदि हमें यह सावित करना हो कि यह गलत है और ब्रह्मचर्य सही चीज है, तो . . .[1] जैसी लड़की और . . .[2] जैसे नौजवानोंका वलिदान देनेकी कला हमें हस्तगत करनी पड़ेगी। पराये लड़कोंको यति नहीं वनाया जाता। यह लाभ तो अपनोंको ही दिया जाता है। किन्तु तुम तो कहते हो कि हमारे वच्चे भी तभी परीक्षामें पास हुए माने जायेंगे जव वे संसार-रूपी समुद्रमें टक्कर खायें और फिर भी उनके कदम न डगमगायें। यह वात मैं मानता हूँ और इसीलिए हमने आश्रमको समुद्रका एक अंश वना डाला है। और यदि इसमें नहीं डूवे तो महासमुद्रमें भी तैर जानेकी आशा रख सकेंगे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृष्ठ २२-३

१ और २. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।

५१८. पत्र : नानालाल कालिदास जसानीको

७ जनवरी, १९३३

भाई नानालाल,

आपका पत्र मिला था। उसके जवाबमें मैंने तार दिया था और आपकी राह भी देखी थी; लेकिन आप नहीं आये। प्रभाशंकरके साथ व्यवहारमें दृढ़ताकी आवश्यकता है। अगर दोनों भाई फैसलेपर दृढ़ बने रहें तो और सबसे निबटा जा सकेगा। प्रभाशंकरकी माँग एकदम नई ही लगती है। मेरे मनमें तो निश्चय है कि यह माँग कभी स्वीकार नहीं की जा सकती। रतिलाल अथवा चम्पाके हितोंकी इससे पूरी तरह रक्षा हो जाती है, इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं है।

यह एक परेशानीकी बात हुई, दूसरी आज सामने आई है। यह अधिक भयानक है। कह सकते हैं कि भाई खीमचन्दने तो नोटिस ही दे डाला है। लगता है, छगनलालने इसे बुला भेजा था। उसे मालूम है कि उसके प्रति मेरे मनमें बहुत अविश्वास है। छगनलालने लिखा है कि उसने इस काममें हाथ डालनेका निश्चय किया है; फैसलेपर उसने अपनी नाराजगी जाहिर की है। मैंने कड़ाईके साथ उसे लिखा है कि उसे इस काममें हाथ नहीं डालना चाहिए। वह मानेगा, इसकी सम्भावना बहुत कम है। छगनलालको मैंने जोर देकर लिखा है कि वह खीमचन्दसे न मिले-जुले। मैंने यह भी लिखा है कि अगर उसे कोई असन्तोष है तो वह फिर मुझसे मिल ले और यह भी लिखा है कि जो फैसला हुआ है उसपर दृढ़ रहे। आशा करता हूँ कि वह मान जायेगा। अगर आप या खुभाई समझा सकें तो समझायें। खीमचन्दसे मिल सकते हों तो मिलें। खुभाई और मगनलालको यह पत्र दिखा दें। खीमचन्दके प्रति अपने व्यवहारमें भी दृढ़ता रखें। इसपर भी कुछ बिगड़ना हुआ तो उस दुःखको शिरोधार्य करूँगा। मगनलालसे भी कहिए कि मुझे लिखे। समय मिला तो उसे और खुभाईको कार्ड लिखकर डाल दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

आपका कार्ड मिला है। मंगलवारको आइये। लगता है, खीमचन्द समझ गया है। यदि यह ठीक हो तो एक परेशानी कम हुई।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९६२७) से।

५१९. पत्र : फूलचन्द बी० शाहको

७ जनवरी, १९३३

भाई फूलचन्द,

तुम्हारे पत्रके उत्तरमें मैंने तुम्हें पत्र लिखा था। वह मिल चुका होगा। बलवन्तसिंहको लम्बा जवाब[1] लिखा था। लगता है, उसे नहीं मिला। उसका प्रश्न याद नहीं आता। पत्र न मिला हो तो फिरसे प्रश्न पूछ ले[2]। हरिभाऊ उपवास न करे। समूचे सवालका नतीजा थोड़े ही दिनोंमें निकल आयेगा। पृथुराज मिला था। उसने सबके कुशल समाचार दिये। छगनलाल जोशी अब मेरे साथ है।

सबको
बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९६२६) से; सौजन्य : चन्द्रकान्त फू० शाह

५२०. पत्र : नारणदास गांधीको

७ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा और प्रेमाका पत्र तथा दूसरे पत्र मिले। प्रेमाको जो लिखा है[3] वह इसके साथ है। मुझे आशा है कि अपनी मूर्खता वह समझ गई होगी।

अब तुम खुराकमें क्या लेते हो? ज्वारकी कांजी और ज्वार-बाजरेकी रोटीका कैसा असर हुआ है? घी कहाँसे मँगाते हो?

क्या छारा लोगोंका उपद्रव कुछ कम हुआ? वहाँ कोई जाता है?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

१. उपलब्ध नहीं है।

२. बलवन्तसिंहने अपनी पुस्तक **बापूकी छायामें**, पृष्ठ ४१ पर लिखा है कि उसने गांधीजीके उत्तर प्राप्त करनेके लिए प्रश्नावलीकी एक प्रति पुनः भेजी थी, देखिए खण्ड ५३, "पत्र : बलवन्तसिंहको", ५-२-१९३३।

३. देखिए पृष्ठ ४००।

५२१. पत्र : धर्मदेवको

७ जनवरी, १९३३

तुम्हारा पत्र मझे बहुत ही अच्छा लगा है। वर्णाश्रम धर्मके विषयमें जो मेरे लेख आजतक निकल चुके हैं, उनसे किसीको मेरा निश्चयात्मक अभिप्राय नहीं मिल सकेगा, यह तुम्हारा कथन वास्तविक है। क्योंकि जितना निश्चय मैं लेखोंमें बता सका हूँ, उससे आगे मैं नहीं पहुँच सका था।

अब कुछ ज्यादह निश्चयपर मैं अवश्य पहुँचा हूँ और सम्भव है, अब मेरे सामने चित्र स्पष्ट दीख पड़ता है। मैं संशयात्मक भाषामें लिख रहा हूँ क्योंकि जबतक मैंने आजतक के मेरे विचार नहीं लिखे हैं तबतक मुझको पता न चलेगा। मेरा इरादा अवकाश मिलनेपर इसी आन्दोलनके लिए वर्णाश्रमपर एक लेख लिखनेको हो रहा है।[1]

विश्वज्योति, अक्टूबर, १९५९

५२२. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

७ जनवरी, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा ठीक लम्बा खत बहोत दिनोंके बाद आया। तुमारी तुटी मैं बता दुं। जिसको तुटी मानती है वह नहिं। तुम बहोत लोभी है। 'बापूने हरिजनोंका काम लिया मैं वह भी करुंगी।' बापू ने जो लिया वह मत करो, जो करती है वही करो क्योंकि जो करती थी वह भी सेवाकार्य हि था और उसमें सब समय जाता था। 'श्रेयान् स्वधर्मो विगुण पर धर्मात स्वनुष्ठितात्'[2] तुमारे "येन केनचित् संतुष्टा" रहना चाहिए। अच्छे कार्यमें भी लोभ त्याज्य है "अति सर्वत्र वर्जयेत्"। अभी भी हरिजन सेवा छोड़ सकतीं है। कार्य तो तुमारे बापुका करना है न? केवल खादी कार्य से बापूको पूर्ण संतोष रहेगा। दूसरा भी करनेमें दोनों गमा बैठेगी। क्योंकी शरीर काम नहिं कर सकेगा। खादी कार्यके अंतर्गत तो हरिजन सेवा भरी है इससे संतोष मानो। तुमारे वीतराग होना है। लोभका पर्यायवाचक शब्द राग है। यह तो मेरा निदान है। यदि यह सही नहिं है तो उसे भूल जाओ "यथेच्छसि तथा कुरु"। तुम

१. **हरिजन**, ४-३-१९३३ में एक लेख "मामलेको उलझाना" शीर्षकसे छपा था, देखिए खण्ड ५३।

२. **गीता**, अध्याय ३, श्लोक ३-३५।

कल्याणकृत है इसलिये तुमारी दुर्गति हो हि नहि सकती। ईश्वर तुमारे पास रहता हि है। वह तुमको कभी नहि छोड़ेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६९५) से।

५२३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय सतीश बाबू,

हेमप्रभाके नाम मेरा पत्र कृपया बहुत ही सावधानीसे पढ़ना। वह जितना उसके लिए है, शायद उतना ही तुम्हारे लिए भी है। मैं जानता हूँ कि जो-कुछ मैं कर रहा हूँ वह सब करनेकी तुममें कितनी तीव्र अभिलाषा है। पर उसकी कहीं सीमा होनी चाहिए। यदि मैं बहुत-सारे काम कर रहा हूँ तो उसका कारण यह है कि बहुत सारी शक्तियाँ मिलकर मुझे उन्हें करनेके योग्य बनाती हैं। केवल यही नहीं। मैं केवल उन्हें करता लगता हूँ। वस्तुतः, सत्य ही, जो ईश्वर है, मेरे माध्यमसे काम कर रहा है। इसलिए जबतक सुनिश्चित और स्पष्ट आह्वान न हो, मेरी सभी गति-विधियोंको सिरपर लेना तुम्हारे लिए किसी भी तरह आवश्यक नहीं है। और यदि इस तरहका आह्वान हो, तो तुम्हें कार्यमें अपनेको बलात् लगाना नहीं होगा। वह स्वयं तुम्हारे पास आयेगा; और तुम्हारे सामने रास्ता साफ हो जायेगा। लेकिन यह सब केवल तुम्हें सावधान करनेके लिए है। तुम, जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा ही करना।

मण्डलीके बारेमें सदस्योंका विवरण मुझे पसन्द नहीं आया। बजाय यह कहनेके कि वे धर्म और राजनीतिके मेरे विचारोंका आदर करते हैं, ज्यादा अच्छा ठीक-ठीक यह बताना होगा कि वे किन चीजोंका समर्थन करते हैं। पुरुषों और स्त्रियोंके एक बड़े समुदायके आम समर्थनका कोई मूल्य नहीं है। यदि हरएक की अलग-अलग जाँच की जाये कि वे किन विचारोंका आदर करते हैं और किन्हें प्रयोगमें लानेका प्रयत्न करेंगे, तो उत्तर भिन्न होगा। पहला वाक्य ही पूरी तरह काफी है कि सदस्य हरिजनोंकी सेवा करना और उनमें आत्मसम्मानकी भावना जगाना चाहते हैं। उनमें आत्मसम्मानकी भावना जगानेसे आगे सेवाके क्षेत्रको आप स्पष्ट कर सकते हैं। आप यह बता सकते हैं कि वस्तुतः वे क्या करेंगे। और यदि उन्हें अपना कार्य हरिजनोंकी सेवातक ही सीमित रखना है, तो उतना ही कहना बेहतर है, उससे अधिक कुछ नहीं। क्षेत्र इतना बड़ा है कि कई हजार कार्यकर्त्ता कई सालोंतक चौबीसों घंटे व्यस्त रह सकते हैं।

और फिर कोई मण्डली ही क्यों बनाई जाये? तुम कहते हो कि यह आखिर प्रतिष्ठानकी ही एक शाखा है। यदि ऐसा है तो नया नाम और विधान रखना

भारस्वरूप ही है। दिखावा जितना कम होगा, वर्तमान कार्यके लिए उतना ही अच्छा रहेगा।

सस्नेह,

बापू

श्रीयुत सतीश बाबू
१५ कॉलेज स्क्वेयर, कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२३) से। एस० एन० १९१९२से भी।

५२४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

८ जनवरी, १९३३

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारे ४ तारीखके पत्रके उत्तरमें मैंने कल एक तार भेजा था। मैंने अपने इस पुराने सुझावको अब फिर दुहराया है कि कम-से-कम अंग्रेजी संस्करण पूनासे निकले, और हिन्दी और अंग्रेजी संस्करणोंका एक ही दिन निकलना जरूरी नहीं है। यदि हिन्दीका सोमवारको निकले तो अंग्रेजीका शुक्रवारको निकाला जाये। अंग्रेजी संस्करण मेरी देखरेखमें निकलेगा और जितना आवश्यक होगा उतना हिन्दी से लेगा। सभी खबरें, आँकड़े, रिपोर्ट आदि हिन्दीसे ली जायेंगी और उसमें मौलिक सामग्री भी रहेगी। ऐसी अवस्थामें यदि वहाँसे कोई आदमी भेजनेके लिए न हो तो किसीको भेजनेकी जरूरत नहीं है। मेरा खयाल है कि मैं यहाँ किसी-न-किसी आदमीका इन्तजाम कर लूँगा।

मैंने कल इस बारेमें श्री ठक्कर बापासे बात की और उन्हें यह विचार पसन्द आया। मैंने उनसे कहा कि वह तुमसे भी बात कर लें, पर उन्होंने उत्तर दिया कि इससे व्यर्थकी देर होगी, इसलिए मैं अपने विचार तुम्हारे पास डाकके जरिये ही भेज दूँ। यदि तुम इस विचारका हृदयसे समर्थन करते हो तो कामको आगे बढ़ाओ और जरूरी समझो तो आकर मुझसे बातचीत कर जाओ। पर इसकी खातिर हिन्दी संस्करण निकालनेमें देर नहीं करनी चाहिए। अंग्रेजी संस्करण दो-एक हफ्ते बाद निकल जायेगा।

इस पत्रके साथ लाला शामलालका तार और पत्र भेजता हूँ। अपने उत्तरकी नकल[1] भी भेजता हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९१७)से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

१. देखिए अगला शीर्षक।

५२५. पत्र : शामलालको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय लाला शामलाल,

आपका पत्र[1] मिला। मैंने वह श्रीयुत घनश्यामदास बिड़लाको भेज दिया है। तकनीकी तौरपर वे बहुत ही कम मदद कर सकते हैं। आर्थिक रूपसे वे क्या कर सकते हैं, मुझे मालूम नहीं।

मैं श्रीयुत शंकरलाल बैंकरको भी लिख रहा हूँ।

आपके लिए एक विशेषज्ञकी व्यवस्था करना सम्भव हो सकता है। परन्तु जो काम आप करना चाहते हैं, वह पंजाबके बाहरसे भेजे गये विशेषज्ञसे करा नहीं सकेंगे। पंजाबके लिए, जहाँ हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका ज्ञान आम है, इन मामलोंमें किसी विशेषज्ञकी खोज करना मुझे असंगत लगता है। और उसे, अपरिचित होनेके कारण, ऐसे स्थान निश्चित करनेमें जहाँ बुनाईके कार्य शुरू किये जा सकते हैं, बहुत कठिनाई होगी। बाहरका विशेषज्ञ केवल चरखों, करघों और उनसे तैयार मालकी परीक्षा और जाँच ही कर सकेगा। परन्तु आपके पत्रसे मुझे लगता है कि आपको एक संगठनकर्त्ता चाहिए। आपसे अच्छे किसी संगठनकर्त्ताको तो मैं जानता नहीं। लेकिन अब वह समय आ गया है जब पंजाबको तकनीकी विशेषज्ञ पैदा करने चाहिए।

इस सबके बावजूद, आपके पत्र और मेरे उत्तरकी एक-एक प्रति मैं श्रीयुत शंकरलाल बैंकरको भेज रहा हूँ और मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि जो-कुछ सम्भव होगा, वे करेंगे।

मैं तो सोचता था कि हरिजन, खुद काश्तकार न होनेसे, अकालसे कम-से-कम प्रभावित हुए होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

लाला शामलाल
एडवोकेट
लाहौर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२८२)से। एस० एन० १९१९० से भी।

१. दिनांक ८ जनवरी, १९३३ का, जिसमें लिखा था: "पंजाबका हिसार जिला एक विनाशकारी अकालसे पीड़ित है. . .हरिजन सबसे अधिक पीड़ित हैं. . .हरिजनोंके हितके लिए मेरी आपसे यह प्रार्थना है कि कृपया अखिल भारतीय चरखा संघको यह आदेश दें कि वह विभिन्न केन्द्रोंके कताई करने-वालोंको सलाह देने, सूतकी बिक्रीकी व्यवस्था करने और नये केन्द्रोंमें बुनाईका काम शुरू करनेके लिए एक विशेषज्ञकी व्यवस्था कर दे।" (एस० एन० १९१५५)

५२६. पत्र : डॉ० हीरालाल शर्माको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय डॉ० शर्मा,

अम्तुस्सलाम कहती है कि तुम हालमें ही साबरमतीसे होकर जानेवाले हो। अच्छा हो कि आश्रममें कुछ महीनेके लिए ठहरकर तुम अपने प्रयोग वहाँ कर लो और साथ ही यह भी देख लो कि आश्रमका जीवन तुम्हारे अनुकुल और तुम आश्रमके अनुकूल पड़ते हो कि नहीं। यदि ऐसा न कर सको तो अम्तुस्सलामकी चिकित्सा के लिए ही — हो सके तो — कुछ दिनके लिए रुक जाओ। उसका तुमपर बड़ा विश्वास है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १५

५२७. पत्र : एम० एम० अनन्त रावको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

इसी महीनेकी ५ तारीखका आपका पत्र मिला। आशा है, आपको मेरा पिछला पत्र[1], जिसके साथ उससे पहले पत्रकी एक नकल भी थी, मिल गया होगा।

क्या आप मुझे दक्षिणमें प्रचलित सभी आगमोंकी एक सूची भेज सकते हैं? क्या उनके अनुवाद उपलब्ध हैं?

आपने जो श्लोक उद्धृत किया है उससे मैं भली भाँति परिचित हूँ। परन्तु आप तथाकथित अस्पृश्योंको चार वर्णोंसे बाहर समझकर विवादके विषयको पहले से ही सत्य मान लेते हैं। पाँचवाँ वर्ण-जैसी कोई चीज तो है नहीं। तथाकथित अस्पृश्योंके प्रवेशपर जिन्हें आपत्ति है, उनकी ही यह जिम्मेदारी हो जाती है कि

१. देखिए पृष्ठ ३७८।

वे उन्हें शास्त्रोंके अनुसार अस्पृश्य सिद्ध करें। इस तरह, शास्त्रोंकी परिभाषा और व्याख्याके बारेमें मेरी आपत्ति अभी भी ज्यों-की-त्यों रहती है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९५६७)से; सौजन्य: मैसूर सरकार।

५२८. पत्र: एन० नारायण मूर्तिको[1]

८ जनवरी, १९३३

प्रिय नारायण मूर्ति,[2]

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मुझे खुशी है कि बरहामपुरका श्री रघुनाथ स्वामी मन्दिर अब सचमुच ही हरिजनोंके लिए खुला है।

मैं यह मानकर चलता हूँ कि आप हरिजनोंमें एक आन्दोलन चला रहे हैं कि वे आत्मसुधार करें और मन्दिर-प्रवेशकी सामान्य अपेक्षाएँ पूरी करें, जैसे गोमांस और मृत पशुका मांस न खायें, नित्य स्नान करें और स्वच्छ कपड़े पहनें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एन० नारायण मूर्ति
भारती मण्डली
बरहामपुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२०२)से।

१. श्री मूर्तिके २३ दिसम्बर, १९३२ के पत्र (एस० एन० १८७९०) के उत्तरमें।
२. तेलुगु दैनिक भारती पत्रिकाके प्रबन्ध-सम्पादक।

५२९. पत्र: एस० महालिंग अय्यरको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। कार्तिकेयी एकादशीके दिन अवर्णोंके प्रवेशके बारेमें समाचारपत्रोंमें मैंने जो उद्धरण[2] प्रकाशित किया है, उसकी ओर आपका ध्यान दिलाता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० महालिंग अय्यर
टाउन हाई स्कूल रोड, कुम्भकोणम

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२०१)से।

५३०. पत्र: जी० वी० केतकरको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके पोस्टकार्डके लिए धन्यवाद। समय मिलते ही मैं आपका निबन्ध पढ़ूँगा। यदि कुछ कहनेको हुआ तो आपको फिर लिखूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जी० वी० केतकर
वकील, नासिक सिटी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११८)से।

१. १ जनवरी, १९३३ का पत्र जिसमें लिखा था: "समझौतेके सुझावके सम्बन्धमें. . . जिसमें अवर्णोंको गुरुवायुर मन्दिरमें प्रवेशकी अनुमति दी गई है, ऐसा प्रतीत होता है कि आपको यह सूचना दी गई है कि अवर्ण वर्गोंको कार्तिकेयी एकादशीके दिन मन्दिरमें प्रवेशका अधिकार दिया गया था। मैं आपके ध्यानमें यह लानेकी अनुमति माँगता हूँ कि मन्दिरके वंशक्रमसे होनेवाले मुख्य महन्त नारायणन नम्बूद्रिपादके वक्तव्यको देखते हुए वह सूचना सही नहीं है।" (एस० एन० १९१६१)।

२. देखिए "पत्र: कालीकटके जमोरिनको", १-१-१९३३।

५३१. पत्र : पी० वी० शेशु अय्यरको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके पत्र[1] के लिए धन्यवाद। जहाँतक आपके प्रस्तावोंका सम्बन्ध है, वे अपने आपमें अच्छे हैं, परन्तु मन्दिर-प्रवेशका प्रचार उस कामके साथ-साथ चलता रहना चाहिए जिसका आपने सुझाव दिया है।

मुझे प्रसन्नता है कि आपने श्रीयुत केलप्पनको पत्र लिखा है[2]।

आपकी पुत्रीको आपके साथ देखकर प्रसन्नता हुई। कृपया उसे मेरा अभिवादन कहियेगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पी० वी० शेशु अय्यर
पेरुवम्वा
पालघाट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१५९)से।

५३२. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय च० रा०,

आप चुप हैं, परन्तु मुझे मालूम है कि इसका मतलब यह है कि आपके पास काम बहुत ज्यादा है। राय बहादुर शेशु अय्यरके पत्रकी प्रति संलग्न है। उनके सुझावों में बहुत-कुछ ऐसी सामग्री है जिसे मैं पसन्द करता हूँ। मैंने उन्हें केवल पहुँच भेजी है[3] और यह कहा है कि जहाँ कहीं ऐसा हो सकता हो, उनके सुझावोंपर अमलके साथ-साथ मन्दिर-प्रवेशका प्रचार चलता रहना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१९७)से।

१. ३ जनवरी, १९३३ का पत्र, जिसमें श्री अय्यरने यह प्रस्ताव रखा था कि जिन लोगोंने मन्दिर-प्रवेशका समर्थन किया हैं, यदि उनके अपने तालाब और कुएँ हों तो वे उन्हें हरिजनोंके लिए खोल दें और तालाबों, कुओं मन्दिरों आदिके उपयोगके बारेमें गाँवोंमें जनमत लिया जाये (एस० एन० १९१५८)।

२. ३ जनवरी, १९३३ को।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

५३३. पत्र : के० माधवन नायरको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय माधवन,

मैं राव बहादुर शेशु अय्यरके पत्रकी प्रति आपके विचारार्थ और यदि आपको कोई टिप्पणी देनी हो तो उसके लिए भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१९५)से।

५३४. पत्र : प्रमोद बिहारी माथुरको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र[1] मिला। आपने जिस प्रचलनकी चर्चा की है वह सारे भारतमें देखनेको नहीं मिलता। परन्तु उसका इलाज निश्चित रूपसे गृहस्वामियोंके हाथोंमें है। यदि वे अस्पृश्यताकी गलत धारणासे छुटकारा पा जायें तो लापरवाहीसे काम करनेवाले भंगीको बर्खास्त कर दें और झाड़ू लगानेका काम स्वयं करें। किस नये आदमीके आनेमें तो वह बाधा डाल सकता है, परन्तु यदि गृहस्वामी अपने यहाँ सफाईका काम स्वयं करे तो उसे रोकनेका साहस उसमें नहीं होगा। यह बुराई हमारी स्वयंकी ईजाद की हुई है और इसलिए हम बिना किसी कठिनाईके इससे निबट सकते हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत प्रमोद बिहारी माथुर
कानूनगोयान स्ट्रीट, अलीगढ़ (यू० पी०)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१९४)से।

१. २ जनवरी, १९३३ का (एस० एन० १९१३५)।

५३५. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

८ जनवरी, १९३३

भाईश्री मावलंकर,

आपके दोनों पत्र मिले हैं। आप उत्तर देनेमें अपना इतना समय लगा दें, यह मैंने कभी नहीं चाहा था। मेरी मंशा तो प्राप्त पत्र आपके पास भेज[1] देने-भरकी थी; फिर भी आपका पत्र मिलनेसे प्रश्नपर अधिक प्रकाश तो पड़ा ही है।

छारा लोगोंके विषयमें तो कुछ कहना ही नहीं है। आपने जो-कुछ किया है वह पर्याप्त सिद्ध हो रहा है या नहीं, सो आप बादमें लिखें।

बापूके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२३५)से।

५३६. पत्र : दूधाभाई मालजी दाफड़ाको

८ जनवरी, १९३३

भाई दूधाभाई,

मुझे ऐसा लगता है कि लक्ष्मी[2] की अब हमें शादी कर देनी चाहिए। उसे बीच-बीचमें दौरे पड़ते हैं। ये दौरे विवाहके सूचक हैं। ऐसा मेरा खयाल है। इस विषयमें उससे बात करके मुझे लिखना। तुम्हारा क्या हाल-चाल है। विद्यालयमें कितने बालक हैं। मुझे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२४५)से।

१. देखिए पृष्ठ २७९।

२. दूधाभाईकी पुत्री जिसे गांधीजी ने गोद ले लिया था। यह पहला हरिजन-परिवार था जिसे गांधीजी ने बहुत प्रतिवाद और विरोधके बावजूद आश्रममें रहनेकी अनुमति दे दी थी।

५३७. पत्र : परमानन्द के० कापड़ियाको

८ जनवरी, १९३३

गुरुवायुरकी कुंजी तुम्हारे वाक्योंमें ही मौजूद है। तुम जो कहते हो कि मन्त्रि-मण्डलके निर्णयको वापस लेनेसे ही यह नई बात पैदा हुई है, सो अक्षरशः सच है। मैं जबसे हिन्दुस्तानमें आया हूँ, तभीसे लोगोंको प्रतिज्ञाका मूल्य समझाता रहा हूँ। किन्तु देखता हूँ कि तुम्हारे-जैसोंके लिए भी यह बात स्वाभाविक नहीं बनी है। निर्णय वापस लेनेके समय जनताके नामपर मालवीय-जैसे महापुरुषकी अध्यक्षतामें प्रतिज्ञा ली गई थी। क्या इस प्रतिज्ञाके पालनको एक क्षणके लिए भी मुल्तवी करके स्वराज्य हासिल किया जा सकेगा? मेरे खयालसे निर्णयको वापस लेनेके लिए जितनी जल्दी करनी पड़ी उससे ज्यादा जल्दी अस्पृश्यताको नष्ट करनेमें करनी चाहिए; फिर इसमें समय भले ही लग जाये। किन्तु इस हलचलकी गति निर्णय वापस लेनेकी गतिसे ज्यादा होनी चाहिए। स्वराज्यको तुम इससे अलग कैसे मानते हो? स्वराज्य कोई सीधी छड़ नहीं है, वह तो वटवृक्ष की तरह है। इसकी बहुत-सी शाखाएँ हैं और एक-एक शाखा मुख्य तनेसे निकलकर [बढ़नेमें] स्पर्धा करनेवाली है। किसी भी शाखाको पोषण दें, सारे वृक्षको पोषण मिलना निश्चित है। कोई तय नहीं कर सकता कि किसे कब पोषण देना है। यह काम समय करता रहता है।

केलप्पनकी भूल यत्किंचित् थी। केलप्पनसे उनका कदम वापस करवानेके बाद मैं उसे छोड़ देता, तो तुम सब बादमें मुझे छोड़ देते। जो मनुष्य किसी निरीह साथीका ऐन वक्तपर साथ छोड़ता है, वह दो कौड़ीका है।

दूसरे प्रश्न जो तुमने उठाये हैं उनका जवाब ठीक-ठीक दिया जा सकता है। पर वह मेरी अभीकी मर्यादाके बाहर है, इसलिए मैं जीता रहा तो और किसी मौके पर समझाऊँगा। मेरे उपवास न निराशासे पैदा होते हैं, न थकावटसे। इनकी जड़में मेरी अखण्ड आशा और प्रबल उत्साह हैं। जितना तुम समझते हो उतने वे सस्ते भी नहीं हैं। अन्तिम उपवास मुल्तवी न रहा होता तो अधर्म होता। किन्तु यह सब तो इस समय पूरी तरह नहीं समझाया जा सकता। बात यह है कि सत्यकी खोज का मेरा प्रयोग नये ही ढंगसे हो रहा है। इसलिए नित नई चीजें, जो मुझे भी पहले मालूम नहीं थीं, मुझे सूझती हैं और वे जनताके सामने रखी जाती हैं। ये सब तत्काल समझमें कैसे आ सकती हैं? और फिर मैं इन्हें आजादीके साथ समझा नहीं सकता। किन्तु सत्यको वाणीकी जरूरत, यदि रहती भी हो तो बहुत ज्यादा नहीं रहती। फूलकी सुगन्धकी तरह उसमें अपने-आप फैलनेकी शक्ति है। भेद इतना ही है कि सुगन्धका फैलना थोड़ी देरमें बन्द हो जाता है, जबकि सत्यके फैलनेकी गति अनन्त है और नित्य बढ़ती रहती है। उसे हम माप नहीं सकते, इसलिए यह

मान लेनेकी भूल न करें कि वह है नहीं। इस प्रकार तुम धीरज रखो, विश्वास रखो और निराशाको कभी मनमें स्थान न दो।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० २७-९

५३८. पत्र : रुक्मिणीदेवी और बनारसीदास बजाजको

८ जनवरी, १९३३

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। रंग भरना मगनलाल[1] ने तो काफी सिखा दिया था। क्या मुझे फिरसे सिखाना पड़ेगा। जो रंग भरता है उसे अपने आसपासके संसारमें—मनुष्य, अन्य प्राणी, झाड़-पात, धरती और आकाशमें दिलचस्पी होनी चाहिए। जिसे लिखा जा रहा है उसके प्रति भी दिलचस्पी होनी चाहिए। यदि ऐसा हो तो तुझे रोज नई चीजें दिखती रह सकती हैं—घरकी और बाहरकी, जिनसे मिलती हो उनके कामकी, परिवारके लोगोंकी, अपने विचारोंकी, मिलनेवाले पत्रोंकी, पशु-पक्षियोंकी। इस तरह सैकड़ों बातोंका वर्णन किया जा सकता है। मीराबहन हर हफ्ते लिखती है। दस पन्नोंसे कम उसका कोई पत्र होता ही नहीं है। और तिसपर वह जेलमें है। अब समझी?

बापूके आशीर्वाद

चि० बनारसी,

ठीक नाम क्या है; लाल या दास? जमनालालजी बीच-बीचमें मिलते रहते हैं। सन्देशा दे दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५१) से।

१. मगनलाल गांधी, रुक्मिणीदेवीके पिता।

५३९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

८ जनवरी, १९३३

चि० प्रेमा,

बिलकुल ही बच्ची मत बन।

तेरा दोहरा धर्म है यह मत भूलना। एक है, अपना हृदय उँड़ेलनेका। इसका तो यन्त्रवत पालन नहीं हो सकता। स्रोत सूख जाये तो तू क्या करेगी? दूसरा, अपने कार्यके बारेमें हिसाब देनेका। हिसाब तो यन्त्रवत दिया ही जा सकता है। इतना तो करना ही।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३२१)से।

५४०. पत्र : भगवानजी ए० मेहताको

८ जनवरी, १९३३

भाई भगवानजी,

आपका पत्र मिला। आप तो साफ बात लिखते हैं, परन्तु इस बारका आपका कार्ड स्पष्ट नहीं है। कुछ ऐसा लगता है कि आप मणिभाईको दुर्जन मानते हैं। यदि बात ऐसी ही हो तो आपको साफ-साफ लिखनी चाहिए। मैंने आपको लिखा था[1] कि मुझे यह भी नहीं मालूम था कि मणिलालने शिकायत की है। क्या आप पक्के तौर पर जानते हैं कि उसने शिकायत की है? यदि आप यह बात व्यक्तिगत रूपसे जानते हैं तो एक सज्जनके रूपमें आपका कर्त्तव्य है कि आप उसे लिखें। फिर आप उसके रिश्तेदार भी हैं। इसलिए यह आपका धर्म हो जाता है। यदि आप मणिलालके दुष्कर्मोंके प्रमाण मुझे दें तो मैं उसे लिखनेके लिए तैयार हूँ। रही बात मेरे ठहरनेकी, उसके बारेमें क्या पूछना? मैं अपने-आपको इतना बड़ा सज्जन नहीं मानता कि लोग जिसे दुर्जन मानते हों मैं उनके यहाँ ठहरूँ ही नहीं। सबसे बड़ा दुर्जन तो मैं स्वयं हूँ जो अपने ही घरमें ठहरा हुआ हूँ। इसके सिवा मुझे दूसरोंका काजी बनना शोभा कैसे दे सकता है? इसके सिवा जिसे रोज घूमना-फिरना पड़ता हो और रोज दूसरोंके घर सोना-खाना पड़ता हो, वह घर-घरको जाँचता फिरे, यह कैसे हो सकता है? इसलिए मैंने तो एक ही बात निश्चित की है, दूसरोंको अपना बनाकर बैठ जाना—अपने तो अपने हैं ही। यदि आपने ऐसा कोई सिद्धान्त बनाया हो कि अपने लोग

१. देखिए पृष्ठ ३१३।

चाहे जितनी दुष्टता क्यों न करें उनके विरुद्ध नालिश नहीं की जा सकती, किन्तु दुष्कर्म करनेवाला यदि रिश्तेदार न हो तो उसके खिलाफ नालिश की जा सकती है–तो उस हालतमें मैं आपसे सहमत नहीं हूँ। यों मुझे आपसे यह भी कह देना चाहिए, और भाई खीमचन्दसे तो मैंने कुछ महीने पहले ही कह दिया है, कि मुझे उनपर बिलकुल विश्वास नहीं है। यह भी बता दूँ कि इस अविश्वासका कारण मणिलाल नहीं है। इस अविश्वासके बढ़नेका कारण है, उसके अपने एकके-बाद-एक पत्र। अब आप ही देखिए कि आपने मुझे कैसी बड़ी-बड़ी परेशानियोंमें डाल दिया है और तिसपर आप माफी माँगते हैं। मेरा खयाल है, आप उसकी आशा तो नहीं ही रखते। लेकिन आप सब तरहसे स्वतन्त्र हैं और इसलिए सुरक्षित हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१६) से। सी० डब्ल्यू० ३०३९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

५४१. पत्र : विमलचन्द्र वालजी देसाईको

८ जनवरी, १९३३

चि० नानू,

तेरी चिट्ठी मिली। बहुत खुश हुआ। इसी तरह लिखते रहना। स्याही और कलमसे लिखे तो अच्छा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७५८)से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई।

५४२. पत्र : तुलसी मेहरको

८ जनवरी, १९३३

चि० तुलसी मेहर,

तुम्हारा पत्र और पुस्तिका मिली। स्वप्नोंका अच्छा विवरण है। हमारे पास सचमुच ही इतनी चीजें पड़ी हैं कि स्वप्नमें मिली चीजोंकी मददकी जरूरत ही नहीं पड़ती।

तुम्हारे विवरणकी प्रतीक्षा है। छगनभाई फिलहाल हमारे साथ है। जमनालालजी भी जेलमें हैं। साथ नहीं हैं। वे प्रसन्न हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५४३)से।

५४३. पत्र : नारणदास गांधीको

८ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारी भेजी हुई डाकका बड़ा बंडल मिल गया है।

प्रेमाके पत्रसे मुझे लगता है कि लक्ष्मीका विवाह फौरन ही कर देना चाहिए। मारुलियाने अपना विचार बदल दिया हो तो उसे ऐसा करनेका अधिकार है, ऐसा लक्ष्मीदासको लिखा है। लक्ष्मीकी विशेष परिस्थितिके बारेमें प्रेमा उसे पत्र लिखे तो उसमें कोई बुराई नहीं है। यदि मारुलियाने विचार बदल दिया होगा, तो देख लेंगे।

साथका पत्र[1] दूधाभाईको भेज देना। उनका पता लिख भेजना।

लीलाधरका पत्र पढ़कर उसे दे देना। ठीक तरहसे रहे तो रखना। इसका निर्णय सिर्फ तुमपर छोड़ता हूँ। लीलाधर आश्रममें रहेगा तो उसे कुछ काम सौंप दोगे, ऐसा मैं मान लेता हूँ।

कुसुमके टीकेसे पीप क्यों निकलती है, यह डॉक्टरसे मालूम करना। कबतक टीके लगवाने पड़ेंगे?

भीखाभाई और बलवन्तके बारेमें तुमने जो लिखा था वह सही लगा था। इसीलिए उस विषयमें कुछ नहीं लिखा था। मेरे मनमें किसी तरहकी शंका न थी।

अमीनाके बच्चोंके बारेमें अभीतक कोई पत्र नहीं आया है।

आज या कल प्यारे अलीका पत्र[2] मिल जाना चाहिए।

अजमेरसे जो मुस्लिम बहन आई है अभी तो उसे रखना। उसके बारेमें प्यारे अलीको लिखकर देखो। उसे अपने नियम सुना देना। जबतक उनका पालन करनेको तैयार हो तबतक रहे। इस बीच उसके लिए दूसरी जगह प्रबन्ध कर रहे हैं, यह उसे बता देना। अहमदाबादमें ही मुसलमान बहनोंके लिए कोई संस्था हो तो वहाँ व्यवस्था कर देना। वह पढ़ी-लिखी है या नहीं, लालन-पालन कहाँ हुआ है, यह सब मालूम करना।

ऐसे मामले होते रहेंगे। हमने जैसा चाहा है आश्रम वैसा न बनकर सिर्फ आश्रय-स्थान ही बन जाये, तो भी 'हम हार नहीं मानेंगे। इस तरह द्वारपर आ जानेवालेको बाहर निकाल फेंकनेमें हिंसा होती हो तो? इस सबमें अपनी शक्ति, अपने नियम, अपनी इच्छा आदिका विचार तो करना ही पड़ता है। ये सब देखकर

१. देखिए पृष्ठ ४१३।

२. पत्र भेजनेसे पहले महादेव देसाईने यहाँ निम्न पंक्तियाँ लिख दी थीं: "प्यारे अली भाईका पत्र आज मिल गया है। उसने लिखा है कि वह बच्चोंको नहीं रख सकता। इसीलिए कुरैशीसे सलाह कर लेना। अभी तो बापूको यही ठीक लगता है कि ये लोग अमीनाबहनके साथ शारदा मन्दिर जायें।"

जो-कुछ करना ठीक लगे सो करें। इस विषयमें कोई स्वतन्त्र धर्म नहीं है। और जहाँ सब काम सत्य और अहिंसाका पालन करते हुए करना है वहाँ हमें अपने बनाये हुए नियमोंमें कितनी ही बार थोड़ी ढील देनी पड़ेगी। लेकिन तुम जो अन्तिम निर्णय करो उसे ही सही समझना। मेरी राय या कथनको सिर्फ शब्दजाल ही मानना। तुम्हें निर्णय करनेमें कुछ सहायता दें, इतना ही उनका उपयोग है।

प्रभुदास अल्मोड़ा छोड़ सकता है। इससे यही अर्थ निकालना चाहिए कि वहाँ देखभालके लिए कोई भी न रहे तो भी काम चल सकता है। और लड़के तो वहाँ हैं ही। आजकल तो खर्च कम ही होता होगा। वह आजकल खूब उखड़ा हुआ है, इसलिए मुझे उसका वर्धामें रहना ठीक लगा है। फिर जल्दी ही उसका विवाह हो जायेगा, इसलिए जबतक खर्च अधिक नहीं है तबतक चाहे वर्धामें ही रहे।

नदीवर्ती कुएँकी बात समझ गया हूँ। मलिक[1] की सज्जनतासे वाकिफ हूँ। उसे मेरी ओरसे वन्देमातरम् तथा मेरा आभार भी व्यक्त करना। कुएँपर खर्च होगा, उसके लिए सोनीरामजी ने[2] ५००० रुपयेतक देनेके लिए लिखा था। हो सकता है, ठीक रकम मुझे न याद हो, पर वचनके विषयमें सन्देह नहीं है। इसलिए कुएँका खर्च वहाँसे मंगा लेना। जितना खर्च हो उतना या जितना उन्होंने विचार किया हो उतना रुपया वे भेज दें।

हरियामलके विषयमें जो ठीक लगे सो करना। मुझे लगता है कि जितनी बार आये उतनी बार उसे रखे बिना छुटकारा नहीं। तुमने जो लिखा है वह तो ठीक ही है। परन्तु जबतक उसका आग्रह रहता है तबतक उसे त्याग भी कैसे सकते हैं।

बापू

[पुनश्च :]

क्या मीराबहनकी वार्षिक रकम अभीतक आती है? और यदि आती है तो कितनी आती है, लिखना।

[गुजरातीसे]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

१. अहमदाबाद नगरपालिकाके इंजीनियर।
२. रंगूनके एक व्यापारी और खादी-कार्यकर्त्ता।

५४४. पत्र : नारणदास गांधीको

८ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

तलेके लिए फिरसे किसीके हाथ चमड़ा भिजवा देना। जल्दी नहीं है। प्रेमा शान्त हो गई होगी।

उस वहन, एम० एडिथको सब-कुछ सिखा देना, यदि वह सीखे तो। उसे लिखा पत्र पढ़ लेना।

छारा लोगोंके बारेमें कुछ मालूम हुआ हो तो लिखना।

बापू

[पुनश्च :]

कुल २६ पत्र हैं और सब बंधे हुए हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)

५४५. पत्र : वालजी गोविन्दजी देसाईको

८ जनवरी, १९३३

चि० वालजी,

तुम्हारा पत्र मिला। मतसंग्रहका परिणाम तुम्हारे लाभमें निकलेगा, इस विषयमें मुझे शंका नहीं है। क्या मैंने कभी शंका सूचित की है? मेरी आपत्ति इस तरहकी है ही नहीं। मैं अपनी राय[1] लोकमतके सामने नहीं रखना चाहता। मेरा मत उससे परेकी चीज है। प्रश्न यह है कि तुम लोगोंको क्या देनेकी योग्यता रखते हो। तुम्हारी कलमसे कुछ अलौकिक चीजें उतरनी चाहिए। और इसके बाद यह भी जरूरी है कि वे लोकप्रिय हों। यह तुम्हारे सामर्थ्यके बाहरकी बात नहीं है। किन्तु अगर यह बात तुम्हारे गले नहीं उतरती तो तुम उसे छपवाते क्यों नहीं हो? मेरे मतको मानना ही चाहिए, ऐसा मेरा आग्रह रहता ही नहीं।

क्या तुम्हारा शरीर अच्छा हो गया है? वहाँकी आवहवा सबको माफिक आई? वहाँका थोड़ा विवरण भेजना।

छगनलालसे तुम्हारी पुस्तक पढ़ जानेको कहा तो है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४४५) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. **ईशुचरितके** बारेमें; देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ २७५-७।

५४६. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

८ जनवरी, १९३३

प्रिय बालक-बालिकाओ,

तुम्हारा पत्र मिला। प्रवेश बहुत बच्चोंने लिया, ऐसा कह सकते हैं। शिक्षकके बिना भी सीखनेकी कला हस्तगत करना। जो खुद सीखा जा सकता हो उस ज्ञानको बढ़ाना। सभी विचार करके मुझे लिखना कि क्या-क्या सभी स्वयं सीख सकते हैं और अलग-अलग छात्र-छात्राएँ स्वयं क्या-क्या सीख सकते हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

५४७. पत्र : विमल किशोर मेहरोत्राको[1]

८ जनवरी, १९३३

चि० विमल,

तुमारे लिये रंगीन कागद। तुमारा खत मिला। अच्छा है। तुम जैसे बालकोंको चावल की कोई आवश्यकता नहि है। लेकिन तुमको चावल खाने की आदत है और छोड़ न सके तो खुशीसे खाया करो। कम खाओ।

बापू

सी० डब्ल्यू० ३४२३ से; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा। जी० एन० ६१०१ भी से।

१. परशुराम मेहरोत्राका सात-वर्षीय पुत्र।

५४८. पत्र : अमतुस्सलामको

८ जनवरी, १९३३

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला। अच्छा, अब मैं नारणदासकी बात माननेको नहीं लिखूंगा। बाहर जाकर अच्छी हो जाओ तो कैसा अच्छा होगा! दूध और फलपर कायम रहना। रोटी-भातकी तुम्हें कोई जरूरत नहीं। आराम खूब लेना। कपड़े तो गर्म हैं न? डॉक्टर को खत लिखता हूँ।[1] तुम्हारे लिए भी अगर ठहर जाये तो भी मुझको अच्छा लगेगा। कुदसियाके बारेमें क्यों कुछ नहीं लिखती है? आजकल कैसे रहती है? खुदा तुमको तन्दुरुस्त कर दे।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०) से।

५४९. पत्र : रैहाना तैयबजीको

८ जनवरी, १९३३

प्यारी बेटी रैहाना,

तुम्हारी बात सही है। मैं बहुत गलतियाँ करता हूँ। पढ़नेका कुछ वक्त ही नहीं मिलता है। तुमको और जोहराको लिखना ही सबक है। क्या किया जाये? भला इतना तो सही? तुम्हारे ऐसी बीमारको शादीमें जाना ही चाहिये क्या — न जाती तो क्या शादी नहीं हो सकती थी? यह कहाँका इन्साफ कि बीमारोंको भी शादीमें जाना ही चाहिए। अच्छा अब तो ठीक हुआ होगा। 'टुक नींदसे अंखियाँ खोल जरा' में टुकके क्या माने है? अब्बाजान, अम्माजानको हम सबके तरफसे आदाब। हमीदा बीबीका अबतक कोई खत नहीं है।[2] सुहेला आरामसे होगी। कमाल मियाँको तो बड़ा मजा आ रहा होगा। तेरा 'किस' मिल गया है। संभालकर रखता जा रहा हूँ। कमालको और अगर तुझे चाहिए तो तुझे भी मेरा 'किस'।

बापूकी दुआएँ

उर्दू और गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६२) से।

१. देखिए "पत्र डॉ० हरिलाल शर्माको", ८-१-१९३३।

२. यहाँतक का अंश उर्दू लिपिमें है, आगेका गुजरातीमें है।

५५०. पत्र : डॉ० मुहम्मद आलमको

९ जनवरी, १९३३

मुझे आपका पत्र मिला। ईश्वरका धन्यवाद है कि डॉ० विधानकी देखरेखमें आपकी हालत बराबर सुधर रही है। मेरी कामना है कि आप फिरसे पूरी तरह स्वस्थ हो जायें।

हम सब अकसर आपके बारेमें सोचते और बातचीत करते रहते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६) से।

५५१. पत्र : निर्मला बी० मशरूवालाको

९ जनवरी, १९३३

चि० निर्मला,

तेरा पत्र मिला। गोमतीके पत्रका जो उद्धरण तूने भेजा था वह मिला था। गोमतीका पत्र अभी नहीं मिला है। यदि उसने न लिखा हो तो कहना कि लिखे। यदि तू किशोरलालको तुरन्त लिख सके तो उसे पत्रमें लिखना कि मैंने उसे आज ही एक कार्ड लिखा है और बात उसमें मेथी और 'सुकृत' नामके बारेमें ही है। इससे पहलेका मेरा पत्र[1] तुझे मिला होगा। उसमें किशोरलाल और गोमतीको सन्देशा था। पत्र लिखनेमें मेरे ऊपर दया करनेकी कोई जरूरत नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १००७) से; सौजन्य : निर्मला श्रोफ।

१. देखिए पृष्ठ ३५३-४।

५५२. पत्र : क० मा० मुंशीको

९ जनवरी, १९३३

भाई मुंशी,

तुम्हारा २३ दिसम्बरका पत्र संभालकर रख लिया है। क्या तुम अब अच्छे हो? वहाँ इलाज क्या चल रहा है? खुराकमें फल मिलते हैं?

अन्य जो मुझे नहीं पहचानते, भले ही मानें कि मैं अकारण ही जानको जोखिममें डाल रहा हूँ, मगर मैं ऐसा उड़ाऊ हो सकता हूँ तुम यह कैसे मान रहे हो? तुम्हें शंका हो तो भी मुझसे पूछे बिना उसे मनमें घर न करने दिया करो। क्या मेरी इतनी वकालत नहीं करोगे? [लोगोंसे कहो कि] "जबतक आप इस बुड्ढे जवानके साथ चर्चा नहीं कर लेते तबतक इसके किसी भी कदमके विरोधमें राय न बनाइए।" कायदा भी यही सिखाता है न?

तुम्हारी पुस्तकें सरदारने दिलचस्पीसे पढ़ीं। पहली दो तो मैं अवश्य पढ़ूंगा। दूसरी पुस्तकोंको पढ़नेकी कोशिश करूँगा।

सभी साथियोंको हम सबके यथायोग्य।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५२४) से; सौजन्य : क० मा० मुन्शी।

५५३. पत्र : नारणदास गांधीको

९ जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

इसके साथ घनश्यामदासजी को लिखा कन्हैयालालका पत्र है। इस पत्रके बारेमें तुम्हें कुछ जानकारी है? न हो तो इस तरह आश्रममें रहकर कोई भी व्यक्ति किसी औरसे शिकायत करे और वह भी किसी स्नेहीसे, यह बात अनुचित मानी जायेगी। कन्हैयालालने शिकायतका पत्र लिखकर जो भूल की उसका शायद उसे भान न हो; पर इस मामलेको देखते हुए सबको सावधान कर देना तो आवश्यक ही है। आश्रममें आनेवाले त्याग-वृत्तिसे आते हैं, ऐसा माना जाता है। इसलिए आश्रममें रहते हुए सेवाकार्यमें मदद के लिए भी जिस-तिसका मुँह नहीं ताकना चाहिए। आश्रमवासियोंको यह चेतावनी देते समय कन्हैयालालके नामका उल्लेख जरूरी नहीं है। कन्हैयालाल को तो पत्र लिख ही रहा हूँ।

मैं जमनाके लिए मेथीके उपयोगके सम्बन्धमें तो तुम्हें लिख चुका हूँ।[1] अभी किशोरलालका पत्र आया है और उससे मुझे और जानकारी मिली है। मेथीका प्रयोग उसका अपना ही है। बीस-पच्चीस दाने सुबह और उतने ही शामको खाता है। दानोंको लाल होनेतक भून लेता है। उन्हें हलकी आँचपर थोड़े घीमें भूनकर भी खा सकते हैं। ऐसा किशोरलालने लिखा है। मेथीसे कब्ज होनेकी सम्भावना जरूर है। ऐसा लगे तो मात्रा कम कर दें। बीस-पच्चीस दानोंसे कुछ लाभ होते न दिखे तो पचास-साठ दानेतक ले सकते हैं। किशोरलालने तो शुरूमें पचास-साठ दाने ही लिये थे। दर्द तो चला गया, पर कब्ज होनेके कारण मात्रा आधी कर दी। जमना पहले तो मेथी बिना घीके खाकर देखे, बादमें जरूरी लगे तो थोड़े घीमें भूनकर खाये।

महादेवने याद दिलाई कि चिमनलाल और बबूपर भी यह प्रयोग करके देखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

५५४. पत्र : एक सनातनीको

९ जनवरी, १९३३

सत्य, अहिंसापर अनन्य श्रद्धा और गोसेवा हिन्दू-धर्मके मुख्य अंग हैं। जो उन्हें छोड़ता है वह हिन्दू नहीं रहता। यज्ञोपवीतकी आवश्यकता मुझे प्रतीत नहीं हुई है। पहननेका आग्रह न किया जाये। जो ब्राह्मणत्व छोड़ता है, वह ब्राह्मणके अधिकारसे उतर गया है। ऐसे नामके ब्राह्मणोंको भोजन क्यों? विवाहमें जो सामान्य मन्त्र हैं, वही आवश्यक हैं। 'नवजीवन'[2] में सब दिये गये हैं। आजकल जो श्राद्धकी प्रथा देखी जाती है, उसपर मेरा विश्वास नहीं है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृष्ठ २९-३०

५५५. पत्र : गिरधर शास्त्रीको

९ जनवरी, १९३३

आपका पत्र मिला है। मैं शास्त्रको प्रमाण मानता हूँ। ग्रन्थोंकी गिनती तो मुझे कोई देता नहीं है। न दे सकते हैं, ऐसा तो अबतक प्रतीत हुआ है। इस कारण मैंने 'गीता' माताका शरण लिया है। मैं जो करता हूँ उसमें विनय रखनेकी मेरी चेष्टा है। परन्तु मेरे विनयको सत्यका विरोधी न होने देनेका भी मैं बड़ा प्रयत्न करता हूँ। और तो क्या कहूँ?"

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृष्ठ ३०

१. देखिए पृष्ठ ३४६-७।
२. देखिए खण्ड ३०, पृष्ठ ९२-३ और खण्ड ४१, पृष्ठ ४४९-५१।

५५६. पत्र : नानासाहब खासगीवालेको

९ जनवरी, १९३३

शास्त्राज्ञा, लोकाचार, शिष्टाचार सबपर मेरी श्रद्धा है। परन्तु उसका असर होकर अन्तमें जो प्रेरणा निकलती है, वही अन्तःस्फूर्ति मानी जाये। सारा जगत इसी तरह चलता है। यह कोई मेरा विशेष गुण या दोष नहीं है। जैसे दूसरोंकी वैसी मेरी अन्तःस्फूर्ति अल्पज्ञत्व अवश्य हो सकती है। इसी कारण तो मनुष्य भूलका पुतला माना जाता है।

यदि मनुष्य-जातिमें सचमुच अस्पृश्य योनि है, तो मैं उसीमें जन्म पानेकी साधना कर रहा हूँ।

मेरी प्रवृत्ति मात्र वर्णाश्रम धर्मके पुनरुद्धारके लिए है। उसमें मुझे तनिक भी शंका नहीं है।

अप्रस्तुत वस्तुमें बुद्धि या कुछ भी खर्चना मेरे स्वभावके प्रतिकूल है।

कृष्ण-भक्ति मेरे जीवनका मन्त्र है। सनातन-धर्म मेरा प्राण है। जो आज अपनेको सनातनी मानते हैं, वे एक रोज मेरी उक्त प्रतिज्ञाके सत्यको स्वीकार करेंगे।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृष्ठ ३०

५५७. पत्र : प्रभावतीको

९ जनवरी, १९३३[1]

चि० प्रभावती,

तुम्हारे बारेमें तार भेजा था वह तुमको मिल गया होगा ऐसा उत्तर आ गया था। उसके बाद तुम्हारे खतकी मैं आशा करता था लेकिन कुछ मिला ही नहीं। मेरे खत तो तुमको मिलते ही नहीं। आज कृष्णाका खत आया, उसपर से मालूम होता है कि तुमको फिट आती है। यह जानकर मुझको बहुत दुःख हुआ। मैं सुपरिन्टेन्डन्ट से भी जान लूंगा कि तुम्हारे हाल कैसे हैं। जयप्रकाशके खत तुमको मिलते होंगे। वह हमेशा खुश रहता है। मेरे साथ अब छगनलाल जोषी आ गये हैं और हम सब मजेमें हैं। मेरा वजन १०३ है। खानेमें २ रतल दूध, मुसंबी, नारंगी, खजूर और पपीता इतना रहता है। शहद तो है ही। इससे मेरी तबीयत बहुत अच्छी रहती है। कोहनी का दर्द है, लेकिन वह पुरानी बात है। उसके लिये चिंता बिलकुल अनावश्यक है।

१. मूलमें "१९३२" लिखा है जो कि स्पष्टतः गलत है।

हरिजन सेवाके काममें बहुत वक्त देना पड़ता है। और इसी में मदद देने के लिये सरकारने छगनलाल जोषीको भेजा है।

कांता कैसी है? तुम्हारे साथ और कौन है? अब क्या खाती है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३१) से।

५५८. पत्र : बेगम मुहम्मद आलमको

९ जनवरी, १९३३

प्यारी बहन,

तुम्हारा खत मुझे मिला है। समझमें नहीं आता मेरे खत तुमको क्यों नहीं मिलते। लाहौरका भी नहीं मिला और कलकत्ताका भी। मैंने दोनोंमें पता ठीक जो तुमने बताया था वही दिया था। अब देखें इसका क्या हाल होता है। डॉक्टर साहबको आराम हो रहा है यह जानकर बहुत खुशी होती है। खुदा उनको बिलकुल तन्दुरुस्त कर दे। मुल्कके लिए उनका बहुत काम है। मुझे सब हाल देती रहो। भले डॉक्टर साहब लिख भी सकते हैं। तुम्हारे खत मेरे लिए उर्दूका सबक तो हो जाता है। रैहाना और जोहरा तो दे रही हैं। हम सब मजेमें हैं। अब हम चार हैं। आश्रमके छगनलाल जोशीको मददके लिये सरकारने भेज दिये हैं। आजकल हरिजनोंके काममें बहुत वक्त देना पड़ता है।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६) से।

५५९. पत्र : ई० ई० डॉयलको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय कर्नल डॉयल,

मुझे आशा थी कि अप्पासाहब पटवर्धनके बारेमें मैंने जो पूछताछ की थी उसका जवाब मुझे इस वक्त (दिनके ११ बजे) तक मिल जायेगा। मैं चाहूँगा कि आप कृपा करके मेरे प्रश्नका उत्तर आज दे दें और इस तरह यदि आप चाहें तो मेरी बढ़ती हुई चिन्ता मिटा दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (६), पृ० ३२३

५६०. पत्र : आर० वी० पटवर्धनको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। मैं समझता हूँ कि आपने तर्कके साथ गालियाँ भी शामिल कर ली हैं। आपने अपनी दलील उस हालतके बारेमें दी है जिसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। इसलिए मैं आपसे कहूँगा कि आप निरपेक्ष भाव अपनायें और इस प्रश्नका इस तरह अध्ययन करें जैसेकि एक विद्यार्थी करता है और समस्याएँ सुलझाता है। यदि आप वैसा करें तो आपने जो आठ मुद्दे उठाये हैं उनमें से बहुत-से स्वयं समाप्त हो जायेंगे। उदाहरणके तौरपर, जब आप इस प्रश्नका अध्ययन निरपेक्ष भावसे और उचित ढंगसे करेंगे तो आप जान जायेंगे कि जहाँतक आपके पहले मुद्देका सम्बन्ध है, किसी भी हिन्दू-मन्दिरको भ्रष्ट करनेका प्रश्न ही नहीं है। दूसरे मुद्दे, मन्दिर-प्रवेशके बारेमें कोई कानून तैयार करनेकी कोशिश नहीं की जा रही है, बल्कि केवल इस बातकी कोशिश की जा रही है कि विदेशी न्यायालयने जो बनावटी बाधा खड़ी कर रखी है उसे हटा दिया जाये। जहाँतक तीसरे मुद्देका सम्बन्ध है, आप मुझसे सहमत होंगे कि जो भी औचित्य या न्याय चाहते हैं उन्हें शुद्ध भावसे आगे आना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२१०) से।

१. ९ दिसम्बर, १९३२ का पत्र, जिसमें लिखा था: "मैं आपको चेतावनी देता हूँ कि आप धर्मभीरु हिन्दूकी तरह काम करते नहीं लगते। यद्यपि आप अछूतोंको हमारे मन्दिरोंमें जबरदस्ती प्रवेश दिलानेमें शायद सफल हो जायेंगे . . . सभी सच्चे सनातनी आपके कामको हमेशा अधर्मपूर्ण और नास्तिकतासे युक्त कार्य मानेंगे" (एस० एन० १९२०६)।

५६१. पत्र : शरतचन्द्र गुहाको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय मित्र,

इस महीनेकी २ तारीखके आपके पत्र[1] के लिए धन्यवाद। जल्दीसे पढ़ जाने पर मुझे सुझाव देनेकी कोई बात नहीं दिखाई दी। आपके पत्रपर और ज्यादा ध्यान न देनेके लिए आप मुझे क्षमा कीजियेगा। मेरे पास वक्त बहुत कम है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत शरतचन्द्र गुहा
कालीघाट, कलकत्ता

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२१२) से।

५६२. पत्र : एन० एच० पुरन्दरेको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय पुरन्दरे,

आपका पत्र मिला। आपकी पुस्तकमें जो गलतियाँ अब भी रह गई हैं[2] उनके लिए मुझे दुःख है। जहाँतक पारिश्रमिकका सम्बन्ध है, हरिभाऊने जो रकम बताई है उसे मैंने बिना किसी आपत्तिके स्वीकार कर लिया है। आशा है कि वह रकम आपको पहले ही दी जा चुकी है। अनुवादके लिये किसी नये संस्करणकी पाँच प्रतियाँ आपको अवश्य दी जानी चाहिए। मुझे आशा है कि प्रथम संस्करणकी पाँच प्रतियाँ आपके पास हैं। मुझे आपके बाकीके पत्रका भाव अच्छा नहीं लगा। किसी व्यक्ति द्वारा निजी लाभ कमानेका कोई प्रश्न कभी हो ही नहीं सकता। केवल लागत ही

१. अस्पृश्यता-निवारक यात्रा दल, हिन्दू मिशन, कलकत्ताके सचिव शरतचन्द्र गुहाने अपने पत्र (एस० एन० १९१३६) में हिन्दू मिशन द्वारा किये जा रहे अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यका विवरण दिया था। उन्होंने लिखा था कि हिंदू मिशनके कहनेपर उनके अपने कार्यकर्ताओं और प्रचारकों द्वारा सारे बंगाल और असममें अस्पृश्यता-निवारणकी शपथ दिलाई जा रही है। अन्तमें उन्होंने आगे काम करनेके लिए गांधीजी के सुझाव माँगे थे।

२. एन० एच० पुरन्दरेने अपने ७ जनवरी, १९३३ के पत्रमें (एस० एन० १९१८१) शिकायत की थी कि यद्यपि उन्होंने प्रूफ पढ़नेके वक्त अशुद्धियोंकी ओर पहले ही संकेत कर दिया था, फिर भी पुस्तकमें बहुत-सी अशुद्धियाँ रह गई हैं। पुस्तकमें अस्पृश्यताके पक्षमें पुराणपन्थियोंके मतका निराकरण किया गया था।

वसूल की जाये — ऐसा व्यवहार्य नहीं है। लागत ही वसूल करनेका मतलब है निश्चित हानि। क्योंकि बहुत-सी प्रतियाँ मुझे मुफ्त भी देनी पड़ेंगी। बकाया प्रतियाँ भी पड़ी रहेंगी। पुस्तक-विक्रेताओंको भी कुछ कमीशन देना पड़ेगा। यदि आप किसी व्यापारिक फर्मसे लेन-देन कर रहे होते तब आपने अपने पत्रमें जो-कुछ कहा है, वह सब मैं समझ सकता था। पाँच पुस्तकोंके लिए आपको जो पत्र चाहिए आप उसका मसविदा तैयार करके मेरे पास भेज दीजिये। मैं उसपर सर्वेण्ट्स ऑफ अनटचेबल्स सोसाइटीके सचिव श्रीयुत अ० वि० ठक्करके दस्तखत करवा लूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एन० एच० पुरन्दरे
पूना २

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२०९) से।

५६३. पत्र : यू० गोपाल मेननको[1]

१० जनवरी, १९३३

प्रिय गोपाल मेनन,

आपका पत्र मिला। जिस समय पूजा न हो रही हो उस समय हरिजनों और दूसरोंको इजाजत देनेकी बात निस्सन्देह बिलकुल व्यर्थ है। इजाजत तो पूजाके समय ही होनी चाहिए। सचाई तो यह है कि जहाँ चाह होती है वहाँ राह निकल ही आती है। पूजाका समय हर बार बाँटा जा सकता है। आधा समय आम जनता और आधा आपत्ति करनेवालोंके लिए होना चाहिए। दोनोंके लिए नियत समय संख्याके अनुसार निर्धारित किया जायेगा। या, जैसा आपका सुझाव है, पूजाके कुछ घंटे आम जनता और कुछ आपत्ति करनेवालोंके लिए नियत कर दिये जाने चाहिए। बहरहाल, यह हो सकता है कि विस्तारकी बातें तैयार करनेमें मेरा सुझाव अव्यवहार्य हो। यदि ऐसा करना व्यवहार्य लगे तो अस्पृश्यता बनाये रखनेके बारेमें जो आपत्ति है उसका आसानीसे उत्तर दिया जा सकता है। मैंने एसोसिएटेड प्रेसको दिये गये सन्देश[2] द्वारा इसे आंशिक रूपमें निबटा दिया है। जहाँतक एकादशीकी छूटका सम्बन्ध है, मैंने जमोरिनको लिखे अपने पत्र[3] में, जो प्रकाशित हो चुका है, उस निर्णयका पहले ही हवाला दे दिया है जिसका आपने जिक्र किया है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२१३) से।

१. उनके ५ जनवरी, १९३३ के पत्र (एस० एन० १९१६३) के उत्तरमें।
२. देखिए पृ० ३८८।
३. देखिए पृष्ठ ३३८-४०।

५६४. पत्र : एस० पोन्नम्मालको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय बहन,

आपके पत्र[1] से मेरा हृदय द्रवित हो गया। मैं अब भी नहीं समझ सका कि आपको मासिक रु० ८ ही क्यों मिलते हैं। क्या आप श्रीयुत के० माधवन नायरसे मिल सकती हैं? मैं उन्हें पत्र लिख रहा हूँ और आपके पत्रकी प्रति भी भेज रहा हूँ। आपको मिलने जानेका कष्ट देनेके बजाय शायद वे स्वयं ही आपसे मिलें। यदि कालीकटसे आपका स्थान ज्यादा दूर न हो तब तो बात बहुत आसान है। पर यदि आपको लम्बा रास्ता तय करना पड़े तब इसमें आपको दिक्कत हो सकती है। मैं अच्छी तरह समझता हूँ कि आपकी प्रतिभाका पूरा उपयोग नहीं हो रहा। क्या यह पत्र आपने स्वयं लिखा है?

हृदयसे आपका,

एस० पोन्नम्माल
पट्टेरी हाउस, कालीकट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२११) से।

५६५. पत्र : के० माधवन नायरको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय माधवन,

श्रीमती पोन्नम्मालके पत्र और उनको लिखे अपने पत्रकी[2] प्रति संलग्न है। कृपया उनसे मिलनेकी कोशिश अवश्य कीजिये। यदि आप महसूस करें कि वे योग्य महिला हैं तो उन्हें उस बोझसे मुक्ति दिला देनी चाहिए जो उनपर है और उनकी अत्यन्त साधारण आवश्यकताएँ पूर्ण की जानी चाहिए। मुझे लगता है कि वह निराली किस्मकी कार्यकर्त्री है। यह हो सकता है कि यहाँ दूरसे मैं उनके गुणोंकी बढ़ा-चढ़ाकर कल्पना कर रहा होऊँ। कृपया आप मेरा पथ-प्रदर्शन करें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२०७) से।

१. एस० पोन्नम्मालके ३ जनवरी, १९३३ के पत्रके उत्तरमें। उसमें उन्होंने लिखा था कि वह एक विधवा हैं और लेडी चन्दावरकर प्राइमरी स्कूल कालीकटमें पढ़ा रही हैं। उन्हें मासिक केवल रु० ८ मिलते हैं। स्कूलके घंटोंके बाद वह गरीब लोगोंको संगीत, लोकनृत्य तथा पढ़ना-लिखना आदि सिखाती हैं। उन्होंने यह भी लिखा था: "मैं समझती हूँ कि यदि मुझे स्कूलके कामसे फुर्सत दिला दी जाये और यदि मेरे रहने आदिके खर्चेकी, जो बहुत कम है, और मकानके किराये की व्यवस्था कर दी जाये तो शायद मैं वास्तवमें अच्छा काम करके दिखा सकूँ।" (एस० एन० १९१८६)।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

५६६. पत्र : गिरधारीलालको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय लाला गिरधारीलाल,

आपका पत्र[1] मिला। यह जानकर मुझे दु:ख हुआ कि स्वास्थ्यमें लगातार सुधार नहीं हुआ है और यह भी हो सकता है कि निदान ही सही न हो। कृपया आप मुझे बताइये कि जब डॉ० देशमुखने पिछली बार आपको देखा था तो क्या कहा था।

अच्छा होता कि आप अस्पृश्यताके बारेमें चिन्तित न होते। पहले तीन मुद्दे विचारणीय हैं। चौथेके बारेमें आपको इन्तजार करनी चाहिए और मेरा वक्तव्य देखना चाहिए। मुझे ऐसा कोई डर नहीं जैसाकि आपको है। अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाह अत्यन्त खतरनाक कदम होंगे। वे अस्पृश्यताविरोधी आन्दोलनका भाग कभी नहीं बन सकते। वे अस्वाभाविक जातिभेद और जाति-सम्बन्धी विचारोंके विरोधमें किये गये आन्दोलनका भाग हो सकते हैं। यह ऐसा सुधार है जिसे बिलकुल अलग रखना होगा।

संख्या ७ और १३ ऐसे सुझाव हैं जो मेरे विचार क्षेत्रसे बाहर हैं। सुधारको वास्तविक रूपमें कार्यान्वित करनेका काम मैं यहाँसे नहीं चला सकता। यदि यह सब-कुछ करनेकी आपमें ताकत हो तो आप स्थानीय संगठनके सचिवको पत्र लिखें। परन्तु मैं आपको चेतावनी देता हूँ कि आपमें जो थोड़ी-बहुत ताकत अभी रह गई है उस पर दबाव बिलकुल मत डालिये। पहले-जैसा स्वास्थ्य बनानेके लिए आप उसे बनाये रखिये और दिन-ब-दिन उसे खर्च मत करते चलिये।

हृदयसे आपका,

लाला गिरधारीलाल
ऐस्प्लेनेड रोड, फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९२०८) से।

१. ७ जनवरी, १९३३ का पत्र। इसमें निम्नलिखित मुद्दे थे: "१. यदि सभी नेता और प्रसिद्ध व्यक्ति, जिनकी आन्दोलनमें रुचि है, यह निश्चय कर लें कि किसी जगह जाते हुए वे केवल हरिजनोंके यहाँ ही रहेंगे या ठहरेंगे तो यह व्यवहार्य कदम होगा और इसके परिणाम प्रभावकारी होंगे। २. इसी तरह जब हरिजन नेता और कार्यकर्त्ता यात्रा करें तो उन्हें उच्च वर्णके हिन्दुओंका अतिथि बनाया जाये और जैसाकि समझा जाता है और आजकल चलन है उन्हें अपने वर्गके लोगोंके पास नहीं रहने दिया जाये। ३. हरिजनोंका अलग समयपर मन्दिरोंमें प्रवेश स्वीकार किये जानेसे उनके मनपर आत्माहीनताकी छाप पड़ेगी। शुद्धीकरण एक और भेदभावका द्योतक है जिसे पचाना कठिन है। ४. अंतर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाहपर भी बराबर बल दिया जाना चाहिए जिसका स्वत: परिणाम यह होगा कि सभी लोग मन्दिरोंमें आने-जाने लगेंगे" (एस० एन० १९१८३)।

२. देखिए खण्ड ५३, "प्रश्नोंकी उलझाना", ४-३-१९३३।

५६७. पत्र : डी० एन० शिखरेको[1]

१० जनवरी, १९३३

प्रिय श्री शिखरे,

मुझे आपका पत्र मिला जिसके साथ मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें मेरे साथ आपकी जो चर्चा हुई थी, उसका सारांश भी संलग्न है। मैं संशोधित पाठ संलग्न करके भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत डी० एन० शिखरे
दि केसरी एण्ड दि मराठा ऑफिस
पूना २

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

५६८. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

१० जनवरी, १९३३

प्रिय बहन,

फिलहाल अनारोंकी जल्दी ही जरूरत नहीं पड़ेगी। इन दिनों सरदारने खाना बन्द कर दिया है। जरूरत होनेपर मँगानेमें नहीं चूकूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२७) से; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी

५६९. पत्र : नारणदास गांधीको

१० जनवरी, १९३३

चि० नारणदास,

कन्हैयालाल और उसकी पत्नी मिलकर गये। कैलाश नहीं आया। उनका मिल लेना ठीक हुआ। चमड़ेका टुकड़ा मिल गया। वह तले और एड़ीके लिए तो बहुत पतला है। ऊपर लगानेके लिए चमड़ेकी जरूरत न थी। पूनियाँ भी मिल गई हैं।

१. ८ जनवरी, १९३३ के अपने पत्र (एम० एम० यू०/२२) में श्री शिखरेने गांधीजी से पिछले बृहस्पतिवारको हुई अपनी भेंटको प्रकाशित करनेकी इजाजत माँगी थी।

हमारे पास 'सत्यार्थ प्रकाश' की कई प्रतियां हैं। कोई आ रहा हो तो उसके हाथ एक मुझे भेज देना। जिस आवृत्तिमें १४ समुल्लास हों, वह।

प्यारे अली बच्चोंकी देखरेख नहीं कर सकता; इसलिए अमीना चाहे तो बच्चोंको अपने साथ शारदा-मन्दिर ले जाये।

बापू

[पुनश्च:]

इसके साथ अमीना, चम्पा, माणेकबहनके पत्र हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

५७०. पत्र: हरिभाऊ उपाध्यायको

१० जनवरी, १९३३

चि० हरिभाऊ,

तुमने मुझे पत्र क्यों नहीं लिखा या लिखवाया? लगता है, ऑपरेशनके बाद समय ज्यादा लग रहा है। अब वह कैसा है? क्या हुआ था? सार-सँभाल कैसी हो रही है? रोहित मेहताके क्या समाचार हैं?

जमनालालजीसे बीच-बीचमें मिल लेता हूँ। तबीयत अच्छी रहती है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ६०७४) से; सौजन्य: हरिभाऊ उपाध्याय।

५७१. दैनन्दिनी, १९३३

१ जनवरी, १९३३, रविवार

डाक: लेडी ठाकरसी, अम्बाराम, झीनाभाई, विद्यादेवी, श्यामनारायण कपूर, रानदास, जमनालालजी, हरिदास, गोकलदास, डेविडको। अस्पृश्यताके बारेमें: बासुकाका जोशी, सूर्यकान्त, सुब्बारायन, जमोरिन, घनश्यामदास, चिन्तामणि, हीरालाल नानावटीको।[1]

मूल गुजराती (एस० एन० १९३३७) से।

१. दैनन्दिनीके परवर्ती पृष्ठ खाली हैं।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिसे बातचीत

२१ नवम्बर, १९३२

प्रतिनिधि : क्या आपने अपना शेष जीवन अस्पृश्यता-निवारणके कार्यमें ही देनेका निश्चय किया है?

गांधीजी : न तो मैं यह कह सकता हूँ कि मेरा इरादा अभी ऐसा कुछ करनेका है, और न आगे ऐसा कोई निश्चय करनेकी सम्भावना ही मुझे दिखती है। हाँ, यह कहना बिलकुल सही होगा कि मेरा जीवन हिन्दू-धर्ममें जिन सुधारोंको मैं अत्यन्त आवश्यक मानता हूँ, उनके लिए समर्पित है। किन्तु यों तो मेरा जीवन अन्य अनेक वस्तुओंके लिए समर्पित है। मैं अपने जीवनके बिल्कुल अलग-अलग खण्ड नहीं कर सकता। मेरा जीवन अखण्ड है। मेरी तमाम प्रवृत्तियोंका मूल एक ही है। मेरा ध्येय जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें, वह छोटा हो या बड़ा, सत्य और अहिंसाकी उपासना करना है।

आज सुबह 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में मैंने एक लेख पढ़ा। उसके विषयमें मैं कुछ कहना चाहता हूँ। मैं उसकी एक सम्पादकीय टिप्पणीकी भूल सुधारना चाहता हूँ। यह कहना सही नहीं है कि हरिजनोंके सामाजिक अधिकारोंसे सम्बन्धित तमाम प्रश्नोंका समावेश मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नमें हो जाता है। मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न कई प्रश्नोंमें से एक प्रश्न है। आज यह प्रश्न इतना प्रमुख हो गया है, इसकी जिम्मेदारी मेरी नहीं है। मेरे अनुरोधपर श्री केलप्पनने अपना उपवास छोड़ दिया। इसलिए उनकी मदद करना मेरा कर्त्तव्य है। तदनुसार, मुझे गुरुवायुरके प्रति लोगोंका ध्यान खींचना ही चाहिए और ऐसे सारे उपाय करने चाहिए कि निर्धारित तारीख, यानी २ जनवरीके पहले यह विख्यात मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल दिया जाए। उपवास इस मन्दिरको खुलवाने तक ही सीमित होगा। किसी अन्य मन्दिरसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं होगा। इसके सिवा इस उपवासकी कल्पना मेरी नहीं है। यदि श्री केलप्पनको उपवास करना पड़े तो मेरा भी उपवास करनेका धर्म हो जाता है। हरिजनोंके लिए इस मन्दिरको खुलवानेमें समाजके किसी भी वर्गपर किसी भी तरहकी जोर-जबरदस्ती करनेका कोई इरादा नहीं है। मुझे जो जानकारी मिली है — और इस जानकारीकी सच्चाईके सम्बन्धमें शंका करनेका कोई कारण नहीं है — उसके अनुसार तो अधिकांश सवर्ण हिन्दुओंका यही मत है कि मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल

दिया जाना चाहिए। यदि ऐसा हो तो जोर-जबरदस्तीकी बात उठती ही नहीं। यह भी याद रखना चाहिए कि यद्यपि यह प्रश्न लोगोंके सामने अभी-अभी आया है, तथापि श्री केलप्पन और उनके साथी इसके लिए कई वर्षोंसे काम करते आये हैं। उन्होंने लोकमतको अपने पक्षमें करनेमें जो सफलता पाई है, वह उनके वर्षोंके अनवरत परिश्रमका परिणाम है। उनकी यह सफ़लता ऐसी घटना नहीं है जो पिछले कुछ दिनोंमें एकाएक हो गई हो।

प्र० : श्री केलप्पनके प्रति आपका कर्तव्य क्या इतना बड़ा है कि यदि श्री केलप्पन उपवास करें तो आपको भी अपना जीवन संकटमें डालना चाहिए?

गां० : यदि मैं अपनाआत्म सम्मान खो दूं तो फिर मैं किसी भी प्रकारकी सेवाके अयोग्य हो जाऊँगा। किसी न्याय्यकार्यके लिए समझ-बूझकर मैंने जो वचन दिया हो, उसके पालनको मैं इतना महत्त्वपूर्ण मानता हूँ कि यदि उसके लिए मुझे अपना जीवन संकटमें डालना पड़े तो मैं इसे बड़ी बात नहीं मानता हूँ।

प्र० : हरिजनोंके लिए आप जो काम कर रहे हैं, क्या यह उससे भी बड़ा है?

गां० : जिस जीवनकी रक्षा अपने वचनका भंग करके की जायेगी वह हरिजनोंके किसी कामका नहीं रहेगा। किन्तु यदि अपने इस वचनका पालन करते हुए मैं अपना जीवन खो दूं तो मेरी रायमें वह केवल हरिजनोंके लिए या मात्र हिन्दू-धर्मके ही लिए नहीं, बल्कि, मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ, अखिल भारतवर्षके लिए और जगतके लिए एक अमूल्य वस्तु होगी।

प्र० : मूर्तिपूजामें श्रद्धा न रखते हुए भी हरिजनोंको मूर्तिपूजाका अधिकार मिलना चाहिए, आप इसके लिए इतना कष्ट क्यों उठा रहे हैं?

गां० : मुझे नहीं लगता कि कभी मैंने ऐसा कहा हो कि मूर्तिपूजामें मेरी श्रद्धा नहीं है। अपने लेखोंमें भी ऐसा लिखनेकी मुझे कोई याद नहीं है। मैंने जो चीज बार-बार कही है वह यह है कि मैं मूर्तिभंजक भी हूँ और मूर्तिपूजक भी। लेकिन मुझे मूर्तिपूजामें विश्वास नहीं है, इससे यह तो बात बहुत अलग हुई न? कोई ऐसा कहे कि मैं मन्दिरोंमें शायद ही कभी जाता हूँ, तो उसकी यह बात बिल्कुल सच है। क्यों नहीं जाता, इसके कारणोंकी चर्चा मैं नहीं करना चाहता। इतना ही कहूँगा कि मेरा धर्म इतना विशाल है कि मैं हिन्दू-मन्दिरमें, मुसलमानकी मस्जिदमें, इसी प्रकार ईसाई अथवा यहूदीके देवालयमें समान भक्तिभावसे जाता हूँ। मैं इनमें कभी भी नास्तिक या टीकाकारकी तरह नहीं गया; हमेशा भक्तिभावपूर्वक गया हूँ।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २६१-२

परिशिष्ट २

'फ्री प्रेस' के प्रतिनिधिसे बातचीत[1]

३ दिसम्बर, १९३२

१. सवर्ण हिन्दुओंके कर्त्तव्यकी दृष्टिसे देखें, तो गुरुवायुरका प्रश्न छोटा नहीं है। 'हरिजनोंका उद्धार' – यह शब्द-प्रयोग मैं गलत मानता हूँ। मेरी रायमें अस्पृश्योंके प्रति सवर्ण हिन्दुओंका पहला कर्त्तव्य यह है कि दूसरोंकी तरह हरिजनोंके लिए भी मन्दिर खोल दिये जाने चाहिए।

२. मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नका बोझ मैं अस्पृश्यता-निवारक-संघपर नहीं डालना चाहता। गुरुवायुरका प्रश्न तो इस संघका जन्म हुआ, उसके पहलेसे लोगोंके समक्ष था। हाँ, संघको इस कार्यके लिए जितना उससे हो सके उतना अवश्य करना चाहिए। किन्तु, यदि मन्दिर निश्चित अवधिके भीतर नहीं खोला है, तो संघ इसके लिए किसी अन्य संस्थाकी अपेक्षा अधिक दोषी नहीं माना जा सकता।

३. यदि यह सिद्ध हो जाये कि गुरुवायुरका मन्दिर सार्वजनिक नहीं, निजी है तो उपवास किया ही नहीं जा सकता।

४. यदि सुधारक सच्चे हों और विनयशील हों, तो वे सनातनियोंके हृदयका परिवर्तन कर सकते हैं। उन्हें याद रखना चाहिए कि सुधारक होनेके पहले उनमें और सनातनियोंमें कोई भेद नहीं था।

५. सुधारक लोकमतको बदलनेका प्रयत्न कर रहे हैं। और एक सुधारकके नाते मैं मानता हूँ कि लोकमत इस सुधारके पक्षमें काफी मात्रामें झुका है। मैं ऐसा नहीं मानता कि अधिकांश हिन्दू धर्माचार्योंके प्रभावमें हैं। वे शंकराचार्य अथवा अन्य आचार्योंकी बात उसी हदतक सुनते हैं जिस हदतक वह उन्हें पसन्द आती है। यदि शंकराचार्य ऐसी कोई धर्माज्ञा जारी करें कि किसीको मद्यपान नहीं करना चाहिए तो क्या तुम ऐसा मानते हो कि इस आज्ञाका पालन सब लोग करेंगे? धर्माचार्य स्वयं संयमका पालन करें तो ही वे लोगोंसे उसका पालन करा सकते हैं।

६. उपवासका आरम्भ करनेके पहले मैं इस बातकी प्रतीक्षा करते बैठा नहीं रह सकता कि पहले मेरा शरीर बिल्कुल स्वस्थ और सशक्त हो जाये। मैं मानता हूँ कि उपवास तो अन्तर्यामीकी आज्ञाके अनुसार होगा। जिस समय मेरा शरीर निर्बल होता है उस समय तो मैं उपवास और ज्यादा अच्छी तरह सह सकता हूँ।

७. मेरे उपवाससे करोड़ों लोगोंको, यदि वे मुझे प्रेम करते हैं तो, दुःख होगा। और तब वे अपनी बात इतने उच्च स्वरमें कहेंगे कि वह अमोघ हो उठेगी। मुझमें

[1] देखिए पृष्ठ ११८-९।

और अस्पृश्यतामें युद्ध छिड़ चुका है। यदि लोग मेरे जीवनकी रक्षा करना चाहते हैं तो अस्पृश्यताको जाना चाहिए। और अस्पृश्यताकी रक्षा करनी हो तो मुझे मरना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३०२-३

परिशिष्ट ३

ई० ई० डॉयलका पत्र

इन्स्पेक्टर-जनरल ऑफ पुलिस
बॉम्बे प्रेसिडेंसी
पूना
४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय श्री गांधी,

आपका आजका पत्र मिला; अनेक धन्यवाद। मैं स्वयं ही कल सरकारको इस पत्रकी विषय-वस्तुसे अवगत करा दूंगा। लेकिन आपने इस पत्रमें एक चीजको और मेरी रायमें बहुत महत्त्वकी चीजको — जिसपर हम दोनों सहमत भी थे — बिल्कुल ही छोड़ दिया है। वह चीज यह है कि तथाकथित 'नीची जातियोंके' कैदियोंसे अमुक काम करानेके वर्तमान रिवाजका अभिप्राय बहुत व्यापक है और आप यह महसूस करते हैं कि उसे फिलहाल बदला नहीं जा सकता। यदि आप लिखित रूपमें इस बातकी पुष्टि कर दें तो मेरा खयाल है कि मैं यह मामला ज्यादा सशक्त ढंगसे पेश कर सकूंगा। मुझे खेद है कि मैं आपको यह कष्ट आपके मौन-दिवसपर दे रहा हूँ और वह भी शिष्टमण्डलके साथ बातचीत करनेमें आपको जो परिश्रम हुआ होगा, उसके बाद। किन्तु मुझे विश्वास है कि आप मेरी इस बातका औचित्य समझ जायेंगे कि कल जब मैं आपका मामला सरकारके समक्ष पेश करूँ तब जो भी मुद्दे मैं उठानेवाला हूँ, उनके विषयमें पूरी तरह निःशंक होना चाहता हूँ।

आपका,
ई० ई० डॉयल

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, पोलिटिकल, फाइल० सं० ३१/१०८–पोल०, पृष्ठ २२, १९३२।
सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट ४

बातचीत : पूनाके सनातनियोंके साथ[1]

७ दिसम्बर, १९३२

मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न केवल धार्मिक है। मैंने उसे व्यावहारिक बुद्धिका प्रश्न कभी माना ही नहीं। मेरे लिए तो धर्म ही व्यवहार है।

मन्दिरमें हर हिन्दूको जानेका अधिकार है। शारीरिक शुद्धताके नियम सबपर लागू होते हैं। [मन्दिरोंमें] एक ही तरहके हिन्दुओंके प्रवेशका रिवाज बहुत वर्षोंसे चला आ रहा है। लेकिन अमुक हिन्दू जा सकते हैं और अमुक नहीं जा सकते, यह धर्मका प्रश्न नहीं है। हिन्दू जनताके लिए बने हुए मन्दिरोंके बारेमें तो जानेवालोंसे ही पूछना चाहिए। धर्मशास्त्रियोंको दखल नहीं देना चाहिए। थोड़े लोग रह जाएँ तो उन्हें दूसरोंपर जबरदस्ती नहीं करनी चाहिए। उन्हें अपने लिए दूसरा मन्दिर बनाना चाहिए। मैंने अपने धर्मका जहाँतक अनुभव और अध्ययन किया है, वहाँतक मुझे लगता है कि जो लोग दूसरे मन्दिरोंमें जा ही नहीं सकते, वे मर्यादावाले बन जाएँ और वह मन्दिर उनके लिए कुछ घंटे खुला रहे। धार्मिक वस्तु वह है जिससे आध्यात्मिक उन्नति हो और जिसके लिए हम सर्वस्व त्याग करें। थोड़े-से स्पृश्योंके लिए तो मन्दिर थोड़े समयके लिए खोला जा सकता है; मगर सुधारक थोड़े हों, तो अस्पृश्योंके लिए मन्दिर नहीं खोला जा सकता।

अल्पमत और बहुमतका प्रश्न मेरे उपवाससे पैदा हुआ। बहुतसे लोग अछूतोंका मन्दिर-प्रवेश चाहते हैं, इसमें शंका करनेवालोंके जवाबमें यह मतसंग्रहका सवाल आया।

आप मुझे विश्वास करा दें कि अस्पृश्योंका मन्दिर-प्रवेश शास्त्रविरुद्ध है, तो मेरी कुछ नहीं चलेगी।

मैं तो मानता ही हूँ कि जो काम मैं कर रहा हूँ वह धार्मिक है। मगर आप यह सिद्ध कर दें कि यह अधर्म है, तो मुझे अपना प्रयत्न छोड़ देना पड़ेगा।

प्रश्न : इक्यावन प्रतिशत मत मिलें उसके बाद क्या आप शास्त्रियोंकी बात सुननेका वचन देंगे?

गांधीजी : आप इसे अधर्म सिद्ध कर दें, तो मैं तो आज ही उपवास छोड़ दूँ।

प्र० : तो क्या आपने शास्त्रियोंके साथ चर्चा करनेका मौका प्राप्त कर लिया है?

गां० : मेरा सौभाग्य कहिए या दुर्भाग्य, आपने यहाँ आनेका कष्ट किया सो मेरे उपवासके कारण ही। मैंने अपने लिए तो निश्चय कर लिया है कि मन्दिर खोलना धर्म है। यह निश्चय कई वर्ष पहले किया था। वाइकोममें मैं शास्त्रियोंके पास गया था। उन्होंने मुझे 'शंकरस्मृति' बताई। उसका अनुवाद भी करवाया। मगर

१. देखिए पृष्ठ १४१।

वे शास्त्री जो कहते थे, उसका समर्थन 'शंकरस्मृति' में भी नहीं मिला। आज आप आकर कहते हैं कि हम कुछ नया प्रकाश डालना चाहते हैं, तो मैं सुन लेता हूँ। मगर इस चर्चाके दरमियान उपवासका निश्चय नहीं छोड़ सकता।

अनेक ग्रंथ पढ़े, अनुवाद देखे और अन्तमें निश्चय किया कि जो अहिंसा और सत्यकी कसौटीपर खरा उतरे वही धर्म है। 'गीता' के पास मैं नहीं गया, परन्तु 'गीता' ही मेरे पास आ पहुँची। 'गीता' मेरे लिए स्वतन्त्र आधार है, और अनेक टीकाओंकी झंझटसे बचनेके लिए मैंने अपनी श्रद्धा, बुद्धि और भक्तिका आश्रय लिया।

आप जो बात कह रहें हैं वह मेरी बुद्धिपर असर डाले, तो मैं कहूँगा कि मैं बुद्धिसे हार गया। फिर मैं हृदयपर आधार रखूँगा। आपको मेरे हृदयको सन्तुष्ट करना होगा।

प्र० : क्या आप यह कह रहे हैं कि जो वस्तु आपके हृदयको स्वीकार हो वही आपका धर्म है?

गां० : हर व्यक्तिको जो चीज हृदयंगम हो गई है, वह उसके लिए धर्म है। धर्म बुद्धिगम्य वस्तु नहीं, हृदयगम्य है। इसीलिए धर्म मूर्ख लोगोंके लिए भी है।

मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न शुद्ध धार्मिक स्वरूपका है। मेरी मान्यता बदलना बहुत कठिन काम है। कारण, मेरी मान्यताके पीछे भूतकाल है। मन्दिर-प्रवेशके मामलेमें धर्म क्या है और क्या नहीं है, यह साधारण आदमी तय नहीं कर सकता। मैं अगर यह मानता होऊँ कि मन्दिर-प्रवेश अधर्म है, तो लोगोंके सामने उसकी बात करना मेरी भूल होगी। मगर कितने ही सालके अध्ययन और अनुभवसे मेरा विश्वास हो गया है कि हरिजनोंका मन्दिर-प्रवेश कराना धार्मिक कर्त्तव्य है। मैंने अपने लिए जो शास्त्र निश्चित किया है, वह मैं दूसरोंपर लादना नहीं चाहता। मगर मैं कहता हूँ कि यदि आपका दिल आजकलकी रूढ़िके विरुद्ध बगावत नहीं करता, तो मुझे उपवास करना पड़ेगा। अगर बगावत करे तो मेरे लिए उपवास करनेका कारण नहीं रह जाता। मैंने तो अपने लिए निर्णय कर लिया है। लोग अपने लिए निर्णय करें।

प्र० : आपके दिलको कैसे विश्वास कराएँ?

गां० : शिष्यके हृदयमें पाठ उतारना शिक्षकका फर्ज है। कैसे उतारे, यह शिक्षक जाने। यह न जाने तो शिक्षक कैसा? गुरुकी खोजमें मैं कहाँ भटकता फिरूँ? गुरुको मुझे ढूँढ़ लेना चाहिए। मैं ढूँढ़ने निकलूँ, तो कहीं-न-कहीं ठोकर खाकर गिर जाऊँ। परमेश्वरकी तलाश करने मनुष्यको नहीं जाना पड़ता। अगर खोजमें निकलनेसे परमेश्वर मिल सकता हो, तो क्या वह परमेश्वर है? परमेश्वर तो खुद अपने दासको, अपने भक्तको ढूँढ़ निकालता है।

एक शास्त्री कहने लगे : संस्कृतमें बातें कीजिए न।

गां० : मैं तो अपढ़ अज्ञानी ठहरा। आपके-जैसा पण्डित होता, तो आपको यहाँ आने ही न देता या आपको यहीं बन्द कर देता। आपसे कहता, 'जाइए, शास्त्रका मेरा अध्ययन आपसे अलग है।'

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३१०-३।

परिशिष्ट ५

डॉ० विधानचन्द्र रायका पत्र[1]

३६, वेलिंग्टन स्ट्रीट,
कलकत्ता,
१२ दिसम्बर, १९३२

प्रिय महात्माजी,

आपका पत्र मुझे कल मिला। बंगाल अस्पृश्यता-निवारक बोर्डके सम्बन्धमें श्री खेतानसे आपकी जो बातचीत हुई थी, उसका व्यौरा मुझे उनसे मिल गया था। आपने उनसे कहा था कि आप मुझे पत्र लिखेंगे। श्री खेतानसे बात करनेके बाद मैं आपसे ऐसा पत्र पानेके लिए, जैसा आपने मुझे भेजा है, तैयार था। सबसे पहले मैं यह कहनेकी अनुमति चाहता हूँ कि बंगाल बोर्डके सभापतित्वके पदकी मैंने आकांक्षा नहीं की थी, और अब मुझे पता चला है कि श्री बिड़लाने आपसे मशवरा करके आपकी रजामंदीसे मुझे सभापति चुना था। जब मुझसे पद ग्रहण करनेको कहा गया तो अपनी अयोग्यता और अन्य कार्योंके बावजूद भी मैंने निमंत्रण स्वीकार कर लिया। मैं यह बात नहीं भूला हूँ कि इसका श्रीगणेश आपके और उन मित्रोंके द्वारा किया गया जो पूनामें एकत्र हुए थे। अतएव जब इन सबने मुझसे यह पद ग्रहण करनेका अनुरोध किया तो मैंने उत्तरदायित्व स्वीकार कर लिया। आप चाहते थे कि मैं सभापतित्व ग्रहण करूँ, क्योंकि आपका विश्वास था कि मैं काम कर सकता हूँ। अब आपकी धारणा दूसरी है और आप चाहते हैं कि मैं हट जाऊँ तो मैं प्रसन्नतापूर्वक हट रहा हूँ। मैं आज ही श्री बिड़लाको पत्र लिखकर इस्तीफा दे रहा हूँ। यह कोई आत्म-त्यागकी बात भी नहीं है, क्योंकि मैंने अपने जीवनमें ऐसे किसी भी पद या स्थानको तत्क्षण छोड़ दिया है, जिसके सम्बन्धमें मुझे मालूम होने लगा हो कि जिनके हाथमें वह पद या स्थान देनेका सामर्थ्य है, वे अब मेरा वहाँ बने रहना पसन्द नहीं करते।

आपने अपने पत्रमें सुझाया है कि विभिन्न वर्गों और दलोंके सारे कार्यकर्त्ताओंको बुलाऊँ, जिससे वे जिसे चाहें सभापति चुन सकें। मैं यह बताना चाहता हूँ कि लीगके संविधानके अन्तर्गत केन्द्रीय बोर्डका सभापति ही प्रान्तीय बोर्डोंके सभापति नामजद करता है, और ये प्रान्तीय सभापति प्रान्तीय बोर्डोंके सदस्य नामजद करते हैं। बंगालमें बने हुए बोर्डको तोड़ना मेरे सामर्थ्यके बाहरकी बात है। अतएव यदि मैं चाहूँ तो भी आपकी आज्ञा-पालन करना मेरे सामर्थ्यमें नहीं है। पर मैं सारा मामला श्री बिड़लाके पास भेज रहा हूँ। वह अखिल भारतीय बोर्डके सभापति हैं, और जो कार्रवाई उचित समझेंगे, करेंगे।

१. देखिए पृष्ठ १४८९, २१७, और ३९९।

आप अपने पत्रमें कहते हैं, "परन्तु मैं देखता हूँ कि बंगालमें यह विचार नहीं रुचा।" आपको यह सूचना देना मेरा कर्त्तव्य है कि बंगालमें श्री सतीश दासगुप्त और डॉक्टर सुरेश बनर्जीके नेतृत्वमें रहनेवाले दलोंके अलावा भी अनेक दल और वर्ग हैं जो अस्पृश्यता-निवारण कार्यमें दिलचस्पी रखते हैं और इस समय बहुमूल्य काम कर रहे हैं। हमने बंगाल बोर्डका गठन बड़ी सावधानीके साथ किया था और, जैसाकि आपको श्री देवीप्रसाद खेताननें बताया ही होगा, बोर्डमें विभिन्न वर्गोंके प्रतिनिधि मौजूद थे। अनेक जिला संस्थाओंने हमें लिखकर बोर्डके साथ सहयोग करनेकी तत्परता प्रकट की थी। वास्तवमें, जैसाकि श्री खेताननें आपको बताया ही होगा, श्री दासगुप्त और डॉ० बनर्जीको छोड़ और किसीने सहयोग प्रदान करनेसे इनकार नहीं किया, और इन दोनोंके इनकारके कारण भी अलग-अलग हैं। परन्तु आपकी यह धारणा प्रतीत होती है कि बंगालमें उस समयतक कोई बोर्ड काम नहीं कर सकता जबतक उसे श्री दासगुप्त और डॉ० बनर्जीका सहयोग प्राप्त न हो, और उन्होंने यह सहयोग प्रदान करनेसे इनकार कर ही दिया है, इसलिए बोर्डको भंग करनेके अलावा और कोई चारा नहीं है।

बंगालमें लीगका काम आरम्भ हो गया है। इसलिए यदि आप मुझे इस पत्रको और अपने पत्रके पहले अनुच्छेदको प्रेसमें देनेकी अनुमति नहीं देंगे तो मेरे और बोर्डके सदस्योंके लिए स्थिति समझाना कठिन हो जायेगा। आशा है, आपको कोई आपत्ति नहीं होगी।

आपका,
विधानचन्द्र राय

[अंग्रेजीसे]
इन दि शेडो ऑफ दि महात्मा, पृष्ठ ७७-८

परिशिष्ट ६

ई० ई० डॉयलका पत्र — आर० एम० मैक्सवेलको[1]

पूना
८ दिसम्बर, १९३२

प्रिय मैक्सवेल,

आपको फोन करनेके बाद मैंने रिसीवर रखा ही था कि मुझे गांधीका एक पत्र मिला — कठिनाईसे पुनः बच निकलनेकी कोशिश कर रहे हैं। पत्रकी नकल मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। मूल पत्र रजिस्ट्री डाकसे कल भेजूंगा क्योंकि पत्रमें किये गये परिवर्तन उनकी ही लिखावटमें हैं और एक दस्तावेजकी तरह वह इतना महत्त्वपूर्ण है कि सामान्य डाकमें उसके यहाँ-वहाँ चले जानेका खतरा नहीं उठाया जा सकता।

1. देखिए पृष्ठ १५४।

ज्यों ही मुझे उनका पत्र मिला मैं यरवदा गया और वहाँ मैंने उन्हें एक "प्रतिनिधि-मण्डल" से बातचीत करते हुए पाया। लेकिन मैं उन्हें अलग ले गया और उनसे मैंने बहुत साफ-साफ बात की। मैंने उनसे स्पष्ट कहा कि जहाँतक मैं जानता हूँ इस कथनमें रंच-मात्र भी सच्चाई नहीं है कि रत्नगिरि जेलमें पिछले कई महीनोंसे तथा-कथित उच्च जातिके कैदी शौचालयोंकी सफाईका काम कर रहे हैं, और यह भी कहा कि इस कामको रोकनेके लिए मैंने कोई आदेश जारी नहीं किये है। मैंने उन्हें यह भी बताया कि मैं जब उनसे पिछली बार मिला था तो उन्होंने स्वीकार किया था कि सरकार इस सवालका जवाब एकाएक नहीं दे सकती और यह भी महसूस किया था कि यदि इस सवालपर अखिल भारतीय आधारपर विचार होना हैं, और उसकी पूरी जाँच-पड़ताल होनी है तो उसमें समय लगेगा। मैंने यह भी कहा कि मैंने सारी बात सरकारको कह दी है। काफी बातचीतके बाद, जिसमें वे पकड़में आनेसे बचनेकी चेष्टा करते रहे, मैंने उन्हें अपने पत्रमें परिवर्तन करनेके लिए राजी किया — ये परिवर्तन आप पत्रमें किये हुए पायेंगे। मेरा तो यह खयाल है कि २ जनवरीसे किये जानेवाले तथाकथित उपवाससे अब वे कतरा रहे हैं और उससे बच निकलनेका बहाना ढूँढ़ रहे हैं।

आपका,
ई० ई० डॉयल

[अंग्रजीसे]
होम डिपार्टमेंट, पोलिटिकल, फाइल सं० ३१/१०८–पोल०, पृष्ठ ३०, १९३२; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट ७

मैक्रेके साथ बातचीत[1]

१२ दिसम्बर, १९३२

बापू: मुझे अभी कोई खास कहने-जैसी नहीं लगती। मेरा खयाल है, कुओंकी बात अभी रहने दें। अभी तो मैं उपवासके विषयमें ही कुछ कह सकता हूँ, उसके बारेमें आप पूछिए।

मैक्रे: इस उपवाससे आप समाजपर अपने विचार लाद देते हैं, इस आक्षेपके बारेमें आप क्या कहते हैं?

बा०: इसका जवाब देनेमें मेरे उपवासके बारेमें पास हुए प्रस्तावकी जो बात आपने कही, उसका जवाब भी आ जायेगा। श्री जमनादास मेहताने जो आलोचना की है, वह उन्हें करनेका पूरा अधिकार है। मगर मैं उनके आक्षेप स्वीकार नहीं कर सकता। मैंने अपने विचार किसीपर लादनेका कभी प्रयत्न किया ही नहीं। अपने निकटके साथियोंपर भी कभी मैंने अपने विचार लादे नहीं। लेकिन हुआ यह

१. देखिए पृष्ठ १५६।

है कि हिमालय-जैसी भूलोंको स्वीकार करनेके बाद भी अधिकतर मामलोंमें मेरी राय सही निकली है। मेरे लिए यह अस्पृश्यताका सवाल चालीस साल पुराना है। इसके लिए तभीसे मैं विरोध सहन करता रहा हूँ। बाहरके लोगोंने ही नहीं, परन्तु मेरे कुटुम्बके लोगोंने भी — बड़ोंने भी और छोटोंने भी — विरोध किया है। लेकिन पैंतालीस बरससे जो विचार मैं रखता आ रहा हूँ और जिनपर अमल भी करता रहा हूँ, वे आज आम तौरपर स्वीकार किये जा चुके हैं। आज मेरे सनातनी मित्र मुझपर यह आक्षेप करते हैं कि मैं आम जनतापर या इन सनातनियोंपर अपने विचार लाद रहा हूँ, तो इस आक्षेपमें बहुत तथ्य नहीं है। मानव-जातिका सारा इतिहास देखनेपर मालूम होता है कि जब-जब किसी मनुष्यने किन्हीं कल्याणकारी विचारोंको स्वीकार किया है, उनका आग्रह रखा है और उन्हें अपने जीवनमें कार्यान्वित किया है, तब-तब सारे जन-समाजने उन्हें मान लिया है। अब अगर इसका अर्थ यह किया जाए कि उस आदमीने अपने विचार लोगोंपर लाद दिये, तो यह बात बेहूदा ही मानी जायेगी। जबतक शारीरिक बलका प्रयोग न किया जाए तबतक दूसरोंपर अपने विचार लादे कहे ही नहीं जा सकते। यह सच है कि मेरे उपवासकी बातसे खलबली मची है। लेकिन इसके लिए मैं कसूरवार नहीं, इस बारेमें मेरे दिलमें जरा भी शंका नहीं है। एक वैज्ञानिककी दृष्टिसे मैं सारी वस्तुस्थितिको बारीकीसे देख रहा हूँ कि मैंने जो उपवास सोच रखा है, उसका क्या असर हो चुका है और क्या असर हो रहा है। यह सब देखकर मुझमें आनन्द और आशा ही उमड़ती है। उपवाससे लोग इसके बारेमें सोचने लगे हैं। उपवास किसीको भी अपने अन्तःकरणके विरुद्ध कुछ भी करनेको मजबूर नहीं करता। मगर सुस्त लोग अपनी सुस्ती छोड़कर फुर्तीसे काममें लग जायेंगे, यानी मुझपर प्रेम रखनेवाले सब लोग काम करने लग जायेंगे। इस आन्दोलनसे मुझे जरा भी अफसोस नहीं होता। जो यह सोचते हैं कि मैं हिन्दू-धर्मका सत्यानाश कर रहा हूँ, वे मुझे गुस्से-भरे पत्र लिखते हैं और कहते हैं कि जल्दी-जल्दी उपवास करके परमधाम पहुँच जाओ। ऐसे पत्रोंका मुझपर जरा भी असर नहीं होता। इन पत्रोंकी बात आपसे यही बतानेके लिए कहता हूँ कि जो अस्पृश्यता-निवारणके विरुद्ध हैं, उनपर तो मेरे सोचे हुए उपवासका जरा भी असर नहीं होगा और होना भी नहीं चाहिए। मगर उपवासके बारेमें मुझे आगे और बहुत कुछ कहना है। अभी तो इतना ही कहूँगा कि केलप्पनको या मुझे अपने अन्तर्यामीकी प्रेरणासे किए हुये निश्चयसे कोई डिगा नहीं सकेगा।

श्री मेहताने, लोगोंको पहलेसे सावधान रहना चाहिए, इस बातकी ओर उनका ध्यान खींचा है। श्री मेहताके इस प्रयत्नकी मैं कदर करता हूँ।

मुझे तो आश्चर्य और दुःख इस बातका होता है कि जो मतसंग्रहके काममें लगे हैं, उनपर जमोरिन इस तरहके विचित्र आक्षेप किसलिए करते हैं? मैं तो जमोरिनको बहुत सज्जन मानता हूँ। वे जानते हैं कि माधवन नायर, जो मतसंग्रह समितिके अध्यक्ष हैं, सारे केरलमें सम्मानप्राप्त एक प्रसिद्ध वकील हैं। सारी समितिको राजाजी मदद दे रहे हैं। वे वहाँ रहकर सब कामोंकी देखरेख कर रहे हैं। ये

आदमी ऐसे नहीं हैं कि जरा भी झूठ चलने दें। कार्यकर्त्ताओंने आपत्तिजनक ढंग इख्तियार किये हों, तो उनके उदाहरण इन लोगोंके ध्यानमें लाना जमोरिनका फर्ज है। यह प्रश्न शुद्ध नैतिक और धार्मिक है। इसमें पक्षपात या राग-द्वेषकी जरा भी गुंजाइश नहीं हो सकती। सनातनी और सुधारक मिलजुलकर काम करेंगे, तो सत्य सामने आ जायेगा। मैं फिर इस बातका आश्वासन देता हूँ कि लोकमतके मामलेमें मैंने भूल की है ऐसा मालूम होते ही मैं उपवासकी बात छोड़ दूंगा। मैं सिर्फ सत्यकी पूजा करना चाहता हूँ। इसके सिवाय मेरा और कोई उद्देश्य नहीं है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३२५-७

परिशिष्ट ८

अखिल भारतीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघके सचिवका पत्र[1]

८ दिसम्बर, १९३२

हमारे इसी माहकी ६ तारीखके पत्रका आपने अविलम्ब जो उत्तर भेजा है, उसके लिए हम आपको धन्यवाद देते हैं।

यह मालूम हुआ कि जो भी सनातनी मित्र आपसे मिलनेके लिए आपके पास पहुँचेंगे उन्हें आप सहर्ष भेंटका समय देंगे और यदि वे आपको आपकी भूलका यकीन करा देते हैं तो आप सहर्ष अपने कदम वापस ले लेंगे। अपने उस पत्रको ध्यानमें रखते हुए जिसका आपने यह उत्तर भेजा है, हम यह मानते हैं कि यदि हमारे सुझाये हुए वार्तालापके फलस्वरूप आपको, आप जो-कुछ कर रहे हैं, उसके शास्त्रोंकी दृष्टिसे गलत होनेकी प्रतीति हो जाती है, तो आप अपने कदम वापस लेनेके लिए तैयार हैं।

हमारे पिछले पत्रका उद्देश्य आपसे यह मालूम करना था कि क्या आप अस्पृश्यताके और मन्दिर-प्रवेशसे सम्बन्धित प्रतिबन्धोंके विषयमें शास्त्रोंके सही मतका पता लगानेके लिए वैसी सुशृंखल चर्चा करनेके लिए तैयार हैं जैसी कि हमने पत्रमें सुझायी है। आपके पत्रसे ऐसा मालूम होता है कि आप वैसी चर्चाके लिए तैयार हैं। हमने यह सुझाव कभी नहीं दिया कि आप ऐसी कोई सभा बुलायें।

इस विषयपर शास्त्रोंका क्या मत है, इसकी खोज हम लोगों द्वारा सूचित रीतिके अनुसार करनेकी अपनी सहमतिकी आप निश्चित घोषणा करें। उसके बाद आपकी ओरसे बनारसके आचार्य ध्रुव और अखिल भारतीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघकी ओरसे हम लोग पण्डितोंकी सभा बुलानेका काम कर सकते हैं। हम लोग ऐसा मानते हैं कि शास्त्रोंके मतका पता लग जानेपर आप उसे स्वीकार करेंगे और अपने रुखमें तदनुरूप परिवर्तन करेंगे।

1. देखिए पृष्ठ १७६।

आप शास्त्रियोंको परिवर्तनविरोधी और परिवर्तनवादी — ऐसे दो विभागोंमें बाँटते हैं। प्रस्तुत चर्चाके लिए आपकी यह बात निरर्थक है, क्योंकि जो चर्चा होनेवाली है उसमें दोनों पक्षोंका उद्देश्य केवल इस कथनके सत्यासत्यकी जाँच करना है कि अस्पृश्यताके लिए और मन्दिरोंमें अस्पृश्योंके प्रवेशपर लगाये जानेवाले प्रतिबन्धोंके लिए शास्त्रोंमें कोई आधार नहीं है।

आपके इस आश्वासनके सम्बन्धमें कि जो उपवास आप करने जा रहे हैं उसमें आपका मन्शा किसीपर अपना मत जोर-जबरदस्तीसे थोपना नहीं है, आप हमें कृपया कानूनकी इस सूक्तिकी ओर ध्यान खींचने दीजिए कि कोई मनुष्य जो-कुछ करता है, मानना चाहिए कि वह उस कार्यसे फलित होनेवाले परिणामोंकी इच्छा भी रखता है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-१२-१९३२

परिशिष्ट ९

टी० चिनैयाके पत्रका अंश[1]

९ दिसम्बर, १९३२

"...आप कहते हैं कि पूना-समझौता ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीके निर्णयसे ज्यादा *अच्छा है क्योंकि वह ज्यादा स्थान* देता है। *मैं आपको बताना* चाहता हूँ कि महत्त्व मात्राका नहीं गुणवत्ताका है। प्रधान मन्त्रीका निर्णय पृथक् निर्वाचन द्वारा १८ स्थान देता है, सामान्य स्थानोंके चुनावोंमें मतदानका अधिकार देता है, और यदि दलित वर्ग चाहें तथा सवर्ण हिन्दू स्वीकार करें तो उन्हें सामान्य निर्वाचक-मण्डलों द्वारा चुनी जानेवाली जगहोंमें भी स्थान देता है। पूना समझौता केवल सामान्य निर्वाचक-मण्डलों द्वारा जिन जगहोंका चुनाव होगा उनमें ३० स्थान देता है।... डॉ० अम्बेडकरके शब्दोंमें, ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीके 'निर्णय' [अवार्ड] के अनुसार हम (मद्रासमें) कौंसिलोंमें ३० प्रतिनिधि भेज सकेंगे। दूसरे, प्रधानमन्त्रीके निर्णयके अनुसार तथाकथित उच्च वर्गोंके लोग दलित वर्गोंसे उनके मतोंकी भीख माँगेंगे, जिससे कि इन उच्च जातियोंके लोगोंका अभिमान टूटेगा।...

आप कहते हैं कि पूना-समझौतेमें ऐसी व्यवस्था है जिससे कि ऐसा कोई भी उम्मीदवार जो पहले हरिजनोंके बहुमतका समर्थन प्राप्त नहीं कर लेता, नहीं चुना जा सकेगा। मैं जानता हूँ कि आप जिसे प्राथमिक चुनाव कहा गया है उसकी बात कर रहे हैं। इस *प्राथमिक* चुनावकी *नामिका* चार की है। महात्माजी, *मुझे आशा है,* आप इस बातको समझेंगे कि इस नामिकाके प्रत्येक सदस्यको दलित वर्गोंका जो विश्वास प्राप्त होगा वह *अलग-अलग होगा*। मान लीजिए कि प्राथमिक चुनावमें दस उम्मीदवार चुनाव लड़ते हैं। पहलेको ५,००० मत मिलते हैं दूसरेको २,०००, तीसरेको,

1. देखिए पृष्ठ १८३।

१,०००, चौथेको ९००, पाँचवेंको ८००, छठेको ७००, . . . आठवेंको ६००, नौवेंको ५९० और दसवेंको ५००। इन सब उम्मीदवारोंको दलित वर्गोंका विश्वास प्राप्त है। किन्तु विश्वासकी मात्रा *अलग-अलग* है। यदि नामिका छ: की हो तो पहले छ: को दलित वर्गोंकी पसंदगी मिल जायेगी, और आठकी हो तो पहले आठको मिल जायेगी। लेकिन यह तो आप देखेंगे ही कि इन सब उम्मीदवारोंमें (उनके प्रति दलित वर्गोंके विश्वासकी दृष्टिसे) बड़ा फर्क है। प्राथमिक चुनावके बाद चुने हुए *उम्मीदवारोंको संयुक्त निर्वाचक-मण्डलोंके* चुनावमें खड़ा होना पड़ेगा। (और सवर्ण हिन्दुओंकी मनोवृत्तिको जानते हुए मैं कह सकता हूँ कि) परिणाम यही होगा कि *नामिकाका अन्तिम उम्मीदवार ही सवर्ण हिन्दुओं द्वारा* चुन लिया जायेगा। सवर्ण हिन्दू ऐसे उम्मीदवारको चुनेंगे जिसे दलित वर्गोंका न्यूनतम विश्वास प्राप्त होगा ताकि वह उनकी इच्छाके अधीन रहे।

९-३-१९३१ को मैंने आपको एक पत्र लिखा था जिसमें आपसे यह प्रार्थना की थी कि जब भी आप मद्रास आयें दलित वर्गोंकी बस्तीमें ठहरें जिससे कि आप मेरी जातिके लोगोंकी कठिनाइयोंका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त कर सकें। किन्तु आप तो मइलापुरके ब्राह्मणोंके महलोंमें ही ठहरे। यदि आपने मेरी बातपर ध्यान दिया होता तो आपने प्रधान मन्त्रीके निर्णयको इस तरह न बिगाड़ा होता।

आप कहते हैं कि "मैं निश्चय ही व्यापारियों, जमींदारों और ऐसे ही अन्य लोगोंके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंके पक्षमें नहीं हूँ।" तो फिर आप इन्हें समाप्त करवानेके लिए उपवास क्यों नहीं करते? क्या इसका कारण यह है कि व्यापारियों और जमींदारोंपर आपके उपवासका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा?

प्रिय महात्माजी, यद्यपि पूना-समझौतेपर विधान-परिषद‌के सदस्योंने हस्ताक्षर किये हैं तथापि, इस प्रेसिडेंसीके लोग उसके खिलाफ हैं। वे चाहते हैं कि कम-से-कम प्राथमिक चुनावकी नामिका चारकी नहीं, दोकी ही होनी चाहिए। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप इस बातको अपनी स्वीकृति दें। . . ."

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६७३) से।

परिशिष्ट १०

रामतरण मुखर्जीका पत्र[1]

६ दिसम्बर, १९३२

मैं, यह मानते हुए कि आप भारतके ही नहीं सारी दुनियाके सर्वोच्च महापुरुष हैं, आपके पास अत्यन्त नम्रतापूर्वक उपस्थित हो रहा हूँ। कारण यह है कि आप सनातनी हिन्दू होनेका दावा करते हैं।

आप जानते हैं कि दधीचिसे जब देवताओंने उनकी हड्डियाँ माँगीं तो उनका हित करनेके लिए उन्होंने उन्हें अपनी हड्डियाँ दे दी थीं। किन्तु आप अपने जीवनका उत्सर्ग माँगे बिना ही करनेको उद्यत हैं। आप जानते हैं कि ईसाको उस समयके सत्ताधिकारियोंके आदेशपर ही सूली दी गई थी। आप जानते हैं कि सुकरातने भी जहरका प्याला सत्ताधारियोंके आदेशपर ही पिया था। लेकिन आपके मामलेमें ऐसा कोई आदेश तो आपके पास पहुँचा नहीं है जिसका पालन आपको करना आवश्यक हो गया हो। ऐसी परिस्थितिमें जबतक आप सनातनियोंको इस बातका यकीन करानेके स्पष्ट कर्त्तव्यका पालन नहीं करते कि ये लोग आपके आदर्शका अनुगमन न करके गलती कर रहे हैं, तबतक आपका अपने बहुमूल्य जीवनका उत्सर्ग करना क्या उचित कहा जा सकता है?

आपका आदर्श बहुत महान है। किन्तु आप यह अपेक्षा नहीं रख सकते कि सामान्य सनातनी हिन्दुओंकी आस्था, उनकी विवेक-बुद्धि और अन्त:प्रेरणा भी आपकी ही कोटिकी हो। यदि ऐसा होता तो सारे सनातनी महात्मा गांधी ही न बन गये होते। इसलिए लोगोंकी वर्तमान मन:स्थितिको देखते हुए क्या यह उचित, न्याय्य और उपयुक्त नहीं होगा कि सनातनियोंको समझाने और उन्हें अपनी बातकी प्रतीति करानेके उद्देश्यसे आप अपने आदर्शकी ऊँचाइयोंसे उतरकर व्यवहार और वास्तविकताकी सामान्य धरतीपर आयें और उनसे अपनी बात अपनी मीठी शैलीमें कहें। कृपया विचार कीजिए कि अपने समयमें भगवान शंकराचार्यने बौद्धोंको अपने बुद्धिबलसे किस प्रकार पराजित किया था और देशके बाहर खदेड़ दिया था। कृपया विचार कीजिए कि कैसे महाप्रभु श्री चैतन्यदेवने अपने प्रेमके धर्मका प्रचार करके लोगोंके हृदय जीतनेमें सफलता पाई थी। किन्तु आपने सनातनियोंको यह समझानेके लिए अभीतक कोई प्रचार नहीं किया है कि सनातनियोंको अपनी पुरानी व्यवस्थामें नये युगके अनुसार परिवर्तन करना चाहिए, एक नयी व्यवस्था स्वीकार करनी चाहिए और शास्त्रोंको गंगामें फेंके बिना उनके वचनोंके नये अर्थ स्वीकार करने चाहिए, फिर चाहे वे उन्हें कितने ही कड़वे क्यों न लगें। हम स्वीकार करते हैं कि भगवान शंकराचार्यको

१. देखिए पृष्ठ १९१।

ईसाई और मुस्लिम धर्ममतोंके खण्डन करनेका अवसर नहीं आया था। उन्होंने जैन, बौद्ध, सांख्य, वैशेषिक और भागवत मतोंका ही खण्डन किया था। किन्तु अब हमारा सम्पर्क पश्चिमकी जनतांत्रिक सभ्यताओंके साथ हुआ है और हम उनकी उपेक्षा नहीं कर सकते। प्रत्युत, हमें इस बातपर विचार करना चाहिए कि वर्तमान युगकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए वर्णाश्रम धर्ममें कहाँतक परिवर्तन करना ठीक होगा।

इसलिए मैं सानुरोध प्रार्थना करता हूँ कि आप कृपया अपने ढंगसे सनातनियोंको अपनी बात समझाने और उन्हें नये सत्यका यकीन दिलानेके लिए प्रचार-कार्य आरम्भ कीजिए और तबतकके लिए अपने जीवनका बलिदान करनेका विचार छोड़ दीजिए।

आपका,
रामतरण मुखर्जी
वेदान्ततीर्थ

[पुनश्च :]

मैं आपको सविनय सूचित करना चाहता हूँ कि यद्यपि मैं सनातनी हिन्दू हूँ तथापि हम लोगोंने अपने व्यवहारमें, यदि हरिजन शारीरिक दृष्टिसे और अपनी वेशभूषामें शुद्ध हों तो, अस्पृश्यताका त्याग कर दिया है।

आपका,
रामतरण मुखर्जी
वेदान्ततीर्थ

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८६६०) से।

परिशिष्ट ११

च० राजगोपालाचारीका पत्र[1]

कालीकट
[१२ दिसम्बर, १९३२][2]

लीगके नाममें परिवर्तन करनेके मामलेमें मैं आपसे सहमत नहीं हूँ। अस्पृश्य-सेवकसंघ नाम अच्छा खासा है, पर इसका अर्थ यही है कि हम अस्पृश्योंके अस्पृश्य बने रहनेकी बात स्वीकार करते हैं। भारत-सेवक, भील-सेवक, या ईश्वर-सेवक सब ठीक हैं, क्योंकि भारत रहेगा ही, भील एक जातिका नाम है और हीनताद्योतक नाम नहीं है, और ईश्वर तो हमेशा मौजूदा रहेगा ही। पर यदि हम अस्पृश्यता या दासताका मूलोच्छेदन करना चाहते हैं तो अस्पृश्य-सेवक या दास-सेवक नाम ठीक नहीं रहेगा। फर्ज कीजिए, अमेरिकामें जो लोग दासताकी प्रथाका नाश करना चाहते थे वे अपना संघ बनाते और उसका नाम रखते — दास-सेवक या दास-सहायक। हो

१. देखिए पृष्ठ २१५।

२. साधन-सूत्रमें "१२-१०-१९३२" है, जो गलत लगता है।

सकता है कि दासता अथवा अस्पृश्यताका निवारण होते ही संघ बन्द कर दिया जाये, पर यह तर्क ठीक नहीं ठहरता है, क्योंकि जो बात तत्काल आवश्यक है वह है मनुष्यकी मनोवृत्तिमें परिवर्तन। आपको 'तथाकथित अस्पृश्योंके सेवक' कहना होगा, पर नाम भौंडा हो जायेगा, और उसके विरुद्ध उक्त आपत्ति वैसी ही बनी रहेगी। मैं अस्पृश्यता-निवारक लीग या संघ नाम पसन्द करता। . . . 'अस्पृश्यता-विरोधी' यह शब्द मुझे अच्छा नहीं लगता, मुझे इसमें बर्बरताकी गंध आती है। अस्पृश्यता-निवारक संघ (अनटचेबिलिटी एबॉलीशन सोसाइटी) हिन्दी, गुजराती तथा अन्य भारतीय भाषाओंमें प्रचलित नामोंका शब्दशः अनुवाद होगा, और इसमें कोई आपत्तिजनक बात भी नहीं होगी। वास्तवमें हमारा अभीष्ट दासत्वके दर्जेका मूलोच्छेदन है और 'निवारक' शब्दसे इस शब्द-समुच्चयको बल भी प्राप्त होगा, ठीक जिस प्रकार मद्यपान और मादक द्रव्य-सेवनके सम्बन्धमें 'निषेध' शब्द लोकप्रसिद्ध हो गया है। यदि हम अच्छी तरह सोचें तो यहाँ मनुष्यके किसी वर्गविशेषकी सेवा हमारा अभीष्ट नहीं है। हमारा अभीष्ट तो उक्त अभिशापका मूलोच्छेदन ही है। ऐसे विचारोंके लोग भी हैं जो यह चाहेंगे कि इस वर्गको अलग रखा जाये, पर उन्हें अच्छी तरह खानेको दिया जाये। पर हमें केवल इतना ही तो नहीं करना है।

[अंग्रेजीसे]

इन दि शेडो ऑफ दि महात्मा, पृष्ठ ८१-२

परिशिष्ट १२

अस्पृश्योंके प्रतिनिधि-मण्डलसे बातचीत

१५ दिसम्बर, १९३२

प्रश्न : अस्पृश्यता-निवारक संघकी कार्रवाई और काम-काजके विवरणमें डॉ० अम्बेडकरके पत्रका कोई उल्लेख नहीं है।

गांधीजी : आपकी शिकायत यह होनी चाहिये कि उसमें उठाये हुए प्रश्नोंका कोई विचार नहीं किया गया।

मेरे खिलाफ जो शिकायत हो सो कहिये। मैं आपको बताऊँगा कि मैं कितनी तरहसे आपकी मदद कर रहा हूँ।

प्र० : देवरूखकरसे आपने यह कहा है कि 'इन लोगोंको प्रेमसे जीतिए।' मगर उनमें प्रेम हो तब न?

गां० : तब आप इस बातको उलट दीजिए और आप उन्हें प्रेमसे जीतिए।

प्र० : नहीं, नहीं; ये तो गौरीशंकर पर्वत जैसे बड़े हैं। हम इनके विरुद्ध अच्छी तरह लड़ जरूर सकते हैं, मगर हमारी हिंसाकी भी हद है।

गां० : मेरा पक्का विश्वास है कि गुटबन्दीको टालना ही चाहिये। सवर्णोंमें से इस वृत्तिको निकाल देनेकी मैं जी-तोड़ कोशिश करूँगा।

प्र० : इन लोगोंको सामाजिक सुविधाएँ देनेके बारेमें क्या हो रहा है?

गां० : यह काम हर प्रान्तमें हो रहा है। लोगोंको समझाया जा रहा है। यह काम ढिलाईमें तो डाला ही नहीं गया है। आप मलाबारमें जाकर देखिये कि वहाँ कितना बड़ा परिवर्तन हो रहा है।

प्र० : मगर इस वर्गके उद्धारके लिए आपके पास क्या कार्यक्रम है?

गां० : ठीक इसीके लिए तो मैंने यह मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न उठाया है। सनातनी इसीसे घबरा उठे हैं। ये लोग कहते हैं कि और सब कुछ करो, कुओंसे पानी भरवाओ, परन्तु मन्दिरोंको न छुओ। यह तो अभी सेरमें पहली ही पूनी है। यह काम ज्यादा आगे चलेगा, तब दूसरे सभी प्रश्न सुलझ जायेंगे। मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नके साथ खूब ही प्रचार-कार्य करना है। और मलाबारमें यह काम अच्छी तरह हो रहा है।

प्र० : अस्पृश्योंके दुःख दूर करने और स्पृश्योंकी तरफसे उनको होनेवाली परेशानीका उपाय करनेके लिए वकीलोंका एक मण्डल बना दीजिये।

गां० : हम स्वयंसेवक वकीलोंकी सेवा लेंगे।

प्र० : स्वयंसेवकोंसे काम नहीं होगा।

गां० : मेरे जैसे स्वयंसेवक हों तो भी?

प्र० : इन्हें [अस्पृश्योंको] मिलोंके बुनाई-विभागमें भरती करना चाहिये। आज तो भोजनालयों और पानीके सार्वजनिक नलोंपर भी अस्पृश्यता है। मजूर महाजन[1] के चायके होटलोंमें भी अस्पृश्यता है। क्या आप चेम्बर ऑफ कॉमर्सको हिदायत नहीं देंगे कि हमाल वगैरह भी अछूत लोगोंमें से ही लें?

आपके चातुर्वर्ण्यके विचारोंमें भी कोई परिवर्तन हुआ है क्या?

गां० : नहीं भाई, मैं तो चातुर्वर्ण्यको मानता ही हूँ। रोटी-बेटी व्यवहारमें कोई बन्धन न होने चाहिये। यह कहनेके लिए शास्त्रोंका कोई आधार नहीं कि अलग-अलग वर्णोंमें शादी नहीं हो सकती। मेरे जीवनमें मैंने इस बातपर अमल किया है। मगर इस वक्त मैं इसका प्रचार हाथमें नहीं लेना चाहता। जाति-पाँतिके सुधारका काम मैं अभी हाथमें लूँ, तो अस्पृश्यता-निवारणका काम बिगड़ जाये। सभी धन्धे वंश-परम्परागत होने चाहिये। करोड़ों लोग प्रधान मन्त्री और वाइसराय नहीं बनेंगे। जबतक आश्रम-धर्म जीवित नहीं होगा, तबतक यह वर्ण-धर्म भी जीवित नहीं होगा।

प्र० : आपको हम अपना आदमी किस हदतक मान सकते हैं?

गां० : अम्बेडकर पैदा हुए उसके पहलेसे ही मैं तो आपका आदमी हूँ। मेरे पुराने लेखोंमें उन्हें पसन्द हों, ऐसी बहुत-सी बातें मिल जायेंगी। मेरे-जितनी कड़ी भाषामें किसीने अस्पृश्यताका विरोध नहीं किया।

प्र० : मगर यह तो 'भाला' पत्रका सम्पादक भी कहता है।

गां० : जो सचाईके साथ कहे वह कह सकता है। मगर सोलनके शब्दोंमें कहें तो, मनुष्यकी मृत्यु होनेके बाद ही उसे प्रमाणपत्र देना चाहिये। कौन जानता है कि मैं बुरे-से-बुरे प्रकारका सनातनी न निकलूँ?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–२, पृष्ठ ३४०–२

१. अहमदाबादका मजदूर-संघ।

परिशिष्ट १३

घनश्यामदास बिड़लाका पत्र[1]

२१ दिसम्बर, १९३२

परम पूज्य बापू,

आपका टाइप किया हुआ पत्र और उसके साथ भेजे कागज मिले। डॉ० रायने जो आपको चिट्ठी लिखी है उसकी नकल उन्होंने पहले ही मेरे पास भेज दी थी। उसका आपने जो उत्तर दिया है उसकी नकल भी मुझे मिल गई है। इस प्रकार अब मेरे पास पूरा पत्र-व्यवहार मौजूद है। मैं इस मामलेको लेकर आपका और अधिक समय नष्ट करना नहीं चाहता, पर साथ ही मैं जो महसूस करता हूँ उसे लिखनेका लोभ भी संवरण नहीं कर सकता। अपनी भूलके विषयमें आपकी जो धारणा है, वास्तवमें, वह उससे कुछ भिन्न प्रकारकी है। मुझे भोंडी स्थितिमें पटकनेका प्रश्न ही नहीं उठता। आप मुझे इससे कहीं अधिक भोंडी स्थितिमें पटकना चाहें तो खुशीसे पटक सकते हैं। परन्तु मैं इस बातमें अब भी आपसे सहमत नहीं हूँ कि आपकी भूल डॉ० रायके ऊपर अपने प्रभावका गलत अन्दाजा लगानेतक ही सीमित थी। यदि डॉ० रायके साथ न्याय किया जाये तो कहना होगा कि उनका बुरा मानना स्वाभाविक था। मेरी समझमें भूल इसी बातमें हुई कि आपने सुरेश बाबू और सतीश बाबूका, जो आपके इतने निकट हैं, सहयोग प्राप्त करनेमें डॉ० रायकी सहायता करनेके बजाय डॉ० रायसे केवल इस कारण इस्तीफा देनेको कहा कि सुरेश बाबू और सतीश बाबूने उन्हें सहयोग प्रदान नहीं किया। मैं मानता हूँ कि सुरेश बाबू और सतीश बाबूने जो उन्हें सहयोग प्रदान नहीं किया उसका समुचित कारण था, पर तो भी आपको बलिदानके लिए डॉ० रायको नहीं छाँटना चाहिए था। मेरी रायमें आपने यही भूल की। जब मैंने डॉ० रायके नाम आपका पहला पत्र देखा तो मुझे आश्चर्य हुआ, क्योंकि इस प्रकारकी भूलें करना आपके लिए असम्भव-सा है। हम आपके देवोपम व्यक्तित्वसे इतने चकाचौंध हैं कि हमने अपना आत्मविश्वास खो-सा दिया है। इसके परिणामस्वरूप मुझे जब भी आपकी किसी बातमें शंका होती है तो मैं अपने-आपको यह कहकर समझा लेता हूँ कि दोष मेरी बुद्धिका है जो मैं आपके निश्चयके मर्मको नहीं समझ सका। इस मामलेमें भी यही हुआ। मेरी अब भी यही धारणा है कि आपको अपने अन्तिम पत्रमें डॉ० विधानको आपके पत्रके गलत अर्थ निकालनेके लिए डाँटना नहीं चाहिए था। आशा है, मैं आपका समय नष्ट नहीं कर रहा हूँ। यह सब मैं आत्म-सन्तोषके लिए लिख रहा हूँ। यदि आप लिखनेकी आवश्यकता समझें तो ही लिखें।

१. देखिए पृष्ठ २१५ और ३०५।

परिभाषाके सम्बन्धमें मेरा कहना यही है कि आप जानते ही हैं मैं ऐसी बातोंको लेकर बहुत ही कम माथापच्ची करता हूँ। पर आपकी ताजी परिभाषा उन सारी परिभाषाओंसे ज्यादा अच्छी मालूम होती है जिनपर चर्चा हो चुकी है।

डॉ० अम्बेडकरके मित्रोंकी इस शिकायतके सम्बन्धमें कि हमने डॉ० के पत्रपर अच्छी तरह विचार नहीं किया, मेरा कहना यही है कि उन्हें कुछ गलतफहमी हो गई है। डॉ० अम्बेडकरके सुझावोंके अलावा और भी अनेक सुझाव थे जिनपर विचार करना था और जिन्हें नीली पुस्तिकामें देना था। पर हमने इतने ज्यादा लोगोंकी बैठकमें इस पुस्तिकाकी चर्चा न उठाना ही ठीक समझा। अतएव हमने तीन व्यक्तियोंकी एक छोटी-सी समितिका गठन किया जिसे डॉ० अम्बेडकरके सुझावोंके अलावा प्रान्तीय बोर्डोंसे आये सुझावोंको भी ध्यानमें रखकर नीली पुस्तिकाकी पुनरावृत्ति करनेका काम सौंपा गया है। परन्तु मुझे कहना पड़ता है कि हमारे कर्मचारी उतने दक्ष नहीं हैं। बूढ़े ठक्कर बापा एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जाते रहते हैं, और उनकी अनुपस्थितिमें मुख्यालयमें, किसी योग्य सेक्रेटरीके अभावमें, काम उतना अच्छा नहीं हो पाता जितना होना चाहिये। इस संघका श्रीगणेश होनेसे पहले देवदासने मुझे सहायता देनेका वचन दिया था, परन्तु वह और कामोंमें लगे हुए हैं। कल जब वे मिले तो मैंने उनसे इसकी शिकायत भी की थी। उन्होंने एक अच्छा-सा आदमी देनेका वादा किया है। मैंने उनसे कह दिया है कि वरना कामका हर्जा होगा। मुझे अच्छा आदमी मिल सकता है, पर मेरे अच्छा आदमी पानेका अर्थ होगा अधिक पैसा देना। मुझे तो अच्छा आदमी बाजार-भावपर ही मिलेगा। इस ढंगकी संस्थाओंमें तो ऐसा आदमी चाहिए जो स्वार्थ त्याग करना चाहे। पता नहीं, आप इस मामलेमें मेरी सहायता कर सकेंगे या नहीं। यदि देवदास इस कामको अपने हाथमें ले लें तो बड़ा काम कर डालें, पर दुर्भाग्यसे वे आनेको तैयार नहीं हैं।

हम पत्र जनवरीके आरम्भमें निकाल रहे हैं। आपके लेखकी बाट जोह रहा हूँ। (मुझे लेख अभी-अभी मिल गया।) वियोगी हरिको हिन्दी पत्रका सम्पादन करनेके लिए नियुक्त किया गया है। अंग्रेजी पत्रको सँभालनेके लिए कोई योग्य आदमी अभी तक नहीं मिला है, इसलिए मैं ऑफिसके आदमियोंसे ही काम ले रहा हूँ। पर, जैसा कि आप स्वयं जानते हैं, इसके लिए एक अच्छे ऑफिस सेक्रेटरीकी दरकार है।

संघका नाम तीसरी बार बदलना उपहासास्पद होगा। राजाजीके पत्रका आपके ऊपर इतना गहरा प्रभाव पड़ा, पर मेरे ऊपर तो नहीं पड़ा। इसका कारण यह भी हो सकता है कि ऐसी बातोंकी ओरसे मैं उदासीन-सा रहता हूँ।

आशा है, आप बिलकुल स्वस्थ हैं। कृपया मेरे स्वास्थ्यकी चिन्ता मत कीजिए। मैं अच्छा खासा हूँ। अभी मैंने बेरोंका व्यवहार नहीं किया है, पर करूँगा।

विनीत,
घनश्यामदास

[अंग्रेजीसे]
इन दि शेडो ऑफ दि महात्मा, पृष्ठ० ८२-४

परिशिष्ट १४

नटराजन और देवधरसे बातचीत[1]

१८ दिसम्बर, १९३२

नटराजन: आपने इंग्लैंडमें जिस चीजके होनेको रोकनेका प्रयत्न किया, वह यहाँ हो रही है। हमारे समाजमें सनातनी और सुधारक ऐसे दो बड़े भाग हो गये हैं। हमारे समाजको छिन्न-भिन्न होनेसे रोकनेके लिए यह जरूरी है कि आप बाहर आ जायें। मुझे बहुत ही आवश्यक मालूम होता है कि इस आन्दोलनको चलानेके लिए आपको बाहर आ ही जाना चाहिए। आपके शब्दोंमें कहूँ तो, झगड़ा रोकनेके लिए आपको जामिन बनना है। मगर मैं नहीं जानता कि आप किस तरह बाहर आ सकते हैं।

गांधीजी॰: मैं भी नहीं जानता। जिन्हें केवल यही काम करना हो उनपर कोई अंकुश न होना चाहिये। जेलमें पड़े हुए लोग भी यह कहकर बाहर जा सकते हैं कि हम अपनी प्रवृत्तियाँ अस्पृश्यता-निवारणके काम तक ही सीमित रखेंगे। लेकिन उन्हें ऐसा करना चाहिये या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता। मैं यह भी नहीं कह सकता कि वे ऐसा करें तो मुझे वह अच्छा लगेगा। लेकिन यह बात नहीं है कि कोई सविनय अवज्ञाकी लड़ाई छोड़ दे, तो वह मेरा साथी नहीं रहेगा या मुझे कम प्रिय हो जायेगा। मान लीजिए मैं बिना किसी शर्तके रिहा कर दिया जाऊँ, तो सम्भव है कि मैं लोगोंको सविनय अवज्ञा छोड़ देनेकी सलाह दूँ। लेकिन आज यहाँसे ऐसी किसी शर्तमें मैं बँधना नहीं चाहता।

न॰: क्या सविनय अवज्ञा फिलहाल मुल्तवी कर देनेकी सम्भावना नहीं है?

गां॰: मैं बिना शर्त बाहर चला जाऊँ, उसके बाद इसका विचार किया जा सकता है।

न॰: यह तो मैं आपसे नहीं कह सकता कि आप किसी तरहका आश्वासन दें। लेकिन जब आपने यह कहा है कि इस कामके लिए मेरा जीवन समर्पित है, तो उसका अर्थ यह होता है कि और सब काम छोड़कर अब आप यही काम करेंगे। आप यह तो नहीं चाहते कि समाजके टुकड़े हो जायें। आप यही चाहते हैं कि सवर्ण हरिजनोंको अपना लें। सवर्ण हिन्दुओं और विरोधी वर्ग दोनोंका आपमें विश्वास है।

गां॰: टुकड़े होना तो जरूर रोका जा सकता है।

देवधर: कुछ बातोंकी सफाई कर दी जाये तो कटुता टल सकती है।

१. देखिए पृष्ठ ३३४।

गां० : मुझे यह डर नहीं कि टुकड़े हो जायेंगे। गुरुवायुरके मामलेमें कुछ कटुता हो सकती है, मगर इस प्रश्नको मैंने और सबसे अलग रखा है।

दे० : हम धीरे-धीरे काम करें तो सनातनी भी हमारे साथ हो जायेंगे।

गां० : जरूर हो जायेंगे। इसीलिए तो मैं दूसरे मन्दिरोंके मामलेमें कितनी ज्यादा मर्यादाएँ रखता हूँ। मगर वाइसरायकी मंजूरी प्राप्त करनेमें हमारी तरफसे ढिलाई होगी, तो मुझे उपवास करना पड़ेगा।

न० : मगर मंजूरी लेनेमें तो दो महीने लगेंगे, क्योंकि वाइसरायके पास बिल दो महीने रहता है।

दे० : आप सरकारको एक पत्र क्यों नहीं लिखते कि जो यह कहते हैं कि हम सिर्फ अस्पृश्यता-निवारणका ही काम करेंगे उन्हें छोड़ देना चाहिए? आपको यह भी जाहिर कर देना चाहिए कि आपके अनुयायियोंमें से जो सिर्फ अस्पृश्यता-निवारणका काम करेंगे वे आपको कम प्रिय नहीं होंगे।

गां० : मैं यह तो नहीं कह सकता कि जेल जानेके बजाय उन्हें इस कामको पसन्द करना चाहिए। ऐसा हो तो मुझे खुद ही आश्वासन देकर बाहर निकल जाना चाहिए। उसके बाद ही मैं औरोंको ऐसा करनेको कह सकता हूँ।

दे० : आपको सचमुच ही ऐसा लगता हो कि यह काम आपकी सारी जिन्दगीका तमाम समय ही माँगता है, तो किसी भी तरहके मानसिक संकोचके बिना आप बाहर निकल सकते हैं।

गां० : नहीं, मुझे अगर ऐसा लगता तो मैं कभीका सरकारको ऐसा लिख चुका होता। आज तो मुझे पक्का विश्वास है कि ऐसा करके बाहर जाऊँ, तो काम करनेकी सारी शक्ति खो बैठूंगा।

दे० : क्या इसीलिए कि लोग आपको राजनैतिक नेता मानते हैं?

गां० : नहीं, मैं जैसा हूँ, लोग मुझे पूरी तरह वैसा ही देखते हैं। लोग जानते हैं कि मेरी राजनीति मेरे जनसेवाके समग्र कार्यका एक भाग है। लोग सहज वृत्तिसे ही समझ गये हैं कि मेरा सारा जीवन जनसेवाके लिए है।

यह तो मानसिक प्रामाणिकताका प्रश्न है। ज्यों ही मैं बाहर जाऊँगा त्यों ही मुझे यह विचार आ सकता है कि इस भारी आफतमें मुझे क्या करना है? और तब मैं शायद मात्र सविनय अवज्ञाका ही विचार करने लगूँगा, और किसी बातका नहीं। मगर यहाँ पड़ा-पड़ा यह काम कर रहा हूँ, इससे मुझे पूरा सन्तोष है।

दे० : ऐसा कोई नुसखा ढूंढ़ निकालिए न कि जिससे आप इन लोगोंको छुड़वा सकें।

गां० : अभी जो नुसखा मैंने पेश किया है, उसका सरकारपर असर पड़ना चाहिए। सरकारको आसानीसे यह समझमें आना चाहिए कि इस आन्दोलनमें सारा देश लगा हुआ है।

दे० : आप यह नहीं कह सकते कि यह काम उतने ही महत्त्वका है और कार्यकर्त्ताओंको इसमें पड़ना चाहिए?

गां० : जमनालालजीका उदाहरण लीजिए। वे ऐसी कोई शर्त करके बाहर नहीं जायेंगे। मैं उनसे ऐसा करनेको कहूँ तो वे मान जरूर लेंगे, मगर मैं उनसे इस तरह बाहर जानेको कह ही नहीं सकता। इस आन्दोलनके लिए पुराने कार्यकर्त्ताओंकी, जो जेलमें हों उनकी, जरूरत नहीं है। नया कार्यकर्त्ता-वर्ग निकल आया है और वह मुझे पसन्द है। जमनालालजी जैसे आदमीको खुद ही महसूस हो, तो मेरे आशीर्वादके साथ वे बाहर जा सकते हैं। मगर मैं उन्हें ऐसा करनेको नहीं कहूँगा। मुझसे हर पखवाड़ेमें कुछ कैदी मिलते हैं। उन्हें मैंने कहा है कि तुम्हें भीतरसे ऐसा लगता हो कि अस्पृश्यता-निवारणका काम करनेका आश्वासन देकर बाहर जायें, तो मैं यह नहीं कहूँगा कि तुमने कोई बुरा काम किया है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग–२, पृष्ठ ३५१-३

परिशिष्ट १५

अखिल भारतीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघके सचिवका पत्र[1]

१९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय महोदय,

आपका १६ तारीखका जो पत्र आज सुबह मिला उसके सन्दर्भमें आपके साथ हम जो बातचीत करनेको तैयार हुए हैं, उसके साथ आप कृपया किन्हीं शास्त्रियोंके साथ होनेवाली बातचीतको न जोड़ें — फिर चाहे वे शास्त्री पंढरपुरके हों या किसी अन्य जगहके।

यदि आपने पंढरपुरके शास्त्रियोंसे होनेवाली बातचीतके लिए २३ तारीख निश्चित की है, तो आप कृपया हमारे बीच तय हुई बातचीतके लिए कोई अन्य दिन तय करें और अखिल भारतीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघकी ओरसे जो पण्डित शरीक होनेवाले हैं, उनसे पूछकर, यदि सुविधाजनक हुआ तो, हम उस तारीखकी पुष्टि करेंगे।

हमने बातचीतके लिए किन्हीं शर्तोंका उल्लेख नहीं किया है। हमने जो कहा था वह यह कि कुछ मध्यस्थ नियुक्त करने होंगे और यह तय करना होगा कि किन पुस्तकोंका आधार लिया जायेगा। इसके सिवा व्याख्याके नियम तय करने होंगे।

इसलिए यह नितान्त आवश्यक है कि आप कृपया ऐसे दो सज्जनोंका नाम बतायें जो अनुभवी हों और ऐसे पद व प्रतिष्ठावाले हों कि मध्यस्थकी तरह बैठ सकें और आप उन पण्डितोंके नाम भी लिखें जिन्हें आप या आचार्य ध्रुव अपने कथनोंकी पुष्टिके लिए बुलाना चाहेंगे।

जैसे ही यह सब हो जाता है, हम अपने पण्डितों और दो मध्यस्थोंके नाम बतायेंगे। मध्यस्थोंका काम अध्यक्षका नहीं होगा बल्कि उनका काम यह देखना होगा कि बातचीत लिखित रूपमें व्यवस्थित ढंगसे चले।

१. देखिए पृष्ठ २४८।

हमारी केवल यही कामना है कि जैसा आपसे बिलकुल शुरूमें ही कहा गया है, बातचीत व्यवस्थित ढंगसे चलाई जाये और वह मात्र अनुपयोगी वाद-विवाद न हो।

जैसा कि पत्रों द्वारा पहले ही तय किया गया है, बातचीतका उद्देश्य इस सत्यका पता लगाना होगा कि अस्पृश्यता शास्त्रसम्मत है या नहीं और शास्त्रोंमें अस्पृश्योंके मन्दिर-प्रवेशपर प्रतिवन्ध हैं, या नहीं। हम यह मानकर चलते हैं कि यदि यह सब हो जाता है और जिन पण्डितोंको आप बुला रहे हैं वे यदि उन विचारोंको प्रमाणित नहीं कर पाते जिनका वे अभीतक प्रतिपादन करते हैं, तो आप अपने कदम वापस ले लेंगे।

आपका,
हीरालाल डी० नानावटी
सचिव, अ० भा० व० स्व० संघ

मो० क० गांधी, महोदय
मार्फत—यरवदा जेल
पूना

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८७५३) से।

परिशिष्ट १६

घनश्यामदास बिड़लाका पत्र[1]

बिड़ला हाउस
अलबुकर्क रोड
नई दिल्ली
१४ दिसम्बर, १९३२

प्रिय बापू,

मुझे आज डॉ० रायका त्यागपत्र मिल गया। उन्होंने इस सम्बन्धमें आपको जो पत्र लिखा था उसकी एक नकल भी मुझे भेजी है। मैं उनके त्यागपत्रको स्वीकार कर रहा हूँ। इस मामलेपर मैं जितना विचार करता हूँ उतना ही मुझे लगता है कि हमारी कठिनाइयाँ इससे समाप्त नहीं हुईं। . . . डॉ० रायमें झगड़ा करनेकी वृत्ति नहीं है और मैं आशा करता हूँ कि वे इस घटनाको भुला देंगे। किन्तु उनके अनुयायी भी इसे इतनी आसानीसे भुला देंगे, इसमें मुझे सन्देह है। इसके सिवा मुझे लगता है कि लोगोंकी सहानुभूति इस मामलेमें सतीशबाबू और सुरेशबाबूके साथ नहीं होगी, क्योंकि मेरी रायमें उन्होंने डॉ० रायको अपमानित करके एक गलत काम किया है। फलतः आपने जो निर्णय किया वह परिस्थितिको शान्त करनेके बजाय बंगालके विभिन्न दलोंके बीचकी खाईको और बढ़ायेगा। सतीशबाबू और सुरेशबाबू

१. देखिए पृष्ठ २५२।

आपके ज्यादा नजदीक हैं, इसलिए सम्भवत: उनके लिए ज्यादा अच्छा यही होता कि वे डॉ० रायके त्यागपत्रकी इच्छा न करते और इस मामलेमें स्वयं झुकनेको तैयार हो जाते। इससे परिस्थिति कुछ सुलझती। जो हुआ है उससे तो आपने बंगालियोंको यह महसूस करनेका कारण दिया है कि एक गैर-बंगाली अपनी इच्छानुसार बंगालमें किसीको भी सार्वजनिक संस्थाओंके अध्यक्षका पद दे सकता है या उसे वहाँसे हटा सकता है। और लोग निश्चय ही इसका बुरा मानेंगे। अगर मैं डॉ० वि० च० रायकी जगह होता तो ऐसी परिस्थितिमें मैं अध्यक्षता स्वीकार करनेसे इनकार कर देता। लेकिन मैं ये विचार केवल आपकी और यदि सतीशबाबू अभी भी वहाँ हों तो उनकी जानकारीके लिए ही प्रगट कर रहा हूँ। आशा है कि इससे समस्या शान्त हो जायेगी।

हम अपने साप्ताहिकका पहला अंक १ जनवरीको निकाल रहे हैं। अतः आप अपना लेख समयपर भेज दीजिए।

आपका,

मो० क० गांधी, महोदय
पूना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८७०४) से।

परिशिष्ट १७

सी० एफ० एन्ड्रयूजके पत्रका अंश[1]

१० नवम्बर, १९३२

मेरी अपनी धार्मिक शिक्षा पूर्णतया ऐसी रही है कि मैं आत्मघातकी बात सोच ही नहीं सकता।

मेरा मन अब भी अशान्त है। . . . धर्मान्ध लोग आपके इस आचरणका उपयोग निश्चय ही किसी ऐसी चीजको लादनेके लिए करेंगे जो प्रगतिशील नहीं प्रतिक्रियात्मक होगी। मनुष्य-सुलभ पागलपन या मोहान्ध प्रेम भी इस तरह अत्याचारका रूप ग्रहण कर सकता है। मेरी चिन्तामें और मेरे भयमें दुर्बल मानुषिक प्रेमका कितना अंश है, यह मैं खुद भी नहीं समझ सकता। मैं यह जानता हूँ कि पिछले उपवासके दरमियान मैंने आपको दलित वर्गोंके कल्याणार्थ अपना जीवन अर्पित करते देखा था और मैं उस दृश्यको देखकर खुश हुआ था — क्योंकि मैं उसमें उनके प्रति आपके 'महत्तर प्रेम'का दर्शन कर सका था। अब मैं देखता हूँ कि यदि मन्दिरके अधिकारी झुकते नहीं हैं तो आप १ जनवरीको पुनः वही चीज करनेकी तैयारी कर रहे हैं।

. . . मुझे लगता है कि मैं स्वयं अपनेको ईसाई कहनेवाले गौरांग-जातीय धर्मान्धों और अन्य प्रजातियोंके बीच विद्यमान 'अस्पृश्यता' को दूर करनेके लिए अपने

१. देखिए पृष्ठ २५४-५।

प्राण सहर्ष दे सकता हूँ। लेकिन आप, जाहिर है, अपने प्रयत्नमें उस बिन्दुपर आ पहुँचे हैं जहाँ आप इस सवालको हठपूर्वक तुरन्त निपटा डालना चाहते हैं और मेरे लिए यह आवश्यक हो गया है कि मैं इस चीजपर ईसाकी शिक्षाके प्रकाशमें विचार करूँ।

मुझे लगता है कि जब उन्होंने येरूसलम जानेका दृढ़ निश्चय किया तो उन्होंने भी उनके समक्ष जो सवाल था उसे हठपूर्वक और तुरन्त निपटानेकी ही बात सोची थी। मुझे लगता है, उन्होंने उस समय यह देख लिया था कि उनकी अपनी मृत्यु ही यहूदी नेताओंको रोक सकेगी। उनकी एक विचित्र सूक्ति है: "स्वर्गका राज्य बलके प्रयोगको सह लेता है और बलके प्रयोक्ता उसपर बलात् अधिकार कर लेते हैं।" मैं निश्चयपूर्वक तो नहीं कह सकता, लेकिन ऐसा लगता है कि उनका मन्दिरके परिशोधनका कार्य भी कुछ वैसा ही था — यानी, मामलेको हठपूर्वक निपटानेकी किस्मका। लेकिन अनशनका, आत्महत्याका तरीका मुझे स्वभावतः विरक्तिकर तो तब भी मालूम होता है।

[अंग्रेजीसे]

चार्ल्स फ्रीअर एण्ड्र्यूज, पृ० २६४

परिशिष्ट १८

केलप्पनसे बातचीत[1]

२९ दिसम्बर, १९३२

केलप्पन: मैंने जब अपने बोझमें हाथ बँटानेको कहा था तब मैंने उपवासकी बात नहीं की थी।

गांधीजी: औरोंसे जो दिया जा सकता था वह उन्होंने दिया। मेरे पास उपवासके सिवाय और क्या देनेको था? तुम्हें इतना तो समझना ही चाहिए था कि मैं तुम्हारे बोझको ऐसी ही किसी तरह बँटा सकता हूँ। इसमें कुछ भी बुरा नहीं हुआ। ज्यों-ज्यों मैं अधिक विचार करता हूँ, त्यों-त्यों मुझे लगता है कि मैंने जो परेशानी खड़ी की है, वह जरूरी थी। हिन्दू-धर्म मेरी आँखोंके सामने मर रहा है। इसे सजीवन करना हो, तो मैं और क्या कर सकता हूँ? तुम नहीं जानते कि आज मुझपर क्या बीत रही है। तुम राह देखो, जाँच करते रहो, और सहन करो। मुझे उपवास करना पड़े तो तुम्हें बरदाश्त करना चाहिए। अभी तो उपवास मुल्तवी हो गया है। भविष्यके गर्भमें क्या है, यह मैं नहीं जानता। उपवास अनावश्यक भी हो सकता है; या मुझे यह लग सकता है कि गुरुवायुरके लिए उपवास करना मूर्खता और शक्तिका अपव्यय है। तुम्हें मैं जिस परेशानीमें डाल रहा हूँ, उससे तुम्हारा कुछ भला ही होगा। राजाजीके कलके प्रश्नोंने मुझे विचारमें डाल दिया है और ऐसा लगता है कि मेरा वक्तव्य कोई विचित्र स्वरूप लेगा। मगर तुम्हें तो इस बातको

१. देखिए पृष्ठ ३१४ और ३१५।

यहीं छोड़कर काममें भिड़ जाना है। उपवासकी, अस्पृश्यता-निवारणकी और मन्दिर-प्रवेशकी लड़ाईका आन्तरिक अर्थ समझनेकी कोशिश करो। मुझे तो लगता है कि हम सही तौरपर अस्पृश्यता मिटा दें, तो इसमें हिन्दू समाजकी मुक्ति है। नहीं तो सवर्ण हिन्दू और कथित अस्पृश्योंके बीच तुमुल युद्ध होगा। अछूत पागलपन और द्वेषसे लड़ेंगे और निराश होकर पृथ्वी-तलपर से हिन्दू-धर्मका नाश करनेकी कोशिश करेंगे। वे हिन्दू-धर्मसे इनकार नहीं करेंगे। इसी तरह दूसरा धर्म भी अंगीकार नहीं करेंगे। मगर ईश्वरसे इनकार करेंगे। ब्राह्मण-अब्राह्मणके झगड़ेसे भी यह झगड़ा ज्यादा भयंकर होगा। क्योंकि अछूतोंको ज्यादा कष्ट होता है। मेरा उपवास ऐसे झगड़ेको रोक सकता है, हालाँकि मैं जानता नहीं। शायद उसका असर न भी हो। मगर मैं यह उपवास ढूंढ़ने नहीं गया था। मैं तो विस्तरमें पड़ा-पड़ा सरकारके एक भद्दे प्रस्तावका विचार कर रहा था कि तुम्हारा प्रश्न मेरे सामने आया और मैं उसमें कूद पड़ा। उस समय मैं नहीं जानता था कि इसमें उपवासकी बात आ जायेगी। तुमने मुझे सारी हकीकत बताई, यह तुम्हारे लिए बिलकुल उचित था। इसी तरह दूसरे मित्रोंने तार दिये, यह भी उनके लिए ठीक ही था। जो-कुछ भी हुआ, सो सब ठीक ही हुआ है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३८२-३

परिशिष्ट १९

महादेव देसाईसे बातचीत[1]

गांधीजी: धर्मके मामलेमें कोई किसीका मत स्वीकार नहीं करेगा। अपने हृदयकी प्रतीतिपर ही भरोसा रखना चाहिए।

महादेव: तो हमें यह परिषद बुलवानेमें हिस्सा नहीं लेना चाहिए।

गां०: हिस्सा नहीं, परिषद तो वे लोग स्वेच्छासे बुला रहे हैं। मैं कहता हूँ कि अगर वे मुझे यह विश्वास करा दें कि मेरी भूल है, तो मैं भूल सुधार लूँगा।

म०: तो यह परिषद एकमत हो या न हो इसकी बात ही न कीजिए। इतना ही कहिये कि मेरे मस्तिष्कके द्वार बिलकुल खुले हैं। बस इतना काफी है।

गां० (और अधिक स्पष्ट करते हुए): देखो न, वह एक आदमी मुझसे कहता है कि आप शंकराचार्यकी तरह दिग्विजय क्यों नहीं करते? उसे मैं कहता हूँ कि यह मेरी शक्ति नहीं। मेरी शक्ति दूसरी तरहकी है, उसका उपयोग मैं कर रहा हूँ। मैं अपना धर्म औरोंके मतोंके अनुसार कैसे बदल सकता हूँ?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ३१९

१. देखिए पृष्ठ १८२।

सामग्रीके साधन-सूत्र

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष': एच० एल० शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ७: श्री छगनलाल जोशीने' (गुजराती): छगनलाल जोशी द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६२।

'बापुना पत्रो – ४: मणिबहन पटेलने' (गुजराती): मणिबहन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ९: श्री नारणदास गांधीने' भाग–१ और भाग–२ (गुजराती): नारणदास गांधी द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६४।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स (अंग्रेजी): बम्बई सरकारके सरकारी अभिलेख।

'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी): जवाहरलाल नेहरू द्वारा सम्पादित, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।

'हमारा कलंक': सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, १९३३।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'इन दि शेडो ऑफ दि महात्मा' (अंग्रेजी): घनश्यामदास बिड़ला, ओरिएण्ट लॉगमैन्स लिमिटेड, कलकत्ता, १९५३।

'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी): टी० एन० जगदीशन द्वारा सम्पादित, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३।

'महादेवभाईनी डायरी' भाग – १, और भाग – २ (गुजराती): नरहरि परीख द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद १९४९।

'महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी': स्वराज्य आश्रम, बारडोली में सुरक्षित।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी): एलिस एम० बार्न्ज द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'नरसिंहरावनी रोजनिशि' (गुजराती): धनसुखलाल मेहता और रामप्रसाद बक्षी द्वारा सम्पादित गुजरात विद्या सभा, अहमदाबाद, १९५३।

'पाँचवें पुत्रको·बापूके·आशीर्वाद': काका कालेलकर द्वारा सम्पादित जमनालाल बजाज सेवा ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'पाँचमा पुत्रने बापुना आशीर्वाद' (गुजराती): काका कालेलकर, द्वारा सम्पादित, जमनालाल बजाज सेवा ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'स्वराज्य': मद्रास से प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'टाइम्स ऑफ इंडिया': बम्बई और दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'विश्व ज्योति': होशियारपुरसे प्रकाशित हिन्दी मासिक।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१६ नवम्बर, १९३२ से १० जनवरी १९३३ तक)

१६ नवम्बर: अस्पृश्यतापर सातवाँ वक्तव्य जारी किया।
'हमारा कलंक' के प्राक्कथनमें हिन्दू जनतासे अस्पृश्यताके दोषोंको समझने और इस सम्बन्धमें अपने कर्तव्यको पहचाननेका अनुरोध किया।

१७ नवम्बर: अस्पृश्यतापर आठवाँ वक्तव्य जारी किया।

१८ नवम्बर: ई० ई० डॉयलको लिखे पत्रोंमें जमनालाल बजाजका तबादला करने और मणिबहन पटेलको अपने भाईके स्वास्थ्यके बारेमें पत्र लिख सकनेकी अनुमति देनेके लिए प्रार्थना की।

१९ नवम्बर: एम० जी० भण्डारीको लिखे पत्रमें उन्हें पुनः यह आश्वासन दिया कि अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके लिए सुविधाएँ दिये जानेके समय जो वचन दिया था उसका पालन किया जायेगा। अखिल भारतीय अस्पृश्यता-विरोधी लीगके महाराष्ट्र डिवीजनल बोर्डके प्रधान जी० के० देवधरके साथ चर्चामें इस बात-पर जोर दिया कि अस्पृश्यता-निवारणके सिलसिलेमें जनमतको शिक्षित करना आवश्यक है।

२१ नवम्बर: नारणदास गांधीको पत्रमें लिखा कि कामका बोझ बढ़ गया है और मेरी कोहनियोंको आरामकी जरूरत है।
समाचारपत्रोंसे एक भेंटमें कहा कि जीवनमें मेरी जितनी भी गतिविधियां हैं वे सब "सत्य और अहिंसाका समर्थन करनेकी मेरी धुन" से पैदा होती हैं।

२२ नवम्बर: ई० ई० डॉयलको पत्र लिखकर प्रार्थना की कि जमनालाल बजाजका तबादला यरवदा जेलमें कर दिया जाये।

२३ नवम्बर: के० केलप्पनको पत्रमें लिखा कि आनकी खातिर मैं आपके उपवासमें शामिल होऊँगा।

२४ नवम्बर: बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्रमें लिखा कि स्वामी आनन्दको मेरे पास रहनेकी अनुमति दी जाये, ताकि हाथोंमें दर्दके कारण जो पत्र लिखने रह गये हैं उन्हें निपटानेमें वे मेरी सहायता कर सकें।
हरिभाऊ पाठकको पत्रमें अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी घोषणापत्रका मसौदा लिख-कर भेजा।

२५ नवम्बर: खीमजी और जे० के० मेहताके साथ एक भेंटमें अस्पृश्यता-निवारण और मन्दिर-प्रवेशके लिए जोरदार प्रचार करनेपर जोर दिया।

२६ नवम्बर: अस्पृश्यतापर नवाँ वक्तव्य जारी किया।
जमनालाल बजाज यरवदा जेलमें लाये गये।

'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिसे एक भेंटमें गांधीजी ने इस अफवाहको गलत बताया कि भारतके सभी मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खुलवानेको वे कोई उपवास करनेवाले हैं।

२८ नवम्बर: ई० ई० डॉयलको लिखे पत्रमें यह इच्छा प्रकट की कि अप्पासाहब पटवर्धनको रत्नगिरि जेलमें भंगीका काम करनेकी अनुमति दी जाये।

केशव गांधीको पत्रमें लिखा कि कोहनीके दर्दके कारण मैंने फिलहाल कताई बिलकुल बन्द कर दी है।

२९ नवम्बर: जनताके नाम एक अपीलमें सभी सम्बन्धित लोगोंको यह बात याद दिलाई कि वे उनसे केवल अस्पृश्यता-सम्बन्धी वास्तविक कार्यके सिलसिलेमें ही मिल सकते हैं, और किसी सिलसिलेमें नहीं।

बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखा कि मुझे जमनालाल बजाजसे प्राय: मिलते रहनेकी अनुमति दी जाये, हमारी बातचीतके विषयपर भले ही प्रतिबन्ध रहे।

३० नवम्बर: ई० ई० डॉयलको पत्र लिखकर अपना यह निश्चय बताया कि यदि अप्पासाहबको भंगीका काम करनेकी अनुमति नहीं दी गई तो ३ दिसम्बरसे मैं अपने लिए भंगीका काम स्वयं करूँगा और पूर्ण उपवास शुरू कर दूँगा।

२ दिसम्बर: दलित वर्गोंके नेताओंसे भेंट।

३ दिसम्बर: सरकारका यह सन्देश मिला कि आप अपने लिए भंगीका काम कर सकते हैं, पर सरकार अप्पासाहबकी तरफसे आपका हस्तक्षेप स्वीकार नहीं करेगी।

उपवास शुरू कर दिया; ई० ई० डॉयलको पत्र द्वारा यह सूचित कर दिया कि जबतक अप्पासाहब पटवर्धनकी माँग स्वीकार नहीं की जायेगी मैं उपवास जारी रखूँगा।

४ दिसम्बर: उपवास स्थगित कर दिया; अस्पृश्यता-विरोधी समितिको एक वक्तव्य दिया।

ई० ई० डॉयलको पत्र लिखकर बताया कि सरकारको निर्णयके लिए समय देनेको उपवास स्थगित कर दिया गया है।

५ दिसम्बर: समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंसे भेंटमें कहा कि मैं अपना सारा समय अस्पृश्यता-निवारण कार्यमें लगा रहा हूँ।

जेलके डॉक्टरने स्वास्थ्यकी जाँच की।

६ दिसम्बर: १८ दिसम्बरको अस्पृश्यता-विरोधी दिवस मनाया जाये, इस आशयका एक वक्तव्य जारी किया।

अप्पासाहब पटवर्धनको तार भेजकर कहा कि सरकारको कार्रवाईके लिए समय देनेको आप उपवास स्थगित कर दें।

अप्पासाहब पटवर्धन गांधीजी की अपीलपर उपवास स्थगित करनेको राजी हो गये।

समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंसे भेंट।

७ दिसम्बरसे पूर्व : मद्रासके श्रीपाद शंकरसे भेंटमें कहा कि मन्दिर-प्रवेशके सिलसिलेमें कोई भी शर्त स्वीकार नहीं की जा सकती।

७ दिसम्बर : विद्यार्थियोंसे भेंट; एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंट।

८ दिसम्बर : ई० ई० डॉयलको पत्र लिखकर कहा कि पटवर्धनका इरादा २ जनवरी १९३३ से उपवास शुरू करनेका है, जिसे दृष्टिमें रखते हुए उनके मामलेमें फैसला हो जाना चाहिए।

पी० एन० राजभोजको पत्र लिखकर बताया कि यदि गुरुवायुरका मतसंग्रह मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध रहा तो प्रस्तावित उपवास स्थगित कर दिया जायेगा।

९ दिसम्बर : अस्पृश्यतापर दसवाँ वक्तव्य जारी किया।

१४ दिसम्बर : अस्पृश्यतापर ग्यारहवाँ वक्तव्य जारी किया।

आर्यसमाजके प्रतिनिधि-मण्डलसे भेंट।

१५ दिसम्बर : अस्पृश्यतापर बारहवाँ वक्तव्य जारी किया।

अस्पृश्योंके प्रतिनिधि-मण्डलसे भेंट।

१६ दिसम्बर : १८ दिसम्बरको मनाये जानेवाले अस्पृश्यता-विरोधी दिवसके लिए सन्देश जारी किया।

बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखा कि जमनालाल बजाजसे मिलनेकी अनुमतिके लिए मैंने जो पत्र लिखा था उसका उत्तर दिया जाये।

१८ दिसम्बर : कोतवालको लिखे पत्रमें कहा कि केलप्पनके साथ उपवास करना मेरा कर्त्तव्य हो जाता है, क्योंकि केलप्पनसे अपना उपवास स्थगित करनेको मैंने ही कहा था।

२१ दिसम्बर : के० रामुन्नी मेननको लिखे पत्रमें कहा : "मेरे उपवासका उद्देश्य हिन्दुओंको सक्रिय होनेके लिए प्रेरित करना है, और मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि यद्यपि उपवास अभी शुरू होना है पर वे दिन-प्रतिदिन सक्रिय होते जा रहे हैं।"

२२ दिसम्बर : मीराबहनको लिखे पत्रमें कहा कि मैंने रोटी और सब्जियाँ तक छोड़ दी हैं और इसलिए नमक भी छोड़ दिया है।

कौता सूर्यनारायण रावको लिखे पत्रमें कहा, मुझे विश्वास है कि मेरा उपवास अपने आशय और लक्ष्य दोनोंमें आध्यात्मिक होगा। आशय है, हिन्दू-धर्मकी शुद्धि और लक्ष्य है, जिन हिन्दुओंको अभीतक न्यायसे वंचित रखा गया है उन्हें धार्मिक न्याय दिलाना।

२३ दिसम्बर : सनातनी सुधारकों और शास्त्रियोंके साथ भेंट।

२४ दिसम्बर : राधाकान्त मालवीयको पत्रमें कहा कि यदि मतसंग्रह ठीक नहीं रहा तो उपवासको स्थगित करनेमें मुझे कोई संकोच नहीं होगा।

२८ दिसम्बर : गुरुवायुरका मतसंग्रह अस्पृश्योंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें रहा।

२९ दिसम्बर : मीराबहनको पत्रमें कहा कि बिना नमकका भोजन जारी है और उसका कोहनीपर कोई असर नहीं पड़ा है।

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंटमें यह घोषणा की कि "प्रस्तावित उपवासको अनिश्चित कालके लिए स्थगित करनेका निर्णय कर लिया गया है।"

३० दिसम्बर : अस्पृश्यतापर तेरहवाँ वक्तव्य जारी किया।
वाइसरायके निजी सचिवको तार भेज कर यह आग्रह किया कि सुब्बारायनके विधेयकको मद्रास विधान सभामें पेश करनेकी अनुमति दी जाये।
तर्करत्नसे अपनी भेंटपर वक्तव्य जारी किया।

२ जनवरी : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंटमें कहा कि गुरुवायुर मन्दिरको कुछ घंटे हरिजनोंके लिए खोलनेका जो मेरा सुझाव था, वह समझौतेकी दृष्टिसे रखा गया था।
'हिन्दू' के प्रतिनिधिसे भेंटमें कहा कि सुब्बारायनके विधेयकका "प्रयोजन ब्रिटिश अदालतों द्वारा की गई गलतीको सुधारना है।"

३ जनवरी : अस्पृश्यतापर चौदहवाँ वक्तव्य जारी किया।

५ जनवरी : गुरुवायुर मन्दिर-प्रवेशके सिलसिलेमें समझौतेके सुझावपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंट।

७ जनवरी : समाचारपत्रोंको दिये वक्तव्यमें कांग्रेसियोंसे कहा कि उन्हें सत्याग्रहियोंकी तरह काम करना है या समाज-सुधारकोंकी तरह, इसका फैसला उन्हें खुद ही करना है।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

ऋ

ए

ऐ

ख

घ

च

छ

ज

थ

द

म

य

ल

व

श